अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 05/06

03. निर्णायक मण्डल 07

04. प्रवक्ता साथी 09

(Science / विज्ञान)

05. Kinetics Of Oxidation Of 3-Chloro Benzaldehyde By Pyridinium Dicromate 11
(Dr. Bhupendra Kumar Amb)

06. Study of adverse effects of plastic on environment (Dr. Bindu Gandhi) 14

07. Chemical Investigation Of Ennicostemma Hyssopifolium (Wild) (Dr. Alka Singhal) 18

08. Integrated Waste Management Of Plastics (Dr. Basanti Jain) 20

09. Some Fixed Point of Theorem on Fuzzy Metric Space (Dr. D.K. Sagar) 21

10. भारतीय संस्कृति में वनस्पति पूजन एवं पर्यावरण संरक्षण – एक दृष्टिकोण (डॉ. शैलबाला सांघी) 23

(Computer Science / कम्प्यूटर विज्ञान)

11. Evolution Of 4G Wireless Technology (Prachit Ojha) 25

(Home Science / गृह विज्ञान)

12. Impact of cyber crime among college students (Priyanka Singh, Dr. Chandra Kumari) 29

13. ग्वालियर जिले की महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर शिक्षा एवं व्यवसाय के प्रभाव का अध्ययन 35
(डॉ. नमिता सक्सेना, डॉ. मंजू दुबे)

14. Fast Food- A Challenge for Health (Dr. Madhu Gautam) 38

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

15. CSR Initiative to bring about Social Development in India (Anshul Mangal) 40

16. Present Scenario Of E-Banking (Dr. Vivek Kumar Patel, Dr. Pallavi Mishra) 43

17. A Critical Evaluation of Socio-Economic Schemes Launched By 46
Narendra Modi Government in the year 2014-15 (Tarannum Hussain, Prakash Chander)

18. FDI And Service Sector (Dr. Praveen Ojha, Dr. Bhagwat Sahai) 49

19. वित्त आयोग और बढ़ता सहकारी संघवाद (सुनीता सोलंकी) 51

20. बैंक साख के परिपेक्ष्य में फसल उत्पादन में परिवर्तन (मध्यप्रदेश के संदर्भ में) (डॉ. संदीप माथुर) 55

21. सामूहिक सौदेबाजी – मालनपुर औद्योगिक क्षेत्र में कार्य समितियों की भूमिका (डॉ. लारेन्स कुमार बौद्ध) 58
22. भारत में बैंकिग विकास – एक अध्ययन (डॉ. अभय मुंगी) 60

(Economics / अर्थशास्त्र)

23. Irrigation Potential Creation And Agricultural Growth - Empirical Study Of Madhya-Pradesh (Dr. Kamlesh Kumar Shrivastava, Sunil Sharma) 62
24. सहकारी साख समिति लिमिटेड के वित्तीय स्त्रोत एवं संरचना (केन्द्रीय रेलवे कर्मचारियों के संदर्भ में) (डॉ. वसुधा अग्रवाल) 67
25. भारत में कन्या भ्रूण हत्या के कारण व समाधान (डॉ. विभा वासुदेव) 70
26. भारत में नगरीकरण–चुनौतियां और संभावनायें (डॉ. सुनीता बाथरे) 73
27. खण्डवा जिला : औद्योगिक परिदृश्य (प्रो. मनु श्रॉफ) 76

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

28. मध्यप्रदेश लोकसेवा गारण्टी अधिनियम 2010 – एक अध्ययन (प्रो. भावना कुशवाह) 78
29. भारत चीन संबंधों के बदलते आयाम – एक विश्लेषण (डॉ. श्रीकांत दुबे) 81
30. पंचायती राज व्यवस्था–आवश्यकता, महत्व, समस्या व सुझाव (डॉ. जी. एस. ध्रुवे) 84
31. न्यायिक सक्रियता एवं लोकहित संरक्षण (डॉ. अनिल कुमार जैन) 86

(Sociology / समाजशास्त्र)

32. Women Empowerment : Role of Panchayati Raj Institution (Dr. Anita Sonwal) 88
33. आंदोलन की विकृति : राजस्थान का गुर्जर आन्दोलन (डॉ. परेश द्विवेदी) 91
34. भारतीय जनजातियों में विवाह के विभिन्न स्वरूप – (वर्तमान संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन) (अंतिम कुमार कलवार) 94
35. एच.आई.वी/एड्स का मानव समाज पर आर्थिक प्रभाव (एक समसामयिक अध्ययन) (डॉ. मनीष कुमार कलवार) 96
36. सामाजिक अनुसंधान में आधुनिक प्रवृत्तियाँ (वर्तमान समय वर्ष – 2015 के विशेष संदर्भ में) (डॉ. अरविन्द पाल, चमका गेहलोद) 99
37. संयुक्त परिवार प्रणाली एक श्रेयस्कर परम्परा (डॉ. उमा लवानिया) 101
38. शिक्षा का अधिकार कानून एवं सामाजिक दायित्व (डॉ. निशा जैन) 103
39. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कामकाजी महिलाओं की स्थिति एवं उनके वैधानिक अधिकार (डॉ. रंजना श्रीवास्तव) 105
40. स्वरोजगार से महिला सशक्तिकरण (डॉ. निशा जैन) 107

(Psychology / मनोविज्ञान)

41. The Evolution Of Gender Discrimination Gender : India Better Than Neighbours (Dr. Mamta Barman) 109
42. Effect Of Locality On Mental Health Of Middle And High School Students (Kamlesh Upadhyay) 111
43. पर्यावरण सुरक्षा में पर्यावरण शिक्षा का योगदान (सुधा शाक्य) 114

(History / इतिहास)

44. भारत का गौरवशाली अतीत व विज्ञान (डॉ. नितिन सहारिया, डॉ. उमाशंकर पटले) 116
45. ग्वालियर राज्य में नारी पुनर्जागरण (डॉ. शुक्ला ओझा) 119
46. चारूकेश्वर स्थित सिद्धवट वृक्ष– बड़वाह (डॉ. मंगला ठाकुर) 121

(Geography / भूगोल)

47. Eco-Tourism Development In Madhya Pradesh Influence On Local Communities 123
(Dr. Mini Kochar)
48. नीमच नगर की जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर प्रभाव (डॉ. अख्तर बानो) 126

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

49. हिन्दू धर्म में तीर्थ यात्रा का महत्व (डॉ. जगमोहन सिंह पूषाम) 128
50. सूर्यबाला की कहानियों में निम्नवर्ग का यथार्थ चित्रण (प्रो. डी. पी. चन्द्रवंशी) 132
51. 21वीं सदी के उभरते परिदृष्य में हिन्दी पत्रकारिता एक अवलोकन (डॉ. अमित शुक्ल) 134
52. संत रविदास के दर्शन की प्रासंगिकता (डॉ. मधुमती नामदेव) 137
53. आदिवासी जीवन–समस्याएँ एवं समाधान हेतु प्रयास (डॉ. वन्दना अग्निहोत्री) 140
54. रीतिमुक्त काव्य में लोकोक्तियों एवं मुहावरों का प्रयोग (डॉ. मंजुला जोशी) 142
55. 'भ्रमरगीत' एक विरह विभूषित काव्य कथा (डॉ. शाजिया खान) 145
56. संतोष खरे – व्यक्तित्व एवं व्यंग्य (डॉ. रमेश टण्डन) 148
57. भारतीय नारी पुनर्जागरण और मैथिलीशरण गुप्त (डॉ. सरोज जैन) 150
58. कविता का लोकतंत्र और जनकवि नागार्जुन (डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन) 152
59. लोकतंत्र और संस्कृति (डॉ. प्रेमलता तिवारी) 154
60. नारी मन की कथाकार – मालती जोशी (डॉ. संध्या टिकेकर) 156
61. युगीन संदर्भों के कवि – ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी (डॉ. रंजना मिश्रा) 158

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

62. Splintered Self : A comparative Study of Wife and Cry the Peacock 160
(Dr. Kranti Vats, Dr. Mani Mohan Mehta, Saurabh Mehta)
63. Symbols, Images and Metaphors of Painting in Auden's poetry (Sehba Jafri) 162
64. Impact Of William Shakespeare On Hindi Cinema (Dr. Mukta Sharma, Shweta Maheshwari) 164
65. A Critical Review On Ravinder Singh's Selected Novels- 'I Too Had A Love Story' 167
And 'Can Love Happen Twice?'And Its Youthful Literary Techniques (Apurva Upadhyay)
66. Concept Of Tradition Of T.S. Eliot (Dr. Supriya Paithankar) 169

(Sanskrit / संस्कृत)

67. वेदो में यज्ञ–आहुतियाँ एवं पर्यावरण संरक्षण (डॉ. वेदप्रकाश मिश्र) 170
68. संस्कृत भाषा की वैज्ञानिकता निरूक्त के परिप्रेक्ष्य में (डॉ. प्रज्ञा आचार्य) 173

(Drawing / चित्रकला)

69. राजस्थान के प्रयोगधर्मी कलाकार डॉ. जगमोहन माथोड़िया का रचनात्मक संसार (डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला, प्रिया बापलावत) 176

(Music / संगीत)

70. संगीत एवं संगीतज्ञों का सामाजिक स्तर (गुन्जन शर्मा) 179

(Education / शिक्षा)

71. AIDS Free Society - Need For Academic Aids Awareness Among Teacher Trainees 182
(Dr. Surekha Jain)
72. Utility And Challenges Of Vocational Training Among Tribes 185
(Tabassum Patel, Dr. J. C. Porwal)
73. विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने में शिक्षक की भूमिका (माधुरी पालीवाल, इम्तियाज मन्सूरी) 189
74. उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में औद्योगिक जगत् की भूमिका (सविता वर्मा) 193
75. राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान का शिक्षा के विकास में अहम् योगदान (उदयसिंह चौहान) 195

(Others / अन्य)

76. Role of Time Management for Management Students 196
(Pragya Tiwari, Namita Sethi, Mansi Sethi)
77. मीडिया, विज्ञापन एवं महिलायें (डॉ. शशि किरण नायक) 199
78. सूचना क्रान्ति और ग्रामीण महिलाऐं (दूरदर्शन के संदर्भ में) (डॉ. प्रेमलता तिवारी) 203
79. कन्या भ्रूण हत्या : कारण और निदान (डॉ. प्रकाश कुमार जैन) 206
80. मध्यप्रदेश के शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों की कार्यक्षमता सम्वर्धन का अध्ययन 207
(डॉ. आलोक कुमार यादव)

(Naveen Shodh Sansar / नवीन शोध संसार)

81. शोध पत्र तैयार की विधि / Method of Preparing of Research Paper 212
82. Membership Cum Author's Bio-Data Form 213

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू ..... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(31) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(32) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(33) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(39) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य एवं संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. के.एल. जाट..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

✻✻✻ विज्ञान संकाय ✻✻✻

गणित:- .... (1) **प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) **प्रो.डॉ. रवि कटारे,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... (1) **प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... (1) **प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) **प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... (1) **प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा**, एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) **प्रो. डॉ. अमृता खत्री,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... (1) **डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. सुयश कुमार,** शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... (1) **डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

✻✻✻ वाणिज्य संकाय ✻✻✻

वाणिज्य :- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) **प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल,** शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(4) **प्रो. डॉ. सीता चतुर्वेदी,** शा. महारानी लक्ष्मी बाई कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी)महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

✻✻✻ प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ✻✻✻

प्रबंध :- .... (1) **प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी**, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... (1) **प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... (1) **प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा**, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

✻✻✻ विधि संकाय ✻✻✻

विधि:- .... (1) **प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन,** प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

✻✻✻ कला संकाय ✻✻✻

अर्थशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा,** शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) **प्रो. डॉ. अंजना जैन,** एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... (1) **प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. अनिल जैन,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) **प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा,** मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन, शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(4) प्रो. डॉ. उमा लवानिया, शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(4) प्रो. डॉ. रमेश टण्डन, महात्मा गाँधी शासकीय महाविद्यालय, खरसिया, जिला - रायगढ़ (छ.ग.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अजय भार्गव, शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन ..... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी ..... अजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ..... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा–बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल ..... शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Kinetics Of Oxidation Of 3-Chloro Benzaldehyde By Pyridinium Dicromate

Dr. Bhupendra Kumar Amb *

Abstract - Kinetics and mechanism of the oxidation of 3-chloro benzaldehyde by pyridinium dichromate (PDC) have been studied in aquo-acetic acid medium. 3-Chloro benzaldehyde have been converted to the 3-chloro benzoic acids by treatment with (PDC). The reaction is 1st order with respect to PDC and substrate and 2nd order with respect to [H^+]. The rate of oxidation decreases with increase in dielectric constant of solvent suggests that cation-dipole interaction. Activation energies and related thermodynamic parameters have been determined. The various kinetic parameter were calculated and suitable explanations and mechanism have been given.
Keywords - kinetics, oxidation, 3-chlorobenzaldehyde, PDC, aquo-acetic acid medium.

Introduction - Aims And Background - There are so many report on complexed Cr(VI) compound as oxidizing agents have been available. Mahanti (M.K. mahanti and K.K. Banerji, J Indian Chem. Soc.79,31,2002) reviewed synthetic and mechanistic aspects of reaction of complexed Cr(VI) compound. Pyridinium dichromate (PDC), has been recently reported. Only a few reports about the kinetics and mechanistic aspects of oxidation of PDC are available in literature. PDC is selective, effective and mild oxidizing reagent in synthetic organic chemistry. Aromatic aldehydes were found to be smoothly oxidized by this reagent. We report here the kinetics of oxidation of 3-chloro benzaldehyde in acetic acid-perchloric acid medium with this oxidant.

Results And Discussion -

Stability of pyridinium dichromate (oxidant) in solution- There was no change in the rate of oxidation with increase in pyridine concentration. This indicates that PDC is not hydrolysed & it is quite stable compound under aqueous kinetic conditions.

Order with respect to oxidant - The dependence of rates of reaction on oxidant concentration was studied by varying [PDC] in the range 0.00333 - 0.00125 M. From the linear plots of log[PDC] against time the order with respect to oxidant is determined to be unity. At fixed [H^+] with benzaldehyde in excess, the plot of log [PDC] vs, time was straight line in individual runs up to 60-70% of the reaction showing 1st order in PDC. There are no change in rate with change in initial concentration of PDC. The rate coefficients are independent of the initial concentration of PDC in the concentration range of 0.00333 - 0.00125 M.

Order with respect to substrate concentration - The rate of oxidation increases on increasing the concentration of benzaldehyde. A plot of log k_{obs} against log [aldehyde] was straight line with a slope of ca. 1 (for 3-chlorobenzaldehyde is 0.818)**.** I found that it is 1st order with respect to substrate. Here Michaelis-Menten kinetics do not fit. This shows that either the complex formed is very unstable or it is not formed. The order with respect to substrate is unity.

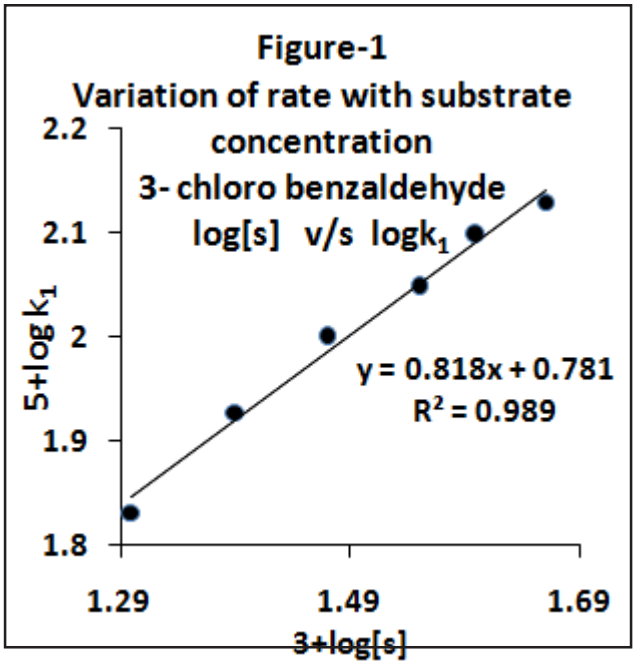

Effect of perchloric acid concentration on rate- It was found that the oxidation of aldehyde is catalysed by acid. Rate of oxidation increased with increase in hydrogen ion concentration. Graph of log k_{obs} against log [H^+] was linear in the range of [H^+] = 0.1 to 1.5 mol dm^{-3} with a slope of two (for 3-chlorobenzaldehyde 2.060), i.e. the order with respect to [H^+] is two. The second order with respect to [H^+] indicates an interaction between hydrated 3-chloro benzaldehyde and protonated PDC forming an cyclic ester, which then decomposes in a slow step forming the 3-chloro benzoic acids.

* Asst. Prof., Chemical Kinetics Laboratory (Chemistry) Govt. P. G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

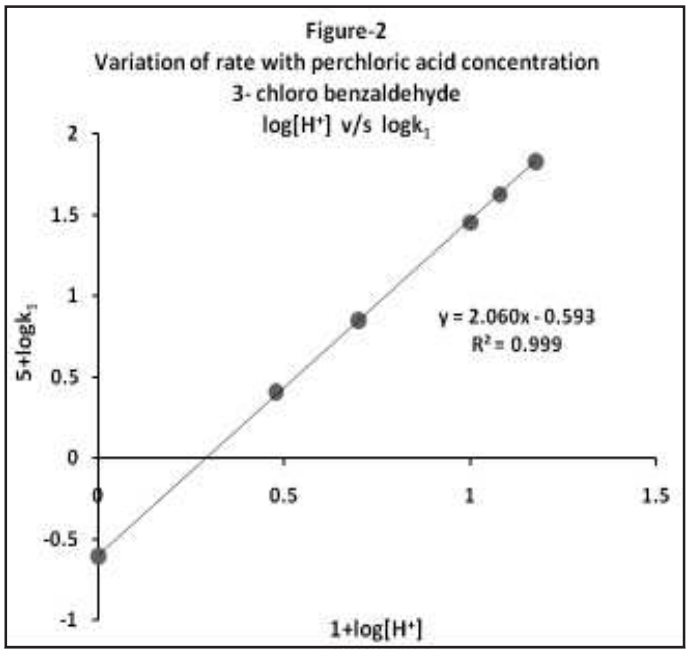

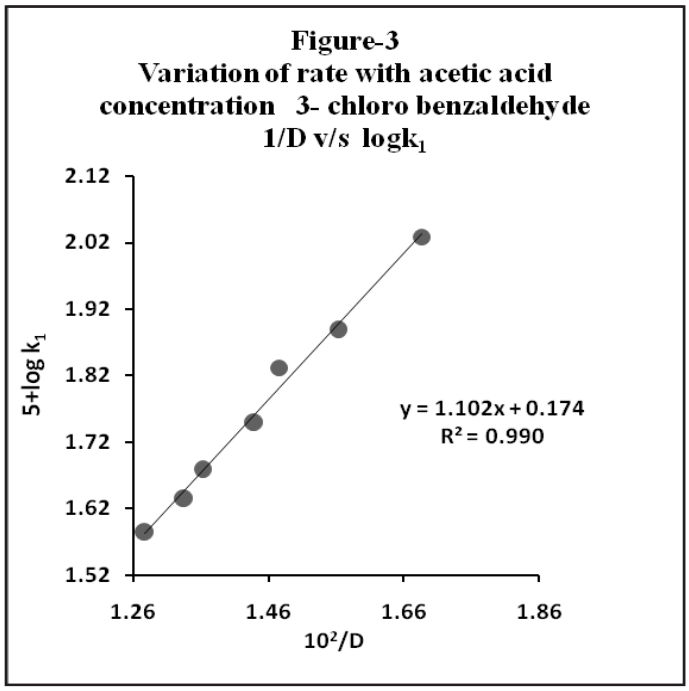

The Zucker Hammett was also applied but the slopes of the plots do not fit in the criterion. This indicates that the water molecule is not acting as proton abstractor in the rate-determining step.

The rate law of the oxidation process can be expressed as follows:

$$-\frac{d}{dt}[PDC]=k_1[PDC][aldehyde][H^+]^2 \quad \text{--------(1)}$$

Dependence on solvent polarity - Decreasing dielectric constant of medium favours the reaction indicating that the reaction is of ion-dipole type. At constant [H+] the rate of oxidation of 3-chlorobenzaldehyde increased with increase in percentage of (solvent) acetic acid in solvent composition. [*Macmillan New York* ; P,71 (1949), E.S. Amis : "Kinetics of Chemical Changes in Solution"]. Graph of log k_{obs} against 1/*D* (dielectric constant) with positive slopes > 20 (for 3-chlorobenzaldehyde it is +110.2) shwos cation-dipole type of interaction.

Influence of ionic strength - The rate studies were made at different ionic strengths of medium, varied by the addition of sodium sulphate, sodium nitrate and sodium perchlorate maintaining constant [H+]. The influence of ionic strength on the rates of oxidation was negligible, giving additional evidence for ion-dipole type reaction. This also proves that opposite or similar charge species are not interacting in the rate-determining step.

Outcome of Mn(II) and Ce(III) ion on rate - The rate of oxidation decreases gradually on the addition of Ce(III) and Mn(II) ions. This effect suggests that Cr(VI) acts as a two-electrons oxidant.

Thermodynamic activation parameters - Graph of log k_1 against 1/*T* is straight line with slop -1.609. The activation parameters are reported in Table-1. Experiment have been carried out under identical condition of reagents at 303 to 328K.

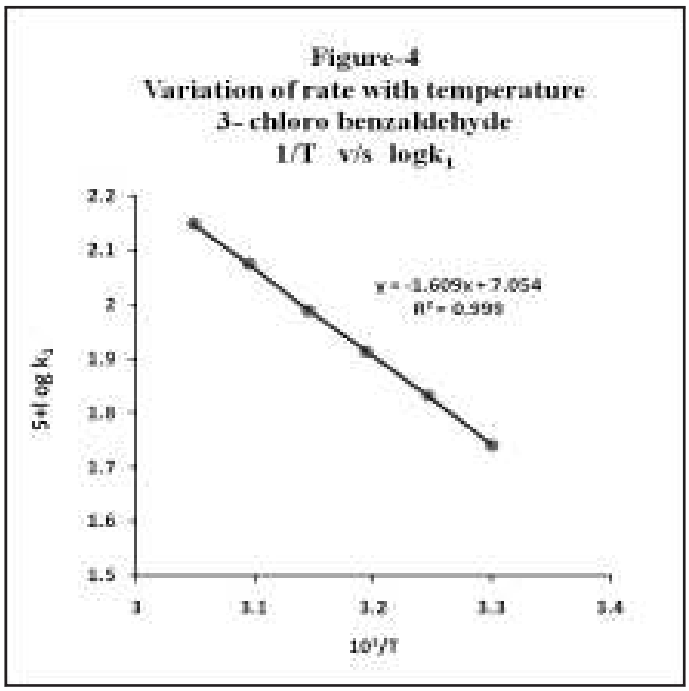

Table 1
Thermodynamic parameters

Benzaldehyde	Energy of activation ΔE_a^* (kJ mol^{-1})	Entropy of activation ΔS^* (J K^{-1} mol^{-1})	Free energy ΔG^* (kJ mol^{-1})
3-Chloro Benzaldehyde	30.807	-185.289	87.870

The higher rate of oxidation of 3-chlorobenzaldehyde could be due to combined – I and +R effects, indicating more positive charge on carbonyl carbon atom. The rate of the oxidation of 3-chloro benzaldehyde by PDC is accelerated by electron-releasing substituent. The –ve entropy of activation suggests that the reaction is slow. Similar effects has been observed by Aruna et al. in QDC ; Ramakrishan et al. in PFC and Lucchi in Cr(VI);.

Kinetic measurements - A known volume of substrate, perchloric acid and acetic acid were mixed in reaction flask and kept in thermostat maintained at constant temperature (± 0.1K). The reactions were carried out under pseudo-first order conditions. The reaction was initiated by adding rapidly pre-determined volume of PDC solution into the above reaction mixture. The rate of reaction was followed by withdrawing aliquots of (5.0 ml) the reaction mixture at regular intervals of time and quenching in 10 ml of 10% potassium iodide solution. The liberated iodine was titrated against previously standardized sodium thiosulphate (hypo) using starch as an indicator. The pseudo first order rate coefficients were obtained by plotting log (hypo) values against time. The rate constants k_{obs} were computed from the linear plots of log [hypo] versus time by least-square method. The results were reproducible to ±3%.

Experimental -

1. PDC solution was prepared in purified acetic acid. Solid PDC was prepared by reported method [by E. J. Corey, G. Schmidt : Synthetic & Kinetic Aspects of PDC. *Tetrahedron Letters*; 399,1979]. All other chemicals used were of AnalaR grade (E. Merck) or were purified, and purity has been checked by m.p. or b.p.
2. The products of oxidation of 3-chloro benzaldehyde by PDC were confirmed as 3-chloro benzoic acid by m.p., tlc and spectral analysis. Stoichiometry investigation revealed that 3 mol of 3-chlorobenzaldehyde consume 1 mol of PDC.

$3ArCHO + H_2O + PDC \{2Cr(VI) \rightarrow 3ArCOOH + 2Cr(III) + 6H^+$ —(2)

Considering all these experimental data, the various kinetic parameter were calculated and suitable explanations & mechanism have been given.

Althouh C-H bond breaking indicated by energy of activation take place in rate deteminig step but proton is not taken by solvent water rather it is removed. Solvent effect on rate suggests possibility of ion dipolar interaction. Here H^+ PDC ions and polar hydrated aldehyde interact to give the compound (C) & decomposition of (C) is slow i.e. rate determining step.

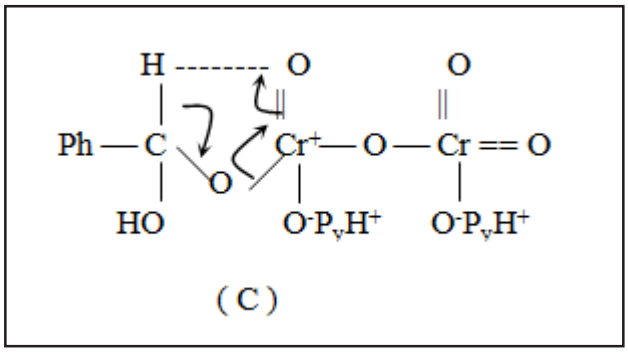

(C)

Negative entropy also suggest formation of cyclic compound from non cyclic. Involvement of hydration and formation of chromate ester will also decrease entropy.

$$(C) \xrightarrow{rds} Cr(V)\text{-}O\text{-}Cr(V)$$

$$Cr(V)\text{-}O\text{-}Cr(V) + 2Ph\text{-}CHO \xrightarrow{fast} 2Ph\text{-}COOH + 2Cr(III)$$

Acknowledgements - The author is thankful to U.G.C., New Delhi, India, for providing financial assistance.

References :-

1. G. Mangalam, S. M. Sundaram. *J. Indian Chem. Soc.*; 68,77,02 (1991).
2. S. Agrawal, K. Chaudhary, K. K. Banerji , *J. Organic Chem.*; 56,5111 (1991).
3. K.P. Elango and K.Karunakaran, *Oxid.commun.9, 59 (1996)*
4. K. Suganya, G. Baburao, S. Kabian : *Oxidation Communications*; 26,373,02 (2003).
5. L. Zucker, L. P. Hammatt, *J. American Chem. Soc.*; 61,2779 (1939).
6. A. Frost, Ralphg Pearson: Kinetics & Mechanism. *John Wiley & Sons, Inc Japan.*; P-150 (1961).
7. B. L. Hiran, R. K. Malkani, P. Chaudhary, P. Verma, N. Shorger : *Asian J. Chemistry*; 18,4,3081 (2006).
8. K. Aruna, P. Manikymba, V. Sundram : *Asian J. Chem.*; 6,542 (1994).

****

Study of adverse effects of plastic on environment

Dr. Bindu Gandhi *

Abstract - Plastics have transformed everyday life; usage is increasing and annual production is likely to exceed more than 300million tonnes by 2015.This Paper synthesize current understanding of the benefits and concerns surrounding the use of plastics and look to future priorities, challenges and opportunities. It is evident that plastics bring many benefits and offer future technological and medical advances.

As production and use of plastic has increased over theyears, a large amount of plastic waste has accumulated in the environment. As a durable material, it is also persistent.Recycling and recovery rates may be improving, but the actual amount of plastic waste produced remains roughly the same and adds to existing waste.

The plastic wastes being dumped into rivers, streams and sea contaminate the water, soil, marine life and also the air we breathe Plastic wastes clog the drains hit especially urban sewage systems.Choked drains provide and thus excellent breeding grounds for mosquitoes besides causing flooding during the monsoon. Since plastic does not undergo bacterial decomposition,landfilling using plastic would mean preserving the poison forever. Any attempt to get rid of plastic through landfills is also dangerous. Apart from toxic seepage from the landfill resulting in the contamination of precious water sources, the waste mass impedes the flow of ground water.Landfills are also prone to leaks.The wastes, especially cadmium and lead in the wastes, invariably mix with rain water, then seep through the ground and drain into nearby streams and lakes and other water bodies. Thus the water we use gets poisoned.

Introduction - Plastics are everywhere. Plastic is a kind of material that is commonly known and used in everyday life. Plastics are inexpensive, lightweight, strong, durable, corrosion-resistant materials, with high thermal and electrical insulation properties. The diversity of polymers and the versatility of their properties are used to make a vast array of products that bring medical and technological advances, energy savings and numerous other benefits (Andrady & Neal 2009). As a consequence, the production of plastics has increased substantially over the last 60 years from around 0.5 million tonnes in 1950 to over 260 million tonnes today. Almost all aspects of daily life involve plastics, in transport, telecommunications, clothing, footwear and as packaging materials that facilitate the transport of a wide range of food, drink and other goods.

Plastic can be shaped or molded into any form - some are naturally occurring, but most are man-made. Plastics are made from oil. Oil is a carbon-rich raw material, and plastics are large carbon-containing compounds. They're large molecules called polymers, which are composed of repeating units of shorter carbon-containing compounds called monomers.Chemists combine various types of monomers in many different arrangements to make an almost infinite variety of plastics with different chemical properties. Most plastic is chemically inert and will not react chemically with other substances.we can storealcohol, soap, water, acid orgasoline in a plastic container without dissolving the container itself. Plastic can be molded into an almost infinite variety of shapes, so we can find it in toys, cups,bottles,utensils,wiring,cars even in bubble gum. Plastics have revolutionized the world.All plastics are polymers, but not all polymers are plastics. Some familiar nonplastic polymers include starches (polymers of sugars), proteins (polymers of amino acids) and DNA.

To define plastic at molecular level, plastic is a polymeric material, which has molecules containing long carbon chains as their backbones with repeating units. The structure of these repeating units and types of atoms play the main role in determining the characteristics of the plastic. These long carbon chains are well packed together by entanglements and Van der Waals forces between large molecules, and form a strong, usually ductile solid material. Also, additives are usually added when manufacturing of commercial plastics is carried on, in order to improve the strength, durability or grant the plastic specific characteristics. Generally, there are two kinds of commercial plastics, thermoplastic and thermosetting plastic. Thermoplastics can be reheated, melted, and molded into different shapes, while thermosetting plastic will degrade and turn into other substances if reheated after molding. The molecules of thermoplastics are packed together by entanglements and Van der Waals forces. When a thermoplastic is heated up, it loses its entanglements and its molecules get farther away from each other, which causes the plastic changing from solid to liquid without breaking the bonds within the molecules. On the other hand, the molecules of thermosetting

*Asst. Prof. (Chemistry) M.J.B. Govt. P.G. Girls College, Moti Tabela, Indore (M.P.) INDIA

plastic are packed together not only by entanglements and Van der Waals forces, but also by the cross-links between molecules. When a thermosetting plastic is heated up, the cross-linking 11 bonds between molecules break apart and the plastic turns into another substance when it melts, usually by decomposing (Callister & Rethwisch, Fundamentals of Materials Science and Engineering, 3rd Ed. 2008. Natural polymers such as rubber and silk exist in abundance, but nature's "plastics" have not been implicated in environm-ental pollution, because they do not persist in the environment.

Traditional plastics are not biodegradable The nature of traditional plastics is the reason why they cannot be biodegraded. The carbon chains of traditional plastics are too long and too well packed for microorganisms to digest, but if they are broken into small pieces the microorganisms will be able to degrade them. However, the breakdown process is too long for mostof the traditional plastics, if there is no any artificial processing before being thrown in a landfill is involved. Therefore, before the plastics degrade themselves naturally, more plastics will be manufactured, causing increasing plastic pollution around the world.

Types of Plastics -

Plastics can be divided into two major categories:

1. Thermoset or thermosetting plastics. Once cooled and hardened,these plastics retain their shapes and cannot return to their original form. They are hard and durable. Thermosets can be used for auto parts, aircraft parts and tires. Examples are polyurethanes, polyesters, epoxy resins &phenolic resins.
2. Thermoplastics. Less rigid than thermosets, thermo-plastics can soften upon heating and return to their original form. They are easily molded and extruded into films, fibers and packaging. Examples include polyethylene (PE), polypropylene (PP) and polyvinyl chloride (PVC).

some common plastics.

Polyethylene terephthalate (PET or PETE) - PET is a thermoplastic that can be drawn into fibers (like Dacron) and films (like Mylar). It's the main plastic in ziplock food storage bags.

Polystyrene (Styrofoam) - Polystyrene is formed by styrene molecules. The double bond between the CH2 and CH parts of the molecule rearranges to form a bond with adjacent styrene molecules, thereby producing polystyrene. It can form a hard impact-resistant plastic for furniture, cabinets (for computer monitors and TVs), glasses and utensils. When polystyrene is heated and air blown through the mixture, it forms Styrofoam. Styrofoam is lightweight, moldable and an excellent insulator.

Polyvinyl Chloride (PVC) - PVC is a thermoplastic that is formed when vinyl chloride (CH2=CH-Cl) polymerizes. When made, it's brittle, so manufacturers add a plasticizer liquid to make it soft and moldable. PVC is commonly used for pipes and plumbing because it's durable, can't be corroded and is cheaper than metal pipes. Over long periods of time, however, the plasticizer may leach out of it, rendering it brittle and breakable.

Polytetrafluoroethylene (Teflon) - Teflon was made by polymerization of tetrafluoroethylene molecules (CF2=CF2). The polymer is stable, heat-resistant, strong, resistant to many chemicals and has a nearly frictionless surface. Teflon is used in plumbing tape, cookware, tubing, waterproof coatings, films and bearings.

Polyvinylidine Chloride (Saran) - it is synthesized by polymerization of vinylidine chloride molecules (CH2=CCl2). The polymer can be drawn into films and wraps that are impermeable to food odors. Saran wrap is a popular plastic for packaging foods.

Polyethylene, LDPE and HDPE - The most common polymer in plastics is polyethylene, which is made from ethylene monomers (CH2=CH2). The first polyethylene was made in 1934. Today, we call it low-density polyethylene (LDPE) because it will float in a mixture of alcohol and water. In LDPE, the polymer strands are entangled and loosely organized, so it's soft and flexible. It was first used to insulate electrical wires, but today it's used in films, wraps, bottles, disposable gloves and garbage bags.In the1950s, Karl Ziegler polymerized ethylene in the presence of various metals. The resulting polyethylene polymer was composed of mostly linear polymers. This linear form produced tighter, denser, more organized structures and is now called high-density polyethylene (HDPE). HDPE is a harder plastic with a higher melting point than LDPE, and it sinks in an alcohol-water mixture. HDPE was first introduced in the hula hoop, but today it's mostly used in containers.

Polypropylene (PP) - It is, prepared from propylene monomers (CH2=CHCH3) The various forms of polypropylene have different melting points and hardnesses. Polypropylene is used in car trim,battery cases, bottles, tubes, filaments and bags.

Methodology - Research is done by reading online sources,newspaper,articles,books & data from different organizations. Also, data on plastics consumption were found on websites of environmental and chemistry- related organizations on their annual reports.

Effects of plastics - Plastics have been with us for more than a century, and by now they're everywhere, for good and for ill.Plastic containers and coatings help keep food fresh, but they can also leave behind neurotoxins such as BPA in the human body. PVC is used for everything from pipes and flooring to furniture and clothes, but it contains compounds called phthalates that have been implicated in male reproduct ive disorders. Studies have also shown that childhood expo-sure to environmental pollutants can have significantnegative effects later in life.

To reduce plastic waste and negative effects, recycling programs have been implemented in many parts of the world, but remain underutilized. Much is due to the nature of plastic itself, which often can only be "downcycled" rather than recycled a torn plastic bag might eventually be transformed into a lunch tray, but it will never be a plastic bag again. Many cities and states have begun more serious efforts to restrict their use,but the subject remains a matter of consider- able debate. While plastics also contain substantial energy, the

vast majority ends up in landfills. Immense quantities of plastic are also sent to the developing world together with e-waste, where "recycling" frequently involves open-air burning. A 2014 research notes that plastic is an ideal material for single-use disposable devices, because they're "cost-effective, require little energy to produce, and are lightweight and biocompatible." Yet the chemical compounds within plastic can damage human health.

Virgin plastic polymers are rarely used by themselves and typically the polymer resins are mixed with various additives to improve performance. These additives include inorganic fillers such as carbon and silica that reinforce the material, plasticizers to render the material pliable, thermal and ultraviolet stabilizers, flame retardants and colourings. Many such additives are used in substantial quantities and in a wide range of products (Meeker et al. 2009). Some additive chemicals are potentially toxic (for example lead and tributyl tin in polyvinyl chloride, PVC), but there is considerable controversy about the extent to which additives released from plastic products (such as phthalates and bisphenol A, BPA) have adverse effects in animal or human populations. The central issue here is relating the types and quantities of additives present in plastics to uptake and accumulation by living organisms (Andrady & Neal 2009; Koch & Calafat 2009; Meeker et al.2009; Oehlmann et al. 2009; Talsness et al. 2009; Wagner & Oehlmann 2009). Additives of particular concern are phthalate plasticizers, BPA, brominated flame retardants and anti-microbial agents. BPA & phthalates are found in many mass produced products including medical devices, food packaging, perfumes,cosmetics,toys,flooring materials, computers and CDs & can represent a significant content of the plastic. For instance, phthalates can constitute a substantial proportion, by weight, of PVC (Oehlmann et al. 2009), while BPA is the monomer used for production of polycarbonate plastics as well as an additive used for production of PVC. Phthalates can leach out of products because they are not chemically bound to the plastic matrix, and they have attracted particular attention because of their high production volumes and wide usage (Wagner & Oehlmann 2009; Talsness et al. 2009). Phthalates and BPA are detectable in aquatic environments, in dust and, because of their volatility, in air (Rudel et al. 2001, 2003). There is considerable concern about the adverse effects of these chemicals on wildlife and humans (Meeker et al. 2009;Oehlmannet al.2009). In addi- tion to the reliance on finite resources for plastic production, and concerns about additive effects of different chemi- cals,current patterns of usage are generating global waste management problems.Barnes et al. (2009) show that plastic wastes ,including packaging,electrical equipment & plastics from end-of-life vehicles, are major components of both household & industrial wastes; our capacity for disposal of waste to landfill is finite and in some locations landfills are at, or are rapidly approaching, capacity (Defraet al. 2006). So from several perspectives it would seem that our current use and disposal of plastics is the cause for concern (Barnes et al. 2009; Hopewell et al. 2009).

On average, 300 million tons of plastic are produced around the globe each year. Of this, 50% is for disposable applications such as packaging. Plastics make up 85% of medical equipment. Bags and tubing alone constitute up to 25% of hospital waste. Plastics manufacture makes up 4.6% of the annual petroleum consumption in the U.S., using roughly 331 million barrels per year. None of this energy is recovered when plastics are disposed of in landfills, and very little is recovered when plastic waste is incinerated.Recycling plastics poses major logistical difficulties, including effective sorting (which increases costs) & the mixing of different plastic streams affecting the resultant post-consumer products.

In 2008, 34 million tons of plastic was disposed in the United States. Of this, 86% ended up in landfills. However, "disposal of plastics in landfills is ultimately unsustainable and diminishes land resources fit for other uses of higher societal value. Incineration results in the release of carbon dioxide, a greenhouse gas, and of other air pollutants, including carcinogenic polycyclic aromatic hydrocarbons (PAHs) and dioxins."Because of the omnipresence of plastics, the complex- ity of the substances that they release into the environment and the potential interaction of these substances, many questions exist on the safety of plastics for humans and the environment:

Detectable levels of bisephenol A (BPA) from plastics have been found in urine of 95% of adults in the United States. While the U.S. Food and Drug Administration approves the use of bisephenol A (BPA) for most food applications, in July 2012 the FDAamended its regulations to disallow the use of BPA in baby bottles, sippy cups and formula packagin; the FDA, which continues to update its policies, notes that the "scientific field is evolving rapidly.")

A 2010 study in the Annual Review of Public Health found that BPA has endocrine-disrupting properties. Tests indicate the possibility of health risks such as early sexual maturation, decreased male fertility and aggressive behavior. However, "the health risks of BPA are fiercely debated and, after more than 70 years of study, are still not fully understood. The stakes are high because exposure is ubiquitous and BPA-containing products are a multi-billion-dollar enterprise. di-(2-ethylhexyl)phthalate (DEHP), often used in polyvinyl chloride (PVC) products, leaches out easily and has been found to have a number of negative impacts: "Several rodent and human studies have found correlations between DEHP exposure & harmful health effects, including changes to the female & male reproductive systems, increased waist circumf erence & insulin resistance." Environmental exposure to plastic-related chemical compounds does not occur in isolation but as a "cocktail effect," with unknown cumulative impacts. Components of plastics currently being studied for their health effects include polyhalogenated flame retardants, polyfluorinated compounds (known as PFOS or PFOA) and antimicrobial compounds such as triclosan and triclocarban.

Plastics are found throughout the globe, there are effectively no populations that haven't been exposed to them.

"Studies have demonstrated the presence of steady-state concentration of plastics' components in the human body, thereby reflecting the ongoing balance of constant exposure, metabolism and excretion of these compounds. This situation implies that in today'splastics-enabled society, there are no control groups to be found to analyze the effects on human health from low-level, environmental exposures to plastic constituents. Everybody is being exposed to some degree Because at any given time from gestation through death."

Substantial quantities of plastic have accumulated in the natural environment and in landfills. Around 10 per cent by weight of the municipal waste stream is plastic (Barnes et al. 2009) Discarded plastic also contaminates a wide range of natural terrestrial, freshwater and marine habitats, with newspaper accounts of plastic debris on even some of the highest mountains. There are also some data on littering in the urban environment

The plastic wastes being dumped into rivers, streams and sea contaminate the water, soil, marine life and also the air we breathe Plastic wastes clog the drains hit especially urban sewage systems.Choked drains provide and thus excellent breeding grounds for mosquitoes besides causing flooding during the monsoon. Since plastic does not undergo bacterial decomposition, landfilling using plastic would mean preserving the poison forever. Any attempt to get rid of plastic through landfills is also dangerous. Apart from toxic seepage from the landfill resulting in the contamination of precious water sources, the waste mass impedes the flow of ground water. Landfills are also prone to leaks. The wastes, especially cadmium and lead in the wastes, invariably mix with rain water, then seep through the ground and drain into nearby streams and lakes and other water bodies. Thus the water we use gets poisoned.

Solution to the problem - Biodegradable plastics are more expensive to produce, and many use plant resources such as corn or molasses, thus creating competition for food supply. Commercial facilities test biodegradable plastics at 58 degrees C and 60% relative humidity, whereas at-home composting mechanisms may not meet these conditions and may therefore produce incomplete biodegradation.

Strategies are possible to balance the need for durable plastics in some applications, and biodegradable compounds in others: "Plastics of low volume for medical applications may rely more on fossil fuel and be designed for durability, whereas high-volume uses for consumer products will have to be sourced from renewable material stocks and be programmed for rapid environmental decay (i.e., biodegradability). This strategy could prevent irreparable environmental damage from disposable plastic products, while maintaining and maximizing the benefits of plastics in specialized cases, like medicine and public health."Although there have been great benefits from using plastics, especially in the health care sector, there needs to be a second revolution of plastics in which life-cycle consider- ations are integrated with production and consumption decisions to handle the voluminous present-day flow of plastics,most of which being destined for disposal after single use.

Conclusion - Plastic takes up large part of society, from plastics used for furniture, electronics, to small households needs like containers and grocery bags. Since plastic first became available to consumers, it became widely used, due to the advantages it provides, such as lightweight, durability and its ability to mold into any products with chemicals and additives. However, there are also a number of disadvantages that plastic poses, including health problems starting from manufacturing to consumption and negative environmental impacts created by accumulation of plastic wastes. Today, the management of plastic wastes has become one of the most challenging problems in our society. It seems even serious if we think about the future generation that has to deal with continuously growing amount of plastic wastes accumulated in the environment.

Based on all of the information it can be said that there is no one best alternative to the plastics problem we have, but different solutions should be combined for the best result. One way to overcome the danger of plastic pollution is to cut down the use of plastic,prefer to carry own bags for grocery shopping, a jute or cloth bag The alternative that has the most potential in the future is biodegradable plastics All attempts made to put an end to plastic pollution will be a benefit for our next generation.

References :-

1. Williamson LJ (2003) It's Not My Bag, Baby. On Earth: Environmental Politics People, 25(2): 32-34.
2. Spokas KA (2007). Plastics: still young, but having a mature impact. Waste Manage., 28(3): 473-474.
3. Geographical (2005). "Waste: An Overview." Geographical, 77(9): 34 -35.
4. Stevens E (2001). Green Plastics: An introduction to the new science of biodegradable plastics. Princeton, NJ: Princeton University Press, pp 15-30.
5. United Nations Environment Programme (UNEP) (2005a). Plastic bag ban in Kenya proposed as part of a new waste strategy. UNEP press release.
6. Anthony A (2003). Plastics and the environment. New Jersey: John Wiley & Sons, Inc. Hoboken, New Jersey, pp. 379-397.
7. Flores MC (2008) Plastic materials and environmental externalities: Structural causes and corrective policy. Lethbridge Undergraduate Res. J., 3(2).
8. Verghese K, Lewis H, Fitzpatrick L, Hayes GM (2009a). Environmental impacts of shopping bags. Report for Woolworths Limited, Ref. number: SPA1039WOW-01. pp. 1-36.
9. Macur BM, Pudlowski ZJ (2009). Plastic bags- a hazard for the environment and a challenge for contemporary engineering educators. World Trans. Engineer. Technol. Educ., 7(2): 122-126.
10. Hasson R, Leiman A, Visser M (2007). The Economics of plastic bag legislation in south Africa. South African J. Econ., 75 (1): 66-83.

Chemical Investigation Of Ennicostemma Hyssopifolium (Wild)

Dr. Alka Singhal *

Abstract - As no information about the chemical and pharmacological properties of ennicostemahyssopifolium was available in the literature , it was thought worth while to take up the project of its chemical investigation growing abundantly in the campus of our institute.

A new glycoside has been isolated from the trifolium of EnnicostemmaHissopifolium (willd). After hydrolysis the glycoside has been identified as b-amyrin-2-0-beta-D glucopyranosyl. Modem techniques like I.R., NMR and mass spectroscopy have been employed for the structure elucidation.

Introduction - M.P. is very rich in flora possessing medicinal properties. The plant Ennicostemmahyssopifolium (wild) is locally known as 'NAAH' and belongs to the Gentianaceae family. The adivasis of this area have been using the decoction of this plant for a long time as an antipyretic and is reported to be very effective even in enteric fever. The name of this plant Ennicostemmaverticillatum and Ennicostemma Hyssopifolium are synonyms. It is known as Chhota Chirayata.

Experimental isolation of glycoside - About 0.2 k of air dried and powdered trifolium part of the plant was defatted with petroleum ether (40-60 ^{0}C) in a soxhlet apparatus, it was then extracted with 90% ethanol for 18 hrs. The extract on concentration gave a syrupy mass which was extracted with various solvents (non polar to polar) to remove impurities. Finally it was extracted with hot water and filtered. The filtrate and residue were studies separately.

The filtrate on treating with lead acetate gave a ppt. (lead lake) it was separated by filtration. The lead lake was suspended in 200 ml ethanol. It was decomposed by passing. H_2S in it and ppt was filtered off. The filtrate was concentrated to 20ml under reduced pressure. It contained the glycoside.

Elemental analysis of the glycoside -

FOUND	CALCULATED FOR
$C_{36}H_{60}O_6$	
C=73.40%	C=73.47%
H=10.15%	H=10.20%
O=16.20%	O=16.33%

MOLECULAR Wt =558 (MASS)

Tlc of the glycoside - Methanolic solution of the glycoside was used for TLC Silicagel 'G' was used as stationary phase. The solvent system used was n-butanol : acetic acid : water (4:1:5). The spraying was 10% H_2SO_4 the glycoside gave a single spot. Hence the presence of one pure compound.

Hydrolysis of the glycoside - 2.0 gm were refluxed in 500ml flask with 50ml of 70% H_2SO_4 for 5 hrs. The aqueous solution was repeatedly extracted with solvent ether (in excess) the ethereal layer was washed with water and dried over anhydrous $caso_4$. On removing the ether from it aglycone was obtained. The aqueous layer of hydrolysis was used for the identification of sugars.

Study of the aglycone - It was insoluble in petroleum ether but soluble in chloroform , ether, acetone and methanol it gave red colour with acetic anhydride and a drop of H_2SO_4 changing through violet to green (Liebermann Burchard reaction), purple colour with tetranitro methane showing it to be a triterpene . It was crystallized to a fine white substances from ether – ethanol (1:1) and dried in a drying pistol. Its M.P. was 197^{0}C . The elemental analysis and molecular wt determination of the compound gave the following results:

FOUND	ALCULATED FOR C30H50O
C=84.38%	E=84.50%
H=11.85%	H=11.73%
O=4.77%	O=3.81%

Calculated molecular formula = $c_{30}h_{50}0$

Molecular wt.=426 (by mass spectroscopy)

1 a 1^{25}_D = +88.5 (in chloroform)

I.R. spectrum of the aglycone - The absorption frequencies obtained in the I.R. spectrum and their corresponding structural units are given below in table 1

TABLE 1

FREQUENCY Cm – 1	INFERENCE
2930	OH
2850	CH_3
1470	C-CH_3
1380,820	$(CH_3)_2$
1340	CH

*Asst. Prof. (Chemistry) M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) INDIA

1039,1000,820 CYLOHEXANE

The peaks of the spectrum were superimposable with the spectrum of an authentic sample of B-amyrin.

Estimation of Methyl Groups Attached to C-Atoms - To estimate the C-Methyl group the semi micro method as mentioned by Bechler and Goabert was used. On this basis the calculated formula was found to be $C_{22}H_{26}O(CH_3)$.

Percentage of C-methyl group = 28.23%

References :-

1. Otto Dischender for , "phytochemical studied I amyrin of Eli vesin". (46,399-4031(1926)).
2. Burell, R.C. Forrest C. Houton , "Isolation of amyrin , and a Fatty acid of high molecular weight from solid , age leav worthily , J.Am.chemsoc. 70, 447 , (1948)
3. Yazirosakato, " the chemical constitution of the osterol and amyrin", J.Agr.chem.soc.japan,18,524,526(1942).

****

Integrated Waste Management Of Plastics

Dr. Basanti Jain *

Introduction - Plastic is used in every step of life and now the consumption rate of plastics has increased manifolds. Higher rate of consumption also increases the amount of plastic waste whose disposal is a big problem. Since the plastics are not biodegradable, they pose a serious threat to the environment.

Integrated waste management is defined as a set of management alternatives including reuse, reduction at source, recycling and recovery of energy.

Tools of Integrated Waste Management - The tools are:

1. Reduction at source
2. Reuse
3. Recycling
4. Recover

Reduction at Source - The ultimate objective of the Integrated Waste Management is to reduce the amount of plastic waste at the source itself. The plastic waste source reduction can be achieved due to its high strength to weight ratio. The source reduction of plastic waste may be significant through the process known as thin walling where the walls of a package are made thinner while retaining the same performance characteristics. The plastics with thinner walls may be now used for the same purposes.

Reuse - Reuse refers to the use of waste material again and again for different uses by making simple modification or without modification. For example, edible oil packaging may be used as water storage or storage of many solid or liquid household materials. Rice sacks, Cement sacks or fertilizer sacks may be used as hutment covers, large bags.

Recycling - Waste plastics can be picked up and recycled to produce other new materials which can be used for many purposes. The recycling of plastics may be carried out through four stages such as :

a) Primary b) Secondary
c) Tertiary d) Quaternary

In primary plastics recycling technology, the waste plastics can be recycled to produce new plastics with material and chemical properties similar to those of the original plastics. In this process, the plastic wastes are melted properly and reformed into new plastics. Generally, the clean thermoplastic wastes are recycled in the primary process. In secondary process of recycling, the products are inferior quality to the original one.

Tertiary processes are used to recycle the waste plastics by altering its chemical structure to produce monomers basic chemical or fuels through depolymerization and dissolution processes. In quaternary process of recycling of waste plastics, no new products can be produced rather it is used to recover heat or reduce the volume of waste materials.

Recover - Waste plastics contain significant reserves of energy that can be recovered through combustion processes. The waste plastics may be burned in combustion incinerator with the mixture of combustible materials. The heat generated from the incinerator may be used in generator to generate the electricity. The waste plastics may be used as a direct fuel in cement kilns to substitute the use of fossil fuels.

Industrial waste plastic, whose main components are hydrogen and carbon, has high calorie properties, therefore, these waste plastics are used as auxiliary fuel material.

Thermal Degradation of Plastics during Recycling - The thermal degradable plastics in which the degradation occurs due to the action of heat which is easily obtained during mechanical recycling of plastics. Thermal degradable plastics get degraded in the presence of heat and oxygen without producing toxic waste products or toxic gases.

Thermal degradation of some common plastics such as polypropylene, polystyrene, polyethylene and polyvinyl chloride produce & end products like carbon dioxide, carbon monoxide, water, hydrochloric acid and conjugated polyenes.

Result - The Scientists have worked hard to develop alternative methods to the existing methods so that toxic reagents, toxic by- products and toxic intermediates in a particular reaction have been completely eliminated or minimized to maximum.

Bio-plastics are obtained from the biopolymers and also biodegradable. Bio-plastics are polyesters, produced by a range of microbes cultured under different nutrient and environmental conditions. These polymers are accumulated as storage materials and help microbial survival under stress conditions because of their lipid in nature. Poly-B-hydroxybutyrate is also known as bioplastic which was first obtained from Bacillus megaterium. Similarly, the copolymer of B-hydroxybutyrate and poly-B-hydroxyvalerate are synthsized by microorganisms. Genetic Engineering has developed plants which contain the enzymes used by bacteria to produce plastics by converting sunlight into energy.

References :-

1. Sharma B.K., “Industrial Chemistry,” Goel Publishing House Pvt. Ltd. Meerut, 2000.
2. Agarwal S.K., “Environmental Awareness”, Bansi Prakashan, Jodhpur, 2005.
3. Deswal Surinder and Deswal Anupama, “Energy Ecology, Environment and Society”, Dhanpat Rai and Co. (P) Ltd., Delhi, 2005.
4. Pani Balram, “Environmental Chemistry”, I.K. International Publishing house Pvt. Ltd., New Delhi, 2007.

*Professor (Chemistry) M.L.B. Govt. Girls (P.G.) Autonomous College, Bhopal (M.P.) INDIA

Some Fixed Point of Theorem on Fuzzy Metric Space

Dr. D.K. Sagar *

Abstract - The aim of this paper is to introduced a new Fixed point theorem on Fuzzy Metric space.
Keywords - Fixed point, Common Fixed Point, Fuzzy Metric space.

Introduction - The concept of Fuzzy metric space was investigated by Zadeh [6] in his classical paper to use this concept in topology and analysis, several research defined Fuzzy Metric space is various ways. The concept of Fuzzy Metric space by defined by kramosil and Michallk [2] Further modified by George and Veermani [1]. Which shows that every metric induces a Fuzzy Metric.

Preliminaries – For this purpose we need the following definition and Lemma.

Definition 2.1 - A binary operation

$*: [0,1] \times [0,1] \to [0,1]$

Is called a t-norm if

{[0,1,] *} is an abelian topological monoid with unit 1 such that

$a * b \leq c*d$ whenever $a \leq c$ and $b \leq d$ for $a, b, c, d \in [0, 1]$.

Examples of t-norms are

$a*b = ab$ and $a*b = \min \{a,b\}$.

Definition 2.2 – The 3-tuple (X,M,*) is said to be a Fuzzy Metric Space if X is an arbitrary set, * is a continuous t-norm and M is a Fuzzy set in

$X^2 \times [0, \infty)$ satisfying the Following conditions:

For all $x, y, z \in X$ and $s, t > 0$

(FM-1) $M (x, y, 0) = 0$,

(FM-2) $M (x, y, t) = 1$ for all $t>o$ if and only if $x = y$,

(FM-3) $M (x, y, t) = M (y, x, t)$

(FM-4) $M (x, y, t) * M (y, x, s)$

$\leq M (x, z, t + s)$

$x, y, z \in X, t, s > o$

[FM-5) $M (x, y, .) : [0, \infty) \to [0, 1]$ is left continuous,

[FM-6) $\lim_{t \to \infty} M (x, y, t) = 1$

Definition 2.3 – let (X, M, *) be a Fuzzy Metric Space, a sequence $\{x_n\}$ in X is said to be converges to a point $x \in X$ if

$\lim_{n \to \infty} M (x_n, x, t) = 1 \quad t > 0$.

Further, the sequence $\{x_n\}$ in said to be a Cauchy sequence if

$\lim_{t \to \infty} M (x_n, x_{n+p}, t) = 1 \quad t > 0$ and $p > 0$.

the space is said to be complete if every Cauchy sequence in X converges to a point in X.

Lemm 2.1 – let $\{x_n\}$ be a sequence in Fuzzy Metric space (X,M, *). If a number $K \in (0, 1)$ such that

$M (x_{n+2}, x_{n+1}, K t) \geq M (x_{n+1}, x_n, t)$

$t > 0$ and $n \in N$ then $\{x_n\}$ is a Cauchy sequence in X.

Lemm 2.2 – let (X, M, *) be a Fuzzy Metric Space if $K \in (0, 1)$ such that $x, y, \in X$,

$M (x, y, K t) \geq M (x, y, t)$

$t > 0$ and $x = y$.

Proof -

If $M (x, y, K t) \geq M (x, y, t)$

We have $M (x, y, t) \geq M (x, y, t/K)$

By repeated application of above inequality.

$M (x, y, t) \geq M (x, y, t/K) \geq M (x, y, t/K^2)$

$\geq ------- \geq M (x, y, t/ K^m) \to 1$

as $m \to \infty$, $m \in N$,

hence $M (x, y, t) = 1 \Rightarrow x = y \quad t > 0$.

3. Main Result

Theorem 3.1:

Let (X, M, *) and $(Y, M^1, *)$ be complete Fuzzy Spaces. Let A, B be

*Asst. Prof. (Mathematics) Shri Sitaram jaju Govt. Girls' College, Neemuch (M.P.) INDIA

continuous mapping of X in to Y, and let
S, T be continuous Mapping Y in to X
satisfying the inequality:

(i) $M (sAx, TBx^1, t) \geq \min \{M (x, x^1, t)$
$M (x, SAx, t), M (x^1 , TBx^1, t),$
$M (x, TBx^1, t), M^1 (Ax, Bx^1, t^1)\}$

(ii) $M^1 (Bsy, ATy^1, t^1) \geq \min \{M^1 (y, y^1, t^1)$
$M^1 (y, Bsy, t^1), M^1 (y^1, ATy^1, t^1)$
$M^1 (y, ATy^1, t^1), M (y^1, Bsy, t^1)$
$M (sy, Ty^1, t^1)\}$

For all x, x^1 in X and y, y^1 in Y, for which
R.H.S. of above inequality are then +ve
SA and TB have a Unique common Fixed Point z in X and BS and AT have a unique common Fixed Point w in Y. further Az = Bz = W and Sw = Tw = Z.

Proof -

Let us assume that left side of (i) and (ii) are not zero. Then we define

$$F (x, x^1, t^1) = \min \{M (x, x^1, t), M (x, SAx, t), M (x^1, TBx^1, t) M^1 (x^1, SAx, t) \frac{M^1 (Ax, Bx^1, t^1)}{M (Sax, TBx^1, t)}$$

And

$$g (y, y^1, t^1) = \min \{ M (y, y^1, t^1,), M^1 (y, Bsy, t) M^1 (y^1, Aty^1, t^1), M^1 (y, ATy^1, t^1) \frac{M^1 (y^1, Bsy^1, t), M (Sy, Ty^1, t^1)}{M (Bsy, ATy^1, t^1)}$$

These functions being continuous so attains their Maximum values say a, b respectively. From (i) and (ii) it follows that a, b < 1. Then with K = max {a, b}
We observe that all the condition are satisfied so theorem is proved.
If for some point
$x = z, x^1 = z^1$
L.H.S. of (i) tends to 1 then we see that
$Z = z^1$ = and then
SAz = TBz = z putting
Az = Bz = w
We get SW = TW = z
To prove uniqueness, suppose that z^1 be another fixed point of TB. Then using inequalities (i) and (ii) we have

$M (z, z^1, t) = M (SAz, TBz^1, t)$
$> \min \{ M (z, z^1, t), M (z, SAz, , t) ,$
$M (z^1, TBz^1, t), M (z, TBz^1, t)$
$M (z^1, SAz, t), M^1 (Az, Bz^1, t^1) \}$
$= M^1 (Az, Bz^1, t^1)$
$= M^1 (ASw, BTBz^1, t^1)$
$> \min \{ M^1 (w, Bz^1, t^1), M^1 (w, ASw, t^1)$
$M^1 (Bz^1, BTBz^1, t^1), (M^1 (w, BTBz^1,t^1)$
$M^1 (Bz^1, ASw,t^1), M (Sw, TBz^1, t^1)$
$= \min \{M^1 (Az,Bz^1, t^1) M (z, z^1, t)\}$
$= M (z, z^1, t)$
i.e. $M (z, z^1, t) = M (z, z^1, t)$

Which is a contradiction and so $z = z^1$.
Therefore, z is a unique Fixed Point of TB.

It follows similar that z is the unique fixed point of SA and w is the unique fixed point of BS and AT.

References :-

1. George, A. and Veermani, on some result in Fuzzy Metric Space, Fuzzy sets and systems, 64, (1994), 395-399.
2. Kramosil,L. and Michalek, J. Fuzzy Metric and Statistical Metric Spaces, Ky bernetica, 11 (1975), 326-334.
3. Singh, B. and Jain, S. Weak Compatibility and Fixed Point theorems in Fuzzy Metric Spaces, Ganita. 56,2 (2005), 167-176.
4. Singh, B, and Chouhan, M.S. Common Fixed Point of Compatible maps in Fuzzy Metric Spaces: Fuzzy sets and systems, 115 (2000), 471-475.
5. Vyas, U. and Pagey, S.S., A related Fixedn point theorem on 2-metric spaces, Vikram Mathematical Journal 21 (2001), 37-41.
6. Zadeh, L.A., Fuzzy sets, Inform and contral,89, (1965), 338-353.

****

भारतीय संस्कृति में वनस्पति पूजन एवं पर्यावरण संरक्षण - एक दृष्टिकोण

डॉ. शैलबाला सांधी *

प्रस्तावना – प्रकृति के उद्‌गम में सर्वप्रथम वनस्पति का उदय हुआ, तत्पश्चात् पशु-पक्षी, कीट-पतंगे इस पृथ्वी पर आए और इस सुंदर पर्यावरण की रचना की। पृथ्वी का पर्यावरण जैविक और अजैविक दो घटको में विभाजित है। जैविक घटक के अन्तर्गत् वनस्पति एवं प्राणी वर्ग आते हैं। वनस्पति जगत की ओर दृष्टि डाले तो भारत में लगभग 45 हजार पेड़ पौधे की प्रजातियाँ पाई जाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार भारत में लगभग 2500 पादप जातियों का उपयोग औषधीय एवं आयुर्वेदिक दवाईयों के रूप में किया जाता है।

मनुष्य एवं वनस्पति का प्रकृति प्रदत्त संबंध है, यही कारण है कि पेड़-पौधे पुरातन काल से ही हमारे धर्म एवं संस्कृति के अभिन्न अंग रहे हैं। परम्परागत् रूप से पेड़ पौधों को पूजने का विधान हमारी संस्कृति में प्रचलित है। इसी वजह से भारतीय संस्कृति को अरण्य (वृक्षों) की संस्कृति भी कहा जाता हैं। भारतीय ऋषि मुनियों, संतों आदि द्वारा अरण्य में लिखे गए ग्रंथों को आरण्यक कहा गया। भारतीय संस्कृति का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि यहाँ पर्यावरण संरक्षण का भाव अतिपुरातन काल से था। वृक्ष मानव के लिए स्वास्थ्य एवं पर्यावरण के प्रमुख घटक के रूप में माने जाते है। आयुर्वेद में उनकी विशेषता का उल्लेख मिलता है। वनस्पतियों का यही गुणधर्म एवं उनकी सदुपयोगिता उन्हें देवत्व का स्थान प्रदान करती है। वृक्षों को देवता के समान मानकर उनकी उपासना, अभ्यर्थना की परंपराएँ हमारी धरोहर रही है। भारतीय संस्कृति में वट (बड़) अश्वत्थ (पीपल) बिल्व (बेल) वृंदा (तुलसी), आमलिका (आंवला) अपराजिता, पद्यम (कमल), दूब, कुश, कदली (केला) आम्र (आम) आदि वृक्षों को देव वृक्ष की संज्ञा प्रदान की है तथा इन वृक्षों की पूजा अर्चना की जाती है। पुराणों के अनुसार समुद्रमंथन में वृक्ष जाति के प्रतिनिधि के रूप में कल्पवृक्ष का उद्‌भव होना एवं देवताओं द्वारा उसे संरक्षण में लेना वृक्षों की महत्ता को अवगत् कराते हैं। भारतीय संस्कृति में हमारे ऋषिमुनि एवं पुरखे कोई भी कार्य करने के पूर्व प्रकृति को पूजना नहीं भूलते थे।

अश्वत्थो, वट वृक्ष चंदन तरूमन्दार कल्पौद्रुमों।
जम्बू, निम्ब, कदम्ब, आम्र सरला।
वृक्षाश्च से क्षीरिण:।।

शास्त्रीय दृष्टि से देखें तो पीपल, वट, बेल, चंदन, आंवला, आम, नीम, कदंब आदि को देववृक्ष माना गया है। पौराणिक ग्रंथ स्कंद पुराण में पाँच पवित्र छायादार वृक्ष पीपल, वट, बेल, आंवला व अशोक के समूह को पंचवटी कहा गया है। पीपल को पूज्य मानकर उसे अटल सुहाग से संबद्ध किया गया है। वेद पुराणों में पीपल को भगवान कृष्ण का अवतार माना गया है इसके अलावा इस वृक्ष में पर्यावरण शुद्धि की अद्‌भुत क्षमता है। हिन्दू पुराणों में बेल को भारत में एक पवित्र धार्मिक वृक्ष के रूप में पूजा जाता है इसकी त्रिपर्णी पत्तियों के कारण इसे त्रिपत्र कहा जाता है। इनकी त्रिपर्णी पत्तियों को भगवान शिव पर चढ़ाया जाता है। इनकी पत्तियों के बगैर शिव की पूजा पूर्ण नहीं मानी जाती। बेल के फल के गूदे एवं रस का उपयोग उदर से संबंधित रोगों की अचूक दवा मानी जाती है।

तुलसी को पुराणों में वृंदा कहा गया है। इसे वायुशोधक तथा रोग विनाशक कहा गया है।

वृंदा वृंदावनी विश्व पूजिता विश्वपावनी।
पुष्पसारा नंदिनी च तुलसी कृष्ण जीवनी।।
एतन्नामाष्टकं चैव स्त्रोतं नामार्थ संयुतम।
य: पठेत तां च सम्पूज्य सो अश्वमेघ फलं लभेत।

अर्थात्- देवी तुलसी के ये आठ नाम है। इन आठों नामों को लेकर यदि तुलसी की पूजा की जाए तो अश्वमेघ फल प्राप्त होता है। (ब्रम्ह्यवैवर्त पुराण, प्रकृति खंड: 22: 33-34)

इसलिये हिन्दू घरों में तुलसी वृंदावन अवश्य लगाया जाता है तथा प्रतिदिन जल चढ़ाकर एवं दीप जला कर तुलसी की आराधना की जाती है।

वट वृक्ष को हिन्दू धर्म में अत्यंत ही पवित्र एवं पूजनीय माना गया है। यह वृक्ष अपनी शीतलता के साथ-साथ वट सावित्री पूजन में परिजनों के दीर्घ जीवन की कामना को पूर्ण करने के लिए माना गया है।

मूले ब्रम्हा त्वचा विष्णु शाखा शंकर मेव च
पत्रे-पत्रे सर्वदेवायाम् वृक्ष राज्ञो नमोस्तुते।

वामन पुराण के अनुसार यह पेड़ त्रिमूर्ति का प्रतीक है, इसकी छाल में विष्णु, जड़ों में ब्रम्हा, तथा शाखाओं में शिव का वास है। भारत में हर प्रदेश में एक न एक पवित्र वट वृक्ष को पवित्र वृक्ष के रूप में संरक्षित किया गया है। जिसमें प्रयाग का अक्षय वट, अवंतिका का सिद्ध वट, नासिक का पंचवट, गया का बोधिवृक्ष, वृंदावन का वंशीवट पर आश्रित श्रद्धा केन्द्रों में वट की पूजा की परम्परा सदियों पुरानी है।

वामन पुराण में कदंब के वृक्ष को भगवान कृष्ण, लक्ष्मी, विष्णु से जोड़ा गया है। आम्र के पत्ते एवं मंजरियाँ पूजन के काम आती है तथा सूखे डंठल का उपयोग हवन में किया जाता है। केले के पत्तों एवं फलों का उपयोग मांगलिक कार्यों में किया जाता है। नीम का वृक्ष वायुशोधक एवं रक्त शोधक माना गया है। आंवला के फल में विटामिन सी- प्रचुर मात्रा में मिलता है। आंवले को आयुर्वेद में सर्वगुण सम्पन्न माना गया है इसका उपयोग औषधीय के रूप में नेत्र रोग एवं पेट संबंधी रोगों के उपचार में किया जाता है। पौराणिक मान्यता

* सहायक प्राध्यापक (वनस्पति शास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मी बाई कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

के अनुसार कार्तिक माह की शुक्ल पक्ष की नौंवी तिथि को आंवला नवमी में इस वृक्ष की पूजा कर इसके नीचे बैठ कर सामूहिक भोजन करना शुभ माना जाता है।

बौद्ध एवं जैन धर्म में भी वृक्षों को सम्माननीय एवं पूजनीय दृष्टि से देखा गया है। भगवान बुद्ध को पीपल के नीचे बुद्धत्व की प्राप्ति हुई थी तभी से इसे बोधिवृक्ष कहा गया। जैन धर्म में तपस्या के उपरांत सभी तीर्थकरों को कैवल्य ज्ञान (विशुद्ध ज्ञान) की प्राप्ति किसी न किसी वृक्ष की छाया में हुई थी जिससे इन वृक्षों को केवली वृक्ष कहा जाता है। कुरान एवं मजीद में जिन वृक्षों की महिमा का वर्णन किया गया है उसमें खजूर, बेरी, जैतून, मेहंदी, अनार, अंजीर, अंगूर आदि प्रमुख है।

वर्तमान समय में ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन पर्यावरणीय असंतुलन, जैव विविधता के ह्रास आदि पर्यावरण से जुड़ी समस्याएँ हमारे सामने विकराल समस्या लिए खड़ी है।

भारतीय संस्कृति एवं जीवन पद्धति ने हमें प्रकृति के साथ चलने की शिक्षा दी है। पर्यावरण ह्रास को बचाने के लिए भारतीय संस्कृति में वनस्पति पूजन से जुड़ी हुई ये सभी परंपराएँ जो पर्यावरण संरक्षण की भावना लिए हुए है जिसका उद्देश्य पूजन एवं धर्म के माध्यम से मानव के अवचेतन मन में पर्यावरण संरक्षण के बीज को रोपित करना है। इन समस्याओं का निराकरण हेतु मानव को पुन: वेदों में लौटना होगा जिनमें कि प्रकृति व मानव के संतुलन पर सर्वाधिक जोर दिया गया है तथा उनमें प्रतिपादित नियमों का पालन करना होगा। तभी मानव अपने पर्यावरण को संरक्षित करने में यथोचित भूमिका निभाएगा और पुन: अपने जीवन को स्वस्थ्य एवं सुखमय बना सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Prakash V. (1998) Indian Medicinal plants, current status. Ethno botany, 10:112-121
2. सिन्हा राकेश कुमार रवि –गाथा वट वृक्ष की अभिव्यक्ति team abhi@abhivyaktihindi.org.
3. Dey. K.L. and Bahadur R. (1973) Aegle marmelos, In indigenous drugs of India II edn. Pama primlane 12-13
4. ब्रम्ह्य वैवर्त पुराण, प्रकृति खंड: 22: 33–34
5. Internet resources
6. Jain, SK (1981) Glimpses of Indian Ethnobotany Oxford & IBH, New Delhi

****

Evolution Of 4G Wireless Technology

Prachit Ojha *

Abstract - Today is the era of new wireless communications. Eventually it will penetrate into our daily life and change the way we live just like many technological advancements whose original idea came from the life needs.Wireless data services are expected to see the explosive growth in demand that Internet services and wireless voice services have seen in recent years. Mobile phones are rapidly becoming the preferred means of personal communication, creating the world's largest consumer electronics industry. The first generation of wireless mobile communications was based on analog signalling. The second generation (2G) of the wireless mobile network was based on low-band digital data signalling. Global Systems for Mobile Communications (GSM) is the most popular 2G wireless technology which is being used in India.General Packet Radio Service (GPRS) and Enhanced Data Rates for Global Evolution (EDGE) etc. also come under 2G.

There is some restriction in 1G & 2G technologies for speed & security so to improve the speed & security there is need of new technology & therefore the 3G comes in picture.3G wireless technology represents the convergence of various 2G wireless telecommunications systems into a single global system that includes both terrestrial and satellite components.Third Generation (3G) mobile devices and services will transform wireless communications into on-line, real-time connectivity. 3G wireless technology will allow an individual to have immediate access to location-specific services that offer information on demand.Next fourth generation (4G) mobile technology, promises the full mobility with high speed data rates and high-capacity IP-based services and applications while maintaining full backward compatibility.

Introduction - The mobile communication systems and the wireless communication technologies have been improving very fast day by day. Devices continue to shrink in size while growing in processing power. Consumers are demanding more advanced and useful applications. Hence, there is need of capacity improvements in wireless communications .In addition, wireless communications is active areas of technology development of our time. Several major cellular wireless communication techniques have been proposed in order to meet these user expectations. From all future 4G systems, the primary expectation is that they provide enormously high data rates to an excessive number of users at the same time.

First generation (1G) a wireless network was basically analog cellular systems with circuit switched network architecture. The main challenges of these wireless networks were basic voice telephony, low capacity and limited local and regional coverage. The increased demand for high frequency ranges in the telecommunications sector caused development in analog to digital transmission techniques.

In the early 1990s, second generation (2G), arrived to meet the capacity demands of burgeoning voice plus telephony, text messaging and limited circuit switched data services. By utilizing digital system, the signal can be compressed much more efficiently than analog system, allows transmitting more packets into the same bandwidth and propagates with less power.

The third generation (3G) systems integrate voice and data applications.3G wireless technologies allow an individual to have immediate access to location-specific services that offer information on demand. The next step was Long-Term Evolution (LTE). LTE aims to improvingthe Universal Mobile Telecommunication System (UMTS)mobile phone standard to cope with future requirements. With the deployment of LTE, the wireless revolution willachieve an important milestone.For the first time, a wide-area wireless network will beuniversally deployed that has been primarily designed for IPcentric broadband data (rather than voice) from the verybeginning. LTE also is rapidly becoming the dominant globalstandard for fourth generation cellular (4G) networks with nearly allthe major cellular players behind it and working toward itssuccess.

Evaluation Of LTE-Advanced - Long term evolution (LTE) specified by 3rd Generation Partnership Project (3GPP) as very high flexible for radio interfacing. LTE deployment started in the last of 2009, where the first LTE release is providing greatest rate reaches to 300Mbps, delay of radio network not as much of than 5msec, aspectrum significant increasing in efficiency of spectrum ifcomparing with any other cellular systems, and a differentregular architecture in radio network that is designed to shortenthe operations and to decreasing the cost. LTE systems aresupporting Frequency Division Duplex (FDD) with TimeDivision Duplex (TDD) technique as a varied array ofbandwidths to operating in a wide amount of dissimilarspectrum allocations. The standardization of LTE in 3GPP isgotten an established state, and the modifications in the designare narrow.

* Student, S.V.I.T.S, Indore (M.P.) INDIA

Form the end of 2009, the LTE system has beeninstalled as a normal growth of GSM (Global system formobile communications) and UMTS. The ITU (International Telecom munication Union) has devised the IMT-Advancedterm to recognize the new mobile systems that capable to going beyond IMT 2000 (International Mobile Telecommunication s).Exactly, the requirements of data rate have been amplified. Toproviding applications and other advanced facilities,then 1Gbps for low and 100Mbps for high mobility scenarios shouldbe comprehended. Since 2009, 3GPP has operated on aresearch with objective to identify the required enhancementsfor LTE systems to achieve the requirements of IMT Advanced.In September 2009 the partners of 3GPP have prepared the official suggestion to the proposed new ITU systems, represented by LTE with Release 10 and beyond to bethe appraised and the candidate toward IMT-Advanced. Afterattaining the requirements, the main object to bring LTE to theline call of IMT-Advanced is that IMT systems must becandidates for coming novel spectrum bands that are still to beacknowledged.

Reasons to have 4G:

1. Support interactive multimedia services: Teleconferencing, wireless internet etc.
2. Wider bandwidths, higher bit rates.
3. Global mobility and service portability.
4. Low cost.
5. Scalability of mobile networks.

New in 4G:

1. Entirely packet-switched networks.
2. All network elements are digital.
3. Higher bandwidths to provide multimedia services at lower cost (up to 100Mbps).
4. Tight network security.
5. Adaptive array technology.
6. Ultra wide band technology.
7. Simulation and analysis of advanced adaptive modulations/coding schemes.
8. Reconfigurable radio systems.
9. Self-organizing networks end-to-end mobile IP and adaptive QoS (Quality of Service)
10. Simulation and analysis of MIMO techniques with multi-element array antennas at both ends of the link.

Need And Opportutnites For 4G - Fourth generation (4G) technology will offer many enhancements to the wireless market, including downlink data rates well over 100 megabits per second (Mbps), low latency, very efficient spectrum use and low-cost implementations. With remarkable network capabilities, 4G promise to bring the wireless communication to an entirely new level with impressive user applications, such as sophisticated graphical user interfaces, high-end gaming, high-definition video and high-performance

The use of the 4G service will be very similar to that of the 3G service but4G offers much higher data transfer rates and therefore allowing either more speed applications or more users to experience good speeds whilst only connected through 1 carrier.

Opportunities in 4G :

1. It is expected and predicted that consumers will continue to replace handsets with newer technology at a fast rate.
2. Desirable higher data capacity rates, the growth opportunity for 4G is very bright and hopeful.

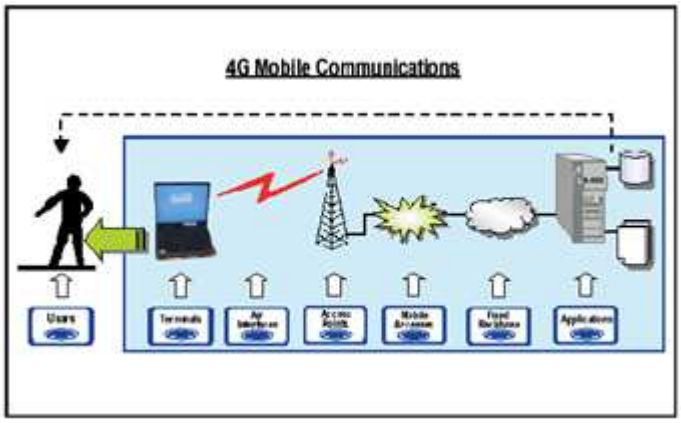

4G wireless Technologies - As radio spectrum is the primary resource for wireless technologies, the main thrust of 4G research worldwide is directed towards spectrally efficient systems. New powerful technology that emerged recently promises a tenfold improvement in spectral efficiency over existing solutions. These potential 4G tools and techniques includeOFDMA (Orthogonal Frequency Division Multiple Access) and MC-CDMA (Multiple Carrier Code Division Multiple Access). Another more radical access scheme for the downlink is a single queue packet-based system.

One of 4G's technologies is orthogonal frequency division multiplexing (OFDM). OFDM, a form of multi-carrier modulation works by dividing the data stream for transmission at a bandwidth B into N multiple and parallel bit streams, spaced B/N apart. Each of the parallel bit streams has a much lower bit rate than the original bit stream but their summation can provide very high data rates. Orthogonal sub-carriers modulate the parallel bit streams, which are then summed prior to transmission.

An OFDM transmitter accepts data from an IP network converting and encoding the data prior to modulation. An IFFT (Inverse Fast Fourier Transform) transforms the OFDM signal into an IF analogy signal which is sent to RF transreceiver. The receiver circuit reconstructs the data by reversing this process. With orthogonal sub-carriers the receiver can separate and process each sub-carrier without interference from other sub-carriers. More impervious to fading and multipath delays than other wireless transmission techniques. OFDM provides better link and communication quality.

Using OFDM, it is possible to exploit the time domain, the space domain, the frequency domain and even the code domain to optimize radio channel usage. It ensures very robust transmission in multi-path environments with reduced receiver complexity. As shown in *Figure,* the signal is split

into orthogonal subcarriers, on each of which the signal is "narrowband" (a few kHz) and therefore immune to multi-path Effects, provided a guard interval is inserted between each OFDM symbol. OFDM also provides a frequency diversity gain, improving the physical layer performance. It is also compatible with other enhancement technologies, such as smart antennas and MIMO.OFDM modulation can also be employed as a multiple access technology (Orthogonal Frequency Division Multiple Access; OFDMA). In this case, each OFDM symbol can transmit information to/from several users using a different set of subcarriers (sub channels). This not only provides additional flexibility for resource allocation (increasing the capacity), but also enables cross-layer optimization of radio link usage.

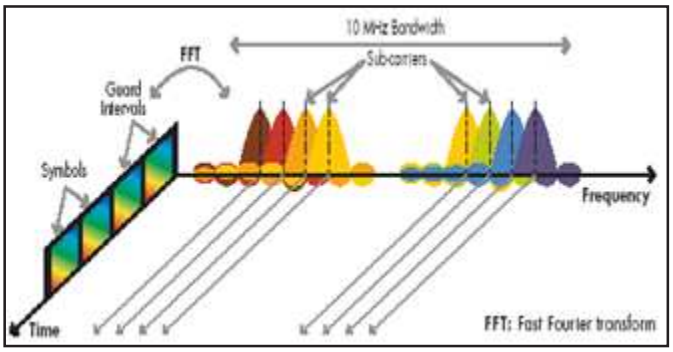

OFDM Principal of FFT

4G Network Architecture - Figure belowshows the widely accepted 4G network structure with IP as the core network used for communication; integrating the 2G, 3G and 4Gtechnologies using a convergence layer.

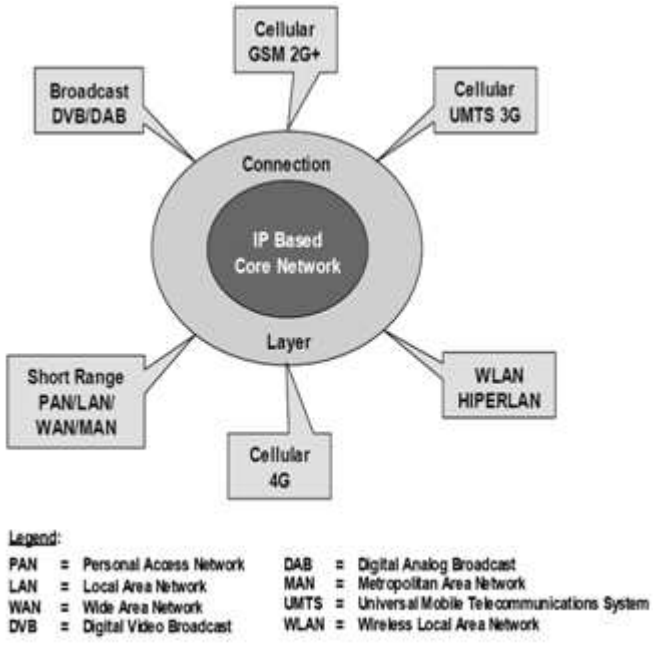

4G Network Structure

Figure belowshows the proposed layered/level Architecture of 4G network. The architecture is based on Internet Protocol version 6 (IPV6) which operates at the transport layer enabling seamless communication across various heterogeneous networks and based on the key factors such as mobility, Quality of Service (QoS) and efficient resource management schemes. The functionalities provided by each layer and module can be described as follows:

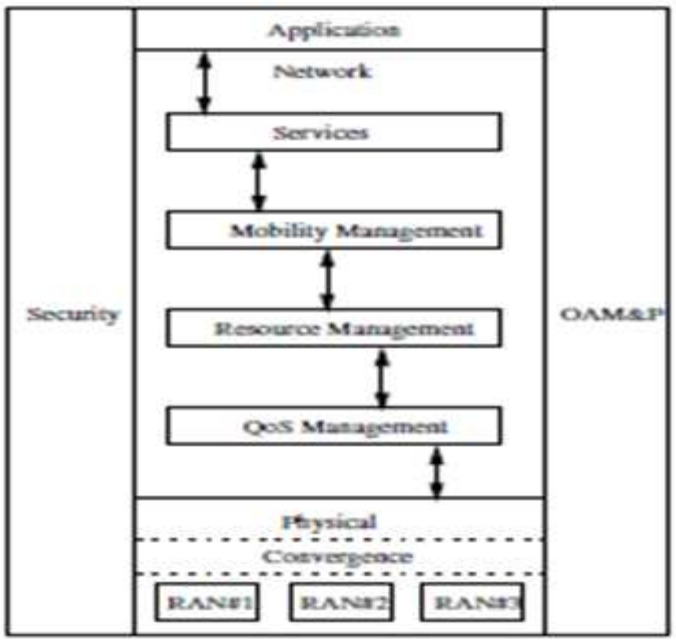

Layered 4G architecture

1) Application - This layer is composed of various third partyapplications which provide value added services to itssubscribers.

2) Network- This layer consists of various sub layers described asfollows:

- **Services -** This layer manages the interaction betweenvarious value-added services and networks.
- **Mobility Management -** This layer provides quality and uniform services to the mobile/stationary terminal across various heterogeneous networks. It provides features of low handover latency and packet loss during the provision of real-time and non-real time services to the end user moving across different networks. To achieve this, it performs tasks such as binding update (updating the care-off address of the mobile user), location management, common control signal-ling (signalling required to perform wireless network discovery),address assignment, handover control mechanism & so forth.
- **Resource Management -** This layer incorporates the functionalities of allocation, de-allocation and deallocation of the network resources which are acquired during the comm unication sessions within the same or different network do-mains. This activity is performed during orbefore the communi-cation activity. This layer also performs the task of congestion control, packet scheduling & packet classification.
- **Quality of service (QoS) management -** This layer provides best optimal utilization of the available resources. In scenarios where the network resources are limited it provides an option to the applications to choose between high overall throughput and low end-to-end delay. It provides

the best trade-off mechanisms depending on the application's preference. It encompasses several activities such as link utilization control, bandwidth control and so forth.

3) Physical - This layer consist of the core IPV6 network of 4G andother heterogeneous access networks such as GSM (GlobalSystem for Mobile communications), CDMA (CodeDivision Multiple Access) and WLAN in their physical view. This layer is composed of two sub-layers namely:

- **Convergence layer -** This layer provides common control signallingmechanism across the core and other heterogeneousnetworks at the physical level. It also allows differentradio access networks to transparently use the independent network services such as mobility management, resource management and QoS management.
- **Different RAN -** This layer consists of several radio access networks communicating with each other at the physical level.

4) Operation, Administration, Maintenance and Provisioning - This layer spans across all the layers of the networkarchitecture and provides the functionalities of networkcontrolling, network monitoring and fault detection. It alsomaintains the repudiation between various services andresources of several heterogeneous and core networks.

5) Security - This layer also branches across all the layers of the 4Gnetwork architecture which perform the function ofauthentication, authorization, encryption, establishment andimplementation of service policy agreement between thevarious vendors.

Applications Of 4G -

Applications could include:

1. 4G Ultra high speed internet access.
2. 4G Multiple User Video.
3. 4G Location-based services - a provider sends wide spread, real time weather or traffic conditions to the computer or phone, or allows the subscriber to find and view nearby businesses or friends whilst communicating with them.
4. 4G Tele-medicine - a medical provider monitors or provides advice to the potentially isolated subscriber whilst also streaming to them related videos and guides.
5. 4G High Definition Video on demand - a provider sends a movie to the subscriber.
6. 4G Video games on demand.
7. 4G HDTV - a provider redirects a high definition TV channel directly to the subscriber where it can be watched.
8. 4G Data intensive interactive user services - Services such as online satellite mapping will load instantly.
9. Virtual navigation and telegeoprocessing. -You will be able to see internal layout of a building during an emergency rescue. This type of application is referred to as 'telegeoprocessing'

Conclusion - This paper presented a brief description of path to 4G networks, LTE Network architecture and OFDMA technology.As we observe from the evolution of mobile communication networks, attempts have been made to reduce a number of technologies to a single global standard. 4G systems offer a standard that can be implemented worldwide through its key concept of integration.The fourth generation promises to fulfil the goal of PCC (personal computing and communication)—a vision that provides high data rates everywhere over a wireless network.

References :-

1. Agilent Technologies, Moray Rumney - LTE & the Evolt ion to 4G Wireless: Design & Measurement Challenges.
2. Stefan Parkvall, Johan Skold - 4G: LTE/LTE-Advanced for Mobile Broadband
3. Sofoklis Kyriazakos, Ioannis Soldatos, George Karetsos - 4G Mobile and Wireless Communications Technolo gies.
4. 4G - Beyond 2.5G and 3G Wireless Networks.Mobile Info.com.
5. www.electronicsforu.com/EFYLinux/efyhome/.../Mobile-tech.pdf www.searchtelecom.techtarget.com.
6. www.electronicdesign.com/content/evolution-lte.

****

Impact of cyber crime among college students

Priyanka Singh * Dr. Chandra Kumari * *

Introduction - Crimes in communities are considered an integral part of deviant human behavior, regardless of the individual's degree of culture and economic and scientific maturity. In this regard, each state strives to set limits to reduce the crime rates. However, statistics indicate that crime rates have in fact increased, especially in the wake of the technological progress which has been occurring worldwide. The technological outbreak led to the emergence of new crimes that differed from traditional ones in terms of their parties, location, topics and methods of perpetration. Computers and the internet provide another tool for the criminal and an abundance of targets within global reach. Cyber crime concerns the use of the internet either as the means of committing a criminal offence or as a tool, hi tech crime concerns the use of computers and other communi- cations devices. Internet crimes have been defined as those transnational crimes, which are committed on the internet or via the internet by someone who is well acquainted with it75. The emergence of the first internet crime dates back to 1988. The first crime was the viral attack, known as Morism worm 1988. The Internet is utilized to commit all types of electronic crimes, such as the theft of credit cards for online purchasing, theft of passwords for accessing websites & sending emails, obstructing them, and causing dysfunction ;or obtaining security,military,political,economic & commer- cial data, plant destructive viruses, sneaking into personal secrets & disseminating pornographic material, whether film- ed or recorded material, which tamper with the moral values of a society.

Internet, though offers great benefit to society, also present opportunities for crime using new and highly sophisticated technology tools. Today e-mail and websites have become the preferred means of communication. Organizations provide Internet access to their staff. By their very nature, they facilitate almost instant exchange and dissemination of data, images and variety of material. This includes not only educational and informative material but also information that might be undesirable or anti-social.It has rightly been said**-"The modern thief can steal more with a computer than with a gun. Tomorrow's terrorist may be able to do more damage with a keyboard than with a bomb"**

As more organizations move their facilities and services online, we have to realize that as much as malicious parties are able to exploit the physical world in a series of attacks and frauds, the online world by no means is also susceptible to attacks of any form. In fact, vulnerabilities that are not present in the physical world exist online, due to the nature of the technology itself. A system is never free from exploitation; if it is now, it simply means that the means for misuse has not been discovered yet. Cyber crime as it is called will become more prevalent as the years go by due to the reasons above and due to the fact that societies are becoming more dependent upon technology. If we sit down and think about it we already know the various forms of attacks and abuses that are already present in the internet. Virus attacks, denial of service, cyber pornography, cyber stalking, and email spoofing, online gambling are becoming very common in the internet world. **The Cambridge dictionary defines cyber crimes as" crimes committed with the use of computers or relating to computers, especially through the internet"**

Virus Attack - Computer viruses are dangerous, mysterious and grab our attention; on the other hand, they show us how vulnerable we are. A properly engineered virus can have an amazing effect on the world wide internet. Then again they do show how sophisticated and interconnected human beings have become. Most people are aware of the existence of viruses and hear about them through the mass media. Viruses strike fear into many computer users' hearts, which cringe when they imagine files being deleted or corrupted or their computers being damaged. A virus is a type of program that can replicate by making (possibly modified) copies of it. The main criterion for classifying a piece of executable code as a virus is that is spread itself by means of "hosts". A virus can only spread from one computer to another when its host is taken to the uninfected computer, for instance by a user sending it over a network or carrying it on a removable disk. Additionally, viruses can spread to other computers by infecting files on a network file system or a file system that is accessed by another computer. In a way, computer viruses behave in a way similar to a biological virus, which spreads by inserting itself into living cells.

Denial- of- Service- A 'denial-of-service' attack is described as an intentional attempt to disrupt computer networks to prevent legitimate users of a service from using that service.

Examples included -

1. "flooding" a network, thereby preventing legitimate network traffic.
2. attempts to disrupt connections between two machines, thereby preventing access to a service.
3. attempts to prevent a particular individuals from accessing

* Research Scholar (Home Science) Banasthali Vidyapith (Raj.) INDIA
** Associate Prof. (Home Science) Banasthali Vidyapith (Raj.) INDIA

a service.

4. attempts to disrupt service to a specific system or person.

DOS attacks have become more common, not only against giant commercial websites, but to almost any websites available on the internet.

Cyber Pornography - Cyber pornography include porno-graphic websites; pornographic magazines produced using computer to publish and print the material and the internet to download and transmit pornographic photos, writings etc. the internet is being highly used by its abusers to reach and abuse children sexually, worldwide. Its explosion has made the children a viable victim to the cyber crime. As more homes have access to internet, more children would be using the internet and more are the chances of falling victim to the aggression of pedophiles. The easy access to the porno- graphic content readily and freely available over the internet lowers the inhibitors of the children.Pedophiles lure the children by distributing pornographic material, & then try to meet them for sex or to take their nude photographs including their engagement in sexual positions. Sometimes pedophiles contact children in the chat room posing as teenagers or a child of similar age, and then they start becoming friendlier with them and win their confidence. Then slowly pedophiles start sexual chat to help children shed their inhibitions about sex and then call them out for personal interaction. Then starts actual exploitation of the children by offering them some money or falsely promising them good opportunities in life. The pedophiles then sexually exploit the children either by using them as sexual objects or by taking their pornographic pictures in order to sell those over the internet.

Cyber Stalking - Cyber stalking can be defined as the repeated acts harassment or threatening behavior of the cyber criminals towards the victim by using internal services. Stalking in general terms can be referred to as the repeated acts of harassment targeting the victim such as following the victim, making harassing phone calls, killing the victims pet, vandalizing victims properly, leaving written messages or objects. Stalking may be followed by serious violent acts such as physical harm to the victim and the same has to be treated and viewed seriously. It all depends on the Course of conduct of the stalker. Both kind of stalker as online & offline have desire to control the victims life. Majority of the stalkers are the dejected lovers or ex-lovers, who then want to harass the victim because they failed to satisfy their secret desire. Most of the stalkers are men & victim female.

Email Spoofing - A spoofed email is one that appears to originate from one source but actually emerged from another source. Falsifying the name and/ or email address of the originator of the email usually does email spoofing. Usually to send an email the sender has to enter the following information:

1. email address of the receiver of the email
2. email address(es) of the person(s) who will receive a copy of the email
3. Email address (es) of the person(s) who will receive a copy of the email but who identities will not be known to the other recipients of the email.
4. Subject of the message(a short title/ description of the message)
5. message

Email spoofing can cause monetary damage.

Online Gambling - There are millions of websites; all hosted on servers abroad, that offer online gambling. In fact, it is believed that many of these websites are actually fronts for money laundering.Computers are the hottest crime tool today. Internet addiction in the long run takes form of cyber crimes. The rate of cyber crime is rising in our society. Cyber crime is a crime committed with the use of computers or relating to computers, especially through the internet.

The present investigation aims to assess if the internet usage could be considered addictive and to explore the problems created by such misuse. It will help in making students more conscious towards internet addiction as well as cyber crime. Through this study the investigator aims to assess the awareness of respondents on widespread forms of cyber crime over the net and make them aware of the same. This helped the researcher select the appropriate responses to deal with the problems. Hence, in the light of the above discussion the problem was stated as **"Impact of cyber crime among college students" with the following objectives:**

1. To assess the awareness of PG students regarding cyber crime
2. To study the degree of relationship of internet addiction and cyber crime.

Methods - The area selected for the present study was Banasthali Vidyapith in district Tonk, (Rajasthan).The study was conducted on PG girls. Being first women university and second in general where working hours every student are allowed to use computer by booking & also pcs are provided in the hostels. All the PG students' have access to computers. Since it was not easy to study the entire population, sample was selected from five streams i.e. MBA, MCA, HOME SCIENCE, LIFE SCIENCE, ARTS. Sampling was done on the basis of convenient sampling method.20 respondents from each stream for administering the internet addition test & cyber crime awareness questionnaire. Hence, the final sample size was 100.

Instruments –

Internet Addiction Scale - The scale was developed by Dr. Kimberly Young (1998). It measure degree to which internet use affect daily routine, social life, productivity, sleeping pattern, and feelings. It measures mild, moderate and severe level of addiction.

Cyber Crime Awareness Questionnaire-The ques- tionnaire was developed by the investigator comprised of both open ended and close ended questions which consisted of 51 questions. The questionnaire was constructed to assess the awareness of students regarding cyber crime and also though a small effort was done to disseminate information about cyber crimes. The open ended questions were analyzed qualitative and the close ended questions were quantitative analyzed. Where ever there was possibility for scoring the responses it was recorded in term of "yes" and "no. For each question if answered yes the score was 1 and if no the score was 0.

Results of the study – The findings of the study have been divided and discussed under the following subheads-

A. Assessment of awareness of PG students regarding cyber crime.

B. Assessment of degree of relationship between internet addiction and cyber crime.

A. Assessment of awareness of PG students regarding cyber crimes. Awareness of respondents had been assessed under different subheads:

Table 1: Percentage & frequency distribution of res pondents for preferred computer for personal use or for work.

Preferred computer for personal use or work	Frequency	Percentage (%)
Desktop	88	88%
Laptop	12	12%

Table 1 indicates that majority of respondents (88 percent) prefer desktop for their personal use as well as for their work as PC had been provided in students hostels and also in working hours. They can use it through booking and rest of the respondents (22 percent) uses personal laptop.

Table 2: Percentage and Frequency distribution of respondents regarding use of computer and the internet.

Use of computers & the internet	Frequency	Percentage (%)
>9hr/day	2	2%
4-9hr/day	70	70%
1-4hr/day	22	22%
<1hr/day	6	6%

Table 2 indicates that of the 100 people surveyed we have 70 percent respondents who use the internet for 4-9hrs/day.22 percent respondents indicated 1-4hrs/day usage, while 6 percent respondents declared using the internet for less than an hour/day. The least majority of respondents i.e. 2 percent use the internet more than 9 hours/day. Hence, the majority uses the internet for 4-9hrs/day and the minimum majority used internet more than 9hrs/day.

Table 3: Percentage and Frequency distribution of respondents regarding antivirus and infection.

Antivirus and infections	Yes		No	
	Freq.	Per. (%)	Freq.	Per. (%)
Antivirus/firewall installed in system	88	88%	12	12%
infected by virus(es)	50	50%	50	50%
virus concern	80	80%	20	20%

Table 3 indicated the responses whether the respondents have antivirus and firewall installed in the computer they use. They were also asked whether they have been infected with viruses while having antivirus installed within their computer. Further the respondents were asked whether they are generally concerned over viruses and whether they feel that virus attacks will become a problem in the near future.

From the table it can be seen that most of the respondents (88 percent) do have antivirus software and firewall. Only 12 percent indicated no possession of antivirus and firewall in the computer they use. 50 percent respondents who do have experience with computer viral infections and 50 percent have not been infected by virus. Further it was seen that 80 percent respondents feel that virus will be a major problem in the region of cyber crime in the future while 20 percent don't think it as a major problem. It is reassuring to see that people are still concerned of their security.

Table 4: Percentage and Frequency distribution of respondents regarding well known viruses.

Well known viruses	Yes		No	
	Freq.	Per. (%)	Freq.	Per. (%)
Melissa	14	14%	86	86%
MsBlaster	20	20%	80	80%
Funny.exe	15	15%	85	85%
MyDoom	22	22%	78	78%
Bagle	10	10%	90	90%

Our above conclusion was reinforced by further question in the questionnaire; the table above shows whether the respondents have heard of some of the more famous virus. Many respondents do not know about the virus listed. For every one of the viruses listed, less than half the respondents has heard of them. In case of bagle 90 percent respondents have not heard of it and only 10 percent have heard of it. In case of MyDoom 78 percent respondents have not heard yet and only 22 percent have heard of it. In case of funny.exe 85 percent respondents have not heard and 15 percent have heard if it. In case of MsBlaster 80 percent have not heard and 20 percent respondents have heard. In case of Melissa 86 percent respondents have not heard and 14 percent have heard of it. From above results, it is clear that majority of the respondents have not heard of the viruses and few people from the sample population know about it.

Table 5: Percentage and Frequency distribution of respondents regarding computer scanned for virus.

Computer scanned for virus	Frequency	Percentage (%)
Real time scanning	10	10%
Daily	9	9%
Weekly	13	13%
Rarely	68	68%

Table 5 indicates that majority of respondents (68 percent) rarely scan their computers for virus, 13 percent respondents scan their computers weekly, 9 percent respondents scan their computers daily for virus and 10 percent respondents do real time scanning which is beneficial for the computers for their longer use.

Table 6: Percentage and Frequency distribution of respondents for awareness regarding Denial of service (DOS)

Denial of service	Yes		No	
	Freq.	Perc. (%)	Freq.	Perc. (%)
DOS and people	26	26%	74	74%
Websites affected by DOS	10	10%	90	90%
Concern over DOS	63	63%	37	37%

Table 6 indicates the information about denial of service (DOS) which has been collected through a survey. From above graph it is clear that majority of respondents (74 percent) are unaware of DOS and only 26percent respondents have heard of DOS. It also seems that majority of respondents (90 percent) have never witnessed any kind of dos attacks, only 10 percent are there who have witnessed the dos attack and the website that was inaccessible was due to dos attach was yahoo.com.The graph also shows that respondents don't know much about dos attack still they are concern about the problem, 63 percent agree that

dos will become more common in future and 37 percent respondents do not accept that dos will become more common in the future.It can be concluded that majority of respondents don't know about the DOS still they show concern as they know it can create a big problem in the future.

Table 7: Percentage and Frequency distribution of respondents for awareness regarding cyber pornography.

Cyber pornography	Yes		No	
	Freq.	Perc.(%)	Freq.	Perc.(%)
Pornography and people	74	74%	26	26%
Banning child pornography	98	98%	2	2%
Government interference	58	58%	42	42%
Sensual material/crime against women	90	90%	10	10%
Censoring by parents	98	98%	2	2%
Warning pages for adult sites	92	92%	8	8%
Server to access/monitor the material	62	62%	38	38%
Server to delete/censor the material	66	66%	34	34%

Table 7 indicates that majority of respondents (74percent) have heard about cyber pornography and only 26 percent have not yet heard of pornography. 98 percent respondents agree that child pornography should be banned and 2 percent respondent think pornography should not be banned. 58 percent respondents sat that government should legislate the internet but 42 percent do not agree to this statement.90 percent believe that sensual material encourages crimes against women and 10 percent say sensual material do not play role in encouraging crime against women.98 percent respondents believe that parents should censor the use of net by children and 2 percent respondents believe that there should be no interference of parents while using net by children.92 percent respondents indicate that there should be warning page for adult websites while 8 percent do not agree to this.62 percent respondents believe that sever should monitor the material they provide but 38 percent still do not agree with this.66 percent respondents also said that server should have right to delete any material they feel is illegal or offensive and also should censor the material they provide.

It can be said that majority of respondents know about pornography and they showed their awareness toward this problem. And also people want to discard this kind of behaviour from their society and for this it is needed those proper steps should be taken so that it would be beneficial for everyone especially for children as the victims for pornography are children in our society.

Table 8: Percentage and Frequency distribution of respondents regarding awareness about cyber stalking.

Cyber Stalking	Yes		No	
	Freq.	Perc.(%)	Freq.	Perc.(%)
People and cyber stalking	**12**	**12%**	**88**	**88%**
Police training/awareness toward cyber stalking	**82**	**82%**	**22**	**22%**
Cyber stalking concern	**65**	**65%**	**35**	**35%**

Table 8 shows that majority of respondents (88 percent) have never heard of cyber stalking, only 12 percent of them have heard of it. It can be seen that even after not hearing about stalking majority (82 percent) suggested that police should have sufficient training in investigating stalking crimes and also police should have awareness of the needs of stalking victims, 22 percent deny to this responses. and above all 65 percent think cyber stalking will become common in future still 35 percent respondents do not agree to this.

Table 9: Percentage and Frequency distribution of respondents for perception of stalking.

Perception on stalking	Frequency	Percentage (%)
Don't know anything	76	76%
Happened to celebrity	10	10%
Media fuss over nothing	4	4%
Only deranged people do it	8	8%
People trying too hard to get dates	2	2%

Table 9 indicates the perception of respondents towards stalking. It was seen that 76 percent of the sample population do not know anything about cyber stalking, 10 percent think that it only happens to celebrity, 8 percent thought it as only deranged people do all this kind of activities, 4 percent take it as media fuss over nothing and at last 2 percent think that people do it when they are trying hard to get dates and are unable to get so.

So we can conclude that people are unaware of the crimes using computers which are happening in society, country and they need to be given proper guidance.

Table 10: Percentage and Frequency distribution of respondents about victims of stalking.

Victims of stalking	Frequency	Percentage (%)
Men	12	12%
Women	56	56%
Children	32	32%

Table 10 shows that majority (56 percent) of respondents believe that women are more stalked and this has been proofed from the researches that women are more stalked through harassing phone calls, killing the victims pet and the stalker are dejected lovers or ex lovers.32 percent believe that children are stalked as children are now days more prone to any kind of threatening. And at last 12 percent believe that men are stalked.

Table 11: Percentage and Frequency distribution of respondents for effective police response towards cyber stalking.

Effective police response toward cyber stalking	Frequency	Percentage (%)
Informal warning	10	10%
Formal warning	62	62%
Restraining orders	6	6%
Arrest	22	22%

Table 11 indicated that majority (62 percent) of sample population think formal warning is the effective police response towards cyber stalking, 22 percent think that arrest is the effective response showed by police, 10 percent thought informal warning is the effective response of the police towards stalkers and 6 percent responded that restraining orders are the most effective police response towards cyber stalking.

Table 12: Percentage and Frequency distribution of respondents regarding email spoofing.

Email Spoofing	Yes		No	
	Freq.	Perc. (%)	Freq.	Perc.(%)
Email spoofing & people	12	12%	88	88%
Email spoofing &concern	58	58%	42	42%
Spoofing causes money damage	12	12%	82	82%
Spoofing spoils relationship	58	58%	42	42%
Spoofed email spread misinformation	52	52%	48	48%

Table 12 indicated that 88 percent respondents have never heard of email spoofing as it is the emerging crime over computer now prevalent in our country also, 12 percent of respondents have heard of email spoofing.58 percent think that email spoofing is going become to become big problem in India and 42 percent do not believe so.82 percent people respondent that email spoofing do not cause monetary damage and rest (12 percent) of the respondents believe that it cause monetary damage.58 percent responded that email spoofing can spoil the relationship and 42 percent said there is no harm on relationship of an individual due to email spoofing.52 percent responded that misinformation is spread by spoofed mails and 48 percent believed that misinformation is not spread by spoofed mails.

Table 13: Percentage and Frequency distribution of respondents regarding online gambling.

Online Gambling	Yes		No	
	Freq.	Perc.(%)	Freq.	Perc. (%)
Online gambling and people	40	40%	60	60%
Witness of online gambling	19	19%	81	81%
Harmful for individual/country	90	90%	10	10%

Table 13 indicated that only 40 percent respondents know about online gambling and 60 percent are unaware about online gamling.when asked about if witnessed some form of online gambling over the internet 81 percent responded no and 19 percent have witnessed some or the other form of online gambling.90 percent respondents said it can be harmful for an individual, company and country and 10 percent said there is no harm to anyone due to online gambling.

Table 14: Percentage and frequency distribution of respondents regarding cyber crime.

Cyber crime	Yes		No	
	Freq.	Perc.(%)	Freq.	Perc.(%)
Cyber crime-burning issues	35	35%	65	65%
Internet promotes sale of illegal articles	27	27%	73	73%
Internet promotes financial crimes	20	20%	80	80%
People involved in software piracy	23	23%	87	87%
Law to prevent cyber crime	85	85%	15	15%
Education to parents/students for cyber crime	98	98%	2	2%

Table 14 depict that according to 35 percent of respondents cyber crime is a burning issue which can harm an individual while 65 percent respondents did not considered cyber rime as a burning issue.27 percent respondents reveals that internet promotes the sale of illegal articles while 73 percent do not show a favorable attitude towards this. Only 20 percent agree that internet promotes financial rimes while other 80 percent do not agree that internet promotes sale of illegal articles.23 percent respondents believe that people are more involved in software piracy while 87 percent says that less people are involved in software piracy. 85 percent respondents are in favour of making stricter law to prevent cyber crime this is due to people are less aware of cyber crimes which is being now highlighted in our country while 15 percent says that there is no need of laws to prevent cyber crimes. But 98 percent respondents believe that parents and students should be given knowledge about cyber crimes so that they can stop or prevent him incidences of cyber crimes while 2 percent respondents believe there is no need of education on such topic.

Table 15: Percentage and frequency distribution of respondents regarding cyber crime.

Cyber crime	Yes		No	
	Freq.	Perc.(%)	Freq.	Perc.(%)
Youth misuse internet facility	98	98%	2	2%
Cybercafé shouldhave camera	95	95%	5	5%
Records of net users in cafe	90	90%	10	10%
Children safe in cyber land	4	4%	96	96%

Table 15 reveals that 98 percent respondents agree that they misuse their internet facilities and only 2 percent of sample population do not misuse the internet facility.95 percent indicated that cyber café should have camera so that if anyone doing anything wrong they can be caught red handed while 5 percent respondents think that no camera should be provided as privacy of an individual is hidered.90 percent responded that records should be maintained for those using net in cyber café while rest(10 percent)do not agree to this. Through this we can take one step in preventing the incidences of cyber crimes.96 percent respondents think that they are not safe in cyber land and they can face any kind of problems because they agree that majority of the student's misuses the internet facility while 4 percent said that they are safe in the cyber land.

B. Assessment of degree of relationship between internet addiction and cyber crime

Ho: There is no significant relationship between internet addiction and cyber crime among computer users (PG students).

Table 16: calculated r and t value between internet addiction and cyber crimes awareness.

Variables	Correlation	t value	significant
Internet addiction & cyber crime	0.45	5.72**	significant

** Significant at 0.01 level.

Table 16 indicates the correlation and t value of internet addiction and cyber crime. It is clear that there is positive correlation between internet addiction and cyber crime. t value is significant at 0.01 level of significance. Hence, null hypothesis is rejected which implies that there is significant correlation between internet addiction and cyber crime. The results indicate that internet addiction in long run might leads to cyber crime involvement as computers are the hottest crime tool nowadays. This study reveals that if an individual is internet addicted it leads them towards cyber crime like virus attack, denial of service, cyber

pornography, cyber stalking, and email spoofing and online gambling.

Conclusion- The internet- the global computer network which connects people throughout the world- sets the communication standards for the 21st century. Due to the increased number of possibilities and availability of information, the internet has for many of its users become more than a mere communication – information means. A great number of researches on the pathological use of the internet have shown that the number of users is increasing and that the phenomenon has started to acquire alarming dimensions. It is enough to say that 5-10% of the user population show maladaptive forms of the internet use. Internet addiction (the term used by most authors) shows all the characteristics of the dysfunctional behavior seen in other addiction disorders. The disorder hence affects family relation ships, professional and academic achievement, and physical health. Therefore, if we take into account all the characteristics included into the definition of mental health by the world health organization, regarding psychological, physical and social well being, it is more than evident that internet addiction rightfully deserves as much attention of scientific circles as other forms of addiction. Internet addiction can lead an individual towards cyber crime. Cyber crime rate is increasing in our society. There is greater need to provide knowledge or to develop awar eness among the people so as to minimize the rate of cyber crime and internet addiction.

Suggestions- Preventive education on internet addiction is quite important for students to recognize the risk of internet addiction and to practice the correct use of the internet from the beginning. There is a pressing need for the university authorities to look into this matter and develop intervention mechanism to overcome this new phenomenon that threatens to undermine the future human capital of the nation**.** Both parents and teachers need to work closely together to ensure that their Net- generation children are safe in cyber land. Some of the ways to stop the internet crimes is the implementation of internet law as well as cyber police. There is an effective publicity mechanism with a view to creating public awareness & enlightened public opinion.

References :–

1. Arellona, N. (2007).Computer crime: top threats in 2007. Available at http://www.crime-research.org/articles/com puter-crime-top-threats-in-2007/2 Retrieved on 19/17/17
2. Augustine, T.Paul. (2007).Cyber security. New Delhi. Crescent Pub.Corp.
3. Babu,M.,& Parishat,M.G.(2004).What is cybercrime? Available at http://www.rime-research.org/analytics/702/ Retrieved on 19/07/07
4. Chang, J., Lee, s., & Whang, L. (2003).Internet over user's psychological profiles: A behavior sampling on internet addiction. Cyber Psychology & behavior, 6(2),143-150
5. Crawel. (1999).Web addiction. Electronics Design Volume 47.(pp32)
6. Cyber crime Cell,Chennai City Police available at http:// www.chennaicitypolice.org/cyber.html Retrieved on 23/07/07
7. Galbreath, N. &Berlin, F. (2002).Paraphilias and the internet.In A. Cooper(Ed),Sex and the internet: A guidebook for clinicians(pp.187-205).New York: Brunner Rout ledge
8. Goldberg, I.(1999).Diagnostic criteria: Internet addiction disorder (online)available at http://www.cog.brown.edu/ brochur/people/duction/humor/internet addiction.html Retrieved on 27/07/07
9. Griffihs,M.(2000).Does the internet and computer addiction exist?. Cyber Psychology and behaviour ,3,str.211-218
10. Hardue,EAD Buzwell,S.(2006).Finding love online: The nature and frequency of Australian adults internet relationships
11. Howlett, I.R. (2003).Internet-based intelligent information processing system. New Jersey world scientific.
12. Illinois Institute for Addiction Recovery(2005).What is Internet Addiction & Retrieved January 11,2008 from :http:/ /www.addiction reconv.org./about.htm
13. Internet Addiction Support Group.Yhoo website. Available at: http://health.group.yahoo.com/group/internet-addiction.Retrieved on 31/07/07
14. ISMAN, A. (2004).Attitude of students towards internet. Turkish online journal of distance education-IOJDE ,Volume 5 Available at http://tojde.anadolu.edu.tr/tojde Retrieved on 3/08/07
15. Jackson,L.A.,G,Zhou,Y.,&Fitzgerald,H.E.(2006).Does home internet use influence the academic performance of low income group? Journal of Development Psycho logy,42,429-435
16. Joinson, A.M. (2003).Understanding the psychology of internet behaviour: Virtual worlds, real lives. New York:Palgrave Macmillan
17. Jose, R. (2007).Beware! Cyber crime net is expanding. Financial express 28/05/2007.Available at www.financial express.com/fe-full-story.php?content-id=165434 Re trieved on 11/08/07
18. Joshi, M.S."Full guide on cyber crime in India" Available at http://www.indiaforensic.com/compcrime.htm.Retrie ved on 23/08/07
19. Livingstone, S. (2002).Children's use of the internet: A literature review, report to the national children's bureau. Available from www.ncl.org.uk/feature/internet
20. McKenna,K.Y.A.,&Barag,J.A.(2000).Plan from cyber space: The implications of the internet for personality and social psychology. Personality and social psychology review,4,57-75
21. Mitchell kj,Finkelhor D,Wolak J.Risk factors for & impact of online sexual solicitation of youth.JAMA 2001;285:3011-4
22. Slack, V.Warner. (1999)Cyber Medicine: how computing empower doctors and patients for better health care.San Francisco: Jossey-Bass
23. Stahl C, Fritz N.Internet safety: Adolescent's self report. Journal of adolescence health 2002;31:7-10
24. Subrahmanyam, K.,Greenfield,M.,&Tyness,B. (2004) .Con structing sexuality and identity in an online teen chat room. Journal of Applied Development Psychology ,25,651-666
25. Suzuki, L.K., &Calzo, J.P. (2004).The search for peer advice in cyberspace: An examination of online teen bulletin boards about health &sexuality. Applied Development Psychology,25,685-698

ग्वालियर जिले की महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर शिक्षा एवं व्यवसाय के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. नमिता सक्सेना * डॉ. मंजू दुबे **

प्रस्तावना – हमारा देश निरन्तर प्रगति कर रहा है। देश में शिक्षा का स्तर, स्वास्थ्य का स्तर, पोषण का स्तर बढ़ा है व पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरूकता भी बढ़ी है साथ ही महिलाओं की स्थिति में भी परिवर्तन आया है। समय के साथ-साथ महिलाएँ शिक्षित होकर एवं दोहरी भूमिका निभाकर समाज को अपना योगदान दे रही हैं। शिक्षा का स्तर बढ़ने से महिलाओं के स्वास्थ्य में वृद्धि हुई है। पहले की अपेक्षा आज मातृ मृत्युदर एवं शिशु मृत्युदर में भी कमी आई है। परन्तु महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति अभी भी चिंताजनक है, आज भी वे अपने स्वास्थ्य को प्राथमिकता नहीं दे रही हैं। घर के कामकाज के साथ-साथ बाहर नौकरी कर रही हैं जिससे उनके स्वास्थ्य पर असर पड़ता है। इस भागदौड़ भरी जिंदगी में सेहत का विषय पीछे छूट गया है और परिणाम यह है कि आज अधिकांश महिलाएँ मधुमेह, मोटापा, थॉयराइड, गठिया जैसे रोग से पीड़ित हैं फिर चाहे वो कामकाजी महिलाऐं हो या घरेलू। इन सबका कारण खान-पान, रहन-सहन की गलत आदते हैं जिससे स्वास्थ्य का स्तर घट जाता है। शोधार्थी ने महिलाओं की शिक्षा एवं व्यवसाय का स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है ज्ञात करने के लिए प्रस्तुत शोध का विषय 'ग्वालियर जिले की महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर शिक्षा एवं व्यवसाय के प्रभाव का अध्ययन' चुना है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध के उद्देश्य निम्नानुसार हैं –

1. कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं का शैक्षिक स्तर ज्ञात करना।
2. कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं का स्वास्थ्य स्तर ज्ञात करना।
3. कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर शिक्षा एवं व्यवसाय का प्रभाव ज्ञात करना।

परिकल्पना –

1. कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर शिक्षा का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जाता है।
2. कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर व्यवसाय का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जाता है।
3. कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर शिक्षा एवं व्यवसाय के अन्तर्सम्बन्ध का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जाता।

पद्धतिशास्त्र – प्रस्तुत शोध में महिलाओं को उनके व्यवसाय के आधार पर चुना गया है। कुल 300 महिलाएँ जिसमें 150 कामकाजी व 150 घरेलू महिलाओं का चयन दैव निदर्शन विधि द्वारा बृहत्तर ग्वालियर जिले के मुरार, लश्कर, व ग्वालियर क्षेत्र से किया गया। तथ्यों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण किया गया एवं उनके स्वास्थ्य स्तर का अवलोकन किया गया। तत्पश्चात् तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया गया। परिकल्पनाओं के सत्यापन हेतु 2×7 फेक्टोरियल डिजाइन एनकोवा परीक्षण द्वारा सार्थकता के स्तर की जाँच की गई।

वर्गीकरण एवं विश्लेषण –

तालिका क्रमांक –1 (देखें अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक-1 के अवलोकन से स्पष्ट है कि 3.3% कार्यशील तथा 6.7% घरेलू कुल 10% महिलाएँ अशिक्षित पायी गईं। इस प्रकार घरेलू महिलाओं में अशिक्षा का प्रतिशत कार्यशील महिलाओं की तुलना में अधिक पाया गया। शिक्षित महिलाओं में 46.7% कार्यशील व 43.3% घरेलू महिलाएँ कुल 90% शिक्षित महिलाएँ पायी गईं। इससे स्पष्ट होता है कि घरेलू महिलाओं में शिक्षा का प्रतिशत कम पाया गया।

इससे स्पष्ट होता है कि घरेलू महिलाओं में कार्यशील महिलाओं की तुलना में अशिक्षा का प्रतिशत अधिक एवं कार्यशील महिलाओं में घरेलू महिलाओं की तुलना में शिक्षित महिलाओं का प्रतिशत अधिक पाया गया।

तालिका क्रमांक –2 (देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक-2 के अवलोकन से स्पष्ट है कि 58% महिलायें गायनिक समस्याओं, 21.3% पायरिया, 20% मधुमेह, 15.6% उच्च रक्त चाप, 14% एथरोस्कलोरोसिस, 11% गाठिया, 7.3% ओस्टियोपोरोसिस, 6% यकृत रोग, 5.6% चिलोसिस, 4.6% पेप्टिक अल्सर से पीड़ित पाई गईं। इन सभी लोगों में घरेलू महिलाओं के ग्रसित होने का प्रतिशत कार्यशील महिलाओं की तुलना में अधिक पाया गया। 4% महिलायें दमा से पीड़ित पाई गईं जिसमें कार्यशील महिलाओं का प्रतिशत घरेलू महिलाओं की तुलना में अधिक पाया गया। 1% महिलायें क्षय रोग से ग्रसित पाई गईं जिनमें कार्यशील महिलाओं का प्रतिशत निरंक पाया गया। 1.3% महिलायें पैलाग्रा से ग्रसित पाई गईं जिसमें घरेलू महिलाओं का प्रतिशत निरंक पाया गया। इस प्रकार विभिन्न रोगों से ग्रसित महिलाओं में घरेलू महिलाओं का प्रतिशत कार्यशील महिलाओं की तुलना में अधिक पाया गया। इससे स्पष्ट होता है कि कार्यशील महिलायें घरेलू महिलाओं की तुलना में रोगों से कम ग्रसित होती हैं।

तालिका क्रमांक –3 (देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि शिक्षा का समायोजित मूल्य 6 स्वातंत्र्यांश पर 2.297 है जो 0.05 स्तर पर सार्थक है। कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर के माध्य प्राप्तांकों में सार्थक अंतर पाया गया। इस

* अनुदेशिका, आंगनबाड़ी कार्यकर्ता प्रशिक्षण केन्द्र, आनन्दनगर ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

प्रकार प्रथम शून्य परिकल्पना 'कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर शिक्षा का प्रभाव नहीं पाया जाता' अस्वीकृत होती है। अशिक्षित महिलाएँ, प्राथमिक शिक्षित महिलाएँ, हाईस्कूल, हायर सेकेण्डरी, स्नातक, स्नातकोत्तर शिक्षित महिलाओं का स्वास्थ्य स्तर भिन्न-भिन्न पाया गया। अत: शिक्षा का स्वास्थ्य स्तर पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

यह तालिका प्रदर्शित करती है कि व्यवसाय का समायोजित F का परिगणित मूल्य 1 स्वातंत्र्यांश पर 7.859 है जो 0.05 स्तर पर सार्थक है। कार्यशील व घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर के माध्य प्राप्तांकों में सार्थक अंतर पाया गया। अत: द्वितीय शून्य परिकल्पना 'कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर व्यवसाय का प्रभाव नहीं पाया जाता' अस्वीकृत होती है। निष्कर्ष निकलता है कि कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर व्यवसाय का सार्थक प्रभाव पड़ता है।

इस तालिका में शिक्षा और व्यवसाय के बीच अर्न्तसम्बन्ध का समायोजित F परिगणित मूल्य 6 स्वातंत्र्यांश पर 0.709 है जो 0.05 स्तर पर असार्थक है अत: तृतीय शून्य परिकल्पना 'कार्यशील एवं घरेलू महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर शिक्षा एवं व्यवसाय के अंर्तसम्बन्ध का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जाता' स्वीकृत होती है। कार्यशील व घरेलू महिलाओं के समायोजित माध्य के प्राप्तांकों एवं अशिक्षित, माध्यमिक, प्राथमिक, हाईस्कूल, हायर सेकेण्डरी, स्नातक, स्नातकोत्तर, शिक्षा स्तर की महिलाओं के माध्य प्राप्तांकों में सार्थक अंतर नहीं पाया गया जब पोषणिक स्तर को सहविचार माना गया। निष्कर्ष निकलता है कि कार्यशील व घरेलू महिलाओं का स्वास्थ्य स्तर पर व्यवसाय एवं शिक्षा के अन्तर्सम्बन्ध का प्रभाव नहीं पड़ता है। स्वास्थ्य स्तर शिक्षा व व्यवसाय के अंतर्सम्बन्ध से स्वतंत्र है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर शिक्षा एवं व्यवसाय दोनों का प्रभाव पड़ता है परंतु शिक्षा एवं व्यवसाय के अंतर्सम्बन्ध का स्वास्थ पर प्रभाव ज्ञात करने पर निष्कर्ष निकलता है कि स्वास्थ्य स्तर शिक्षा एवं व्यवसाय के अन्तर्सम्बंध से स्वतंत्र है। यदि महिला हाईस्कूल उत्तीर्ण है तथा कार्यशील भी है तो जरूरी नहीं है कि उसका स्वास्थ्य स्तर उत्तम हो। सभी महिलाओं का स्वास्थ्य स्तर उत्तम होना आवश्यक है ताकि वह परिवार, समाज, राष्ट्र व विश्व को स्वस्थ जीवन प्रदान कर सके।

सुझाव – उचित स्वास्थ्य स्तर के लिए महिलाओं को जागरूक होने की आवश्यकता है। उन्हें परिवार के साथ-साथ स्वयं पर भी ध्यान देना चाहिए। क्योंकि अधिकतर महिलाएँ स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही बरतती हैं और जब रोग गंभीर हो जाता है तब उन्हें ज्ञात होता है और जब तक बहुत देर हो चुकी होती है, जब भी स्वास्थ्य ठीक न हो तो तुरंत चिकित्सक की सलाह लेना चाहिए ताकि सही समय पर इलाज हो सके। इसके अलावा महिलाओं को नियमित रूप से समय पर भोजन लेना चाहिए तथा अपने भोजन में अंकुरित अनाज, दलिया, चोकर, फलियाँ, पत्तेदार सब्जियाँ, गुड़, खजूर, मूंगफली, तिल, मौसमी फल रेशेदार पदार्थ आदि शामिल करना चाहिए। भोजन के साथ-साथ उन्हें नियमित व्यायाम स्वच्छता व विश्राम पर भी ध्यान देना चाहिए। ताकि वह स्वस्थ जीवन व्यतीत कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Verma Subodh; Health awareness; India has a largest pool of patient: WHO reported Tuesday; April 3,2007 TIG TOI New Delhi.
2. K. Park; park's text book of preventive and social medicine 19th eddi 2007 M/S Banarsidas Bhanot publishres.
3. Joshi A. Shubhangni; Nutrition and Diettitics 2nd edi. 2002, Tata Mc Grow-hill publishing company limited New Delhi.
4. सक्सेना नमिता : कामकाजी एवम् गैर कामकाजी महिलाओं की पोषण सम्बन्धी जागरूकता का उनके स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, अप्रकाशित शोध प्रबंध 2011।

तालिका क्रमांक – 1

महिलाओं की शिक्षा का स्तर

क्रमांक	शिक्षा का स्तर	कार्यशील महिलाएँ		घरेलू महिलाएँ		कुल योग	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	अशिक्षित	10	3.3	20	6.7	30	10
2.	शिक्षित						
	- प्राथमिक						
	- माध्यमिक	7	2.3	9	3	16	5.4
	-हाईस्कूल	13	4.4	8	2.6	21	7.0
	- हायर सेकेण्डरी	10 140	3.3 46.7	16 130	5.4 43.3	26 270	8.6 90
	- स्नातक	12	4.0	23	7.6	35	11.7
	-स्नातकोत्तर	55	18.3	43	14.3	98	32.7
		43	14.4	31	10.4	74	24.6
	कुल योग	150	50	150	50	300	100

तालिका क्रमांक –2

महिलाओं की शिक्षा का स्तर

शिक्षा का स्तर	कार्यशील महिलाएँ		घरेलू महिलाएँ		कुल योग	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
उच्च रक्त चाप	21	7	26	8.6	47	15.6
मधुमेह	25	8.3	35	11.6	60	20
गठिया	13	4.3	20	6.6	33	11
एथरोस्केलरोसिस	17	5.6	25	8.3	42	14
किडनी रोग	–	–	–	–	–	–
यकृत रोग	6	2	12	4	18	6
कैंसर	–	–	–	–	–	–
क्षय रोग	–	–	3	1	3	1
दमा	7	2.3	5	1.6	12	4
गायनिक समस्याएँ	72	24	102	34	174	58
हाइपोथायरॉइड	–	–	–	–	–	–
हायरथायरॉइड	–	–	–	–	–	–
पेप्टिक अल्सर	5	1.6	9	3	14	4.6
ओस्टियोपोरोसिस	6	2	16	5.3	22	7.3
रतौंधी	–	–	–	–	–	–
बेरी–बेरी	–	–	–	–	–	–
चिलोसिस	7	2.3	10	3.3	17	5.6
पैलाग्रा	4	1.3	–	–	4	1.3
पायरिया	30	10	34	11.3	64	21.3

तालिका क्रमांक –3

पोषणिक स्तर को सह विचर (Covariate) मानकर कामकाजी और घरेलू महिलाओं की शिक्षा के आधार पर उनके स्वास्थ्य स्तर का 2×7 फेक्टोरियल डिजाइन एनकोवा का सारांश

प्रसरण स्त्रोत	स्वातंत्र्यांश	वर्ग योग	माध्य वर्ग	समायोजित मूल्य	रिमार्क
शिक्षा स्तर	6	148.710	24.785	2.297	(P<0.05)सार्थक
व्यव्साय	1	84.813	84.813	7.859	(P<0.05)सार्थक
व्यवसाय एवं शिक्षा का अंतर सम्बन्ध	6	45.901	7.650	0.709	(P<0.05)असार्थक
अवशिष्त	285	3075.644	10.792		
संशोधित योग	299	4121.547			

****

Fast Food- A Challenge for Health

Dr. Madhu Gautam *

Introduction - Fast Food is the term given to foods that can be prepared and served quickly. Fast foods costs relatively less and taste's good but the vegative effects on physical health last's longer.

Fast food can also be defined as any food that contributes little or no nutrient value to the diet, but instead provides excess calories, fats and salts & sugars. Fast food can be a good way to save time but it is not the proper way of getting full nutrition. Some of these foods have little nutritional value and high in calories due to high in fat content or sugars. Some of the common fast food includes are Chips, Savery crackers, Sev-Mixture, Pastries, Burgers, Pizzas, Samosa, Kachories, Various Sweets, Sweet Drinks, Snackes, Soft Drinks etc.

it is a matter of great concern that our children and teenager's of today. Who are more internet savy are following the marketing practices used by the food companies and food outlets. All over the country these industries very carefully make their strategies targetting children of all age through social media, T.V. and other internet sites. The companies coming from outside like KFC, Subway, Mc Donalds, Dominos, Dunkin Doughnuts appear on T.V., Facebook with special offers which are very lucrative. The advertisement of Haldiram's Bikanerwala, various fruit juices, drinks on print media with colourful exhibits, uncle chips, lays etc attracts the young kid.

In 2010 researcher's at the yale rodd centre for food policy & obesity issued fast food facts. The report examined the nutritional quality of fast food menu's . Fast food advertising on T.V. and the internet and marketting practices inside restaurants. Researcher's found that industry spent 4.2 billions on advertising to encourage frequent visits by young people to fast food restaurants, targetting children as young as two year's old. Which is a matter of great concern. Even in our country, they are opening many joints.

The first effect of eating fast food is its impact on energy levels. Many people skip breakfast or other meals throughout the day, choosing instead to grab a quick snack or a soft drink. The fast food causes energy level to spike, which people like, but then the energy level quickly goes down, sending one back to the kitchen or another snack option and one is taking more of calories and consumption of salts and fats. In addition fast food can cause moodiness and sleepless nights, so the energy levels are never restored to normal.

Fast foods is real harmful for one's health, it may cause many side effects and list of these bad effects is growing long day by day certain side effects are as follows:-

1. Obesity.
2. Heart Disease.
3. Type- 2 Diabeties.
4. Peptic Ulcer.
5. Blood Pressure.
6. Abnormal Physical Growth.
7. Irregular timming of eating.
8. Loss of appetite.
9. Lack of essential nutrients which causes nutrient deficient diseases.
10. Stress, Mental Disorders.

Foods rich in fat are reason for many diseases related to heart, blood vessels, liver and other organs of the body. Due to high cholesterol level in the food.

The risk factor of certain diseases increases in the human body like heart attack, indigestion, loss of appetite etc. Foods rich in high sugar's and its regular use like snacks, chocolates, cakes, sweets, soft drinks may be a source of type-2 diabities and blood sugar in balance may lead to glucoma, hearing loss, kidney disease, nerve damage, tooth decay etc. A diet rich in sugar sweets develop's cavities in children. Extra 500 calories a day from fast food can lead to 1 pound weight gain in just a week.

For optimal heart health one should not consume more than 1500 mg of sodium each day. You need some sodium in your diet to help monitor normal fluid balance of the body, but too much sodium increases blood pressure and stoke risk. Fast food's contain a high amount of sodium along with its dips and sauces. Increase of 500 mg of sodium in diet increases stroke risks by 17% .

Dictary fibre is one of the important components of healthy diet for proper bowel movement, when less in diet leads to constipation problems in the children or adults. it also leads to irregular time of eating, loss of appetite, lack of essential nutrients, as fast foods mostly contain calories and salts.

Food rich in fat are reason for many diseases related to heart, liver etc. It also increases the level of stress. Certain

*Asst. Prof. (Home science) Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) INDIA

foods and drinks act as a powerful stimulant to the body, hence are a direct cause of stress, like caffeine containing foods (coffee, tea, cakes, chocolates etc) white flour, salt, saturated fats, processed food, foods which contain synthetic additives, preservatives, emulsifiers, stabiizers and flavour enhancers, these foods are called pseudo stressors. The brain like rest of the body relies on the key nutrients from healthy foods to function properly. Regularly consuming fast foods can lead to malfunction of brain or going in dipression.

According to the U.K. mental health foundation, nutrition plays a critical role in the mentanence of good mental health, the brain requires a balance of essential fatty acids including omega-6 and omega-3 to function properly, an inbalance in these crucial nutrients has been linked to a number of mental health issues. Consuming high fat food can actually have a direct impact on brain, causing chemical changes responsible for conditions like anxiety and dipression. Fast foods available today in market are actually high in fat content full of spices, high salt levels and high sugars.

In present day and time we cannot fully stop people eating fast foods, but certain precautionary steps can be taken to avoid the problem's created by too much consumption of fast foods by our young generation.

- Inspiring and educating the young generation for healthy food habbits.
- Putting a check on social media and fast food marketing.
- Teaching the young generation for good healthy substitute for Pizzas, Burgers, Cola's etc.
- If eating fast food occasionally, choose wisely.
- Exercise regularly.

References:-

1. Basics of nutrition- Swaminathan
2. https:/Hakdon13wordpun.com
3. www.md.health.com
4. Healthy eating. s&gate.com
5. www.studymade.com
6. www.ahealthic/tomorrow.org

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

CSR Initiative to bring about Social Development in India

Anshul Mangal *

Abstract - Business depends upon society for the needed inputs like man, money, skills for market of their products. Business depends upon society for existence, sustenance and encouragement and business indeed has definite responsibility towards society. The aim of the present essay is to comprehend Corporate Social Responsibility from within the Gandhian Perspective of trusteeship which states: "The obligation of decision makers to take action which and improve the welfare of the society as a as a whole along with their own interest" is popularly known as responsibility of the business. The subject has therefore assumed great importance for discussion in business and academic circles.

The essay describes that how in every decision; business people should keep their social obligation in mind before contemplating any action. It also describes that social responsibility business is not new to our country; the effort therefore relocates the ideological roots of CSR in rather unfamiliar terrain of the nationalist struggle that Mahatma Gandhi has launched against British Colonialism. However the present essay is confined to new business strategy which though supportive of business, creates circumstances in which civil society becomes activate in involving the stakeholders to challenge that the sole business goal is making profit by hook or by crook.

Introduction - The importance of CSR emerged significantly in last decade. Over the time CSR expanded to include both economic and social interest, along with this it also broadened to cover economic as well as social interests. Companies have become more transparent in accounting and display 'public reporting' due to pressure from various stakeholders. It is possible for companies to behave in the designed ethical and responsible manner towards consumers, employees, communities, stakeholders, and environment. They have started incorporating their CSR initiatives in their annual reports.[1]

CSR Concept, Definition and Models - In India the ethical model promotes by Mahatma Gandhi during 1930s is well known which stated the role of family run business conducting social and economic activities. This was followed by statist model propounded by Pt. Jawahar Lal Nehru. At global level the first attempt to define CSR is contributed is contributed by Howard Bowen's Social Responsibilities of the businessman who questioned the status and decree of responsibilities that business people should accept. Milton Friedman introduced liberal model which stated that corporate responsibility primarily focus on owner objectives and stakeholder's responsiveness which recognizes direct and indirect stakeholder interest. Likewise CSR is interchangeably used with several terms like business ethics, corporate citizenship, social and environmental responsibility, corporate sustainability.[2]

According to CSR Asia "CSR is a company commitment to operating in an economically, socially, and environmentally sustainable manner whilst balancing the interest of diverse stakeholders."

Areas of Corporate Social Responsibility (see in last page)

Today the concept of CSR has undergone a radical change; it has integrated social as well environmental issues into their missions and decisions. Companies take keen interest about their CSR activities to their stakeholders. Across globe, Business enterprise has undertaken CSR initiative.[3]

CSR in India - In developing economies like India CSR is seen as a part of corporate philanthropy in which corporation augments the social development to support the initiatives of the government. However with time the scenario of CSR has changed from being philanthropic to being socially responsible to multiple stakeholders.

India has been named among the top ten Asian Countries paying increasing importance towards CSR disclosure norms. India was ranked fourth in the list according to social enterprise CSR Asian sustainability Ranking released in October 2009. In it study base on 56 companies in India it is observed that reporting is strongly followed by companies as well as they seek international development standards. It could be attributed to Indian Government compelling the public sector companies to provide for community investment and other environmental, social and governance liability.[4]

CSR: Issues & Initiatives for Indian Development - The concept of corporate social responsibility is now firmly rooted on the global business agenda. But in order to move from theory to concrete action, many obstacles need to be overcome. A key challenge facing business is the need for more reliable indicators of progress in the field of CSR, along with the dissemination of CSR strategies. Transparency and

* B.A. L.L.B., V Year, Symbiosis Law School, Pune (Maharashtra) INDIA

dialogue can help to make a business appear more trustworthy, and push up the standards of other organizations at the same time. A lack of understanding, inadequately trained personnel, non availability of authentic data and specific information on the kinds of CSR activities, coverage, policy etc. **The Times survey pointed few of the following challenges/responses from participating organizations.**

1. Lack of community participation in CSR activities
2. Need to build local capacities:
3. Issues of transparency
4. Non-availability of well organized non-governmental organizations
5. Visibility factor
6. Narrow perception towards CSR initiatives
7. Non-availability of clear CSR guidelines
8. Lack of consensus on implementing CSR issues

India's tryst with destiny heralded more than 60 years ago, is yet to be fulfilled. For all the progress that has undeniably been made, it is as if time has stood still in India's villages. The corporate India based in and around cities has been flourishing and marching ahead whereas rural India still remains desperately poor. In this connection the corporate India can play a key role in bridging the gap of urban and rural India. The success of CSR lies in practicing it as a core part of a company's development strategy. It is important for the corporate sector to identify, promote and implement successful policies and practices that achieve triple bottom line results. It is a joint and shared responsibility of civil society, activist groups, Government and corporate sector to create appropriate means and avenues for the marginalized and bring them to the mainstream.[5]

Government Initiatives - Community Investment is an integral part of the overall CSR concept. Expending money and resources without proper planning and implementation is not what CSR is all about. A company traversing on the CSR path must pass several stages of planning. It is only after it has got the entire program details in place can the company begin the actual implementation of the programme. The government is in the process of replacing the half-a-century old Companies Act 1954, with a new law. The Companies Bill 2009 is expected to be taken up for consideration and is likely to be passed in the monsoon session of Parliament which begins on August 1. By being made applicable only to the organized sector, mandatory CSR would apply to about 300,000 enterprises or about 0.7 %of the approximately 42 million production entities, enumerated in the latest Census. There are several concerns with the introduction of mandatory CSR. One of the biggest concerns is the anticipated rise in 'greenwashing'. The second concern is the creation of a monitoring body to oversee the implementation of mandatory CSR. The third issue is that the bill covers a very small section of the private sector. This group services the export market which operates on very thin margins. The 2 % of turnover that they will require to spend on CSR will seriously affect their already stressed margins. There are compelling arguments, therefore, that the imposition of mandatory CSR might lead to a decline in private industries enterprises. The small and medium scale sectors would be severely affected in such a scenario .Imposing CSR on publicly listed companies like all central and state government enterprises, large domestic private enterprises and multinationals (that, perhaps, already have CSR programs) will make monitoring easier than if it is made mandatory for the entire private sector. As matters stand today, the Corporate Affairs Ministry does not seem to have a clear idea on how it proposes to monitor mandatory CSR; and to ensure that there is a level playing field for SMEs. The Government of India initiated Corporate Responsibility for Environmental Protection (CREP) initiated by the Indian government recently in 2003, set guidelines of non-mandatory norms for 17 polluting industries. However, there is no real pressure for its implementation. An ethical being who claims to respect the earth cannot have practices that are inconsistent with his/her claims. Ethical practices have to be placed in an integrity framework, and that implies, at the very least, a lack of multiple ways of being. Besides individual efforts in all the countries, some internationally acceptable CSR standards and guidelines have also been defined. The proposal for mandating a CSR spend was first discussed by the corporate affairs ministry around two years ago, but it was reduced to a voluntary exercise in the face of opposition by companies. But, armed with demands and support from parliamentarians, the ministry is now set to implement its plan (Sefi.co, undated).[6]

Corporate Initiatives - In order to leverage its CSR initiatives and make the strategy sustainable, an organization must possess a high level of advanced capability of organizational learningand sustainable innovation to learn and innovate on a sustainable basis. These are critically important attributes which are critical for building sustainable business models that will result in future sustained competitive advantage. CSR initiatives are implemented by companies, usually in partnership with Non-governmental organizations (NGOs) who are experienced in working with the local communities and are knowledgeable about local conditions and are experts in tackling specific social issues specific to the area. From responsive activities to sustainable initiatives, corporations have clearly demonstrated their ability to make a significant difference in the society and improve the overall quality of life. In the present social context, change is required at an enormous scale. Corporations can apply their expertise, strategic thinking abilities and manpower and money material resources to facilitate extensive social change.[7]

Organizations like Bharat Petroleum Corporation Limited, Maruti Suzuki India Limited, and Hindustan Unilever Limited, focus holistic development in the villages they have adopted. They provide better medical and sanitation facilities, build schools and houses, and help the villagers become self-reliant by teaching them vocational and business skills. On the other hand, GlaxoSmithKline Pharmaceuticals' CSR programs primarily focus on health and healthy living. They work in tribal villages where they provide medical check-ups

and treatment, health camps and health awareness programs. They also provide money, medicines and equipment to non-profit organizations whose work that work towards improving health and education in under-served communities.[8]

Therefore, in order to protect the society and to encourage companies and businesses to take up CSR the only way left is to make laws which would to make it mandatory by law. Many countries are coming around to this view point. Suitable laws making CSR a compulsory part of corporate activity are being enacted or under serious discussion in many countries. This method has of late has become prevalent in almost all the countries.[9]

Conclusion - The concept of corporate social responsibility has gained prominence from all avenues. Organizations must realize that government alone will not be able to get success in its endeavor to uplift the downtrodden of society. The present societal marketing concept of companies is constantly evolving and has given rise to a new concept- Corporate Social Responsibility. Many of the leading corporations across the world had realized the importance of being associated with socially relevant causes as a means of promoting their brands. It stems from the desire to do well and get self satisfaction in return as well as societal obligation of business.

References :-

1. Dr. Urmila Moon, CSR in India, p1.
2. Bannerjee P.K, (2003), corporate governance and business ethics in 21st century.
3. Mohan A, (2001) corporate citizenship, Perspectives from India.
4. Moon j, (2002), corporate social responsibility: an overview.
5. Mohan, A(2001), Corporate Citizenship, perspective from India.
6. Das Gupta A (ed) (2010) Ethics, business and society (Sage, Singapore).
7. Pramar SK "Companies Should Implement Their CSR Projects Themselves".
8. Vijayaraghavan A "Making CSR mandatory in India"http://www.triplepundit.com/2011/07/making- csr-mandatory-india; July 26, 2011.
9. Das Gupta A, Das Gupta A (2005) "Corporate social responsibility: the Indian context." In:Crowther D, Jatana R (eds) Representations of social responsibility, vol II. ICFAI University Press, Hyderabad.

Areas of Corporate Social Responsibility

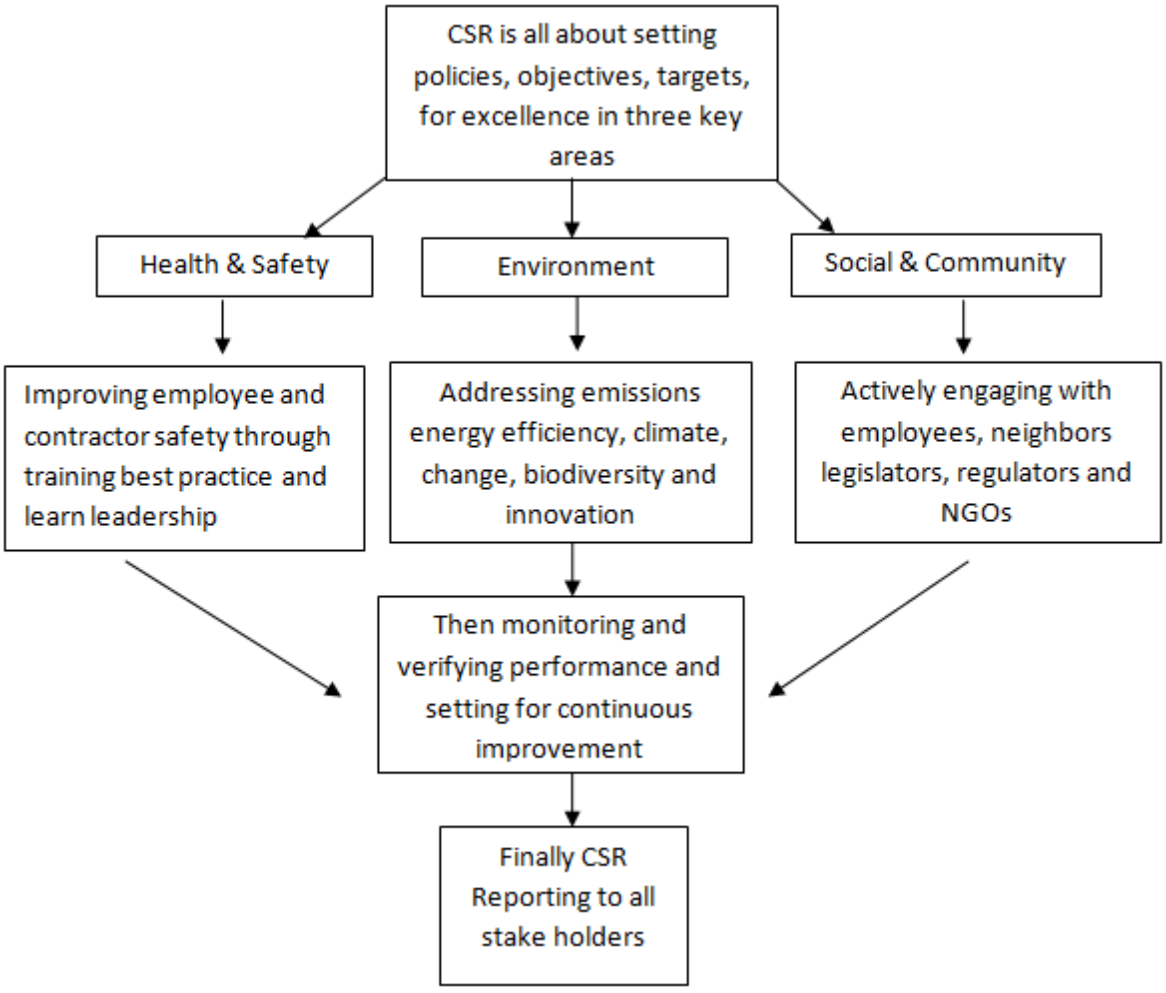

Present Scenario Of E-Banking

Dr. Vivek Kumar Patel * Dr. Pallavi Mishra **

Abstract - Today we are in the era of globalization. Multinational organizations worldwide have adopted globalization as their first strategic choice. Advancement in technology has facilitated globalization too. Same holds true for banking industry. Technological advancement, changes and innovations have always leveraged the standards of mankind. It has given new dimensions to society. It has also altered the way services can be offered. Information Technology has been a major driving force of economies worldwide during the last 2 decades. Its impact has been readily felt in banking industry also. With the invention of computer operations and database management became quite handy. When ARPANET project of Defense Academy of US began, a new technology was born with the advent of internet. The two technological breakthroughs - computers and internet has radically changed the way world can interact and business could be done. Metamorphosis and clubbing of these technologies gave rise to the growth of ITES (Information Technology enabled Services) across the globe. There has been a marked improvement particularly in the area of maintenance, storage, availability and transfer of data. The world has literally shrunk to become a "global village".

IT has played a crucial role in the financial services. Internet has proved a magic wand for financial services and products, banking in particular. Banking sector has been early adopter of technology to offer latest modes for transacting business. Banks have transformed themselves and are offering services through internet. From computerization to networking to ATMs and now E-Banking, banks have moved up the value chain. This phenomenon of offering services through internet is referred as internet banking. The current article discusses internet banking in India and focuses upon key challenges before banking industry.

Introduction - Internet banking refers to the use of internet as a remote delivery channel for banking services. Web based or internet banking is poised to become the future face of banking services. The number of visits to the bank can be minimized effectively by operating from the internet account. Thus the number of contacts required to perform a transaction and solve a problem has been reduced through online banking. The usual branches of banks haveculminated into PC networks, whereby the consumer can draw all the benefits and services of the bank at a single click of the mouse.

Technology in Indian Banking:-

The technological development[4] in banking can be traced as follows -

- 1960-Mechanised banking introduced.
- 1970-Introduction of computer based banking industry.
- 1980 - Introduction of computer-linked communication based banking.

Advent of computer technology has created a major impact on working of banks. The computerization and subsequent development in history of Indian banks can be traced back to 1966 when Indian Bankers Association **(IBA)** along with exchange banks association signed first wage settlement with the unions, which accounted for the use of IBM or ICT accounting machines for inter-branch reconciliation etc. IN 1970s, SBI installed a ledger-posting machine along with a mainframe computer at selected branches. A committee on computerization and mechanization was appointed by RBI in 1983 under chairmanship of Dr. C. Rangrajan. Its objective was to chalk out a plan for mechanization of Indian banking industry. It was recommended that computerization and installation of Advanced Ledger Posting Machines (ALPM) at branch, regional and head offices of banks will bring around a new era in banking. Narsimhan committee in 1991 paved way for reform phase in banking. Saraf committee was constituted by RBI in 1994 that recommended the use of Electronic Fund Transfer System (EFT), introduction of electronic clearing services and extension of Magnetic Ink Character Recognition **(MICR)** beyond metropolitan cities and branches.

Technology was the rational for bank introducing ATM and POS (Point of sales) in 1970stelephone banking in 1980s and internet banking in 1990s. In Mumbai, Shared Payment Network System (SPNS) was set up in February 1997. It was a network of 28 ATMs with 11 banks. The ATM card was branded as 'SWADHAN'. SPNS could link with international hubs such as VISA and MASTERCARD. CITIBANK a US multinational was first bank in India to offer ATM card facility in 1985.

* H.O.D. (Commerce) Govt. College, Kotma, Anuppur (M.P.) INDIA
** Guest Faculty (Commerce) Govt. College, Naigarhi, Rewa (M.P.) INDIA

Impact of Technology - The major impact of technological revolution in banking can be stated in terms of:-
Paradigm shift from traditional banking to customized banking as the services can be delivered
by computer and Convenient banking i.e.**"Anytime, Anywhere banking".** A customer can check balance by logging into banks website through a user name and password. In this way he can enquire balance, status of cheques, perform funds transfers, order drafts, request issue of cheque books etc.

It has been observed that customers who adopt online banking are typically more profitable to the bank, stay with the bank longer and use more products strengthening the bank customer relationship. Information Technology and Internet banking has bridged the information gap, which was interestingly because of human involvement. Banks can make the information of products and services available on their site, which is, an advantageous proposition. Prospective customer can gather all the information from the website and thus if he comes to the branch with queries it will be very specific and will take less time of employee. Customer can visit these websites and can compare the services offered by a bank with that of another. Customer can get all the information, by saving money and time. The trend thus emerging out is that of virtual corporate system where the human role is minimized to maximum effect.

Modes of Distribution - Banks have been early adopter of technology. They were wise enough to understand the innovative mode for offering services. Private Banks played a major role in reviving the banking spirit in India. It was they who initiated the change. Today banking services can be delivered through following modes:

Internet Banking, Web Banking, PC Banking and e-Banking - Popularity of PC and easy access to internet and World Wide Web (www) has facilitated banks to use internet as a delivery channel and receiving instructions. Today all private banks and most of the nationalized banks are offering web based banking services. It is this form of banking that is generally referred as Internet Banking.

Phone Banking / Mobile Banking (M - Banking) - There has been a rapid advancement and acceptance of mobile services in India. Penetration rate of mobiles and landlines have increased considerably. Banks have lapped up these opportunities and are offering mobile banking. Account status can be enquired just by a **SMS** (Short MessageService).

Plastic Money - ATM card, Credit card, Debit Card etc.- Banks have installed ATM that is connected via V-SAT. The customer can perform following operation through ATM - cash withdrawal, balance enquiry, mini statement of previous transactions (last 5 to 10 transactions), order cheque books, deposit cash and obtain product information. Nowadays banks are offering value added services too, through ATMs. Punjab National Bank **(PNB)** is offering recharge of prepaid mobile card. Often these banks tie with other banks to use their ATM like - *HDFC & SBI* PNB, UTI and Global Trust Bank.In this manner, the banks increase their **'Point of Cash Delivery'.** Apart from this credit, debit card have are becoming preferred medium of payment. Thus technology has created various delivery channels for bank customers.

Internet Banking -The use of information technology in banking is now inherent in banking industry. A customer can log on banks website and access his account. He can perform following functions online: Balance enquiry, Transfer of funds and online payment. A surveydone by Booz and Allan has revealed that internet is the most economical way of banking. Internet banking can be categorized in following stages -

I. Information Kiosks: traditional information on banking products and services are available on the website of the bank.
II. Basic I-Banking: Here, bank sets up infrastructure for internet banking and for accessing basic services like opening an account, paying utility bills and checking the balances.
III. Virtual medium: Here internet is taken as an official medium for financial transactions. Buying and selling activities can be undertaken through banks payment gateway technology.

Today most of the banks are having their own functional websites through which banks are serving customers. There are more than 90 banks offering internet banking. Internet banking is now being accepted. For example if we look at the performance of Syndicate bank - Internet Banking users increased over 210% (from 8300 in March 2005 to 17,432 as on 30.06.2006)

Advantages - The advantages of online banking can be encapsulated as -

1. Convenient
2. Unaffected by boundation of operational timings.
3. No geographical barriers.
4. Services can be offered at very low cost

As the chart shows results of a survey, cost per transaction through internet banking is the least among all other modes.The phase in the last five years may be termed as one devoted to the provision of alternate channels like - ATM, Internet Banking, Mobile banking, anywhere anytime banking. Young urban professionals and employees besides high net worth individuals have been using these channels at a satisfactory pace. The era of convenience banking has arrived.

Challenges in Internet Banking - Internet banking in India is in its earliest stage of development. Most of them are offering basic services only. Limited no. of banks are offering full services and of these most are private banks with HDFC and ICICI leading the market. The deregulation of banking industry coupled with the emergence of new banking technologies is enabling new competitors to enter the financial services market quickly and efficiently.
Indian internet banking faces following challenges -

Proper understanding of the customer - i.e. proper identification of their needs and wants. For this a massive survey must be undertaken may be in collaboration with other banks.

- Breach of privacy: online transactions enter straightaway into the records revealing the identity of customer. Thus black money cannot be transferred withease.
- Bandwidth: Though companies claim to offer good speed and high bandwidth, still there are problems in accessing high speed on net. Internet banking can go high only on the wings of proper infrastructure comprising telecommunications and bandwidth.
- Computer literacy in India is still very low and that is a barrier in fast acceptance of Internet banking.
- The mindset of the Indian customer need to be changed.
- Customer has to be **protected against being "net-jacked"** i.e. he needs to be protected from fraud. Threats can be
- Cracking login and passwords is a common way of fiddling with the data.
- Denial of services: Directing millions of queries can block computer network.
- Data Diddling: Data can be modified in an unauthorized manner. A customer can therefore receive bills of higher amounts than the actual transactions.
- Session hijacking: Hijackers become unauthorized intermediaries between the server and the client; they can then hijack the data and prevent it from reaching the destination.

Most online transactions involve disclosing up of the credit or debit card number. Hackers can very easily track down these numbers. They can thus enjoy the full benefits of the card without being an actual cardholder. RBI has issued some guidelines on Internet banking for safety of customers and banks. Some of which are -

Security procedure adopted by bank, for authenticating user, must be recognized by law as a substitute for signature, from a legal perspective. Information technology Act 2000 in section 3(2) provides for a particular technology (asymmetric crypto system and hash function) as means of authenticating electronic records. Any other method used by bank should be recognized as a source of legal risk. (Para 7.3.1).

Information Technology Act 2000 has given legal recognition to creation, transmission and retention of an electronic (magnetic) data to be treated as evidence in court, except in those areas which continue to be governed by the provisions of Negotiable Instruments Act 1881.

Conclusion-Internet banking is changing the banking industry and is having the major effects on banking relationships. The net banking, thus, "now is more of a norm rather than an exception in many developed countries" due to the fact that it is the economical way of providing banking services. Banking is now no longer confined to the traditional brick and mortar branches, where one has to be at the branch in person, to withdraw cash or deposit a cheque or request a statement of accounts. There is need to scan and analyses the market and respond to the needs of customers and to generate awareness regarding advantages of internet banking. In true Internet banking, any inquiry or transaction is processed online without any reference to the branch (anywhere banking) at any time. Providing internet banking is increasingly becoming a 'need to have' than a 'nice to have services.

References :-

1. Pr.V P Agarwal,Bharat me adhikoshan, Sahitya bhawan pablikeshans Agra.
2. Dr.S P Gupta,Banking in india Sahitya bhawan pablikeshans Agra.
3. Agrawal,Jain,Bharagava,E-Banking & Security Transections
4. www.sbi.com
5. www.rbi.org.in

****

A Critical Evaluation of Socio-Economic Schemes Launched By Narendra Modi Government in the year 2014-15

Tarannum Hussain * Prakash Chander **

Abstract - On May 26, 2014, our honorable prime minister took charge of the govt. of India. Since the time he has taken office, certain important decisions have been taken by the cabinet. Just as the year is about to complete, we along with this paper try to recollect the important programs and projects that our new govt. announced during the year for the development and welfare of the country.

Keywords - Modi government, social, health and infrastructural schemes.

Introduction - Digital India - Recently in the year 2015 the campaign called 'digital India' was launched. The basic idea behind this is to change India into an electronically empowered economy. As per this program our government wants all govt. departments and people of India to connect with each other digitally or electronically, so that it will ensure effective governance. It also aims at reducing paperwork by making all the govt. services available to the people electronically. There is also a plan to connect all villages and rural areas through internet networks.

Three major components of Digital India are: Digital Infrastructure, Digital Literacy and digital delivery of services. Modi government plans to complete the project in five years, that is by 2019, the digital India campaign to be fully functional.

Make in India - Our prime minister with a vision to turn the country into a global manufacturing hub, launched an ambitious campaign called 'Make in India' on 25 September, 2014. This is aimed at cutting red tapism, developing infrastructure and to make it easy for companies to do business. It was launched on the eve of his visit to us. There is very minimal contribution (15%) of manufacturing sector in GDP, which our authorities expect to raise it to 25 %. In order to stop the corporate, who want to quit India, and to settle abroad, the campaign was unveiled, that could bring change and create environment for business. Infrastructure and growth of the sector will create jobs, increase purchasing power and create a larger market for manufacturers. This initiative hopes to attract capital and technological investment in India. India has cheap labour and that to skilled to a large extent. So this will attract companies to manufacture in India. India ranked 130th on the ease of doing business index. Indian labour laws, rules and regulations to start business licensing etc.; create hurdles in the process to start a business. Thus government through this, making special attention on personal level to the business all round the globe. Which includes giving them single window clearance and other lucrative offers. That will attract manufacturers to establish their plants here. Thus we can say this would help the whole country to go from being a third world country to a developed one.

Swachcha Bharat Mission - Narendra Modi while launching the Swachcha Bharat Mission at Raj path in New Delhi, exhorted Indian citizens to fulfill Mahatma Gandhi's vision of Clean India. Though it was launched on 2nd of October, 2014, the birth anniversary of nation's father Mhatma Gandhi, and remined people of his dream- clean India, that is still remain unfulfilled. According to him the work of cleaning cannot be done by one person or by the govt. functionaries alone, it has to be done by each and every individual. Success can only be achieved if it's treated as mass movement, and people started believing neither litter nor let others lit.

He asked people to devote 100 hrs a year in the cleaning of the country. The tag line of the mission is "Ek kadam swachchta ki or". The objective includes, providing sanitation facility to every family, including toilets, solid and liquid waste material disposal systems, village cleanliness, safe and adequate drinking water supply by 2nd October 2019. It would be taken as a tribute to the father of the nation on his 150th anniversary. Modi govt. is quite sure of the success of the campaign, since PM himself is taking very proactive role in this as he started it by cleaning the street himself. It is expected to incur expenditure of Rs. 62000 cr., in the name of cleaning the nation. Modi government exhorted it to be taken as "beyond politics" and "inspired by patriotism"

The concept of insurance is not new to our country, but the access to it is so limited. Though there are several major players in insurance sector, but majority of our citizens, especially in rural areas are still not covered under any kind of insurance. For these people, our honorable prime minister in Kolkata, on the occasion of Rabindra Nath Tegor's birthday, dated, May 09, 2015, launched these three schemes.

* Research Scholar, Faculty of Management Studies, M.L.S.U., Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Department of Political Science, M.L.S.U., Udaipur (Raj.) INDIA

1. **Pradhanmantri Suraksha Bima Yojna(PMBSY)**
2. **Pradhanmantri Jeevan Jyoti Yojna(PMJJY)**
3. **Atal Pension Yojna (APY)**

Pradhanmantri Suraksha Bima Yojna (PMBSY) - This scheme was launched with the theme, "chota premium badi suraksha". The accident insurance scheme offers accidental death and disability cover for death or disability on account of an accident.For this scheme policy holder, will have to deposit, Rs. Twelve per annum, as premium. The premium will be deducted from the account holder's saving bank account through auto debit facility in one installation.

On or before 1st June of each annual coverage period under the scheme all those saving bank account holders in the age of 18 to 70 years can benefit from this.

Pradhanmantri Jeevan Jyoti Yojna(PMJJY) - The scheme gives one year cover, which is renewal from year to year. The scheme offers life insurance cover for death due to any reason.

A person who is having saving bank account and aging between 18 to 50 years can get benefit of the scheme. Aadhar card is considered as primary KYC for the bank account. The premium amount for this scheme is rs. 330 per annum per member. Due to any reason on member's death Rs. 2 Lac is payable at the end.

Atal Pension Yojna - Atal Pension Yojna, a scheme that was announced by the finance minister in his budget speech, launched for all those people who belong to unorganized sector, and wish to join the national pension system and not getting benefit of any other social security scheme. It's slogan is "Ek majboot sahara jeevan bhar ka", clearly says it is a scheme for those who work in private sector and wish to have a fixed amount of pension after their retirement. Under this scheme, a person can get a fixed pension after their retirement. Under this scheme, a person can get a fixed pension of rs. 1000/2000/3000/4000/5000 per month, at the age of 60 year the amount depends on their own contribution which varies on the age of joining the scheme. One of the most important parts of this scheme is contributions made by central government that will be 50 percent of the user's contribution on Rs. 1000 per year for a period of 5 years. The scheme was launched from 1st june 2015 and goin to benefit only those who will join the national pension scheme before 31st December ,2015 and who are not income tax payers.

Sansad Adarsh Gram Yojna - Mahatma Gandhi was having a vision of economic development through village empowerment. He was of view that, an ideal village does have harmony and free from theft and financial untouchability. In the month of October 2014, Modi government. launched a scheme for the development of model villages. Actually through this scheme Modi appealed the Member of Parliament (MP's), who will be responsible for developing, the socio economic and physical infrastructure of three villages each by 2019 and a total of eight villages by 2024, from their constituency. MPs can select any gram panchayat other than their own village of that of their own spouse. The village must have a population of 3000-5000 if located in the plains, or 1000-3000 people if located in hilly areas.

For this scheme, new funds have not been allocated, thus funds may be raised through existing schemes, like Indira Awas Yojna etc., MPs local area development scheme, central and state finance commission grant, gram panchayat own revenue and CSR fund.

Under the head of the scheme, several activities for personal, economical, social and humanities development could carried out, for example health care, agriculture based livelihood program, pension, housing, social forestry etc. Though it is going to benefit rural areas and villages a lot but the biggest drawback of the scheme is the support it is not receiving from the rival parties, who actually denied to take part in it.

Sukanya Smriddhi Yojna - The scheme is aimed at providing, girl child proper education and marriage expenses. Actually it is a small deposit scheme for girl child, as part of "Beti Bachao Beti Padhao" campaign that would fetch yearly interest rate of 9.1 percent and provide income tax deduction, under the income tax act 1961. The scheme would be operational from 2 December 2014.

In order to get benefitted from the scheme, an individual as, an guardian, on behalf of a minor girl child, can deposit specific amount in the account, opened under the scheme. Account can be opened in the name of a girl child from the birth of the girl child till she attains the age of ten years and girl child. Who had attained the age of ten years. Initial deposit required to open an account is one thousand rupees and thereafter any amount in multiple of one hundred rupees may be deposited.

But the total money deposited in an account on a single occasion or on a multiple occasion shall not exceed one lac fifty thousand rupees in a financial year.

Account can be opened at any post office in India doing saving bank work and branch of commercial bank authorized by the central government. The amount can get deposited till completion of fourteen years from the date of opening of an account. Maturity period of the account is 21 years from the date of opening of an account or if the girl gets married before the completion of 21 years and after that the account can get closed. If the account is not closed interest as per provision of rule 7 shall be payable on the balance in the account till the final closure of the account.

Pradhan Mantri Jan Dhan Yojna - Pradhan Mantri Jan Dhan Yojna is a national mission which will ensure financial inclusion gives access to financial services, like Banking/ saving and deposit accounts, remittance, credit, insurance, pension in an affordable manner. The scheme was declared on 15 august 2014 and launched on august 28, 2014. On the very same date, the scheme was launched in 600 districts. The slogan of the scheme is "Mera Kahta Bhagya Vidhata". It is taken as first step of NDA government towards economic development for common man. According to our honorable PM, Narendra Modi, this is to provide financial freedom and for curing the financial untouchability in the country.

On the day of launching of the scheme, it was implemented through the establishment of camps by banks at 77852 places. In order to get benefited by the scheme an bank account can be opened with 'zero' balance. The account holder through this scheme can get benefit of Rs. 1.30 lac as accidental insurance and .30 lac as life insurance with certain conditions. Along with all this, it is providing an account holder with debit card also.

Conclusion - Since Modi become the 15th pm of India with biggest mandate in last 30 years, Indian citizens do have lots of expectations from him. He has promised to bring "acchhe din" during lok sabha elections, thus during the last year Modi government launched a series of social, health and infrastructural programs. In his first year in power he has brought in banking for the poor, set up campaigns to improve sanitation and even curb the abortion of female fetuses. He slashed funds for education, health, woman and children, and it will be nearly impossible to deliver the right to education and to ensure health and well being.

The launching of scheme "Beti bachao beti padhao" is commendable, to stop gender selective abortion and even ensures girls education but massive budget cuts in flagship programs negatively affect the same. Modi even launched few low cost insurance schemes, aimed to provide social, medical and financial support to the unorganized sector of India. The premium to all of the schemes is very low, this was done to make sure that every Indian can afford it and make their future more comfortable, but in reality funds to national health mission and integrated child development services cut by 17 and 52 percent respectively. Even some of his decision regarding child labour would put children at risk. Pradhanmantri Jan Dhan Yojna has brought banking to the poor, more than 150 million bank account have been opened in one day and have become a world record but in reality more than 53 percent of the account are not operated till now and would cost Rs. 2100 cr. on maintenance.

Though he proclaimed that the govt. overcome the problem of inflation, rejuvenated the economy and even brought in laws to ensure transparency, and alleviate poverty, through his social, health and other programs, but some of his initiatives like housing for all, smart cities, clean india campaign appeared to be over ambitious and seems to be infeasible and so far from reality. His failure in treating with the announcement he made in the name of "achche din" during lok sabha elections affects his image and resulted with loosing Delhi election with big margin and even at the end we can say "achche" din appear very far away.

References :-

1. Gidelines for Swachh Bharat mission(GRAMIN), December,2014.
2. Clean India : Clean School- A Hand Book, Ministry of Human Resource Development, Govt. of India.
3. Specturm, The Newspaper of SRM University, Volu. 07 No. 05
4. www.saanjhi.gov.in
5. www.indiapost.gov.in
6. http://financialservices.gov.in/
7. www.rural.nic.in

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

FDI And Service Sector

Dr. Praveen Ojha *

Introduction - FDI is the outcome of mutual interest of multinational firms and host countries. According to International Monetary Fund (IMF), FDI is defined as "an investment operating in an economy other than that of the investor."Global developments of the present era are such so as investors of different countries looking forward to find business opportunities across the national boundaries of the country. The services sector has been a major and vital force steadily driving growth in the Indian economy for more than a decade. The economy has successfully navigated the turbulent years of the recent global economic crisis because of the vitality of this sector in the domestic economy and its prominent role in India's external economic interactions. It covers a wide range of activities from the most sophisticated information technology (IT) to simple services provided by the unorganized sector, such as the services of the barber and plumber. National Accounts classification of the services sector incorporates trade, hotels, and restaurants; transport, storage, and communication; financing, insurance, real estate, and business services; and community, social, and personal services.

The Services Sector contributes the most to the Indian GDP. The Sector of Services in India has the biggest share in the country's GDP for it accounts for around 53.8%. FDI also plays a vital role in the up gradation of technology, skills and managerial capabilities in various sectors of the economy. It provide opportunities to host countries to enhance their economic development and opens new opportunities to home countries to optimize their earnings by employing their ideal resources. India ranks fifteenth in the services output and it provides employment to around 23% of the total workforce in the country. The various sectors under the Services Sector in India are construction, trade, hotels, transport, restaurant, communication and storage, social and personal services, community, insurance, financing, business services, and real estate. The flow of FDI in Indian service sector is boosting the growth of Indian economy, this sector contributing the large share in the growing GDP of India. This sector attracting a significant portion of total FDI in Indian economy. The Services Sector contributes the most to the Indian GDP.

The measurement of the share of services in FDI inflows encounters problems as it is difficult to clearly differentiate activities between services and goods in sectors such as computer hardware and software, telecommunications, and construction. Nevertheless, the share of the four sectors combined, computer hardware and software, telecommunications, and housing and real estate), predominantly consisting of services, in FDI equity inflows is around 44 per cent. If construction is included then the share rises to 51 per cent. The financial and non-financial services sector which falls purely in the services category is the largest recipient of FDI equity inflows with a 21 per cent share.

The services sector in India received foreign direct investment (FDI) worth US$ 39,416.86 million during the period April 2000–February 2014, as per data released by Department of Industrial Policy and Promotion (DIPP). Indian insurance companies will spend Rs 12,100 crore (US$ 2.01 billion) on IT products and services in 2014, a 12 per cent increase over the previous year.

FDI has positively influenced the growth of services export in the Indian economy, after the liberalization period. During the post liberalization period the trade policies undertaken by the government, the changing attitude of the government towards foreign direct investment has increased export opportunities has induced foreign investors to take advantage of India's comparative advantage in the services sector. Rapid advancement in information and communication technology in India is likely to generate significant scope for export-oriented services. There is a vast unlimited potential for expansion of services export and India needs to boost its export competitiveness and improve its prospects to become a global player in services trade. Rapid technological revolution and widespread use of the information and communication technology (ICT), international production fragmentation has emerged as a key source of export growth, wherein FDI has played a vital role in international splitting up of the production process within vertically integrated manufacturing industries. Commodity trade like garments, footwear, toys, handicrafts etc., it is now being applied intensively to the service sector, in the form of BPO. The

*Professor and Head Faculty (Commerce) Dr. Bhagwat Sahai Govt. College, Gwalior (M.P.) INDIA

areas where BPOs are gaining importance ranges from air transport services, software, banking, to health and education services . It is in this context that causal links between FDI and Services exports merits attention in the Indian case, and provides important policy directions. It would be favourable for India to attract FDI in those industries that have potential to compete internationally and benefiting from more capital inputs flowing in and additional gains from their marketing competence, product-process technology and channels of distribution. This scope is significant and as yet widely untapped in the service sector. Hence, the importance of FDI in export promotion in the services sector in India should be pursued as a long-term policy objective. (See)

The service sector in India has tremendous growth potential and as a result it attracts huge FDI. The top 5 subsectors attracting FDI inflows are in service sector. These are as below:

- The Computer Software and Hardware enjoy the permission of 100% FDI under automatic route.
- The limit of FDI in Telecom sector was increased from 49% to 74%. FDI upto 49% is permissible under automatic route but FDI in the licensee company/Indian promoters including their holding companies shall require approval of FIPB.

FDIs Expectations -

- Boost output, technology and skills levels.
- Increase in employment.
- Linkages with other sectors of the economy.
- Upgradation of HR competencies.
- Facilitator International Trade.
- Transfer of Knowledge etc.

The flow of FDI in Indian service sector is boosting the growth of Indian economy, this sector contributing the large share in the growing GDP of India. This sector attracting a significant portion of total FDI in Indian economy and it has shown especially in the second decade of economic reforms in India. Is this contribution of FDI in this sector is stimulating the economic growth or not, this knowledge thrust of research scholar create the interest in conducting this study. The contribution of the Services Sector has increased very rapidly in the India GDP for many foreign consumers have shown interest in the country's service exports. This is due to the fact that India has a large pool of highly skilled, low cost, and educated workers in the country. This has made sure that the services that are available in the country are of the best quality. The foreign companies seeing this have started outsourcing their work to India especially in the area of business services which includes business process outsourcing and information technology services. This has given a major boost to the Services Sector in India, which in its turn has made the sector contribute more to the India GDP.

Conclusion - It can be observed from the above analysis that at the sectoral level of the Indian economy, FDI has helped to raise the output, productivity and employment in some sectors especially in service sector. Indian service sector is generating the proper employment options for skilled worker with high perks.

References :-

1. Foreign Direct Investment: Analysis of Aggregate Flows - Assaf Razin & Efraim Sadka
2. Foreign Direct Investment and Development- Theodore H. Moran
3. Fdi And Economic Growth In India - Narayan Sethi
4. Business today - November 2014
5. The economic times – 29 December 2014
6. www.ectap.ro/fdi-in-the-service-sector-propagator-of.../a606.com
7. www.finmin.nic.in/.../po l i c y % 20Paper%20 on%20 Services%20Sector.com
8. www.indiabudget.nic.in/es2013-14/echap.com

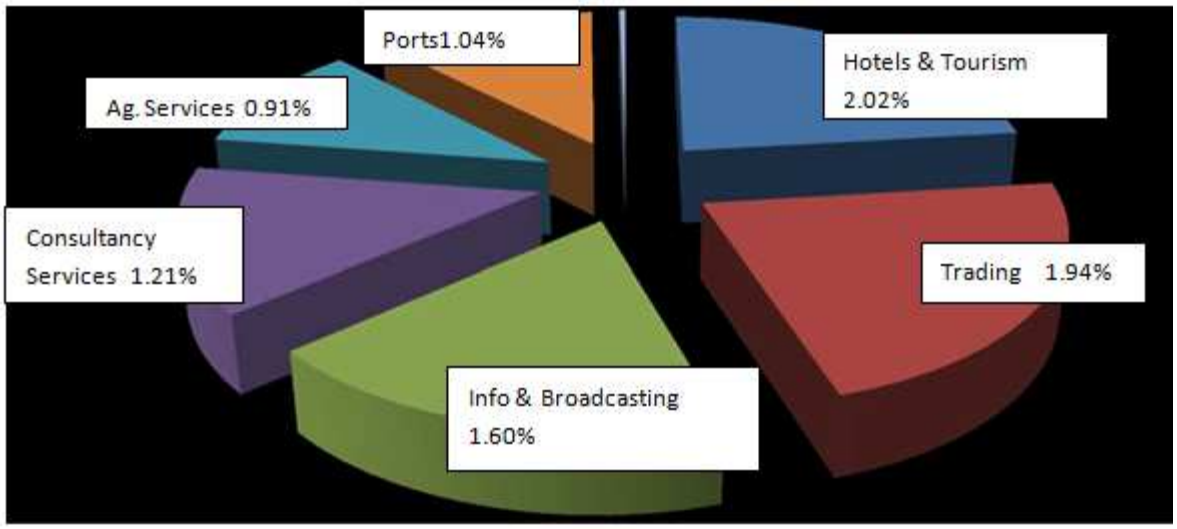

****

वित्त आयोग और बढ़ता सहकारी संघवाद

सुनीता सोलंकी *

प्रस्तावना – भारतीय संघ 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उभरा एक महत्वपूर्ण संघ है जिसे सांस्कृतिक विविधता को पोषित करने वाला 'एकात्मक संघ' कहाँ जाता है जो अपनी अभिसारी व अपसारी प्रवृत्तियों के कारण विधिवेत्ताओं के लिए सदैव विश्लेषण का विषय रहा है। भारतीय संघ में विभिन्न संघो के लक्षण विद्यमान है और इसी कारण विभिन्न विधि वेत्ताओ ने इसे विभिन्न नामों से अविहित (पुकार) है जैसे कि निकलन क्लिसेमा के शब्दो में भारतीय संघ में आदर्श संघ के सभी लक्षण विद्यमान है जैसे –

- सरकारो के दो स्तर
- शक्तियों का आवंटन
- संविधान की सर्वोच्चता
- स्वतंत्र न्यायपालिका

संविधान की सातवीं अनुसूची (अनु.246) के द्वारा सरकार के विषयों को तीन सूचियों में विभक्त किया गया। संधीय सूची में केन्द्र सरकार प्रान्तीय सूची में राज्य सरकारे तथा समवर्ती सूची में दोनों कानून बना सकती है तथा उससे संबंधित विषय के कर, शुल्क इत्यादी एकत्रित कर सकती है। भारतीय संध में वित्त शक्तियों का आवंटन इस प्रकार हुआ है कि सकल कराधान का 23 केन्द्र सरकार द्वारा एकत्रित किया जाता है जबकि शेष एक तिहाई राज्यों द्वारा एकत्र किया जाता है, इसलिए मौलिक संविधान में केन्द्र राज्य वित्तीय अंसतुलन दूर करने के लिये वित्त आयोग जैसी संवैधानिक संस्था का प्रावधान रखा गया जिसे केन्द्र व राज्यो के मध्य राजस्व आवंटन का दायित्व सौंपा गया।

संघ के जन्म के साथ ही शक्तियों के आवंटन की व्यवस्था अस्तित्व में आ गयी थी कराधान की आवश्यकता व अधिक अर्जक मदें व लोचशील मदें संघ को दी गयी जबकि कम अर्जन मदें राज्यों को दी गयी संघ को दिये गये।

करो का आवंटन –

संघ	राज्य
उत्पाद शुल्क	भूराजस्व कर
निगम कर	चुंगीकर
आयकर	पथकर
सम्पदा शुल्क	मनोरंजन कर इत्यादी
सम्पति कर इत्यादी	

अधिकतर आकस्मिक कर केन्द्र को दिये गये हैं, जबकि राज्यों को संसाधनों की अल्पता महसूस होती हे। इन्हीं परिथितियों में संतुलन स्थापना हेतु वित्त आयोग का प्रावधान अनुच्छेद 280 में किया गया।

वित्त आयोग : गठन एवं कार्यप्रणाली – संविधान के प्रारंभ से 2 वर्ष के भीतर और तत्पश्चात प्रत्येक पांच वर्ष की समाप्ति अथवा उससे पहले ऐसे समय पर जिसे राष्ट्रपति आवश्यक समझे राष्ट्रपति आदेश द्वारा एक वित्त आयोग को गठित कर सकेगा। जो राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त एक अध्यक्ष और चार अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा। (अनुच्छेद–289)

'संसद विधि द्वारा उन अर्हताओ का जो आयोग के सदस्यों के रूप में नियुक्ति के लिए अपेक्षित होगी और उसी रीति का जिसके अनुसार उनका संवरण किया जाएगा, निर्धारण कर सकेगी इस अनुच्छेद की अनुपालन में भारत की संसद के द्वारा वित्त आयोग (प्रकीर्ण उपबंध) अधिनियम 1951, पारित किया गया जिसमें यह प्रावधान है कि वित्त आयोग का अध्यक्ष वह व्यक्ति होगा जिसे सार्वजनिक जीवन का अच्छा अनुभव हो। सदस्यों के रूप में नियुक्त होने वाले व्यक्तियों की योग्यताएँ –

- कोई ऐसा व्यक्ति, जो किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किए जाने की योग्यता रखता है।
- ऐसा व्यक्ति जिसे सरकार के वित्त और लेखा का विशिष्ट ज्ञान हो।
- ऐसा व्यक्ति जिसे वित्तीय मामलों और प्रशासन का व्यापक अनुभव हो।
- ऐसा व्यक्ति जो अर्थशास्त्र का विशेषज्ञ हो।

आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है इस संबंध में यह ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि नियुक्त किए जाने वाले व्यक्ति का आर्थिक स्वार्थ न हो।

वित्त आयोग के कार्य –

- संघ एवं राज्यों के बीच करों के शुद्ध आगमन को जो इस अध्याय के अधीन उनमें विभाजित होता है या वितरण के बारे में तथा राज्यों के बीच ऐसे आगम के तत्सम्बंधी अंशों के बँटवारे के बारे में।
- भारत की संचित निधि से राज्यों के राजस्व के सहायता अनुदान देने में पालनीय सिद्धांतों के बारे में।
- राज्य वित्त आयोग द्वारा दी गई सिफारिशों के आधार पर राज्य में नगर पालिकाओं और पंचायतों के संसाधनो की अनुपूर्ति के लिए राज्य की संचित निधि के संर्वधन के लिए आवश्यक उपाय सुझाना।
- राष्ट्रपति द्वारा आयोग को सुदृढ वित्त के हित में विर्निष्ट कोई अन्य विषय।

1960 तक आयोग असम, बिहार, ओड़ीशा एवं पश्चिम बंगाल के प्रत्येक वर्ष जूट और जूट उत्पादों के निर्मित शुल्क में निवल प्रतियों के एवज में दी जाने वाली सहायता राशि के बारे में भी सुझाव देता था। संविधान के अनुसार यह सहायता राशि दस वर्ष की अस्थायी अवधि तक दी जाती रही।

आयोग की कार्यप्रणाली – वित्त आयोग को अपने कार्यो को मूर्तरूप देने के लिए कार्य प्रणाली का निर्धारण करने की स्वतन्त्रता प्राप्त है। अब तक

* शोधार्थी, सुमन मानविकी भवन, अध्ययन शाला, उज्जैन (म.प्र.) भारत

गठित हुए सभी वित्त आयोगों ने अपने कार्यो का सफलता पूर्वक पूर्ण किया। वित्त मंत्रालय का अधिकारी जो आयोग का सदस्य सचिव होता है, इस संबंध में आवश्यक वित्तीय, आर्थिक तथा प्रशासनिक आंकड़े वित्त मंत्रालय, योजना आयोग तथा नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक इत्यादी संगठनो से एकत्र कर लेता है। आँकड़ो के अध्ययन के पश्चात आयोग केन्द्र सरकार तथा सभी राज्य सरकारो को करो एवं शुल्को में हस्तांतरण के संदर्भ में अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करने तथा प्रतिनिधियों को अपने कार्यालय में बुलाकर औपचारिक या अनौपचारिक चर्चा कर लेते है। केन्द्रीय मंत्रिमंडल राज्य के मुख्यमंत्रियों वित्त मंत्रियों, मुख्य सचिवों के पश्चात आयोग को प्रमुख समस्याओं, मांगो तथा स्थिति का आभास हो जाता हैं तथा व्यवहारिक सुझाव भी प्राप्त हो जाते है। वित्त आयोग गठन के तुरन्त पश्चात एक विज्ञप्ति जारी करके उद्योग समूहों, वाणिज्यिक संघो स्वयंसेवी संगठनो तथा आम जनता के सुझाव आमंत्रित करता है। अन्ततया अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रस्तुत करता है।

भारतीय संघ में विभिन्न वित्त आयोग का गठन (तालिका का देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उपरोक्त वित्त आयोगों द्वारा राज्यों को राज्यों को कर हस्तान्तरण।

प्रथम वित्त आयोग – नवम्बर 1951 में अनुच्छेद 280 के तहत राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद द्वारा आयोग का गठन किया गया।

बारहवां वित्त आयोग (2002-2004) – बारहवें वित्त आयोग का गठन नवम्बर 2002 में तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ.ए.पी.जे.अब्दुल कलाम द्वारा किया गया।

आयोग की संरचना

अध्यक्ष	सी. रंगराजन
सदस्य	श्री टी.आर. प्रसाद
सदस्य	प्रो.डी.के.श्रीवास्तव
सदस्य	डॉ.शंकर आचार्य (पार्ट टाईम मेम्बर)
सदस्य	श्री सोमपाल (पार्ट टाईम मेम्बर)
सदस्य सचिव	डॉ.जी.सी. श्रीवास्तव

आयोग ने 30 नवम्बर 2004 का अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति को सौपी। आयोग की अनुशंसाए 2005-2010 के लिए थी। प्रमुख अनुशंसाएं –

- संघीय करों में से राज्यों की हिस्सेदारी 305 प्रतिशत की जाये।
- वृद्धि आर्थिक स्थिरता के लिए राजकोषीय घाटे को केन्द्र और राज्य दोनों को मिलकर सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के 3 प्रतिशत तक लाना।

आपदा राहत कोष – आपदा से निपटने हेतु केन्द्र राज्यों के साथ मिलकर पूर्व योजना का निर्माण करेगा उसके लिये केन्द्र और राज्यों की हिस्सेदारी क्रमश: 75:23 की रहेगी।

12 वें वित्त आयोग में 2005-10 की अवधि के लिये अपनी रिपोर्ट में राज्यों को 7,55,752 करोड़ रूपये (केन्द्रीय करो और शुल्कों में 6,13,112 करोड़ रूपये की हिस्सेदारी और 1,42,112 करोड़ रूपये की हिस्सेदारी और 1,42640 करोड़ रूपये का मद अनुदान) के कुल हस्तांतरण की सिफारिश की। विभिन्न क्षेत्रों के अन्तर्गत 12 वें वित्त आयोग द्वारा अनुशंसित एवं जारी की गई राशि इस प्रकार हैं – **(देखें अन्तिम पृष्ठ पर)**

तेहरवां वित्त आयोग – तेहरवां वित्त आयोग का गठन तत्कालिन राष्ट्रपति प्रतिभा देवी सिंह पाटिल द्वारा डॉ.विजय केलकर की अध्यक्षता में 13 नवम्बर 2007 को किया गया जिसमें 30 दिसंबर 2009 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। आयोग की रिपोर्ट 2010 15 के लिये प्रभावी होगी।

तेहरवां वित्त आयोग के मुख्य सिफारिशें केन्द्र और राज्यों के मध्य केन्द्रीय करो की कुल प्राप्तियों का बंटवारा अनुच्छेद 275 के तहत राज्यों के राजस्व के अनुदान, वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) राहत व्यय के वित्तीय प्रबंध और वित्तीय एकीकरण के लिये दिशा निर्देश से संबंधित है।

मुख्य अनुशंसा –केन्द्रीय करों की हिस्सेदारी के संबंध में आयोग ने सिफारिश की, कि केन्द्रीय करो की कुल प्राप्तियों में राज्यों का हिस्सा 32 प्रतिशत तय किया जा सकता हैं। विभिन्न क्षेत्रों के अन्तर्गत तेरहवे वित्त आयोग द्वारा अनुशंसित एवं जारी की गई राशि इस प्रकार है। **(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

चौदहवा बिल आयोग – जनवरी 2013 में भारतीय रिजर्व बैंक के भूतपूर्व गवर्नर डॉ.वाई.वी. रेड्डी की अध्यक्षता में गठित किया गया जिसके अन्य सदस्य –

प्रोफेसर अभिजित सेन	डॉ.एम. गोविंद राव
सुश्री सुषमा नाथ	डॉ.सुदिप्तो मंडल

आयोग की सिफारिशे 2015-2020 तक की अवधि के लिये होगी।

प्रमुख अनुशंसाऐ –

- 14 वें वित्त आयोग की सिफारिश है कि राज्यों की कर राजस्व में होने वाली शुद्ध आय में करीब 42 प्रतिशत हिस्सेदारी होनी चाहिए।
- साधारण और प्रदर्शन अनुपात अनुदानों के लिए पंचायत में 90:10 जबकि शहरी निकायों के लिए 80:20 रखा गया।
- 1 अप्रेल 2015 से 31 मार्च 2020 के बीच की अवधि के लिए 2,87,436 करोड़ रूपये का आवंटन जिसमें 2,00,292 लाख करोड़ पंचायतों के लिए जबकि 87,143 करोड़ नगर पालिकाओं के लिये।
- राजस्व और व्यय का संभावित आकलन करने के बाद राज्यों के धाटे को पूरा करने के लिए 194 लाख करोड़ रूपये के अनुदान की सिफारिश की।
- आठ केन्द्र प्रायोजित योजनाओं में केन्द्रीय सहयोग खत्म किया जायेगा। साथ ही अन्य केन्द्र प्रायोजित योजनाएं हिस्सेदारी पेटर्न में भी बदलाव आयेगा। साथ ही राज्यों की वित्तीय जवाबदेही बढेगी।

आयोग ने सहयोगात्मक संघवाद को बढ़ावा देने, वस्तु एवं सेवा कर के क्रियान्वयन राजकोषीय मजबूती इत्यादी के संबंध में महत्वपूर्ण सिफारिशे की।

चौदहवें वित्त आयोग की सिफारिशों को दृष्टिगत किया जाये तो पांच साल पूर्व कुल प्रस्तावित वास्तविक हस्तांतरण 39 फीसदी था ऐसा तब था जब सशर्त और बिना शर्त हस्तांतरण को एक साथ मिला दिया जाता था। बाद वाली श्रेणी के तहत देखा जाये तो राज्यो का फंड खास जरूरतों की पूर्ति के लिए दिये जाते थे। इसका अर्थ था कि इसके इस्तेमाल में बहुत अधिक लचीला रूख अपनाने की गुंजाइश नहीं थी। आयोग ने शर्त और सशर्त हस्तान्तरण भेद मिटाने की सिफारिश भी दी जो संघीय ढांचे में मूलभूत बदलाव की ओर संकेत करता है साथ ही विकेन्द्रीकरण की ओर कदम बढ़ेंगे।

GST के बारे में आयोग का विचार है कि राज्यों के लिए और अधिक उदार क्षतिपूर्ति फॉर्मूला लाया जाना चाहिये। इसे एक गारंटी वाले पूल के जरिये दिया जाना उचित होगा। ऐसा करने से राज्य मौजूदा के मुकाबले अधिक व्यापक और एकीकृत व्यवस्था को स्वीकार कर सकते है।

विभिन्न वित्त आयोगों की सिफारिशो का दृष्टिगत किया जाये तो राज्यों की और सार्थक हस्तांतरण को मजबूत बनाने की प्रक्रिया दिखाई दी है जिससे सहभागी संघवाद को बढ़ावा मिला है।

वित्त आयोग जो कि एक संवैधानिक निकाय है, केन्द्र और राज्यों को योजनाबद्ध सहायता की सिफारिश एक सुनिश्चित फॉर्मूले के द्वारा करता है 1969-79 में प्रोफेसर डी.आर. गाडगिल द्वारा तैयार किया गया जिसे 'गाडगिल फॉर्मूला' कहां गया। इस फॉर्मूले में अविकसित तथा अल्पविकसित राज्यों को विकसित व सम्पन्न राज्यों की अपेक्षा प्राथमिकता देने की बात कहीं गई है। कुल अंतरित संसाधनों में से 70 प्रतिशत का अंतरण 'गाडगिल फॉर्मूले' के अनुसार तथा 30 प्रतिशत वित्त आयोग की सिफारिश के अनुसार किया जाता है। फॉर्मूले में जम्मू-कश्मीर हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर-पूर्व के सभी राज्यों को विशेष वर्ग में रखा गया था।

फॉमूले में कहा गया था कि विशेष राज्यों को सहायता 90 प्रतिशत अनुदान तथा 10 प्रतिशत ऋण के रूप में दी जायेगी जबकि अन्य राज्यों को यह 70 प्रतिशत ऋण तथा 30 प्रतिशत अनुदान के रूप में दी जाने की बात कही गयी थी कुछ व्यवहारिक परेशानियों के कारण 11 अक्टूम्बर 1990 को गाडगिल फॉमूले में संशोधन किया गया परिवर्तित फार्मूले के आधार पर अंतरित संसाधनों का बंटवारा इस प्रकार किया जायेगा।

1. जनसंख्या - 55%
2. विशेष वर्ग के राज्यों के आधार पर - 30%
3. राजकोषीय प्रबंधन के आधार पर - 5%
4. आवदा के आधार पर - 10%

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एक लक्ष्मीकांत : भारत की राजव्यवस्था, टाटा मैग्राहील एजूकेशन (इण्डिया) प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2004
2. अजय कुमार : लोक प्रशासन, रमेश पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2008
3. डॉ.सुरेन्द्र कटारियाडॉ.शशि इन्दुलिया : मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर, 2006

पत्र, पत्रिकाऐं-

1. भारत - 2011 वार्षिक संदर्भ ग्रंथ, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय- भारत सरकार।
2. भारत - 2012
3. भारत - 2013
4. भारत - 2014
5. भारत - 2015
6. बिजनैस स्टैडर्ड, समाचार पत्र, 26 फरवरी 2015
7. पत्रिका, समाचार पत्र, 26 फरवरी 2015

बेबसाइट -

1. www.wikipedia.com
2. fincomindia.nic.in

भारतीय संघ में विभिन्न वित्त आयोग का गठन

क्र	अध्यक्ष	नियुक्ति वर्ष	रिपोर्ट जमा करने का वर्ष	रिपोर्ट क्रियान्वयन का वर्ष
प्रथम	के.सी.नियोगी	1951	1952	1952-57
द्वितीय	के. संस्थानम	1956	1957	1957-62
तृतीय	ए.के. चन्दा	1960	1961	1962-66
चतुर्थ	डॉ. वी.वी. राजमन्नार	1964	1965	1966-69
पंचम	महावीर त्यागी	1968	1969	1969-74
छठवां	ब्रह्मानंद रेड्डी	1972	1973	1974-79
सातवां	जे.एम. सेलत	1977	1978	1979-84
आठवां	वाई.बी. चहवाह	1982	1984	1984-89
नवां	एन.के.पी. साल्वे	1987	1989	1989-95
दसवां	के.सी. पंत	1992	1994	1995-2000
ग्यारहवां	ए.एम. खुसरो	1998	2000	2000-05
बारहवां	डॉ.सी. रंगराजन	2002	2004	2005-10
तेरहवां	डॉ. विजय केलकर	2007	2009	2010-15
चोदहवां	वाई.वी.रेड्डी	2013	2015	2015-20

क्र.	अनुदान का उधेश्य	2005–10 के दौराने आवंटन मद	जारी की गई राशि (31.03.10 तक)
1	स्थानीय निकायों का अनुदान	25,000	23759
2	आपदा राहत में केन्द्र की हिस्सेदारी	16,000	16,000
3	गैर–योजना राजस्व घाटा अनुदान	56856	56856
4	शिक्षा के लिये अनुदान	10,172	8701
5	स्वास्थ्य के लिए अनुदान	5887	4769
6	सडको व पुलो के रखरखाव के लिये अनुदान	15,000	13569
7	सार्वजनिक भवनो के रखररखाव हेतु अनुदान	5000	3776
8	वनो के रखरखाव हेतु अनुदान विरासत	1000	953
9	विरासत संरक्षण	625	570
10	आवश्यकताओं हेतु अनुदान	7100	6153
	कुल	**142640**	**135106**

स्त्रोत– वित्त आयोग रिपोर्ट

(करोड़ रूपये)

क्र	**कुल अनुदान का उधेश्य**	**2010–15 के दौरान आवंटिन मदें**	**2010–11**	**2011–12**	**2012–13**	**जारी की गई राशी 31.05.13**
1	स्थानीय निकाय अनुदान	87519	7842.63	11134.62	14266.68	723.31
2	राज्य आपदा राहत कोष में केन्द्र का हिस्सा	26373	4442.63	4344.45	5262.29	734.86
3	गैर योजना राजस्व घाटा अनुदान	51800	11653	10808	11716	1679.17
4	शिक्षा के लिए अनुदान	24068	3675	4208	4615	0.00
5	सड़क तथा पुल रखरखाव के लिए अनुदान	199930	0	4257	3663.83	0.00
6	राज्य की विशेष आवश्यकताओं के लिए अनुदान	27945	1050	6058.88	2634.26	47.63
7	परिणामों में सुधार के लिए अनुदान	9446	1368.94	723.02	1036.10	47.63
ए.	न्याय की सुपुर्दगी	5000	1000	353.63	72.84	9.00
बी.	विशिष्ट पहचान	2989	298.94	0.00	8.96	0.03
सी.	जिला नवोन्मेष कोष	616	0.00	252.0	37.50	17.50
डी.	सांख्यिकी व्यवस्था में सुधार	616	0.00	117	16.80	18.60
ई.	कर्मचारीपेंशनभोगी का डेटाबेस	225	70	0.00	0.00	2.50
8	परफोर्मेंस इसस्टिव ग्रांट	1500	630	510	360	0.00
9	पर्यावरण अनुदान	10000	625	1751	1099.26	0.00
ए.	जल क्षेत्र प्रबंधन	5000	0.00	1126	105	0.00
बी.	वन	5000	625	625	994.26	0.00
10	शिशु मृत्युदर	–	0.00	–	1500	–
	कुल	**258581.00**	**31287.34**	**43795.18**	**45253.42**	**3253.51**

स्त्रोत– वित्त आयोग रिपोर्ट 2010

****

बैंक साख के परिपेक्ष्य में फसल उत्पादन में परिवर्तन (मध्यप्रदेश के संदर्भ में)

डॉ. संदीप माथुर*

शोध सारांश – भारतीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने एवं ग्रामीणों के उत्थान के लिये कृषि की उन्नति करना नितांत आवश्यक है। कृषि से न केवल खाद्यान्न प्राप्त होता है बल्कि अनेक उद्योगों के लिये कच्ची सामग्री व बेरोजगारों को रोजगार प्राप्त होता है। कृषि का राष्ट्रीय आय में सर्वाधिक योगदान रहता है। कृषि कार्यो के लिये करोड़ों रुपये की साख की आवश्यकता प्रतिवर्ष होती है। वर्तमान में देश की बैंकिंग व्यवस्था अपने कुल ऋणों का एक निश्चित प्रतिशत इस क्षेत्र के लिये देने को बाध्य है। इस समय बैंकों द्वारा दिये जाने वाले ऋण का लगभग 41 प्रतिशत प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को दिया जा रहा है, इसमें कृषि का प्रतिशत 17 है।

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी कृषि, भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में मात्र जीवन–यापन का साधन या उद्योग–धंधा ही नहीं है, वरन् इसे अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी के रूप में स्वीकार किया जाता है। देश में व्यापार, व्यवसाय, उद्योग – धंधे, विदेशी मुद्रा की प्राप्ति, राजनीतिक स्थायित्व एवं पंचवर्षीय योजनाओं की सफलता कृषि पर ही निर्भर है। कृषि असफल रहती है तो राष्ट्र एवं राष्ट्र की अर्थव्यवस्था दोनों ही असफल रहते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था का मूलाधार कृषि है। सन्2001की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या का लगभग 69 प्रतिशत गावों में निवास करता है जो पूर्ण या आंशिक रूप से कृषि एवं कृषि से संबद्ध कार्यों में संलग्न हैं।

उद्देश्य –प्रस्तुत शोध पत्र में फसल उत्पादन में होने वाले परिवर्तन में बैंक साख की भूमिका को जानने का प्रयास किया गया है।

शोध विधि –प्रस्तुत शोध पत्र अप्रकाशित शोध प्रबंध पर आधारित है। इस शोध पत्र में बैंक द्वारा कृषि कार्य हेतु प्रदत्त ऋण से फसल उत्पादन में हुई वृद्धि का अध्ययन किया गया है। यह शोध कार्य सर्वेक्षण विधि पर आधारित है।

न्यादर्श –शोध कार्य मध्यप्रदेश के जबलपुर जिले के कृषि हितग्राहियों को बैंक द्वारा प्रदत्त कृषि कार्यो हेतु ऋण पर आधारित है। अध्ययन हेतु 222 हितग्राहियों का चयन यादृच्छिकी न्यादर्श विधि द्वारा किया गया है।

आंकड़ों का विश्लेषण – प्रस्तुत अध्ययन में कृषकों के फसल उत्पादन में परिवर्तन में बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण की भूमिका को ज्ञात करने हेतु चयनित कृषक हितग्राहियों से साक्षात्कार के माध्यम से विषय संबंधित जानकारियाँ संकलित की गई हैं। संकलित आंकड़ों को निम्न तालिकाओं के आधार पर विश्लेषित किया गया है –

तालिका क्र. – 1 (देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

चयनित विकासखण्ड में सर्वाधिक हितग्राहियों ने भूमि सुधार एवं सिंचाई के साधनों को उन्नत बनाने हेतु ऋण लिया तत्पश्चात् खाद, बीज एवं कीटनाशक दवा के प्रयोग हेतु बैंक ऋण का उपयोग किया गया तथा तुलनात्मक रूप में सबसे कम हितग्राहियों ने कृषि यंत्र एवं उपकरण तथा ट्रेक्टर प्राप्त करने हेतु बैंक से ऋण लिया है।

कृषि ऋण के प्रकार –कृषकों की विभिन्न आवश्यकताओं के आधार पर किसानों की ऋण आवश्यकता को समय के आधार पर निम्न प्रकार दर्शाया गया है –

- **अल्पकालीन ऋण –** सामान्यतया अल्पकालीन ऋण की अवधि एक फसल से दूसरी फसल तक या एक वर्ष तक होती है। इस प्रकार के ऋण बीज, खाद, कीटनाशक दवा, मजदूरी, औजार, जोत आदि के व्ययों का भुगतान करने के लिये प्राप्त किये जाते हैं तथा कृषि फसल की बिक्री होते ही चुका दिये जाते हैं।
- **मध्यमकालीन ऋण –** इन ऋणों की अवधि दो वर्ष से पांच वर्ष तक मानी जाती है। इसके अन्तर्गत किसान मवेशियों की खरीद, भूमि सुधार, सिंचाई हेतु पम्प लगाने या इसी प्रकार के अन्य कृषि औजारों को खरीदने के लिये ऋण प्राप्त करना चाहते हैं। इस ऋण की राशि किसान की साधारण देय क्षमता से अधिक होती है और वह फसल पर किश्तों द्वारा ही इसका भुगतान कर सकता है।
- **दीर्घकालीन ऋण –** इस प्रकार के ऋणों की अवधि पांच वर्ष से बीस वर्ष तक की हो सकती है। इतनी लम्बी अवधि वाले ऋणों की आवश्यकता भूमि में स्थायी सुधार करने के लिये, कुँआ खुदवाने, स्थायी नालियां बनवाने, जानवरों के लिये गौशाला का निर्माण करने, गोदाम बनवाने, नई कृषि भूमि खरीदने, ट्रेक्टर खरीदने, पुराने ऋणों का भुगतान करने आदि के लिये होती है।

तालिका क्र. – 2 (देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका में विकासखण्डवार समयावधि के आधार पर कृषि ऋण के वर्गीकरण को दर्शाया गया है। आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक हितग्राहियों ने मध्यमकालीन ऋण प्राप्त किया है, ताकि उनकी भूमि सुधार, सिंचाई के साधनों एवं कृषि औजार तथा उपकरणों की आवश्यकता की पूर्ति हो सके, तत्पश्चात् अल्पकालीन ऋण जिससे खाद, बीज एवं कीटनाशक दवा की खरीद हो सके, हितग्राहियों द्वारा प्राप्त किया गया है। कृषि भूमि में स्थायी सुधार एवं ट्रेक्टर आदि के क्रय हेतु दीर्घकालीन ऋण प्राप्त करने वाले हितग्राहियों की संख्या अपेक्षाकृत कम है।

तालिका क्र.–3 (देखें अन्तिम पृष्ठ पर))

तालिका में विकासखण्डवार बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण के पश्चात् कृषकों के फसल उत्पादन में जो परिवर्तन आये हैं, उन्हें जानने का प्रयास किया गया

* प्राचार्य, प्रज्ञा कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, कटंगी, जबलपुर (म.प्र.) भारत

है। पनागर विकासखण्ड में कुल 57 हितग्राहियों में से लगभग 68.4 प्रतिशत हितग्राही यह मानते हैं कि बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण के पश्चात् उनके फसल उत्पादन में वृद्धि हुई है। हितग्राहियों का यह मानना है कि बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण से उन्नत बीजों को क्रय करने, सिंचाई की सुविधा का विस्तार करने एवं आधुनिक कृषि उपकरण आदि की उपलब्धता के कारण उनके फसल उत्पादन में वृद्धि हुई है जबकि 31.6 प्रतिशत हितग्राहियों का यह अभिमत है कि बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण के पश्चात् उनके फसल उत्पादन में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है।

सिहोरा विकासखण्ड में कुल 113 हितग्राहियों से उनके फसल उत्पादन में हुये परिवर्तन पर अभिमत प्राप्त किया गया है। जिसमें 57.5 प्रतिशत हितग्राहियों का यह मत है कि बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण के पश्चात् उनके फसल उत्पादन में वृद्धि हुई है। जबकि 42.5 प्रतिशत हितग्राहियों का यह अभिमत है कि बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण के पश्चात् उनके फसल उत्पादन में कोई वृद्धि नहीं हुई है। मझौली विकासखण्ड में कुल 52 हितग्राहियों में से 51.9 प्रतिशत हितग्राही यह मानते हैं कि बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण के पश्चात् उनके फसल उत्पादन में वृद्धि हुई है। जबकि 48.1 प्रतिशत हितग्राहियों का अभिमत है कि बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण के पश्चात् उनके फसल उत्पादन में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है।

उक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि चयनित हितग्राहियों में से आधे से अधिक हितग्राही यह स्वीकार करते हैं कि बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण के पश्चात् उनके फसल उत्पादन में वृद्धि हुई है। जिसमें पनागर विकासखण्ड के हितग्राहियों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है।

निष्कर्ष – उपरोक्त समस्त विश्लेषण से स्पष्ट रूप से यह संकेत मिलता है कि बैंक साख के उपरांत कृषि उत्पादन की वृद्धि से अधिकांश कृषक वर्ग लाभांवित हुआ है, जो इस ओर इंगित करता है कि कृषक वर्ग को कृषि कार्य हेतु आर्थिक सहायता देकर लाभांवित किया जा सकता है। इस दिशा में निरंतर प्रयास करने की आवश्यकता है। यह भी आवश्यक है कि छोटे कृषकों को न्यूनतम ब्याज दर पर उचित समय पर ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित की जाये ताकि कृषि के विकास का मार्ग प्रशस्त हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Burgess, Robin and Pandey, Rohini : "Do Rural Banks Matter Evidence from the Indian Social Banking Experiment", Department of Economics London School of Economic, London, 2002.
2. Das, Abhiman and Senapati, Mangnsha, "Impact of Agricultural Credit on Agriculture Production : An Empirical Analysin in India", 2008.
3. Dhananjay, B. N. : Savings Products of RRBs - A Case Study of Pragathi Grameen Bank, Karnataka, 2008.
4. Kalkundrikar, Anil Baburao : "Regional Rural Banks & Economic Development", Daya Publishing Home, New Delhi, 2009.
5. नीमा, राज कुमार एवं शर्मा, रामरतन : कृषि साख में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक उज्जैन का योगदान, मध्यप्रदेश आर्थिक पत्रिका, अंक 13,जनवरी 1999.
6. Pal, Karan & Singh, Jasvir, " Efficacy of Regional Rural Banks (RRBs) in India : A Conventional Analysis", 2006.
7. Shukla, O. P. & Singh, R. P., " Impact of Institutional Credit on Rural Economy : A Case study of Kanpur Kshetriya Gramin Bank", Indian Journal of Agricultural Economics, Kanpur, 2005.
8. Shah, Mihir, Rao, Ranga && Shankar, P.S. Vijay, Rural Credit in 20th Century India : An overviews of History & Perspectives, 2007.
9. शुक्ल डॉ. चिन्तामणि, ग्रामीण बैंकिंग : उद्भव एवं विकास, ग्रामीण बैंकिंग परिवर्तित परिदृश्य, आदित्य पब्लिशर्स, बीना, म.प्र., 1997.
10. सोहाने, डॉ. आर. एस., ग्रामीण वित्त में भारतीय वाणिज्यिक बैंकों की भूमिका, अखिल भारतीय शोध संगोष्ठी, मध्यप्रदेश के आर्थिक विकास में शासकीय – अशासकीय वित्तीय संस्थाओं का योगदान, आयोजनकर्ता ओ. एफ.के. शासकीय महाविद्यालय, खमरिया, जबलपुर, 14–16 नवंबर, 1997.

तालिका क्र. – 1
विकासखण्ड़वार कृषि हितग्राहियों के ऋण का उद्देश्य

कृषि ऋण के उद्देश्य	पनागर विकासखंड		सिहोरा विकासखंड		मझौली विकासखंड	
	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवा	18	31.6	39	34.5	20	38.5
भूमि सुधार एवं सिंचाई के साधन	25	43.9	52	46.0	23	44.2
कृषि यंत्र, उपकरण एवं ट्रेक्टर	14	24.6	22	19.5	9	17.3
योग	57	100	113	100	52	100

स्रोत – सर्वेक्षित आंकड़े

तालिका क्र. – 2
विकासखण्ड़वार कृषि ऋण का प्रकार

कृषि ऋण के प्रकार	पनागर विकासखंड		सिहोरा विकासखंड		मझौली विकासखंड	
	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
अल्पकालीन ऋण	17	29.8	37	32.7	16	30.8
मध्यमकालीन ऋण	27	47.4	53	46.9	26	50.0
दीर्घकालीन ऋण	13	22.8	23	20.4	10	19.2
योग	57	100	113	100	52	100

स्रोत – सर्वेक्षित आंकड़े

तालिका क्र.–3
विकासखण्ड़वार बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण के पश्चात् कृषकों के फसल उत्पादन में वृद्धि

उत्पादन में वृद्धि	पनागर विकासखंड		सिहोरा विकासखंड		मझौली विकासखंड	
	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
हाँ	39	68.4	65	57.5	27	51.9
नहीं	18	31.6	48	42.5	25	48.1
योग	57	100	113	100	52	100

स्रोत – सर्वेक्षित आंकड़े

****

सामूहिक सौदेबाजी - मालनपुर औद्योगिक क्षेत्र में कार्य समितियों की भूमिका

डॉ. लारेन्स कुमार बौद्ध *

शोध सारांश – सामूहिक सौदेबाजी में कार्य समितियों की भूमिका सहयोगात्मक रही है तथा इनके माध्यम से विभिन्न प्रकार की समस्याओं के समाधान के साथ-साथ उनका निराकरण हुआ है समस्या चाहे संयत्र स्तरीय समझौतों को लेकर हो या स्वास्थ्यप्रद वातावरण से संबंधित हो समितियों का रूख हमेशा सकारात्मक रहा है तथा कार्य समितियों की भूमिका को भी अधिकांश श्रमिकों ने संतोषजनक बताया है जो कि उनकी निष्क्रियता का प्रमाण है।

प्रस्तावना – आर्थिक प्रगति के लिए औद्योगिक शांति जरूरी होती है, जो सेवायोजकों और श्रमिकों के बीच समझदारी, सहयोग एवं साझेदारी की भावना के पाए जाने पर निर्भर रहती है। इन दोनों वर्गों के हितों में विरोध होता है, किन्तु उनमें सहयोग के लिए व्यापक क्षेत्र होता है। अत: औद्योगिक शांति को बढ़ाने में सही सामूहिक सौदेबाजी का महत्व बहुत ज्यादा होता है सामूहिक सौदेबाजी जो आर्थिक जनतंत्र के लिए बहुत जरूरी है, किसी आपसी समझौते द्वारा होने वाले हल को निकालने के लिये एक द्विपक्षीय ढ़ंग है साधारण रूप में सामूहिक सौदेबाजी की क्रिया वह निधि है, जिसके द्वारा प्रबंधक और श्रमिक एक-दूसरे की समस्याऐं एवं दृष्टिकोण मालूम कर सकते है तथरोजगार सम्बन्धों की एक ऐसी रूपरेखा बना सकते हैं, जिसके अन्तर्गत दोनों आपस में अपना दैनिक सहयोग सद्भावना से एवं आपसी लाभ के लिए कर सके।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. कार्य समितियों का संबंध उद्योगों में उत्पन्न होने वाली सामान्य समस्याओं के साथ-साथ दैनिक कार्यों से भी होता है। यह समितियाँ सामूहिक सौदेबाजी के माध्यम से कार्य के घण्टे, कार्य की दिशायें, विश्राम, छुट्टियों के दिनों की संख्या आदि निर्धारित करवाने में सहयोग करती है और कर्मचारियों के क्षतिपूर्ति लाभों की ओर भी प्रबंधकों का ध्यान केन्द्रित करवाती है।
2. कार्य समितियाँ श्रमिकों एवं नियुक्ताओं के बीच आपसी सामाजस्य को बनाये रखने के लिये सामाजिक एवं आर्थिक हितों पर उत्पन्न होने वाले वाद-विवादों को सामूहिक सौदेबाजी के माध्यम से हल करवाने का हर संभव प्रयास करती है। इस संबंध में कार्यशालाओं का भी आयोजन करवाती है।
3. यह समितियाँ विभिन्न औद्योगिक इकाईयों में सयंत्र स्तर पर किये गये सामूहिक सौदेबाजी समझौतों की शर्तों को लागू करवाने के लिये प्रयासरत रहती है। यदि किसी औद्योगिक इकाई में समझौते संबंधी किसी शर्त का पालन नहीं किया जाता है तो उसकी शिकायत नियोक्ताओं एवं प्रबंधकों से करती है।
4. श्रमिकों की सुरक्षा एवं स्वास्थ्य, कार्यदशाऐं, कार्य पद्धति और उत्पादन के विभिन्न पहलुओं से संबंधित कोई शिकायतें श्रमिकों द्वारा कार्य समितियों से की जाती है तो वह उनकी जांच पड़ताल करवाकर उनका शीघ्र निराकरण करवाती है।

उपकल्पना –

1. कार्य समितियों का संबंध मुख्यत: श्रमिकों की विभिन्न समस्याओं को हल करवाना है।
2. सामूहिक सौदेबाजी में कार्य समितियों की भूमिका संतोषजनक रही है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के समंकों पर आधारित है। प्रत्यक्ष अनुसंधान के साथ-साथ प्रश्नावली के माध्यम से भी आंकडों को संग्रहित किया गया है तथा आवश्यकता पड़ने पर अन्वेषणात्मक पद्धति का भी प्रयोग किया गया है।

सामूहिक सौदेबाजी में कार्य समितियों की भूमिका का विश्लेषण – प्रस्तुत अध्ययन में चयनित 10 प्रतिशत श्रमिकों की 4 बिन्दु पैमाने के अन्तर्गत सामूहिक सौदेबाजी की स्थिति का अध्ययन कर उसका विश्लेषण उनकी राय को लेकर किया गया है इसमें उद्योग के सभी प्रकार के कर्मचारियों को शामिल किया गया है। **तालिका क्रमांक – 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)**

विश्लेषण एवं निर्वचन – तालिका क्रमांक 2 के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रोडक्ट लि.और मै.एसआरएफ.लि.को छोड़कर शेष सभी कम्पनियों में भूमिका का सर्वोत्तम स्तर 20-50 प्रतिशत तक है। जबकि बहुत अच्छी स्थिति का स्तर गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रोडक्ट लि.की अपेक्षा अन्य कम्पनियों में 20 प्रतिशत से अधिक है। एसएम.मिल्कोज प्रा.लि, मै.सुप्रीम इण्डस्ट्रीज लि, क्राम्प्टन ग्रीब्ज लि.में अन्य कम्पनियों की अपेक्षा अच्छी स्थिति कस्तर 20 प्रतिशत से कम है। फ्लैक्स इण्डस्ट्रीज लि, एसएम.मिल्कोज प्रा.लि, मै.सूर्या रोशनी लि, मै.सुप्रीम इण्डस्ट्रीज लि, क्राम्प्टन ग्रीब्ज लि.को छोड़कर शेष सभी कम्पनियों के 20 प्रतिशत से अधिक श्रमिक इस व्यवस्थको संतोषजनक मानते है।

परिणाम एवं निष्कर्ष – कार्य समितियों के माध्यम से श्रमिकों की विभिन्न प्रकार की समस्यायें जैसे कार्य के घण्टे, कार्य की दशाऐं, विश्राम का समय, संयत्र स्तर पर सामूहिक सौदेबाजी समझौतों का पालन एवं अन्य शिकायतों का निराकरण किया गया है इससे अध्ययन की प्रथम उपकल्पना प्रमाणित होती है। उपरोक्त तालिकाओं के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अधिकतर

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय गांधी महाविद्यालय, बालाजी, मिहोना, जिला – भिण्ड (म.प्र.) भारत

श्रमिकों द्वारा कार्य समितियों की भूमिका के स्तर को संतोषजनक माना गया है इससे अध्ययन की द्वितीय उपकल्पना की पुष्टि होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भगोलीबाल, टीएन.(2001) – श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक संबंध, साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रालि.आगरा, पृष्ठ क्र.314
2. डॉ. सिन्हा, बी.सी. एवं पुष्पा (2004) – श्रम अर्थशास्त्र मयूर पेपर वेक्स नोएडा, पृष्ठ क्र. 611
3. मामोरिया, मामोरिया एवं दशोरा (1996) – सेविवर्ग प्रबंध एवं औद्योगिक संबंध साहित्य भवन (आरएस) आगरा, पृष्ठ क्र742
4. अग्रवाल, जी.के. एवं पाण्डेय एस.एस. (2001) – सामाजिक शोध आगरा बुक स्टोर आगरा, पृष्ठ क्र. 15
5. डॉ.मुन्जाल, एस.(1999) – रिसर्च मैथडोलॉजी राज पब्लिकेशन हाउस जयपुर, पृष्ठ क्र. 2
6. डॉ. नौलखा, आर.एल. (2007) – औद्योगिक सन्नियम रमेश बुक डिपो जयपुर, नई दिल्ली, पृष्ठ क्र. 165
7. मंगल एवं सिंघई, (1983) – औद्योगिक सन्नियम आगरा बुक स्टोर आगरा, पृष्ठ क्र.39
8. डॉ. मिश्र, एस.के. (1971) – औद्योगिक अर्थशास्त्र वीनस प्रकाशन, कानपुर पृष्ठ क्र. 517

तालिका क्रमांक – 1

सामूहिक सौदेबाजी में कार्य समितियों की भूमिका का विश्लेषण

कम्पनी का नाम	सर्वोत्तम	बहुत अच्छी	अच्छी	संतोषजनक	योग
गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रोड ट लि.	10	10	30	50	100
एट्लस साइकिल लि.	50	75	50	75	250
फ्लै स इण्डस्ट्रीज लि.	14	19	14	08	55
एसएम.मिल्कोज प्रा.लि.	09	07	04	02	22
जय मारूति गैस सैलेण्डर्स लि.	03	02	03	02	10
मै.एसआरएफ.लि.	09	13	13	15	50
मै.सूर्या रो6ानी लि.	28	21	14	07	70
स्टर्लिंग एग्रो इण्डस्ट्रीज लि.	09	09	06	06	30
मै.सुप्रीम इण्डस्ट्रीज लि.	05	03	02	02	12
क्राम्प्टन ग्रीब्ज लि.	09	05	02	02	18

स्त्रोत :– सर्वेक्षण पर आधारित।

तालिका क्रमांक – 2

सामूहिक सौदेबाजी में कार्य समितियों की भूमिका का स्तर

कम्पनी का नाम	सर्वोत्तम	बहुत अच्छी	अच्छी	संतोषजनक	योग
गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रोड ट लि.	10%	10%	30%	50%	100%
एट्लस साइकिल लि.	20%	30%	20%	30%	100%
फ्लै स इण्डस्ट्रीज लि.	25%	35%	25%	15%	100%
एसएम.मिल्कोज प्रा.लि.	41%	31%	18%	10%	100%
जय मारूति गैस सैलेण्डर्स लि.	30%	20%	30%	20%	100%
मै.एसआरएफ.लि.	18%	26%	26%	30%	100%
मै.सूर्या रो6ानी लि.	40%	30%	20%	10%	100%
स्टर्लिंग एग्रो इण्डस्ट्रीज लि.	30%	30%	20%	20%	100%
मै.सुप्रीम इण्डस्ट्रीज लि.	41%	25%	17%	17%	100%
क्राम्प्टन ग्रीब्ज लि.	50%	28%	11%	11%	100%

****

भारत में बैंकिग विकास - एक अध्ययन

डॉ. अभय मुंगी *

प्रस्तावना – वैदिककाल में उल्लेख है कि भारत में 2000 ई.पू. में भी बैंक जैसी संस्था के अस्तित्व का पता चलता है, जब गुल्लकों के अवशेष हालैडं युनान में प्राप्त हुए थे, जिनका मकसद मुद्रा को सुरक्षित रखना मात्र था। मौर्यकाल में चाणक्य के अर्थशास्त्र में इस बात का उल्लेख किया है कि राजा को ब्याज दरों का नियमन करना चाहिए, मध्यकाल में भी तत्कालीन इतिहासकारों ने अपनी लेखनी चलाई है। कि 17 वीं शताब्दी में भारत के हर गॉव में मुद्रा बदलने वाला मिलता है, जो सर्राफ के नाम से जाना जाता था।

सन् 1770 में ब्रिटिश इण्डिया ने पहला बैंक भारत में खोला, नाम था बैंक ऑफ हिन्दुस्तान 1786 में जनरल बैंक ऑफ इण्डिया बनाया गया जो 1791 में फेल हो गया। तत्पश्चात पहला वास्तविक बैंक 1806 में बैंक ऑफ कलकत्ता खोला गया, जिसे 1809 में बैंक ऑफ बंगाल नाम दिया गया, ये बैंक ईस्ट इण्डिया कंपनी का काम देखता था। लेकिन इसके बोर्ड में अधिकत्तर सदस्य भारतीय थे। हालांकि इस बैंक के ठीक 400 वर्ष पूर्व 1406 में विश्व को पहला आधुनिक बैंक जेनेवा में स्थापित किया गया था।

1806 में बैंक ऑफ बंगाल की स्थापना, 1840 में बैंक ऑफ बम्बई, तथा 1843 में बैंक आफ मद्रास स्थापित हुए ये तीनों बैंक प्रेसीडेंशियल बैंक कहलाये और 1921 में आपस में मर्ज होकर इम्पीरिवल बैंक आफ इण्डिया कहलाये और स्वतन्त्रता प्राप्ति के सात वर्ष पश्चात 1 जनवरी 1955 को इसका राष्ट्रीयकरण होकर भारतीय स्टेट बैंक का नामकरण पड़ा।

सन् 1865 में इलाहाबाद बैंक की स्थापना की गई जिसे 150 वर्ष पूरे हो चुके है। इसके पश्चात पंजाब नेशनल बैंक, तत्पश्चात 1911 में सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया प्रारंभ हुई। इसी बीच 18 वीं शताब्दी से ही यह आवश्यकता महसूस की जा रही थी कि भारत में केन्द्रीय बैंक की स्थापना की जाए। इसके संबंध में सर्वप्रथम लार्ड वारेन हेस्टिंग्स ने 1773 में ब्रिटिश सरकार को एक पत्र लिख था, पश्चात अनेक विद्धानों, जॉच आयोगो ने केन्द्रीय बैंक की स्थापना हेतु सुझाव दिये, इनमें 1913 में चेम्बरलेन आयोग के सदस्य लार्ड किन्स, 1920 में ब्रुसेल्स के अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय सम्मेलन, 1929 में हिल्टन यंग आयोग तथा 1931 में केन्द्रीय बैंक जॉच समिति के सुझाव महत्वपूर्ण थे। इन सभी सुझावो पर विचार कर सन् 1934 में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया अधिनियम को स्वीकृति प्रदान की और फिर 1 अप्रैल 1935 को इसकी स्थापना कर इसने अपना कार्य प्रांरभ किया। 1 जनवरी 1949 को रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया।

हमारे इतिहास में 19 जुलाई 1969, 15 अप्रैल 1980 और 4 सिंतम्बर 1993 की तिथि अत्यंत महत्व रखती है। जहां पहली दो तिथियों पर देश की 14 और 06 बड़ी बैंकों का राष्ट्रीकरण हुआ। वही 04 सितंम्बर 1993 को देष की 2 बड़ी बैंक एक हो गई जब न्यू बैंक ऑफ इण्डिया, पंजाब नेशनल बैंक में विलीन हो गई।

बैंको के कार्य – आज बैंक विभिन्न रूपों में कार्य कर रही है व्यापारिक बैंक के रूप में, विनियोग बैंक के रूप में, विकास बैंक के रूप में, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय बैंक, देशी बैंकर्स के रूप में कार्य कर रहे है।

ये विभिन्न बैंक समाज के छोटे से छोटे वर्गो से लेकर बड़े से बड़े उद्योगपतियों की बचतों को एकत्र कर उन्हें उत्पाद कार्यो में विनियोजित करते है। व्यापार तथा औद्योगिक कार्यो के लिए उचित मात्रा में वित्त उपलब्ध कराते है, पिछड़े हुए क्षेत्रों में विकसित क्षेत्रों से पूंजी हस्तांतरित करके विकास के नए अवसर तथा नये रोजगार उत्पन्न कराते है। आर्थिक नियोजन के लिए आवश्यक साधन उपलब्ध योगदान प्रदान करते है।

राष्ट्रीयकरण पश्चात का परिदृश्य – विभिन्न बैंको के राष्ट्रीयकरण होते ही देश का परिदृश्य बदलने लगा, विभिन्न बैंको की शाखाओं का तेजी से विस्तार हुआ। 1 जुन 1969 को भारत में राष्ट्रीयकृत बैंको की 33350 शाखाऐं थी। जो मार्च 2012 में बढ़कर 81240 तथा भारतीय स्टेट बैंक और उनके सहायक बैंको की शाखाऐं 18830 हो गई। ज्यादातर शाखाऐं वहा खोली गई जहा पहले बैंक नहीं थे। 50 प्रतिशत से अधिक शाखाऐं ग्रामीण तथा अर्धशहरी क्षेत्रों में खोली गई। **आइये इस तालिका को देखे** –

विभिन्न बैंको की शाखाऐं

राज्य	वर्ष 1969	वर्ष 2012
असम	67	919
हिमाचल प्रदेश	41	768
हरियाणा	140	1459
नागालैण्ड	02	70

इस प्रकार क्षेत्रीय असमानता भी कम हो गई, यहां तक कि नागालैण्ड जैसे छोटे से राज्य में भी जहा 1969 में 2 बैंक शाखाऐं थी, वहा अब यह बैठकर 70 तक जा पहुची है ।

इसी प्रकार लोगों की बैंकिग आदतो में वृद्धि हुई है। आर्थिक शक्ति कर केन्द्रीकरण रूका है। जहां पहले देश के गिनेचुने उद्योगपतियों के हाथो में नियंत्रण था, वही अब यह सरकार के हाथों में आ गया है

उदारीकरण के बाद का परिदृश्य – उदारीकरण के पश्चात निजी क्षेत्र के बैंकों के प्रवेश करने से प्रतिस्पर्धा बैठी है। ग्राहको के पास अब विकल्प है कि वह श्रेष्ठ सेवा उपलब्ध कराने वाली संस्था को चुने। इसलिए बैंको के लिए यह आवश्यक हो गया है कि वे लगातार अपनी सेवाओं और उत्पादों का मुल्यांकन करते रहे, और उनमें सुधार करते रहे, विभिन्न बैंकों द्वारा क्रेडिट कार्ड, उपहार चेक , यात्री चैक, लॉकर सुविधा, बैंक ग्यारन्टी , मर्चेन्ट बैंकिग, स्वचालित टेलर मशीन (ए.टी.एम.) केश डिपोजिट मशीन, इन्टरनेट एवं मोबाईल बैंकिग, बीमा पालिसीयॉ, स्वर्ण बैंकिग, आल डे बैंकिग, पासबुक प्रिंटिग, सुविधा, 24 x 7 बैकिंग सुविधा (सुबह, शाम, रात को बैंकिग)

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह, जिला – खरगोन, (म.प्र.) भारत

एनीव्हेयर बैंकिंग (कोर बैंकिग) घर बैठे बैंकिग (नेट बैंकिग), हाथ में बैंकिग, मिसकाल बैंकिंग , फीस पर आधारित अन्य सेंवाए।

जहां 1969 में प्रति 65000 व्यक्तियों पर एक बैंक शाखा थी वही अब यह बढ़कर प्रति 12000 व्यक्तियों पर बैंक शाखा है। जमा राशि में भी काफी वृद्धि हुई है

जून 1969 में जमा धन 4646 करोड़ रूपये था। जो मार्च 2012 में बढ़कर 64,53,768 करोड़ रूपये हो गया है इसी प्रकार 1969 में कुल ऋण की राशि 3017 करोड़ रू. थी जो मार्च 2012 में बढ़कर 50,74,632 करोड़ रू. हो गई। इसी प्रकार प्रकार प्राथमिक क्षेत्र की दी जाने वाली साख 1969 में 441 करोड़ रू बकाया थी, जो मार्च 2012 में बढ़कर 14,97,636 करोड़ रू हो गई। अर्थात 1969 में जहा प्राथमिक क्षेत्र का भाग 15 प्रतिशत था वही अब यह बढ़कर 40 प्रतिशत तक पहुंच गया है।

विभिन्न वर्गो का विकास - देश का आर्थिक विकास तभी संभव है जब देश के सभी वर्गो का विकास हो।

कृषि प्रधान देश के कर्णधार कृषकों विकास में उन्हें केसीसी (किसान क्रेडीट कार्ड) के माध्यम से उन्हें आसानी से ऋण उपलब्ध होता है, इसी प्रकार लघु उद्योगो के विकास में खेतीहर महिला श्रमिको के विकास में, अनुसूचित जाति, जनजातियों के आर्थिक विकास में कमजोर वर्ग के विकास में, गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों के विकास में, आधारभूत संरचना के विकास में, पर्यटन के विकास में, परिवहन के विकास में, देश के संर्वागिण विकास में बैंक अपना अमूल्य योगदान दे रहे है। आज बैंक विहिन समाज की सम्पन्नता मे बैकों का महत्वपूर्ण योगदान है।

'बैंक आधुनिक चलन व्यवस्था का हदय एवं केन्द्र बिन्दु है।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Wikipedia.org/ wiki
2. भारत में बैंकिग विधि एवं व्यवहार - वी.पी. अग्रवाल।
3. म.प्र. का आर्थिक विकास - डॉ. शशि किरण नायक।
4. विश्व व्यापार संगठन तथा भारतीय अर्थव्यवस्था - रामनरेश पाण्डे।
5. योजना - जनवरी 2015

****

Irrigation Potential Creation And Agricultural Growth - Empirical Study Of Madhya-Pradesh

Dr. Kamlesh Kumar Shrivastava * Sunil Sharma **

Introduction - Madhya-Pradesh is a state of agriculture economy. In this state, 69 percent working population is dependent on agriculture and 85.6 percent rural working population is dependent on agriculture for its livelihood. The state has 3.08 lakh sqkm geographical area which is 9 percent of the total national geographical area. The state is an important state of India in agricultural performance. The state has been awarded "Krishi Karman Award" for last two year 2011-12 (18.9 % Ag.growth rate) & 2012-13 (24..8 % Ag.growth rate) for its excellent agricultural growth performance. The state produces 51 % Soyabean of the country and is at the first rank. It produces 20 % wheat of the country and has third rank. It produces e 33 % gram of the country and has first rank. It produces 26 % oilseeds and has third rank. It produces 25 % pulses and has first rank among the pulse producing states in the country. The productivity of pulses in Madhya-Pradesh (8.03 qtls per ha) is very high from the all India (6.99 qtls per ha.) pulse productivity. All these good signs are possible by the major role played by irrigation capacity created and utilized in the state. Besides the adverse conditions of structural causes and climatic conditions, state is registering constantly high agricultural growth. The share of small holding is constantly increasing and the share of large holdings is constantly decreasing. The share of small holdings was 85.29 % in 2001which increased to 87.42 % and 90.11 % in 2005 and 2011 respectively. On the other hand, the share of large holdings was 14.7 % in 2005, this decreased to 12.58 % and 9.89 % in 2005 and 2011 respectively. The average size of holdings was 2.22 ha. This has reduced to 2.02ha and 1.78 ha in 2005 and 2011 respectively. All these are negative drivers of agricultural growth.

Objectives -

i) To know the status of irrigation capacity in Madhya-Pradesh.
ii) To know the impact of irrigation potential on agricultural growth with two dimensions- a) on cropped area growth and b) on production increase.
iii) To examine the relationship between irrigation and agricultural development in the state.
iv) To find out results of the study with reference to agricultural growth in Madhya-Pradesh.
v) To suggest policy measures for acceleration of agricultural growth through irrigation capacity augmentation.

Research Methodology- This paper deals with an important agriculture-economy based state Madhya-Pradesh in India. All the discussions, findings, results and data analysis is related for five years duration from 2009-10 to 2013-14. The conclusions are based only on the coverage of selected crops for the study. So, Foodgrain (Wheat, Rice and Maize), Pulses (Tuar and Gram), oilseed (Soyabean and Mustard) , Spices (Mirch, Dhaniyan, Adarak and Lahsun) and for vegetables (Potato, Tomato, Sweet potato, Pea ,Onion and Bhoolgobhi) related information is used for analyzing the variables. Main variables are taken into considerations and calculated as - Created irrigation potential, Utilized created irrigation potential, Crop area, Crop production and their growth index and growth rates. This paper is based on secondary data. Analysis of data has been done in the main part of the paper. All related tables are placed at the end of the paper after references.

Discussions -

i) Irrigation Potential Creation : High Increasing Trends - Irrigation is the most important factor of agricultural growth .It increase production and productivity both. It has very high positive correlation with agricultural growth. During the concern period, in research area, irrigation potential created and utilized, both parameters has increased at very rates. The area under selected corps as irrigation potential created was 3011 lakh ha. In the first year of this study which raised to 3976 lakh ha. In the last year of the study. This shows 32 % increase in the irrigation potential created during this period. This has been possible due to large irrigation projects implementation in the state. The irrigation potential creation for large irrigation projects has been higher than the irrigation potential creation within medium and small irrigation projects in the state. Irrigation Potential Creation for large project has witnessed 45 % increase while for medium and small irrigation projects it has been 11.1 and 17.0 receptively. In the same manner, the area of IPC was 408 lakh ha for medium and 922 lakh ha for small irrigation projects in the first year of the study and this raised to 453 lakh ha and 1078 lakh ha respectively in the last year of the

* Professor (Economics) Vijaya Raje Scindia Govt. Girls P.G. College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Economics) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA

study. This shows progressive trends in all respects. (see tables 01,02 & 03 for details)

ii) Irrigation Potential Utilization : Remarkable Increasing Trends -The picture about the utilization of created irrigation potential is brighter than the picture of Irrigation Potential Creation in the state. The utilization status of irrigation potential created has been very high in the state. The total area of the utilization was 887 lakh ha. In the first year of the study .It rose to 2281 lakh ha. In the last year of the study. It shows increase of 157.2 % over the first year capacity. The ratio of irrigation potential creation and utilization has also shows very progressive trends. The share of utilization of irrigation potential with the created irrigation potential was 32.4 % in the first year of the study. It rose to 57.2 % in the last year of the study. It reveals 77.2 5 increase in this context.

This ratio has been highest for small irrigation projects as it has showed 196.4 increase in the last year of the study over first year. The ration has been higher for large irrigation projects as it has been showed 173.6 % increase in the last of the study over the first year. Thus, it may simply be stated that the utilization trends of irrigation capacity generated in the state has been very high and fast increasing. (see tables 01,02 & 03 for details)

iii) Crop Coverage Area Growth : Remarkable Increasing Trends - As a result of irrigation potential creation, the area under selected crops has shown constantly increasing trends. The total coverage area under selected crops was 592239.6 lakh ha. In the first year if the study. It rose to 1202331 lakh ha. In the last year of the study. It shows 103.0 % increase of coverage area under the selected crops in the state over the first year of the study. But there is a negative sign also with reference to pulses. The coverage area of pulses decreased in minor volume. It showed 1.0 % decrease over in the last year of the study over first year. So, this is a matter of concern. Although, it is true that the pulse- crops do not require more irrigation. But, this trend forces to draw attention towards shrinking of pulse coverage area in the state .On the other hand, the growth of coverage area under spices s has been highest among the all selected crops in the study. The coverage area growth of vegetables has been 150.3 % in the last year of the study over first year. the growth of coverage area under spices s has been highest among the all selected crops in the study. The status of coverage area of spices has been higher than other crops except vegetables The coverage area growth of spices has been 73.5 % in the last year of the study over first year. The coverage area of selected oilseeds and Foodgrain crops also increased in the duration of the study. But, these two crops do not show very high growth trends. The growth of coverage area for both oilseeds and Foodgrain crops has been 11.1 % and 9.6 % respectively in the last year of the study over the first year of the study. (see tables 04,05 & 06 for details)

iv) Crop Production Growth : Very High Increasing Trends - As it is known that irrigation is the key factor of agricultural production and productivity, this hypothesis is acceptable with findings of the study. The overall production of selected crops has been increased at a remarkable level. The total production of selected crops was 28339.45 metric tons in the first year of the study which rose to 43005.85 metric tons in the last year of the study. It is 54.6 % increase over the first year. During the period of study, the production of spices registered very splendid growth. The production of spices increased ten times over the first year of the study. The index of spices production rose to 1010.3. In the same way, the Foodgrain production index rose to 170.0. The oilseeds production index rose to 134.1. The vegetables production index rose to 396.1. And finally, the production index of selected crops rose to 154.6 in the study period. The growth rate of selected crops production has been negative for second year of the study (2011-12) as it was -3.8. But this trend was not seen in future period of the study. It corrected and has been 24.5, 51.5 and 54.6 for the next successive years respectively. (see tables 07,08 & 09 for details)

Findings - The study reveals very important facts and relations between Irrigation potential and agricultural growth in the state. Some main findings may be stated as-

i) During the study period, the irrigation potential is constantly increased in the state.
ii) The utilization of created irrigation potential also increased.
iii) The rate of growth for utilization of created irrigation potential has been higher than the growth rate of created irrigation potential.
iv) The coverage area of selected crops also increased very significantly in the study period. Except pulses, the coverage area of selected crops has been increased. The growth of coverage area of vegetables has been highest (150.3 %) followed by spices (73.5 %).
v) The production of selected crops has also been increased during this research-period. All the growth rates of selected crops have been very high and positive. The growth rate of spices has been highest (910.3 % over the first year) followed by vegetables (296.1 % over the first year).
vi) These trends reveal very high positive correlation between Irrigation and agricultural growth in Madhya-Pradesh State.

Way forward - Very high positive correlation between Irrigation and agricultural growth has been seen in Madhya-Pradesh State in the duration of the concerning research period. So, it is required to augment irrigation potential creation and utilization in the state for the growth of agriculture. Through the increase of irrigation capacity, the higher and faster agricultural growth rate may be achieved in the state. The irrigation capacity may be increased by investing in agriculture especially in irrigation projects to augment irrigation potential in the state. The evidence from this study is an important advice to emphasize more on large and small irrigation projects for creation of irrigation potential and utilization of created irrigation potential. By doing so, the high agricultural growth target is achievable.

References :-

1. Ag. Censcus 2012, CSO, New Delhi.
2. Chadha, K. L. (2001) 'Minuts of the Fourth Meeting of the working Group on Horticulture Development for Formulation of Tenth Five Year Plan', Krishi Bhawan, New Delhi.
3. Madhya-Pradesh Agricultural Economic Survey 2014 (2014) Directorate of Economics and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal.
4. Madhya-Pradesh Human Development Report – 2007, UNDP, Oxford University Press, New Delhi.
5. Madhya-Pradesh Development, Report (2011) Planning Commission of India, Academic Foundation, New Delhi.
6. Madhya-Pradesh Economic Survey 20 13-14 (2015) Directorate of Economics and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal.
7. State Focus Paper 2014-15 (2015) Madhya-Pradesh ,National Bank for agricultural and Rural Development, Centre –Regional office, Bhopal (M.P.)
8. Twelfth-Five Year Plan – 2012-17 and Annual Plan 2012-13, Volume – I, Planning, Economics and Statistics Department, Govt. of M.P. Bhopal.

Major crop-produce in Madhya-Pradesh

S.N.	Crop Group	Crops
01	Cereals	Wheat,Rice,Jowar,Bajara,Maize
02	Pulses	Gram, Tuar,Urad,Moong,Msoor
03	Oilseeds	Soyabean,Niger,Mustard, Groundnut
04	Vegetable	Green peas, Cauliflower, Okar,Tamato, Potato, Brinjal, Onion, Grounds
05	Fruits	Mango,Guava,Orange, Papaya, Banana
06	Spices	Garlic, Coriander, Ginger, Turmeric, Chillies
07	Flower	Tubes, Rose, Marigold, Gillardia

Irrigation potential Created and Utilized

Table - 01 (in lakh hectare)

Potential / Year	Large		Medium		Small		Total		%
	Created	Utilized	Created	Utilized	Created	Utilized	Created	Utilized	Utilized
2009-10	1681	572	408	147	922	168	3011	887	32.4
2010-11	1747	620	410	173	982	183	3139	976	35.0
2011-12	1846	1052	416	167	1016	416	3278	1635	55.7
2012-13	2272	1448	416	200	1016	475	3704	2123	57.3
2013-14	2445	1565	453	218	1078	498	3976	2281	57.4

Sources: - Madhya-Pradesh Agricultural Economic Survey 2014 (2014) Directorate of Economic and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal.

Index of Irrigation potential Created and Utilized

Table- 02 (Fixed Base Index Base year 2009-10)

Potential / Year	Large		Medium		Small		Total		%
	Created	Utilized	Created	Utilized	Created	Utilized	Created	Utilized	Utilized
2009-10	100	100	100	100	100	100	100	100	100
2010-11	103.9	108.4	101.0	117.7	106.5	109.0	104.3	110.1	108.1
2011-12	109.8	184.0	102.0	113.6	110.2	247.6	109.0	184.3	172.0.
2012-13	135.16	253.1	102.0	136.1	110.2	282.7	123.0	239.3	176.9
2013-14	145.5	273.6	111.1	148.3	117.0	296.4	132.0	257.2	177.2

Sources: - Calculated from Table no 01

Growth rates of Irrigation potential Created and Utilized

Table- **03** (Annual Growth rate over 2009-10)

Potential / Year	Large		Medium		Small		Total		%
	Created	Utilized	Created	Utilized	Created	Utilized	Created	Utilized	Utilized
2009-10	10	0	0	0	0	0	0	0	0
2010-11	3.9	8.4	1.0	17.7	16.5	9.0	4.3	10.1	8.1
2011-12	9.8	84.0	2.0	13.6	10.2	147.6	9.0	84.3	72.0.
2012-13	35.16	153.1	2.0	36.1	10.2	182.7	23.0	139.3	76.9
2013-14	45.5	173.6	11.1	48.3	17.0	196.4	32.0	157.2	77.2

Sources: - Calculated from Table no 01 & 02

Growth of Coverage Area under selected crops

Table- 04 (in lakh hectare)

Crop / Year	Foodgrain	Pulses	Oilseeds	Spices	Vegetables	Total
2009-10	12723.45	4802.22	6983.91	319350	248380	592239.6
2010-11	13274.87	5214.60	7084.97	365850	283680	675104.4
2011-12	13511.80	4778.50	7206.00	468704	504409	998609.3
2012-13	13790.36	4699.70	7589.34	537671	603674	1167424
2013-14	13942.10	4737.31	7756.31	554204	621691	1202331

Sources: L=ksr 1) Madhya-Pradesh A Economic Survey 2013-14 (2014) Directorate of Economic and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal. 2) Madhya-Pradesh Agricultural Economic Survey 2014 (2014) Directorate of Economic and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal.

Index of Growth of Coverage Area under selected crops

Table- 05 (Fixed Base Index Base year 2009-10)

Crop / Year	Foodgrain	Pulses	Oilseeds	Spices	Vegetables	Total
2009-10	100	100	100	100	100	100
2010-11	104.3	108.6	101.5	114.6	114.2	114.0
2011-12	106.2	99.5	103.2	146.8	203.1	168.6
2012-13	108.2	98.0	108.7	168.4	243.1	197.1
2013-14	109.6	99.0	111.1	173.5	250.3	203.0

Sources: - Calculated from Table no 04

Annual Growth Rate of Coverage Area under selected crops

Table- 06 (Growth over 2009-10 in %)

Crop / Year	Foodgrain	Pulses	Oilseeds	Spices	Vegetables	Total
2009-10	0	0	0	0	0	0
2010-11	4.3	8.6	1.5	14.6	14.2	14.0
2011-12	6.2	- .5	3.2	46.8	103.1	68.6
2012-13	8.2	-2	8.7	68.4	143.1	97.1
2013-14	9.6	-1	11.1	73.5	150.3	103.0

Sources: - Calculated from Table no 04 & 05

Production of selected Crops

Table- 07 (in Metric Tons)

Crop / Year	Foodgrain	Pulses	Oilseeds	Spices	Vegetables	Total
2009-10	16470.52	4134.01	7698.31	4.19	32.42	28339.45
2010-11	16549.41	3027.12	7639.64	4.82	36.99	27257.98
2011-12	23021.35	3713.00	7897.57	28.91	100.91	11740.39
2012-13	27620.37	4408.10	9955.79	40.96	124.53	42149.74
2013-14	27979.43	4531.53	10324.15	42.33	128.41	43005.85

Sources: L=ksr 1) Madhya-Pradesh A Economic Survey 2013-14 (2014) Directorate of Economic and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal. 2) Madhya-Pradesh Agricultural Economic Survey 2014 (2014) Directorate of Economic and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal.

Growth Index of Production of selected Crops

Table- 08 (in Metric Tons)

Crop / Year	Foodgrain	Pulses	Oilseeds	Spices	Vegetables	Total
2009-10	100	100	100	100	100	100
2010-11	101.0	73.2	99.2	115.1	114.1	96.2
2011-12	140.0	90.0	102.6	690.0	311.3	124.5
2012-13	168.0	106.6	129.3	978.0	384.1	151.5
2013-14	170.0	109.6	134.1	1010.3	396.1	154.6

Sources: - Calculated from Table no 07

Growth rates of Production of selected Crops

Table- 09 (in %)

Crop / Year	Foodgrain	Pulses	Oilseeds	Spices	Vegetables	Total
2009-10	0	0	0	0	0	0
2010-11	1.0	-26.8	-.8	15.1	14.1	-3.8
2011-12	40.0	-10.0	2.6	590.0	211.3	24.5
2012-13	68.0	6.6	29.3	878.0	284.1	51.5
2013-14	70.0	9.6	34.1	910.3	296.1	54.6

Sources: - Calculated from Table no 07 & 08

****

सहकारी साख समिति लिमिटेड के वित्तीय स्त्रोत एवं संरचना (केन्द्रीय रेलवे कर्मचारियों के संदर्भ में)

डॉ. वसुधा अग्रवाल *

प्रस्तावना – सहकारिता की प्रवृत्ति आदिकाल से ही मानव समाज में रही है। सहकारिता का दर्शन 'सबके लिये एक और सब एक के लिये' पर आधारित है। सहकारिता ऐसे व्यक्तियों का एक ऐच्छिक संगठन है, जो लोकतंत्र समानता तथा आत्मरूपता के आधार पर निजी हित तथा संपूर्ण समुदाय के हित के लिये काम करता है। यह एक सामाजिक आर्थिक आंदोलन है जिसका आधार सेवा है न कि लाभ कमाना, इसके स्थान पर संयुक्त स्वामित्व तथा सामूहिक जीवन के आधार पर नयी अर्थव्यवस्था स्थापित करने की कल्पना की है। वर्तमान में इसका उद्देश्य व्यक्तियों का एक संघ, एक उपक्रम, ऐच्छिक एवं लोकतांत्रिक संगठन, सदस्यों की सेवा है न कि लाभ कमाना, समानता और न्याय पर आधारित आर्थिक एवं विश्वव्यापी आंदोलन स्वंय संचालित संस्था है।

सहकारिता को पूर्ण रूप से आर्थिक पद्धति माना जाता है। इसके अंतर्गत खेती की उन्नति, सदस्यों की सहायता, उत्पादन कार्यों के लिये साख, भण्डारण की सुविधायें कार्यकुशलता में वृद्धि, जमा एवं ऋण, बचत विनियोग से लाभ, भूमि बंधक आर्थिक विकास के उत्प्रेरक हैं।

सहकारी साख समितियों लिमिटेड के उद्देश्य एवं कार्य –

1. सदस्यों के बीच मितव्ययता, स्वसहायता और सहकार्य बढ़ाना।
2. शेयर जारी करके, वित्तीय ऐजेन्सियों से कोष बढ़ाकर ब्याज पर डिपोजिट लेना या भाग धारक और नाम मात्र सदस्यों आदि से निधि बढ़ाना।
3. सुरक्षा या दो अच्छे जमानतदारों सहित ब्याज पर भागधारक की वित्तीय आवश्यकताओं के लिये प्रबंध करना। समिति के पैसे और निधि का निवेश करना।
4. सदस्यों को सतत् ऋणग्रस्तता की स्थिति में रहने से रोकना और व्यावसायिक साहूकारों के पंजों से दूर रखना। सदस्यों को स्वसहायता और आपसी मदद से किफायती योजनाओं से आर्थिक उन्नति दिलाना।
5. सदस्य, चयनित सदस्य और कर्मचारियों के लिये शिक्षा और प्रशिक्षण मुहैया कराना जिससे सोसाइटी की उन्नति के लिये वे अपना योगदान दे सकें तथा शैक्षिक, तकनीकी संस्थाऐं चलायी जायें।
6. ब्याज पर उत्पादन सामग्री और उपभोक्ता सामग्री की आपूर्ति कराना।
7. संपत्ति प्राप्त करना, धारण करना, निपटान कराना, आगे निर्माण कराना, अनुरक्षण करना।
8. सोसाइटी की बिल्डिंग या अचल संपत्ति का आवश्यक भाग खरीदना, भाड़े या पट्टे पर देना या सुविधाजनक बनाना।
9. सोसाइटी के कार्यक्षेत्र में शाखायें, उपशाखायें, वेतन कार्यालय खोलना जिसमें सदस्यों को सेवा दी जा सके।

सहकारी साख समिति की वित्तीय स्थिति – वित्त किसी भी संस्था की मूलभूत व प्रारंभिक आधारशिला है। बिना वित्त के न तो कोई संस्था प्रारंभ की जा सकती है और न ही सफलतापूर्वक संचालित की जा सकती है।

तालिका क्रमांक – 1

समिति की अंशपूंजी एवं कार्यशील पूंजी (लाख रूपये में)

क्र.	वर्ष	अंश पूंजी	कार्यशील पूंजी
1	2004 – 2005	673.20	7589.48
2	2005 – 2006	731.77	8860.40
3	2006 – 2007	697.47	8518.14
4	2007 – 2008	791.00	9151.60
5	2008 – 2009	881.20	9977.53
6	2009 – 2010	1042.11	11962.91
7	2010 – 2011	1081.02	12709.24
	कुल योग	**5897.77**	**68769.02**

स्त्रोत – समिति के वार्षिक प्रतिवेदन के आधार पर।

इस प्रकार गत सात वर्षों में समिति की अंश पूजी एवं कार्यशील पूंजी दोनों में निरंतर वृद्धि हुई है केवल वर्ष 2006 –07 में यह वृद्धि कम हुई। अत: समिति की अंशपूंजी की तुलना में कार्यशील पूंजी में अधिक वृद्धि दृष्टिगोचर होती है।

सहकारी साख समिति जमा योजना – समिति की वित्त प्राप्ति का स्त्रोत सदस्यों से प्राप्त किये निक्षेप अथवा जमा राशियां हैं। सदस्यों से जमा प्राप्त करने हेतु समिति खाते खोलती है समिति द्वारा प्रत्येक खाते में अधिनियम एवं नियमों के अधीन शर्तों के अनुसार निर्धारित सीमा तक जमा स्वीकार की जाती है। इन जमा राशियों का संचालक मंडल द्वारा अनुमोदित नियम एवं विनिमय के अनुसार ब्याज दर निर्धारित की जाती है। इन खातों में जमाकर्ता छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी राशि जमा कर सकते हैं।

तालिका क्रमांक – 2

समिति में विभिन्न जमा योजनाओं के माध्यम से जमा राशि (लाख रूपये में)

क्र.	वर्ष	राशि	प्रतिवर्ष वृद्धि
1	2004 – 2005	5470.88	–
2	2005 – 2006	6586.08	1115.2
3	2006 – 2007	6378.07	208.01
4	2007 – 2008	6773.55	395.48
5	2008 – 2009	7656.82	883.27
6	2009 – 2010	9179.02	1522.2
7	2010 – 2011	9698.15	519.13

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि समिति में विभिन्न योजनाओं के माध्यम से जमाकर्ताओं में वृद्धि होती जा रही है। वित्तीय वर्ष 2009 – 2010 में सबसे वृद्धि दर्ज की गई है। अत: स्पष्ट है कि समिति में विभिन्न जमा योजनाओं के माध्यम से वर्ष 2004 – 2005 से वर्ष 2010 – 2011 तक कुल 51742.57 लाख रूपये की धनराशि प्राप्त की गई।

सहकारी साख संस्थाओं से प्राप्त ऋण एवं अग्रिम – समिति के वित्त प्राप्ति के स्त्रोतों में ऋण एवं अग्रिम महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं। समिति जो भी ऋण अग्रिम सदस्यों को देती है उनमें अधिकांश भाग निरपेक्षकर्ताओं की जमाओं का होता है। समिति द्वारा अपने सदस्यों को अल्पकाल एवं मध्यकाल के लिये ऋण प्रदान किया जाता है ऋण पर 6.5 प्रतिशत की दर से ब्याज लिया जाता है। यदि ऋण की अदायगी हेतु निर्धारित अवधि समाप्त होने पर या किश्त की अदायगी में चूक होने पर सदस्य से दंडात्मक ब्याज 10 प्रतिशत की दर से वसूल किया जाता है। इस प्रकार ऋण से समिति को काफी आय प्राप्त होती है।

तालिका क्रमांक – 3

समिति द्वारा विभिन्न योजनाओं के माध्यम से सदस्यों को वितरित किये गये ऋणों का विवरण

(लाख रूपये में)

क्र.	वर्ष	राशि	प्रतिवर्ष वृद्धि
1	2004 – 2005	6560.19	–
2	2005 – 2006	5898.36	661.83
3	2006 – 2007	5820.49	77.87
4	2007 – 2008	7042.69	1222.22
5	2008 – 2009	6828.78	213.91
6	2009 – 2010	9525.78	2697.00
7	2010 – 2011	9987.54	461.76
	कुल योग	**51663.83**	

सहकारी साख समिति की निधियाँ – प्रत्येक समिति के पास कुछ न कुछ आरक्षित निधि अवश्य ही होती है। यह समिति की पूंजी की एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है। जब समिति को अपने व्यवसाय से लाभ होता है तब वह इस लाभ को दो तरीकों से प्रयोग करती है। प्रथम – लाभ का कुछ भाग समिति अंशधारियों में लाभांश के रूप में बांट दिया जाता है। द्वितीय – लाभ का शेष भाग आरक्षित निधि में जमा कर दिया जाता है। इस प्रकार कालान्तर में आरक्षित निधि का आकार बढ़ता जाता है। आरक्षित निधि का प्रयोग दो तरीकों से किया जाता है – प्रथम यदि समिति को कोई अप्रत्याशित हानि होती है तो वह इसकी क्षतिपूर्ति आरक्षित निधि से करता है। द्वितीय – समिति अपने अंशधारियों को प्रतिवर्ष दिये जाने वाले लाभांश को समान बनाये रखने के लिये आरक्षित निधि का उपयोग करती है।

तालिका क्रमांक – 4 (देखे अगले पृष्ठ पर)

इस प्रकार गत सात वर्षों में आरक्षित एवं अन्य आरक्षित निधि में निरंतर वृद्धि ही दृष्टिगोचर होती है।

सहकारी साख समिति के लाभांश– घोषित लाभांश का सोसाइटी के रजिस्टरों में कोओपरेटिव वर्ष जिससे लाभांश संबंधित हो के अंतिम दिन तक अंशधारक के रूप में पंजीकृत व्यक्तियों को भुगतान किया जायेगा। कोई लाभांश जो घोषित होने के पांच वर्ष तक दावा रहित हो को संचालक मंडल द्वारा जब्त करके सोसाइटी की आरक्षित निधि में जमा किया जायेगा। उदत्त लाभांश जो जब्त न किया गया हो, आवेदन दावा भुगतान योग्य होता है।

तालिका क्रमांक – 5

सहकारी साख समिति के लाभांश (लाख रूपये में)

क्र.	वर्ष	लाभांश राशि	प्रतिवर्ष वृद्धि
1	2004 – 2005	199.17	–
2	2005 – 2006	185.83	13.64
3	2006 – 2007	261.35	75.82
4	2007 – 2008	247.34	14.01
5	2008 – 2009	250.04	2.7
6	2009 – 2010	268.22	18.18
7	2010 – 2011	263.74	4.48

अत: इस प्रकार स्पष्ट है कि गत सात वर्षों में समिति की लाभांश राशि में काफी उतार चढ़ाव देखने को मिले हैं।

सहकारी साख समिति के विनियोग – प्रत्येक वित्तीय संस्था अपनी पूंजी सरकारी एवं अर्द्धसरकारी प्रतिभूतियों में विनियोजित करती है। यह समिति भी अपनी पूंजी का बड़ा भाग इन प्रतिभूतियों में विनियोग करती हैं इस विनियोजित राशि से सदस्यों को समय पर भुगतान एवं ऋण की सुविधा कराने उद्देश्य भी सफल हुआ है। समिति द्वारा किया गया विनियोग निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है –

तालिका क्रमांक – 6

सहकारी साख समिति के विनियोग (लाख रूपये में)

क्र.	वर्ष	विनियोग की राशि	प्रतिवर्ष वृद्धि
1	2004 – 2005	303.58	–
2	2005 – 2006	997.87	694.29
3	2006 – 2007	1223.14	225.27
4	2007 – 2008	562.51	660.63
5	2008 – 2009	925.97	363.46
6	2009 – 2010	949.61	23.64
7	2010 – 2011	545.77	391.84

इस प्रकार गत सात वर्षों में समिति की निवेश राशि में काफी उतार – चढ़ाव देखने को मिलते हैं इन तथ्यों से स्पष्ट है कि वित्तीय वर्ष 2005 – 2006 में सबसे अधिक वृद्धि 694.29 लाख रूपये की वृद्धि दृष्टिगोचर होती है।

समस्या –

1. सदस्यता प्राप्ति की समस्या
2. अपर्याप्त ऋण की समस्या
3 जमानत की समस्या
4. ऋण राशि पर उचित ब्याज दर का न होना
5. स्वीकृत ऋण राशि के आहरण में कठिनाई
6. बैंक में खाता खोलने की समस्या
7. ऋण देर में भुगतान करने पर ऊंची दर में ब्याज बसूल करना
8. भुगतान की गई ऋण राशि पर ब्याज वसूलने की समस्या
9. एटीएम की सुविधा अभाव
10. अल्पशिक्षित सदस्यों की समस्या
11. समिति के प्रतिनिधियों का भ्रष्टाचार में लिप्त होना
12. समिति की योजनाओं का प्रचार प्रसार न होना
13. सदस्यों द्वारा दस्तावेजों की पूर्ति न करना

14. सदस्यों का स्थानांतरण होना
15. सदस्यों की अचानक मृत्यु होना।

सुझाव –

1. ऋण की राशि में वृद्धि
2. जमानत की व्यवस्था को समाप्त किया जाऐं
3. सदस्यता प्राप्ति की प्रक्रिया का सरलीकरण
4. ऋण राशि पर उचित ब्याज
5. स्वीकृत धनराशि के भुगतान का सरलीकरण
6. सदस्यों को एसएमएस के द्वारा ऋण की राशि प्रदान की जाये
7. ऋण के भुगतान में देर होने पर ऊँची दर पर भुगतान न किया जाये।
8. प्रत्येक स्थान पर समिति का कार्यालय होना
9. समिति द्वारा संचालित योजनाओं का प्रचार – प्रसार किया जाना चाहिये
10. भ्रष्टाचार की समस्या का निवारण किया जाये
11. समिति द्वारा प्रदान सेवाओं में वृद्धि की जानी चाहिये।

निष्कर्ष – अत: निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि सहकारी साख समिति की स्थापना रेलवे कर्मचारियों (सदस्यों) की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये की गई है। समिति द्वारा संचालित विभिन्न जमा योजनाओं एवं ऋण योजनाओं के माध्यम से सदस्यों के आर्थिक विकास हेतु प्रयास किये जा रहे हैं। सदस्यों के लिये आवास हेतु ऋण, मरम्मत हेतु ऋण, विवाह ऋण, शिक्षा ऋण, कम्प्यूटर ऋण, दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऋण तथा जमा योजनाओं में मासिक जमा योजना, मियादी जमा, अनिवार्य मासिक बचत जमा योजना, आवर्ति जमा योजना, दोहरी जमा योजना, लखपति बनो योजना, कर्मचारियों के आर्थिक कल्याण में सहायक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हावर्ड एण्ड अपरोण – इन्ट्रोडक्शन टू बिजनेस फायनेंस पृ. – 4
2. कुलश्रेष्ठ, आर. एस. – निगमों का वित्तीय प्रबंध 1984 पृ. – 164
3. गेस्टेनवर्ग, सी. डब्ल्यू – फायनेंसियल ऑर्गनाइजेशन एण्ड मैनेजमेंट , प्रेन्टिस हॉल न्यूयार्क चतुर्थ संस्करण 1959 पृ. – 282
4. राठौर, स्मृति – लक्ष्मीबाई महिला नागरिक सहकारी बैंक मर्यादित की कार्यप्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन 2007 पृ. – 198
5. योजना।
6. जर्नल ऑफ इण्डियन हिस्ट्री – त्रिवेन्द्रम।
7. www.creccltd.org.

तालिका क्रमांक – 4

सहकारी साख समिति की आरक्षित निधि (लाख रूपये में)

क्र.	वर्ष	आरक्षित निधि	प्रतिवर्ष वृद्धि	अन्य आरक्षित निधि	प्रतिवर्ष वृद्धि
1	2004 – 2005	296.84	–	916.26	–
2	2005 – 2006	346.68	49.84	948.17	31.91
3	2006 – 2007	346.18	0.5	852.41	95.76
4	2007 – 2008	413.83	67.65	904.46	52.05
5	2008 – 2009	477.98	64.15	961.50	57.04
6	2009 – 2010	543.26	65.28	1030.87	69.37
7	2010 – 2011	546.51	3.25	1016.09	14.78

स्त्रोत – समिति के वार्षिक प्रतिवेदन के आधार पर

****

भारत में कन्या भ्रूण हत्या के कारण व समाधान

डॉ. विभा वासुदेव *

प्रस्तावना – भारत में प्राचीन समय से कुछ जातियों व समाज में कन्या को जन्म के उपरांत मारने की कुप्रथा प्रचलित थी, जो आधुनिक भारत में नवीन तकनीकी स्कैनिंग व अल्ट्रासाउंड के कारण गर्भ में ही लिंग जांच के कारण कन्या भ्रूण हत्या में बदल गई है, जो वर्तमान में दिन प्रतिदिन विकराल रूप धारण करती जा रही है। कन्या कितनी जगह मारी गई, कितनी जगह सताई गई, हर हाथों से, हर बातों से वो तो सिर्फ ठुकराई गई। हमारी सोच इतनी अभिशप्त हो गई है कि एक तरफ लक्ष्मी माँ को सब चाहते हैं, लेकिन लक्ष्मी रूप में जब कन्या घर आती है, तो सबके चेहरे उतर जाते हैं, ज्ञान के रूप में सब पूजते माँ सरस्वती को, लेकिन जब वह उनके घर में ज्ञान का दीप जलाने आईं, तो उनके मन अंधकार से भर गए और इस कारण फिर वे कहीं जलाई गई शक्ति के रूप में सब पूजते माँ दुर्गा को, लेकिन चाहत रखते बल और सत्ता की, जब वह परिवार का मान बढ़ाने आई तो रोज-रोज उन्हें धमकियों से डराया गया। पापों का नाश करने के लिए पूजते सभी माँ काली को पर जब वह अनैतिकता का अन्त करने आई, तो वह दुराचारियों के द्वारा तड़पाई व सताई गई। यही है हमारे आधुनिक भारत की हकीकत।

इस शोध पत्र में विषय के कारणों की खोज कर उपायों व कानूनों पर प्रकाश डाला गया है। यही इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य है व इसमें द्वितीयक समंकों का विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गए हैं।

गिरता हुआ लिंगानुपात एक खतरे की घंटी है। वर्ष 2011 में लिंगानुपात में थोड़ी सी वृद्धि हुई है परन्तु हम जब 0 से 6 साल के बच्चों के लिंगानुपात को देखते हैं, तो यह निरन्तर परिवर्तित हो रहा है जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट है –

भारत में शिशु लिंग अनुपात (सन् 1961-2011)

तालिका

वर्ष	शिशु लिंग अनुपात
1961	976
1971	964
1981	962
1991	945
2001	927
2011	914

स्त्रोत : Census of India 2011, Provisional Population Totals, P. 90

तालिका से स्पष्ट होता है देश का शिशु लिंग अनुपात प्रत्येक दशक में घटता ही चला गया है। 1961 में 976 से यह घटते-घटते सन् 2011 में 914 रह गया। लिंग अनुपात जहां सन् 1991-2011 की अवधि में 927 से बढ़कर 940 हो गया। वहीं शिशु लिंग अनुपात (0-6 आयु वर्ग) उक्त अवधि में 945 से घटकर 914 रह गया, अर्थात् मात्र दो दशक में 31 अंकों की गिरावट हुई जो एक चिंताजनक स्थिति है, तथा कन्या भ्रूण हत्याओं का स्पष्ट संकेत है। इतना ही नहीं यह प्रवृत्ति देश के अधिकतर राज्यों में पाई गई है। सबसे खराब स्थिति जम्मू व कश्मीर में है जहां प्रति हजार लड़कों पर लड़कियों की संख्या जो 2001 में 941 थी वह 2011 में मात्र 859 रह गई।

सर्वाधिक शिशु लिंगानुपात वाले 5 राज्य

(जनगणना : 2011)

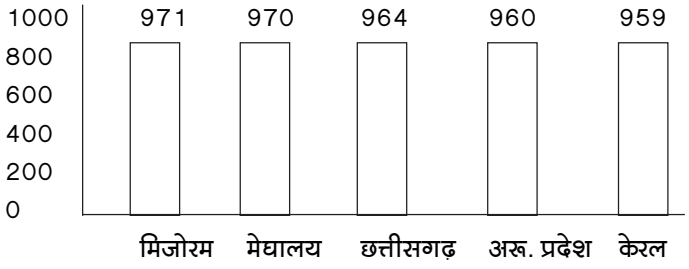

राज्य

न्यूनतम शिशु लिंगानुपात वाले 5 राज्य

(जनगणना : 2011)

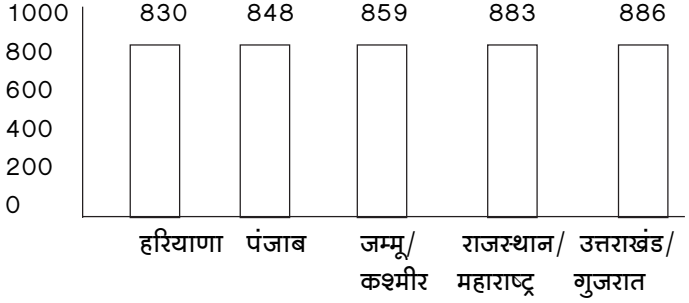

राज्य

सर्वाधिक शिशु लिंगानुपात वाले 3 केन्द्र-शासित प्रदेश

(जनगणना : 2011)

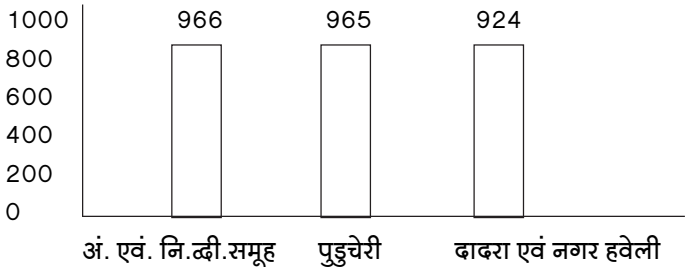

* अर्थशास्त्र, शासकीय स्वशासी महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

केन्द्र-शासित प्रदेश
सर्वाधिक शिशु लिंगानुपात वाले 3 केन्द्र-शासित प्रदेश
(जनगणना : 2011)

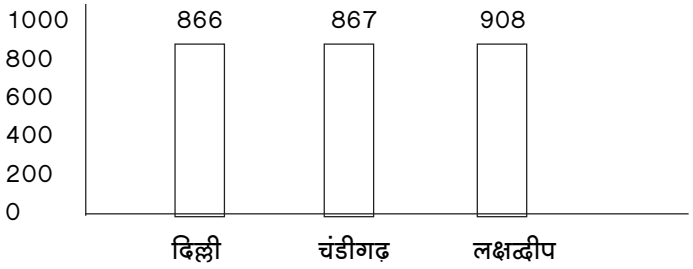

केन्द्र-शासित प्रदेश – केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन की रिपोर्ट के अनुसार भारत में वर्ष 2001 से 2005 तक के अंतराल में करीब 682000 कन्या भ्रूण हत्याएं हुई, अर्थात् चार सालों में रोजाना 1800 से 1900 कन्याओं को जन्म लेने से पहले ही खत्म कर दिया जो हमारे आधुनिक समाज की काली तस्वीर प्रस्तुत कर रही है।

1995 में बने प्री नेटल डायिगनोस्टिक एक्ट के तहत लिंग परीक्षण गैर कानूनी है यह कुछ विशेष परिस्थिति में ही संभव है। आईपीसी की धारा 313, 314, 315 में स्त्री की सहमति के बिना गर्भपात करवाने वाले के आजीवन कारावास तक की सजा का प्रावधान है अर्थात् कानून कमजोर नहीं है, सजा का प्रावधान भी पर्याप्त है परन्तु नीयत साफ नहीं है अर्थात् कानून का पालन करने वाले या करवाने वाले दोनों ही इस सामाजिक षड्यंत्र में शामिल हैं। बिना सोच बदले कानूनों का कोई महत्व नहीं है।

भारत में कन्या भ्रूण हत्या के कारण –

1. पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था में आज भी लड़के को प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि वहीं पितृ ऋण से मुक्ति देगा, मोक्ष दिलाएगा, मृत देह को अग्नि देगा, बुढ़ापे का सहारा बनेगा, कुल का नाम आगे बढ़ायेगा और धार्मिक अनुष्ठानों के लिए अति आवश्यक है।
2. गरीब व मध्यम वर्ग के लिए लड़की का विवाह व दहेज एक सबसे बड़ी समस्या है, जो उन्हें परिवार पर बोझ मानने को मजबूर कर देती है। अधेड़ अवस्था या वृद्धावस्था में माता-पिता लड़की के विवाह के लिए तन मन धन से प्रयास करते हैं व अनेकों बार दहेज व विभिन्न शर्तों के कारण मायूस हो जाते हैं व हीन भावना व अपराध बोध से ग्रसित हो तनाव से अपने जीवन को भर लेते हैं तब यही वाक्य मुंह से निकलता है कि इससे तो लड़की पैदा ही नहीं होती और यही हमारे समाज में कन्या भ्रूण हत्या का मुख्य कारण है।
3. वर्तमान समय में लड़कियों की सुरक्षा भी एक अहम मुद्दा है। पता नहीं कब किसकी बुरी नजर पड़ जाए व समाज की विकृत मानसिकता का शिकार हो जाए, इसका तनाव भी माता-पिता को कन्या भ्रूण हत्या पर मजबूर करता है।
4. प्राचीनकाल से अनेकों जातियों व वर्गों में कन्या जन्म को हेय दृष्टि से देखा जाता है व कन्या के कारण उन्हें अपना सिर दूसरों के सामने न झुकाना पड़े। इसलिए उनकी जन्मते ही हत्या कर दी जाती है जो आज सभी वर्गों में प्रचलित हो गया है।
5. भारत में महिलाऐं अभी भी आर्थिक रूप से पराधीन हैं, अशिक्षित हैं, उन्हें निर्णय लेने का अधिकार नहीं है व समाज में उनसे दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाता है।
6. रूढ़ियों, परम्पराओं व धार्मिक अंधविश्वासों से जकड़ा हुआ समाज जहां बाल-विवाह, पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा, महिलाओं में जागरूकता का अभाव, महिलाओं की सोच पर विपरीत प्रभाव डालता है। महिला ही महिला के विरूद्ध षड्यंत्र रचती है।
7. आधुनिक भारत में कन्या भ्रूण हत्या का बढ़ता हुआ ग्राफ आधुनिक अल्ट्रासाउंड व स्कैनिंग तकनीकी की देन है क्योंकि अब गर्भ में ही हम लिंग परीक्षण करवा कर आसानी से कन्या जन्म के अनेक तनावों से मुक्ति पा सकते हैं, तो उन्हें संसार में लाकर क्यों संकट में पडे।

समाधान –

1. दहेज विरोधी कानून- जब तक हमारे समाज में दहेज लेना व देना अपराध की श्रेणी में नहीं आयेगा व इसके लिए कठोर दण्डात्मक सजा का प्रावधान नहीं होगा तब तक हम कन्या भ्रूण हत्या को रोकने में सक्षम नहीं होंगे। इसके लिए समाज के मानसिक सोच में परिवर्तन लाना अति आवश्यक है व इस कानून का क्रियान्वयन व पालन शत-प्रतिशत होना आवश्यक है।
2. महिलाओं को शिक्षित कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के संबंध में ठोस नीति अपनायी जाए जैसे आरक्षण के माध्यम से हर महिला को आर्थिक रूप से सशक्त बनाया जाए व निर्णय लेने की शक्ति विकसित की जाए व इस संबंध में समाज, परिवार के दबाब को कम किया जाए।
3. लिंग परीक्षण निरोधक कानून का कड़ाई से पालन किया जाए व दोषियों को किसी भी कीमत पर बक्शा नहीं जाए, साथ ही लिंग परीक्षण करवाने वाले परिवार को भी दोषी मानते हुए कानूनी कार्यवाही की जाए व समाज से बहिष्कृत किया जाए।
4. सामाजिक सुरक्षा, वृद्धावस्था पेंशन, अनिवार्य शिक्षा, नि:शुल्क शिक्षा, रोजगार में आरक्षण, जायदाद में बराबरी का हिस्सा, समाज में बराबरी का स्थान, महिलाओं में जागरूकता लाने संबंधी कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण स्थान है।
5. महिलाओं की सुरक्षा की विशेष व्यवस्था व उनके मामलों में संवेदनशीलता से विचार विमर्श करना व समाज में उन्हें सुरक्षित माहौल देना हम सभी की जिम्मेदारी है अन्यथा समाज की विकृति पूरे परिवेश में गंभीर समस्या को उत्पन्न करेगी जिसके लिए नीति निर्माताओं को ठोस रणनीति अपनाते हुए ढुलमुल रवैये को त्यागना होगा व समाज की मानसिक सोच में आमूल चूल परिवर्तन ही इसका समाधान है।

निष्कर्ष – कहा जाता है कि इक्कीसवीं सदी महिलाओं की होगी परन्तु उपरोक्त विवरण यह सिद्ध कर रहा है कि कन्या को तो जन्म लेने से ही रोका जा रहा है तब कैसे यह संभव होगा और यह समस्या ग्रामीण क्षेत्रों व अशिक्षित वर्ग में नहीं वरन् शहरी व शिक्षित क्षेत्रों में अधिक है क्योंकि यह मध्यम वर्ग ही अपने सामाजिक रीति रिवाजों, रूढ़ियों, परम्पराओं को निभाने के कारण कन्या को बोझ की तरह मानता है और जल्दी से जल्दी इससे छुटकारा पाना चाहता है जो आधुनिक तकनीकी ने सहज और सरल बनाकर कन्या भ्रूण हत्या के रूप में परिलक्षित कर दिया है।

इस परिप्रेक्ष्य में सामाजिक सोच में परिवर्तन और जागरूकता, शैक्षणिक सुधार, समाज में वास्तव में महिलाओं को बराबरी का अधिकार व निर्णय लेने का अधिकार, सामाजिक सुरक्षा, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक जीवन में उचित स्थान प्राप्त नहीं होता, तब तक हम कन्या भ्रूण हत्या जैसे सामाजिक अपराध को कम नहीं कर सकते हैं।

इसके संबंध में बनाए गए कठोर कानून भी तभी कारगर होगें जब हम सभी सोनोग्राफी सेन्टरों पर कड़ी निगरानी रखें व सोनोग्राफी को ऑनलाईन करने की व्यवस्था करें व ऐसे सर्वर लगाए जायें जो तुरन्त ऐसी घटनाओं की जानकारी दे सके। साथ ही ऐसे परिवारों को भी चिन्हित किया जाए जो लिंग परीक्षण के बाद कन्या भ्रूण हत्या को अंजाम देते हैं, उनके विरूद्ध कड़ी कार्यवाही हो, हमारे समाज के इस अमानुषिक कृत्य को रोकने में मदद्गार साबित हो सकती है, साथ ही ऐसे राज्यों को भी चिन्हित कर उनकी आर्थिक उन्नति पर ज्यादा ध्यान दिया जाए क्योंकि आर्थिक रूप से उन्नति होने पर भी हम इस समस्या को कुछ कम कर सकते हैं। अत: जब तक हम लड़का और लड़की के भेद को अपने दिल से समाप्त नहीं करेंगे तब तक समाज में फैले इस अपराध को दूर नहीं किया जा सकता है। अत: आज यह संकल्प लें एक कन्या को जरूर हम अपने घर आंगन में पलने और बढ़ने का अवसर जरूर देंगे क्योंकि बेटी ही नहीं बचेगी तो वंश कहाँ से बचेगा ?

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. जनसंख्या भूगोल – हरीश कुमार खत्री, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल 2013 पृ. क्र. 117, 118, 121
2. जनांकिकी – डॉ. बी. कुमार, साहित्य सदन, आगरा 2002, पृ. क्र. 385, 386
3. भारत की जनगणना 2011 – सम–सामायिक घटना चक्र अतिरिक्तांक एवं विश्व जनसंख्या
4. बेटियाँ – मई 2014, पृ. क्र. 26
5. Census of India - 2001 & 2011

****

भारत में नगरीकरण-चुनौतियां और संभावनायें

डॉ. सुनीता बाथरे *

प्रस्तावना – नगरीकरण मानव जीवन की दशा व परिस्थिति को संबोधित करती है। नगरीकरण राष्ट्र के आर्थिक विकास के मानक स्तर को तय करता है। यह वास्तव में राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक व प्राकृतिक दशाओं पर निर्भर करता है। वास्तव में नगरीयता जीवन का विशिष्ट ढंग है। मनुष्य जब इस ढंग को अपना लेता है तो इसे आसानी से नहीं छोड़ा जा सकता। मनुष्य चाहे गाँवों में रहे या नगर में, नगरीयता के तत्व सदा उसके साथ रहते हैं। नगरीयता मानव व्यवहार का एक ढंग है, जो केवल कस्बों व नगरों तक ही सीमित नहीं रहता है, बल्कि उसका प्रभाव उन गाँवों में काफी अधिक पाया जाता है जो या तो नगर के समीप स्थित होते हैं या उससे संचार व परिवहन साधनों से जुडे होते हैं। 'किसी राष्ट्र की कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या के अनुपात को अथवा इस अनुपात के बढ़ने की प्रक्रिया को नगरीकरण कहते हैं।

एच. वेगवर- 'नगर मानवीय व्यापार का केंद्र बिन्दु है।''

पीटर हेगेट- 'नगर बहुत बड़ी संख्या में लोगों के एक साथ रहने का संकेतक है, जो बहुत उच्च घनत्व वाला, भारी भीड़-भाड़ से युक्त होता है।''

प्रसिद्ध समाजशास्त्री वर्गेल- 'ग्रामीण क्षेत्रों की नगरीय क्षेत्रों में परिवर्तित होने की प्रक्रिया को ही हमें नगरीकरण कहना चाहिये, इस प्रक्रिया का गाँव की जनसंख्या की आर्थिक संरचना पर गहरा प्रभाव पड़ता है, जिस अनुपात में नगरीय जनसंख्या में वृद्धि होती है।'

ब्रिफिश टेलर- 'गाँवों से नगरों की जनसंख्या का स्थानांतरण ही नगरीकरण कहलाता है।'

इस प्रकार नगरीकरण

- नगरीकरण एक प्रक्रिया है, जो निरंतर गतिशील रहती है।
- नगरीकरण द्वारा ग्रामीण जनसंख्या का नगरीय जनसंख्या में परिवर्तन है।
- नगरीय जन संख्या के अनुपात में वृद्धि।

भारत में ग्रामीण नगरीय वर्गीकरण के लिए जनगणना 2011 में ग्रामीण क्षेत्र वे माने गए जो राजस्व ग्राम (Revenue Village) में रहते हैं, जिनकी सर्वेक्षित सीमाएं हैं, नगरीय क्षेत्र वे माने गए जो निर्धारित मापदण्ड को पूरा करते हैं इसके लिए निम्न क्षेत्रों को नगरीय माना गया –

- वे सभी क्षेत्र जहां नगरपालिका, नगरपरिषद, जगर निगम, छावनी बोर्ड और अधिसूचित नगरीय क्षेत्र हों। इन्हें वैधानिक कस्बा (Town) कहा जाता है।
- ऐसे क्षेत्र जिन पर निम्नलिखित मापदण्ड पूर्णतया लागू होते हों। (उन्हें जनगणना कस्बा कहा जाता है)

1. कम से कम 5,000 की जनसंख्या
2. कार्यशील पुरूष जनसंख्या कम से कम 75% कृषि कार्यो में संलग्न हो
3. जनसंख्या का घनत्व से कम से कम 400 व्यक्ति प्रति वर्ग मिलोमीटर हो।

वास्तव में नगरीकरण में प्रगति उस देश के विकास की गति को बताती है। अत: नगरीकरण का आर्थिक विकास पर प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि नगरीकरण का आर्थिक विकास से घनिष्ट सम्बन्ध है। जिस देश में नगरीकरण का अनुपात जितना अधिक होगा वह देश उतना ही अधिक विकसित होगा।

भारत में नगरीकरण का प्रतिशत विभिन्न वर्षो में (विगत 70 वर्षों में)

क्र.	वर्ष	ग्रामीण जनसंख्या (प्रतिशत)	शहरी जनसखंया (प्रतिशत)
1.	1951	82.7%	17.3%
2.	1961	82%	18%
3.	1971	80.1%	19.9%
4.	1981	76.7%	23.3%
5.	1991	74.3%	25.7%
6.	2001	72.2%	27.8%
7.	2011	64.84%	31.16%

भारत में विगत 70 वर्षो में नगरीकरण बढ़ा है, पर विश्व के विकसित कहे जाने वाले राष्ट्रों से इसका आकलन करें तो यह काफी कम है-

विश्व के कुछ चुने गये देशों में नगरीकरण का स्तर (2011)

देश	देश की कुल जन संख्या में नगरीय जन संख्या का प्रतिशत
रूस	77%
अमरीका	77%
जापान	79%
कनाडा	77%
आस्ट्रेलिया	86%
ब्रिटेन	89%
भारत	31.6%

विभिन्न राष्ट्रों से नगरीय जनसंख्या के आकलन करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती कि भारत में नगरीकरण काफी कम है वर्तमान में देश में 10 व्यक्तियों में से तीन व्यक्ति शहर में रहते हैं जबकि 70 वर्ष पूर्ण 9 व्यक्तियों में से एक व्यक्ति शहर में रहता था। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में 6 लाख 40 हजार, 867 गाँव व 7,935 शहर हैं। ग्रामीण जनसंख्या का सर्वाधिक भाग हिमाचलप्रदेश (89.96%) तथा सबसे कम तमिलनाडु (51.55%) है। बिहार में 88.7% असम में 85.92% उड़ीसा में 83.32% तथा उत्तर प्रदेश में 77.72% जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में है। मध्यप्रदेश में ग्रामीण जनसख्या 72.37% है छत्तीसगढ़ में 76.76% तथा झारखण्ड में 75.95% जनसंख्या गाँवों में रहती है। कुल मिलाकर 2011 की जनगणना

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) पं. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

के अनुसार देश की 121.02 करोड़ की जनसंख्या में 83.31 करोड़ ग्रामीण क्षेत्रों में 37.71 करोड़ शहरी क्षेत्रों में निवास करती है।

भारत में 6,40,867 गांव हैं। सर्वाधिक गांव 1,06,704 उ. प्र. में है। मध्यप्रदेश में 54,908 और बिहार में 44,874 गांव है। सबसे कम गांव 112 दिल्ली में हैं। इसके अतिरिक्त हरियाणा में 6,841; महाराष्ट्र में 43,663; राजस्थान में 44,672; आंध्र प्रदेश 27,800; कर्नाटक में 29,340 व गुजरात में 18,539 गांव है।

सन् 2011 की जनगणना की तुलना में 2011 में देश में शहरों एवं गांवों की तुलनात्मक स्थिति है-

क्र.	विवरण	2001	2011
1.	जिलों की संख्या	593	640
2.	उपजिलों की संख्या	5,463	5,924
3.	कस्बों की संख्या	5,161	7,985
4.	वैधानिक कस्बों की संख्या	3,799	4,041
5.	जनगणना कस्बों की संख्या	1,362	3,894
6.	गांवों की संख्या	6,38,588	6,40,867

शीर्षस्थ तीन राज्यों की दृष्टि से देश की कुल ग्रामीण जनसंख्या में से 18.6% उ.प्र में 11.1% बिहार में 7.5% प. बंगाल में है। दूसरी ओर कुल शहरी जनसंख्या में से 13.5% महाराष्ट्र में 11.8% उ.प्र में तथा 9.3% तमिलनाडु में है।

देश में शहरी जनसंख्या वृद्धि के तीन मुख्य कारण हैं-

- स्वाभाविक वृद्धि।
- गाँवों से शहरों को स्थानांतरण।
- शहरी क्षेत्रों में नये क्षेत्रों को शामिल किया जाना।

अन्य कारण भी नगरीकरण को प्रभावित करते-

- शहरों में उद्योगों का विकास। पूंजी व तकनीक सुविधा।
- गांवों में सुरक्षा की कमी।
- गांवों में स्वास्थ्य व शिक्षा सुविधाओं का अभाव।
- गांवों में रोजगार सुविधाओं का अभाव।
- जमींदारी प्रथा की समाप्ति।
- देश विभाजन व भारतीय मूल के विदेशी नागरिकों का आगमन।
- सरकारी नीति व सहायता के कारण परिवारों का विकास।
- यातायात के साधनों का विकास।
- नगरों में स्थित प्रशासनिक केन्द्र व सैनिक केन्द्रों की स्थापना।
- नगरों का आकर्षण व चकाचौंधयुक्त वातावरण।
- नगरों में धार्मिक केन्द्र व मेले।

नगरीकरण की चुनौतियां - शहरी विकास मंत्रालय भारत सरकार की बेवासाइट के लक्ष्य कथन में लिखा है-'नई सरकार के केंद्रीय बजट और योजनाओं में एक बार फिर से सुनियोजित तथा सुविधाजनित शहरीकरण को भारत के तीव्र आर्थिक विकास का मार्ग बताया गया। विकास के एजेंडा में आधारभूत संरचना, तकनीक ओर संरचना तकनीक और स्मार्ट शहरी विकास को सबसे ऊपर रखा गया है। वहीं इसी बजट में शहरी क्षेत्रों में निम्न आय वर्गों के लिए आवास तथा आवासीय वित्त के मुद्दे पर हल निकालने को भी लक्ष्य में शामिल किया गया है।' सभी प्राथमिकताएं तर्कसंगत तो हैं लेकिन एक सवाल यह है कि क्या देश मे ऐसे आयोजक हैं, जो शहरों में व्याप्त अत्यंत गरीबी तथा आधुनिकीकरण के लिए शहरी विकास पर विचार और सुविधा दोनों में मदद कर सके। एक सौ नए नगर सरकार के एजेण्डे में हैं। प्रत्येक प्रांत में कम से कम एक स्मार्ट सिटी बनाने की योजना चल रही है। भारत सरकार भारतीय नगर नियोजन को व फ्रांसीसी नगर नियोजकों के सम्पर्क में है। किसी भी श्रेष्ठ नियोजित नगर में अपेक्षित बुनियादी सुविधाओं की संख्या न्यूनतम 13 है। बिजली, सड़क, यातायात, पार्किंग, मनोरंजन, शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, संचार रोजगार, आवास, बाजार और सुरक्षा। नियोजन को प्रभावित करने वाले बुनियादी तत्व चार हैं- कचरा, पानी हरियाली और भूमि। आयोजकों के लिये इन चुनौतियों का सामना करना कठिन हो जाता है। पहले स्मार्ट शहरों में से एक अहमदाबाद की 'गिफ्ट' सिटी की खबर उत्साह बढ़ाने वाली नहीं है। यह वैश्विक वित्तीय सेवाओं के लिए हब के रूप में विकसित की गई है। यह स्मार्ट सिटी, स्मार्ट लोगों के लिए है, जिनमें से कई भारतीय नहीं होगें। कुछ स्मार्ट शहर दिल्ली-मुम्बई इंडस्ट्रीयल कोरिडोर पर बनाए जाने हैं। विकास को नियंत्रित करने की सरकार की अक्षमता को देखते हुए, इस बात की क्या उम्मीद है कि कोरिडोर भी स्मार्ट शहरों को निगलने वाले आड़े-तिरछे विकास की लम्बी लाइन बनकर नहीं रह जाएगा? गांवों के विकास के लिए शहरीकरण की दलील सही नहीं है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने के लिए कई प्लान एनजीओ ने बनाए हैं लेकिन सरकार ध्यान नहीं देती। कृषि की लम्बे समय से मौजूद समस्याओं पर ध्यान देने से भी मदद मिल सकती है। ग्रामीणों को यह नहीं कहा जा सकता कि वे शहर जाए या खत्म हो जाए। गांव उजड़ जाएंगे तो ग्रामीण क्षेत्रों का क्या होगा? क्या वह धनी लोगों के खेल के मैदान, रिसॉर्ट, तथा कृषि आधारित उद्योगों के संसाधन बनकर रह जाएंगे? बेहतर तो यह होगा कि हर ग्रामीण कस्बे को स्मार्ट कस्बे में बदला जाए। इस तरह वे ग्रामीण अर्थव्यवस्था के केन्द्र बन सकते है। अभी तो वह नाकाम ब्यूरोक्रेसी के केन्द्र बने हुए है।

स्मार्ट शहरों को बनाने के लिए टेक्नोलॉजी को मुख्य कुंजी की तरह प्रसारित किया जा रहा है। भारत में मनमर्जी चलाने की जो प्रवृत्ति है, उसे देखते हुए टेक्नोलॉजी भी कोई समाधान नहीं दे पाएगा। लॉस एंजिल्स में ट्रेफिक को सुगम रखने के लिए फुलप्रूफ इलेक्ट्रानिक सिस्टम विकसित किया। यातायात इतना सुगम हो गया कि ज्यादा से ज्यादा लोग कार चलाने लगे और ट्रेफिक जाम फिर लोट आया। ट्रेफिक कंट्रोल का एक ही रास्ता है कि सड़कों पर वाहनों की संख्या सीमित की जाए। अत: आवश्यक है कि टेक्नोलॉजी के पहले सुशासन लाना होगा।

भारत में जनाधिक्य काफी है। एक अरब 27 करोड़ है। वर्ष 2011 में भारत व चीन की जनसंख्या के मध्य 13.1 करोड़ का अंतर रह गया है। साथ ही 65 लाख शहरी लोग मलिन या घटिया बस्तियों में रहते है। बढ़ती आबादी के साथ कूडे-कचरे की चुनौती भी उत्पन्न होती है जो पानी व सेहत के लिए खतरा बन चुका है। 'इ' कचरा अर्थात् इलेक्ट्रानिक कचरा जिसे डंप किया जाता है वहां अगले 15 साल तक उस क्षेत्र में खतरनाक गैसों तथा जल में घुलनशील नाइट्रेट आदि प्रदूषण का उत्सर्जन होता रहता। ये सब मिलकर नगरों में कैंसर, एलर्जी, गर्भपात व तंत्रिका तंत्र की बीमारियों के मरीज बढ़ा रहे हैं।

असमानता व गरीबी ने शहरी भारतीयों को मानव निर्मित तथा प्राकृतिक आपदाओं के सामने असुरक्षित बना दिया है। विश्व-बैंक की रिपोर्ट (2014) के अनुसार में 70% जनसंख्या बाढ़ के खतरे वाली जगह पर है व 60% भूकम्प के लिए संवेदनशील इलाके में रहती है जिसकी वहज से भारत को विश्व में अत्यधिक आपदा सम्भावित क्षेत्र माना जाता है। शहरी क्षेत्रों में घनत्व व भीड़-भाड़ के चलते जोखिम का स्तर ऊँचा है।

दुनिया भर में जितनी भी संस्कृतियां विकसित हुई, जल की उपलब्धता विकास का मूल आधार रहा। प्राचीन नगर नियोजकों ने नगरों के अन्दर जल संग्रहण व निकासी पर तालमेल बनाया। अधिकांश महानगरों में हालात बद से बद्तार हैं। दिल्ली, मुम्बई में जनजीवन प्रभावित है। यदि जल-प्रबंधन पर गंभीरता से विचार नहीं किया गया तो नगरीय जीवन में गहरा संकट उत्पन्न हो जायेगा।

नगरों में नैतिकता का अभाव पाया जा रहा व अपराधों में वृद्धि का ग्राफ निरंतर बढ़ रहा है जिससे सामाजिक समस्या उत्पन्न हो रहीं है। नगरों में दुर्घटना की संभावना बढ़ जाती है, सड़कों पर भीड़ के कारण दुर्घटनायें बढ़ रही है। सरकार के स्वच्छता अभियान के बावजूद भी लोग नगरों में बड़ी संख्या में सड़कों के किनारे खेल के मैदानों एवं पार्कों में मल-मूत्र त्याग करते है जिससे दूषित वातावरण पैदा हो जाता है। साथ ही नगरों में परमार्थवादी भावना का विनाश व स्वार्थवादी भावना का विकास प्रारम्भ हो जाता है जो एक महत्वपूर्ण चुनौती है। बढ़ते नगरीकरण ने विषम आर्थिक समस्या उत्पन्न कर दी है। जिसमें गरीब व्यक्ति और गरीब व धनी व्यक्ति और धनी होते जा रहे जिससे वर्ग- संघर्ष उत्पन्न हो रहा है। ईष्या, द्वेष विभिन्न प्रकार के मनोविकारों में वृद्धि से नगरीकरण की चुनौती में वृद्धि देखी गई है।

सुझाव - नगरीकरण के बारे में संयुक्त, राष्ट्र की ताजा रिपोर्ट ने अगामी दशकों में भारत कें सामने उपस्थित होने वाली परिस्थतियों से हमें आगाह किया है। भारतीय योजनाकार इसे सूचना के महत्वपूर्ण स्त्रोत के रूप में ले सकते है और चेतावनी के रूप में भी। देश ऐसी स्थिति की तरफ बढ़ रहा है, जिसमें अगले 15 से 35 वर्षो के दौरान दुनिया के सबसे बडे शहर भारत में होंगे, जबकि सर्वाधिक ग्रामीण जनसंख्या भी भारत में होगी। दिल्ली फिलहाल ढाई करोड़ आबादी के साथ टोक्यो (3.80 करोड़) के बाद दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा शहर बन चुका है। 2030 तक दिल्ली के बाशिंदों की तदाद 3.60 करोड़ हो जाएगी जबकि उस समय टोक्यो की आबादी घटकर 3.70 करोड़ हो चुकी होगी। फिलहाल भारत में सिर्फ दिल्ली, मुम्बई (2.10 करोड़) ओर कोलकाता (डेढ़ करोड़) एक करोड़ से अधिक आबादी वाले शहर है। 2030 तक बेंगलुरू, चेन्नाई, हैदराबाद और अहमदाबाद की जनसंख्या भी एक करोड़ से ऊपर से चुकी होगी। मगर एक तरफ जहां ऐसे भीमकाय शहर अपने देश में होंगे। वहीं संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट बताती है कि 2050 तक भारत की संभावित आबादी (1.62 अरब) का आधा हिस्सा ग्रामीण इलाकों में ही होगा। ये आंकडे क्या इंगित करते हैं? संभवत: यही कि रोजगार और शिक्षा-स्वास्थ्य जैसी सुविधाओं की तलाश में करोडों लोगों का गांवों से महानगरों की तरफ पलायन जारी रहेगा। मतलब यह कि न तो ग्रामीण भारत में ऐसी सुविधाएं मुहैया होंगी, न ही विकास के साथ उनका स्वाभाविक रूप से शहरी इलाकों में संक्रमण होगा। इससे जहां कृषि पर दबाव बना रहेगा, वहीं बड़े शहरों का बुनियादी ढांचा आबादी के बोझ से दबता चला जाएगा। क्या इसके दुष्परिणामों से बचा जा सकता है? नि:संदेह ऐसा हो सकता है, अगर योजनाकार न सिर्फ शहरों को संभावित समस्याओं के मुताबिक तैयार करें, बल्कि विकास की ऐसी नीति को प्राथमिकता दें जिससे ग्रामीण इलाकों या छोटे शहरों में लोगों की रोजगार, आवास, परिवहन, बिजली आदि जैसी बुनियादी जरूरतें पूरी हो सकें। सिर्फ ऐसा करके ही हम शहरों के होने तथा नगरीय जीवन को त्रासद होने से बचा सकेंगे। सचमुच, अनियंत्रित शहरीकरण को संभालना बहुत बडी चुनौती है। बेहतर तरीका यह है कि हर ग्रामीण कस्बे को स्मार्ट कस्बे में बदला जाए।

निष्कर्षत: का. वी. के आर.वी राव के कथानुसार- 'हमको अधिक नहीं बल्कि कम नगरीकरण की आवश्यकता है और इसके साथ ही वर्तमान भारतीय ग्रामिणीकरण को बनाए रखना पर्याप्त नहीं होगा, बल्कि एक उत्कृष्ट ग्रामीण समान का निर्माण करना होगा, जिसमें जीवन की किस्म तथा सर्वव्यापी विकास के लिए विज्ञान तकनीकी एवं सामाजिक न्याय को समुचित ढंग से अपनाया जा सकता है।'' आज भारत में नगरों एवं गांवों के बीच एक आदर्श सुगठित संम्बध स्थापित करना है। नगरों एवं गांवों में सामंजस्य स्थापित करने के लिये सेवा नगरों या विपणन नगरों का विकास किया जाना चाहिए। इस संतुलन प्रणाली के शिखर पर महानगरों का विकास किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय जनांकिकी।
2. भारतीय अर्थव्यवस्था, डॉ. पंत एवं मिश्रा।
3. जनांकिकी की सिद्धांत, डॉ. वी. सी. सिन्हा एवं पुष्पा सिन्हा।
4. योजना पत्रिका।
5. दैनिक भास्कर, 08 मई, 2015
6. दैनिक भास्कर, 14 जुलाई 2014

****

खण्डवा जिला : औद्योगिक परिदृश्य

प्रो. मनु श्रॉफ *

प्रस्तावना – खण्डवा जिला औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े जिले की श्रेणी में आता है। म.प्र.शासन द्वारा इस जिले को औद्योगिक दृष्टि से 'स' श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है। 'स' श्रेणी में होने के कारण इसे अन्य जिलों की तुलना में उद्योगों को प्रदाय की जाने वाली सुविधाएँ अधिक उपलब्ध कराई गई है। यहॉ प्रमुखत: क्षेत्र की कृषि उपज सफेद सोना (कपास) पर आधारित लिंट कॉटन निर्माण तथा काकड़ा (कपास्या) आधारित आईल उद्योग स्थापित है। साथ ही इस के भरपूर विकास की संभावनाएँ भी है।

जिले में औद्योगिक क्षेत्र – औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े इस जिले में औद्योगिकरण हेतु औद्योगिक क्षेत्र विकसित किये जा रहे हैं। खण्डवा इन्दौर रोड पर सूजापुर कलॉ वीरान ग्राम क्षेत्र मेंऔद्योगिकरण हेतु भूखण्ड एवं शेड विकसित किये जा रहै हैं। विभिन्न औद्योगिक इकाईयॉ विद्यमान होकर स्थापित है। वर्तमान में इस क्षेत्र में आवंटन हेतु भूमि उपलब्ध नहीं है।औद्योगिकरण की दशा में माननीय मुख्यमंत्री महोदय की घोषणा दिनांक 23042008 के द्वारा रूधी भावसिंहपुरा के विभाग के आधिपत्य भूमि 148.74 हेक्टेयर को औद्यागिकरण की घोषणा के अनुसार राज्य शासन से औद्योगिक क्षेत्र विकसित करने की अनुमति दिनांक 26.03.2009 को प्राप्त हुई। औद्योगिक क्षेत्र स्थापना विकास के लिये म.प्र. औद्योगिक केन्द्र विकास निगम संधारण एवं विकास म.प्र. औद्योगिक केन्द्र विकास निगम द्वारा किया जावेगा। भूमि आवंटन उपरान्त क्षेत्र में उद्योग स्थापना की प्रबल संभावना है। जिले में औद्योगिक क्षेत्र की स्थिति इस प्रकार है–

खण्डवा जिले में औद्योगिक क्षेत्र की वर्तमान स्थिति वर्ष 2013 (तालिका देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि खण्डवा जिले में औद्योगिकीकरण निरन्तर प्रगति पर है। जिले में औद्योगिक क्षेत्र का निर्माण कर विभिन्न इकाईयों के लिये भूखण्ड वितरीत किये जा रहे हैं। यहॉ पर 03 औद्योगिक क्षेत्रों का विकास कर 172.42 हेक्टर भूमि विकसित की गई है। अभी तक 67 इकाईयों को भूखण्ड आवंटित किये जा चुके हैं। औद्योगिक क्षेत्र में 2 इकाईयॉ ने उत्पादन कार्य प्रारंभ कर दिया है।

औद्योगिक दृष्टि से पिछडे खण्डवा जिले में औद्योगिक विकास के लिये निरन्तर प्रयास किये जा रहे है, जिससे इस क्षेत्र में औद्योगिक इकाईयों की स्थापना की जा सके। जिले में वर्तमान औद्योगिक परिदृश्य को निम्नलिखित तालिका में व्यक्त किया गया है–

जिले में औद्योगिक परिदृश्य वर्ष 2013

क्र	विवरण	संख्या
1	पंजीकृत औद्योगिक इकाईयॉ	10552
2	कुल औद्योगिक इकाईयॉ	10552
3	पंजीकृत मध्यम एवं वृहद इकाईयॉ	01
4	औद्योगिक क्षेत्र	03

स्त्रोत– एम.एस.एम.ई. विकास संस्थान इंदौर।

तालिका के अनुसार जिले में पंजीकृत औद्योगिक इकाईयों की संख्या 10552 है, जिसमें से मात्र 01 मध्यम इकाई है। शेष सभी लघु एवं सूक्ष्म इकाईयॉ है। जिले में औद्योगिक विकास हेतु 03 औद्योगिक क्षेत्र विकसित किये गये है।

पंजीकृत औद्योगिक इकाईयॉ – खण्डवा जिले में युवाओं को रोजगार में संलग्न करने हेतु शासन स्वयं की इकाईयॉ स्थापित करने हेतु प्रोत्साहित कर रहा है। स्वरोजगार के प्रति युवाओं के बढ़ते साहस से जिले में पंजीकृत औद्योगिक इकाईयों की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है। लघु एवं सूक्ष्म औद्योगिक इकाईयों में व्यक्ति अपने साथ–साथ अन्य व्यक्तियों को भी रोजगार प्रदान करते है। खण्डवा जिले में पंजीकृत औद्योगिक इकाईयों की स्थिति का निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है–

खण्डवा जिले में पंजीकृत औद्योगिक इकाईयॉ

क्र	वर्ष	पंजीकृत औद्योगिक इकाईयॉ
1	2003–04	553
2	2004–05	558
3	2005–06	334
4	2006–07	403
5	2007–08	500
6	2008–09	514
7	2009–10	505
8	2010–11	503
9	2011–12	505
10	2012–13	518
	योग	4893
	वर्ष 2002–03 तक	5659
	महायोग	10552

स्त्रोत– एम.एस.एम.ई. विकास संस्थान इन्दौर।

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि जिले में वर्ष 2012–13 तक कुल 10552 औद्योगिक इकाईयॉ पंजीकृत थी। वर्ष वार देखें तो स्पष्ट होता है कि वर्ष 2003–04 में 553, 2004–05 में 558, वर्ष 2007–08 में 500 इकाईयॉ का पंजीकरण हुआ। इस प्रकार प्रतिवर्ष बढ़ी मात्रा में औद्योगिक इकाईयों का पंजीकरण हो रहा है।

सूक्ष्म एवं लघु इकाईयॉ– खण्डवा जिला कृषि प्रधान जिला होने से यहॉ स्थापित होने वाले उद्योग में कृषि आधारित उद्योग की संख्या अधिक होती है। तकनीकी के अभाव एवं पूंजी की कमी के कारण निर्माण इकाईयों की मात्रा बहुत कम है। जिले में कार्यरत सूक्ष्म एवं लघु इकाईयों में सेवा इकाईयॉ भी कार्यरत है। विगत वर्षो में जिले में कार्यरत विभिन्न प्रकार की सूक्ष्म एवं

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

लघु इकाईयों की वर्तमान स्थिति अग्रानुसार है–

जिले में कार्यरत लघु एवं सूक्ष्म इकाईयाँ वर्ष 2013

क्र	उद्यम का प्रकार	संख्या	रोजगार	विनियोग (लाख रू.में)
1	कृषि आधारित	804	1608	1723.60
2	सोडा वाटर	02	05	1.40
3	वूलन, सिल्क एवं कृत्रिम धागा	30	62	124.50
4	रेडीमेड गारमेंटस एवं एम्ब्रायडरी	661	1190	1462.70
5	लकडी फर्नीचर	197	591	1157.60
6	पेपर एवं पेपर प्रोडक्ट	24	96	43.20
7	लेदर बेस्ड	258	516	167.70
8	रासायनिक आधारित	38	114	45.60
9	रबर, प्लास्टिक, पेट्रोबेस्ड	37	148	81.46
10	मिनरलबेस्ड	38	190	453.25
11	मेटलबेस्ड	130	396	117.00
12	इंजिनियरिंग इकाईयॉ	171	513	174.42
13	इलेक्ट्रिक मशीनरी	236	472	118.00
14	रिपेरिंग एवंसर्विसिंग	1087	2174	489.15
15	अन्य	4550	10258	3286.23

स्त्रोत–जिला उद्योग एवं व्यापार केन्द्र, खण्डवा।

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि जिले में कार्यरत लघु एवं सूक्ष्म इकाईयों में सर्वाधिक 804 इकाईयॉ कृषि आधारित है। रिपेरिंग एवं सर्विसिंग की मांग को देखते हुए यहॉ इन इकाईयों की संख्या 1087 है। सबसे कम 02 इकाईयॉ सोडा वाटर की है। अन्य प्रकार की स्थापित इकाईयों में 661 रेडिमेड गारमेंट्स एवं एम्ब्रायडरी, 197 लकडी फर्नीचर, 130 मेटलबेस्ड, 38 मिनरल बेस्ड, 258 लेदर बेस्ड इकाईयॉहै।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वर्तमान में जिले में वृहत औद्योगिक इकाई एक भी नहीं है एवम् एक इकाई मध्यम है, अन्य स्थापित सभी लघु एवम् सूक्ष्म इकाईयां हैं, अत: जिले के तीव्र औद्योगिक विकास के लिए वृहत इकाईयां शासन द्वारा स्थापित किया जाना आवश्यक है

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. भगोलीवाल टी.एन. श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक सम्बन्ध (2010), साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
2. डॉ. कुल श्रेष्ठ आर.एस, औद्योगिक अर्थशास्त्र (2011) साहित्य भवन।
3. उद्यम मार्गदर्शिका 2010 उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश भोपाल।
4. मध्यप्रदेश के प्रमुख आंकडे 2013, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय मध्यपद्रेश, भोपाल।
5. मध्य प्रदेश का सांख्यिकी संक्षेप 2013 आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय मध्यपद्रेश, भोपाल।

खण्डवा जिले में औद्योगिक क्षेत्र की वर्तमान स्थिति वर्ष 2013

क्र	औद्योगिक क्षेत्र का नाम	अधिगृहित भूमि (हेक्टेर)	विकसित भूमि (हेक्टेर)	भूखण्ड संख्या	कार्यरत इकाई
1	इन्दौर रोड औद्योगिक क्षेत्र	22.58	11	65	–
2	पंधाना रोड औद्योगिक क्षेत्र	1.09	1.09	2	2
3	रूधी भावसिंगपुरा औद्योगिक क्षेत्र	148.74	–	–	–
	योग	172.42	12.09	67	2

स्त्रोत– एम.एस.एम.ई. विकास संस्थान इंदौर।

****

मध्यप्रदेश लोकसेवा गारण्टी अधिनियम 2010 – एक अध्ययन

प्रो. भावना कुशवाह *

प्रस्तावना – लोकसेवा गारण्टी अधिनियम मध्यप्रदेश में सुशासन की एक ऐतिहासिक पहल है। भारत में म.प्र. पहला राज्य है जिसने लोकसेवा गारण्टी कानून को लागू किया। इस कानून ने जनता को जनसेवकों से समय सीमा में सेवा प्राप्त करने के लिए कानूनी रूप से बाध्य कर दिया है। यह कानून नौकरशाही व्यवस्था पर एक अंकुश है, इससे उत्तरदायित्वता, पारदर्शिता, सहभागिता बढ़ाकर लाल फीताशाही एवं भ्रष्टाचार पर बड़ा कारगर प्रहार है।

शासन तंत्र में लोकसेवा जनता की सेवा करे, उनकी समस्याओं को समय सीमा में हल कर अपनी निष्ठा, कर्तव्य परायणता, जनकल्याण का आधार बनाऐं। लोकतंत्र में लोकसेवा गारण्टी सुशासन का शक्तिशाली माध्यम बनकर, लोकतंत्र को मजबूत बनाता है।

इस अधिनियम का उद्देश्य अधिसूचित विभागों की अधिसूचित सेवाएँ आम नागरिकों को समय–सीमा में उपलब्ध कराना है। लोकसेवक जनता का हितैषी बन, एक विश्वसनीय कारक बन रहा है। म.प्र. के नागरिकों को समय सीमा में लोकसेवा प्राप्त करने का वैधानिक अधिकार बन गया। लोकसेवा प्रबन्धन नाम से अलग विभाग का अस्तित्व में आना इसके क्रियान्वयन में प्रभावी साबित होगा।

सिविल सेवाओं को अलग–अलग ढंग से विद्धानों ने परिभाषित किया है। ग्लैडन ने कहा है कि 'प्रशासन के क्षेत्र में तटस्थ विशेषज्ञों का व्यावसायिक निकाय जो नि:स्वार्थ रूप से बिना राजनीतिक दलीय विचारों अथवा वर्ग हितों से राष्ट्र की सेवा में प्राणपण से जुटा है।'

अमेरीकन विश्वकोष ने लोकसेवा को परिभाषित करते हुए बताया है– 'लोकसेवाएं उन संगठित वेतनभोगी कार्मिकों के निकाय को कहते है, जो सरकार अधिकार के क्षेत्र में कार्यरत है, ये सेवाएं तथा उनका नामकरण विभिन्न देशों की परम्पराओं के अनुसार हो सकता है यद्यपि आधुनिक राज्य में अधिकतर सेवाएं लोकसेवाएं ही है तथापि जनप्रतिनिधि तथा रक्षा कार्मिक लोकसेवा से बाहर माने जाते रहे है।'

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 21 में लोकसेवा को परिभाषित करते हुए बताया है कि –'सरकारी सेवारत या वेतन न पाने वाला अथवा सरकारी कार्य के लिए शुल्क या कमीशन पाने वाला व्यक्ति लोक सेवक की श्रेणी में नहीं आता है।'

प्रो. डोनहेम कहते है –'यदि हमारी वर्तमान सभ्यता का पतन हुआ, तो ऐसा मुख्यत: प्रशासन की विफलता के कारण होगा।'

लोकसेवा का अधिकार विधायन एक साविधिक कानून है। समय सीमा में सूचीबद्ध लोकसेवाओं को उपलब्ध करवाने की गारण्टी एवं नागरिकों को यह सेवाएं समय पर उपलब्ध नहीं करवाने पर लोकसेवकों के लिए दण्डात्मक व्यवस्था निश्चित करता है। यह जबावदेही उत्तरदायी एवं पारदर्शी कल्याणकारी जनहित के लिए आवश्यक है।

सुशासन की दिशा में सरकार के इस प्रयास में मध्यप्रदेश को संयुक्त राष्ट्र का 'इम्प्रूविंग द डिलीवरी ऑफ पब्लिक सर्विसेस' श्रेणी का पुरस्कार प्राप्त है। भ्रष्टाचार एवं अधिकारी तंत्र की कमियां को दूर करने में प्रभावी कदम साबित हो रहा है। इस कानून से प्रेरणा लेकर राष्ट्र के अन्य राज्य भी अपने राज्य में लाना चाहते है– बिहार, राजस्थान, पंजाब, उत्तराखण्ड, दिल्ली, जम्मू कश्मीर, उत्तरप्रदेश, झारखण्ड आदि प्रमुख है।

लोकसेवा गारण्टी लोकतांत्रिक व्यवस्था में एक अभिनव पहल है। लोकतंत्र जनता का शासन होता है। शासन के प्रति उत्तरदायी रहे, इसके लिए लोकसेवाऍं नागरिकों को लोकसेवकों द्वारा समय पर देने का दायित्व होने से लोकतांत्रिक व्यवस्था अपने वास्तविक मूलभाव में अभिव्यक्त होगी। लोकतंत्र को अब्राहम लिंकन ने जनता का, जनता के लिए, जनता के द्वारा शासन कहा है। यह विश्व की सर्वश्रेष्ठ शासन प्रणाली कही जाती है, क्योंकि जनता अधिकार सम्पन्न है, जनता को अधिकार दिए ही नहीं गए है, बल्कि उनके लागू करने का प्रभावी तंत्र भी विकसित किया है, इसी श्रेणी में लोकसेवा प्रबन्धन आता है। लोकतंत्र जनता को व्यक्तित्व विकास के अवसर देकर उनके अधिकारों को संरक्षित करें। जनता की सक्रियता, जागरूकता व सहभागिता लोकतंत्र को मजबूत आधार देती है।

मध्यप्रदेश में लोकसेवा गारण्टी अधिनियम 2010 प्रावधान – मध्यप्रदेश लोकसेवा गारण्टी अधिनियम 2010 नागरिकों के अधिकारों को मजबूत बनाने की दिशा में प्रभावी व ऐतिहासिक कदम है। इसके कारण प्रदेश की जनता को अधिसूचित सेवाओं को समय सीमा में प्राप्त करने का अधिकार मिल गया। इस कानून के लागू करने हेतु आवेदन पत्र, अपील, पुनरीक्षण, शास्ति की वसूली तथा प्रतिकर भुगतान आदि सम्बन्धी नियम बनाये गये है। यह अधिनियम म.प्र. में 25 सितम्बर 2010 से प्रभावशील है। अब यह 25 सितम्बर को लोकसेवा दिवस के रूप में मनाया जा रहा है जो जनजागृति व इसके प्रभावी क्रियान्वयन में विशिष्ट साबित होगा।

अधिनियम का उद्देश्य – इस अधिनियम का उद्देश्य सरकार द्वारा अधिसूचित सेवाओं को आम नागरिकों को एक तय समयसीमा में उपलब्ध करवाना है। संबंधित विभाग के पदाभिहित अधिकारी का दायित्व है कि वह समय सीमा में लोकसेवा का लाभ जनसामान्य को दे। यह अधिकार जनता को सशक्त बनाता है, सेवा लेना अधिकार मानता है। इस लोकसेवाओं को जनता से जोड़कर प्रशासन को अधिक पारदर्शी संवेदनशील एवं सहज बनाने का अभिनव प्रयोग है। जिससे जनता को समय सीमा में लोकसेवाऍं मिल सके।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

अधिनियम अधिकार क्षेत्र की सेवाएं –लोकसेवा अधिनियम 2010 के लागू होने से इसमें विभागों व सेवाओं की संख्या बढ़ाई जा रही है। अधिसूचित विभागों की अधिसूचित सेवाएँ जनता को समय सीमा में उपलब्ध करवाने हेतु (21 विभाग की 101 सेवाएँ) शामिल की जा रही है। म0प्र0 में लोकसेवा प्रबन्धन विभाग का गठन कर इस ओर अधिक प्रभावी व सार्थक बनाया गया है। जनसेवाएँ, जनता के द्वार तक पहुँचे यह परिकल्पना साकार होने की ओर एक प्रभावी कदम है।

सेवा प्राप्त करने की समय सीमा –लोकसेवा प्रदाय प्रणाली को अधिक बेहतर बनाने के लिए प्रत्येक विकासखण्ड स्तर पर एवं शहरीय क्षेत्रों में लोकसेवा केन्द्रों की स्थापना की गई है। पब्लिक-प्रायवेट पार्टनरशिप के अन्तर्गत बेहतर सुविधा प्रदान करने, सलाह व मार्गदर्शन के केन्द्र बन गये है। जनता को शासकीय कार्यालयों में नही जाना पड़े। ये केन्द्र प्रात: 9:30 बजे से शाम 6:00 बजे तक कार्यरत रहते है।

आवेदन पत्र की प्रक्रिया – लोकसेवा अधिनियम के अनुसार समय सीमा लोकसेवा प्राप्त करने के लिए निर्धारित प्रारूप में आवेदन, निर्धारित शुल्क के साथ लोकसेवा केन्द्र पर जमा किया जा सकता है। सम्बन्धित विभाग को आवेदन अभिप्रेषित कर समय सीमा में सेवा उपलब्ध करवाई जाना होगा। अन्यथा सम्बन्धित विभाग के विरूद्ध अपील की जा सकती है। आवेदक के द्वारा ऑनलाईन पंजीयन की व्यवस्था भी की गई है।

सेवा प्राप्त न होने पर अपील/पुनरीक्षण एवं शास्ति प्रावधान – लोकसेवा अधिनियम के लागू होने के बाद यदि अधिसूचित विभागों की अधिसूचित सेवाओं को निर्धारित समय सीमा में नहीं प्राप्त होने पर सम्बन्धित अधिकारी के विरूद्ध प्रथम अपील प्रथम अपीलीय अधिकारी को कर सकता है। इस स्तर पर भी निराकरण न होने पर द्वितीय अपील की जा सकती है एवं इस स्तर पर भी निराकरण नहीं होने (सेवा उपलब्ध करवाने में कोताही बरतने) पर ऐसे अधिकारियों से 5000 रूपये तक की शास्ति का प्रावधान भी है। इस शास्ति राशि का भुगतान प्रतिकर के रूप में आवेदक को किया जा सकता है।

लोकसेवा केन्द्रों की स्थापना एवं उपादेयता – लोकसेवा गारण्टी अधिनियम की लोकसेवाओं को प्राप्त करने एवं उसके लिए आवेदन करने के लिए तथा आवश्यक जानकारी सहयोग प्रदान करने हेतु विकासखण्ड स्तर एवं नगरीय क्षेत्रों में लोकसेवा केन्द्र स्थापित किए गए है। जिससे आम नागरिकों को लोकसेवा प्राप्त करने के लिए अलग-अलग कार्यालयों में न जाना पड़े। पूरे प्रदेश में 336 लोकसेवा केन्द्र स्थापित किए गए है एवं धार जिले में लोकसेवा केन्द्र की स्थापना की गई है। जिले के प्रत्येक विकासखण्ड में लोकसेवा केन्द्र की स्थापना की गई। यह ऑनलाईन पंजीयन सुविधा भी प्राप्त हुई है। केन्द्र प्रात: 9:30 बजे से सायं 6:00 बजे तक कार्य करते है। आवेदक निर्धारित शुल्क 30.00/- रूपये (तीस रूपये) जमा कर पंजीयन करवा सकता है एवं अधिसूचित 16 विभागों की 52 सेवाओं को प्राप्त किया जा सकता है। शीघ्र ही 21 विभागों की 101 सेवाएँ इसमें शामिल होगी।

सुशासन की दिशा में इसे राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सराहना मिली है। म0प्र0 की अग्रणी पहल अन्य राज्यों के अनुकरण की आधार बनी। यह सरकार का क्रांतिकारी कदम है जो राज्य की जनकल्याण की अवधारणा का साकार रूप है। सुशासन की नई पहल है। लोकसेवा केन्द्र पर जाये, सारी सेवाएँ एक ही जगह से पायेगें। जाति प्रमाण-पत्र, आय प्रमाण-पत्र, मूल निवासी प्रमाण-पत्र, विद्यार्थियों को सहजता से प्राप्त होने लगे है। यह जनहित का महत्वाकांक्षी व प्रभावी प्रयास है, जो जनता से सरकार को विश्वास के साथ जोड़ता है।

लोकसेवा केन्द्र धार (म0प्र0) धार विकासखण्ड तय समय सीमा में सेवाएँ –

- जाति प्रमाण पत्र।
- 03 दिन में आय प्रमाण पत्र।
- 05 दिन में खसरे/बी-1 की नकल।
- 07 दिन में स्थानीय निवासी प्रमाण पत्र।
- 07 दिन में दीनदयाल अन्त्योदय उपचार योजना कार्ड।
- 07 दिन में हेण्ड पम्प सुधार।
- 10 दिन में राज्य बीमारी सहायता।
- 15 दिन में भू-अधिकार ऋण पुस्तिका।
- 15 दिन में विकलांगता प्रमाण पत्र।
- 30 दिन में नया नल कनेक्शन।
- 30 दिन में लाड़ली लक्ष्मी योजना लाभ।
- 30 दिन में प्रसूति सहायता लाभ।
- 30 दिन में बीपीएल सर्वे सूची नाम जुड़वाना।
- 30 दिन में श्रमिक मृत्यु सहायता लाभ।
- 30 दिन में राष्ट्रीय परिवार सहायता।
- 30 दिन में रासायनिक उर्वरक विक्रय लायसेंस/कीटनाशक विक्रय लायसेंस।
- 30 दिन में विवाह सहायता लाभ।
- 60 दिन में पेंशन सहायता आदि।

प्राप्त आवेदन पत्रों एवं उपलब्ध कराई गई सेवाओं की जानकारी (औसत प्रतिशत में) –

क्र.	विवरण	प्रतिशत में
1.	लम्बित आवेदन पत्र	7.77%
2.	निराकृत आवेदन पत्र	91.86%
3.	अपूर्ण आवेदन पत्र	0.37%
4.	प्राप्त आवेदन पत्र	100%

नोट - समयावधि में सेवा उपलब्ध न होने पर शास्ति का प्रावधान।

लोकसेवा गारण्टी के लिए सुझाव –

- लोकसेवा केन्द्रों की संख्या बढ़ाई जावे जिससे सहजता से प्रदेश के दूरस्थ अंचलों के लोग भी लोकसेवा का लाभ ले सके।
- लोकसेवा कानून के जानकारी जनसामान्य तक पहुँचे। इसके लिए जनजागरूकता के विभिन्न तरीके अपनाये जावे।
- 'लोकसेवा दिवस' उत्सव के रूप में शासकीय कार्यालय, सार्वजनिक स्थानों एवं जनसामान्य के बीच व्यापक रूप में मनाया जावे। (25 सितम्बर को लोकसेवा दिवस के रूप में मनाया जाना आरंभ किया जा चुका है।)
- लोकसेवा गारण्टी कानून का दायरा बढ़ाकर अन्य विभागों की जनहित सेवाओं को शामिल किया जावे। 25 दिसम्बर को सुशासन के रूप में मनाया जा रहा है।
- लोक सेवा प्रबन्धन विभाग इसे प्रभावी बनाने के लिए आधुनिक तकनीक के उपयोग को बढ़ाये।
- लोकसेवा व्यवस्था से जुड़े विभिन्न विभागों, संस्थाओं एवं अधिकारी कर्मचारियों के लिए सतत् प्रभावी प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जावे।

- लोकसेवकों की जवाबदेही सुनिश्चित होने से अधिकारी तंत्र की कमियां दूर होकर सुशासन की ओर प्रभावी कदम साबित होगा।
- इससे सुशासन की कल्पना को साकार रूप दिया जा सकता है। जनसामान्य को कानूनी प्रावधानों व प्रक्रिया का सरल/सहज प्राप्त हो यह जरूरी है।

निष्कर्ष – लोकसेवा की गारण्टी सामान्य जनता को प्रदान कर सरकार और अधिक पारदर्शी उत्तरदायी एवं जनहितैषी भेदभाव रहित बनकर जनकल्याणकारी राज्य की सार्थक भूमिका निभा रही है। इस कानून के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए आवश्यक है कि अपीलों की सुनवाई के लिए कोई स्वतंत्र निकाय या आयोग की स्थापना की जानी चाहिए। जिससे इसके न्याय एवं फैसलों में वस्तुनिष्ठता आ सके और विश्वसनीयता को बनाया जा सके, देश प्रदेश में नियम कानूनों की कमी नहीं है किन्तु आवश्यकता उनके सही क्रियान्वयन की है। नये कानून के क्रियान्वयन पर प्रभावी निगरानी व नियंत्रण तंत्र का होना आम जनता के हित में आवश्यक है। इस हेतु सकारात्मक इच्छा शक्ति एवं नैतिकता का संचार एकमात्र उपाय है। लोकसेवा केन्द्रों का व्यापक जन–जन तक प्रसार हो एवं एक खिड़की योजना 'लोकमित्र' के रूप में बनायी जाना चाहिए। जिससे जनसुविधाओं में वृद्धि होकर कानून का सही लाभ जनता तक पहुँचेगा।

लोकसेवा गारण्टी के अन्तर्गत शासन के द्वारा जो सेवाएँ उपलब्ध करवाई जाती है वे सेवाएं निर्धारित समय अवधि में प्राप्त होने की गारण्टी से शासन व्यवस्था में पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व का अनुभव होगा। जब जनता को बिना असुविधाओं के समयावधि में लोक सेवाएँ प्राप्त हो जाती है, तो उसके कारण जनकल्याण का भाव मजबूत होकर जनहित के कार्य कर पाती है। इसी कारण जनता व शासन व्यवस्था में सामंजस्य तथा सौहार्द्र का वातावरण निर्मित होता है। यही लोकतंत्र की मजबूती का आधार बनता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मध्यप्रदेश लोकसेवा गारण्टी अधिनियम 2010, मध्यप्रदेश राजपत्र भोपाल (म.प्र.)।
2. (i) मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 428 भोपाल (18 अगस्त 2010)।
   (ii) मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 25 वें (12 मई 2010 भोपाल)।
   (iii) मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 26 भोपाल (17 जनवरी 2012)।
   (iv) मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 162 भोपाल (10 अप्रैल 2013)।
3. लोक प्रशासन : बी.एल. फड़िया, साहित्य भवन, आगरा।
4. सुशासन एवं नीति विश्लेषण स्कूल : नर्मदा भवन – 59 अरेरा हिल्स भोपाल द्वारा वर्ष 2012 में प्रकाशित 'सेवा का अधिकार' लोक सेवाओं के प्रदान की गारण्टी अधिनियम 2014।
5. मध्यप्रदेश जनसम्पर्क विभाग भोपाल द्वारा प्रकाशित 'सुशासन की नई पहल'–2011।
6. लोकसेवा केन्द्र, विकासखण्ड धार जिला– धार (म.प्र.) (2010 से 2014 तक) प्राप्त जानकारी।
7. नई दुनिया – इन्दौर (म0प्र0) 25 सितम्बर 2014

****

भारत चीन संबंधों के बदलते आयाम - एक विश्लेषण

डॉ. श्रीकांत दुबे *

शोध सारांश- भारत चीन संबंधों का अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में विशेष स्थान है। भारत चीन संबंध नेहरू युग में नई विश्व व्यवस्था की दिशा में मित्रता के रूप में प्रारंभ हुए किन्तु 1962 के चीनी आक्रमण ने भारत चीन संबंधों पर नए सिरे से विचार करने हेतु मजबूर किया। कालांतर में दोनों देशों की महत्वाकांक्षाओं ने संबंधों में खटास पैदा की। चीनी घुसपैठ एक स्थाई समस्या बनी हुई है। वास्तव में दोनों देश संबंधों के उतार चढ़ाव से प्रभावित रहे हैं। सीमा पर तनाव दोनों के मध्य एक स्थाई समस्या की तरह है। चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग एवं भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी आपसी यात्राओं के महत्व से सीमा विवाद हल करने की नई परिभाषा लिखने हेतु पहल कर रहे हैं। परिणाम भविष्य के गर्त में छुपा हुआ है लेकिन नये संबंधों की पहल होती दिखाई दे रही है।

प्रस्तावना - भारत ने सदैव पड़ौसी देशों से मधुर संबंध बनाए रखने पर जोर दिया है। भारत के प्रधामंत्री नरेन्द्र मोदी पड़ौसी देशों के साथ संबंधों को शीर्ष स्तर पर स्थापित करना चाहते हैं। हमारे अन्य देशों से संबंधों पर चीन की पैनी नजर है। चीन भारत से सीमा विवाद से जुडे रहने के साथ ही श्रीलंका, पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, म्यांमार जैसे देशों को आर्थिक व सैन्य मदद भी दे रहा है। भारत की वर्तमान पहल चीन के साथ संबंधों में मजबूती एवं तेजी स्थापित करने की है। दोनों देश संबंधों में तालमेल स्थापित करने हेतु प्रयत्नशील है चीनी घुसपैठ एवं सीमा पर हस्तक्षेप के मामलों में भारत ने दृढ़ता दिखाने का साहस किया है। बिना विलंब किए चीनी हस्तक्षेप का भारत ने विरोध करने की नीति पर अमल किया है।

भारत चीन संबंधों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि- प्राचीनतम सभ्यताओं से युक्त चीन से भारत के संबंध बहुत प्राचीन है। ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में चीन में बौद्ध धर्म सम्राट अशोक के प्रयासों से ही प्रारंभ हुआ इसके पश्चात दोनों देशों के विद्वानों का आवागमन एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान होता रहा। हर्षवर्धन काल में राजनयिक संबंध प्रारंभ हुए किन्तु मध्य युग में चीन पर मंगोलों व तुर्कों के आक्रमण तथा भारत पर मुगलों के आक्रमणों के कारण भारत व चीन के संबंध टूट गए। ब्रिटिशकाल में ब्रिटिश सेना ने चीन का शोषण किया जिसका भारत ने विरोध किया। इसी युग में भारत चीन संपर्क फिर प्रगाढ़ होने लगे। 1923 में टैगोर ने चीन की यात्रा की व 1927 में नेहरू ने चीनी नेताओं से मुलाकात की। 1936 में जापान द्वारा चीन पर किए गए आक्रमण का भारत ने विरोध किया। 1947 में भारत स्वतंत्र हुआ और 1949 में चीन में साम्यवादी सरकार की स्थापना हुई। भारत ने उसे मान्यता प्रदान की।

तिब्बत एवं भारत चीन संबंध- तिब्बत का प्रश्न भारत चीन संबंधों में खटास का कारण रहा। 19वीं सदी में चीन ने तिब्बत पर कब्जा कर लिया। 1911 में तिब्बत ने चीनी सेनाओं को भगा दिया। 1914 में भारत व तिब्बत में हुए समझौते के तहत यह तय किया गया कि आंतरिक तिब्बत पर चीन का अधिपत्य व बाह्य तिब्बत पर दलाईलामा का प्रभाव होगा। भारत ने तिब्बत पर ध्यान नहीं दिया परिणाम स्वरूप 1950 में चीनी सरकार ने घोषणा की कि तिब्बत को साम्राजवाद से मुक्त करेंगे तथा कुछ ही दिनों में चीन ने तिब्बत पर आक्रमण कर दिया भारत ने चीन का विरोध किया। 1951 में तिब्बत ने चीन से संधि कर ली व तिब्बत को आंतरिक रूप से स्वतंत्र मान लिया लेकिन तिब्बत की विदेशी नीति पर चीनी नियंत्रण हो गया। 1954 में भारत व चीन के मध्य हुए समझौते में भारत ने तिब्बत पर पूर्णरूपेण चीनी आधिपत्य स्वीकार कर लिया। भारत के निर्णय की बड़ी आलोचना हुई 1956 में तिब्बत में विद्रोह हो गया जिसे चीन ने कुचल दिया। दलाईलामा ने भारत की शरण ले ली। चीन ने दलाई लामा को शरण देने पर भारत की आलोचना की भारत ने भी चीन की नीतिओं का विरोध किया।

भारत चीन सीमा विवाद- 1950 में ही भारत चीन सीमा विवाद प्रारंभ हो गये थे। चीन ने अपने प्रकाशित नक्शे में भारत के बड़े भू-भाग को चीन में दर्शाया गया जिसका भारत ने विरोध किया। चीन ने 1954 में भारत के बूले और बाराहोती पर चीनी आधिपत्य संबंधी पत्र भेजा जिसका भारत ने विरोध किया परिणामस्वरूप कालांतर में इस मामले का पटाक्षेप हुआ व इसे भारतीय सीमा में माना गया। लेकिन चीन रूका नहीं उसने भारतीय सीमा पर अपना अधिपत्य करना जारी रखा चीनी सेना ने लद्दाख बाराहोती दमजान व लांग क्षेत्र में 40 मील पर कब्जा कर लिया। 1960 में चीनी सेना ने घुसपैठ का दायरा बड़ा लिया भारत ने इसका विरोध किया।

भारत चीन युद्ध- 13 अक्टूबर 1962 को नेहरू ने भारतीय सेना को निर्देश किया कि नेफा से चीनीयों को मार भगाए किन्तु 20 अक्टूबर 1962 में ही चीनी सेना ने लद्दाख के उस क्षेत्र पर कब्जा कर लिया जिसपर उसने आधिपत्य किया था। 21 नबंवर 1962 में चीन ने एक पक्षीय युद्ध विराम की घोषणा कर दी एवं प्रस्ताव रखा कि दोनों सेनाएँ वास्तविक नियंत्रण रेखा से 20 किलोमीटर सीधे हट जाए यह एक तरफा युद्ध विराम भारत की हार एवं चीन की कूटनीतिक विजय थी।

भारत चीन संबंधों के विविध आयाम- 1962 के चीनी आक्रमण से भारत आहत था। नेहरू कॉल एवं उसके पश्चात भी चीन भारतीय सीमा पर बराबर घुसपैठ करता रहा। 1965 के भारत पाक युद्ध में चीन ने अपनी कूटनीतिक बिसात कायम करने की कोशिश कि लेकिन भारत के कड़े विरोध एवं युद्ध में अन्य देशों के सम्मिलित होने की आशंका के कारण चीन पीछे हट गया। लेकिन भारतीय सीमा पर चीनी घुसपैठ एवं गोलीबारी कमोवेश जारी

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय गृह विज्ञान स्नातकोत्तर अग्रणी महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

रही। 1971 में इस स्थिति में थोड़ा परिवर्तन परिलक्षित होता है एवं दोनों देशों के व्यावसायिक संबंधों के वृद्धि भी हुई। किन्तु 1971 के भारत पाक युद्ध एवं भारत सोवियत संधि से पुन: चीनी रूख भारत विरोधी ही रहा। 1976 में माओत्सेतुंग की मृत्यु व 1982 के एशियाई खेलों से सामान्य संबंध शुरू हुए। 1984 में राजीव गाँधी ने नए संबंधों की पहल की व सीमा विवाद पर पुन: वार्ता प्रारंभ हुई राष्ट्राध्यक्षों का आवागमन संबधों को सामान्य बनाने की दिशा में अग्रसर हुआ। 1994 में चीन में भारतीय महोत्सव हुआ व 1997 से भारत चीन हवाई सेवा प्रारंभ हुई। 1998 में वाजपेयी ने संबंधों को आगे बढ़ाने की दिशा में कार्य किया।

भारत चीन संबंधों की वर्तमान स्थिति– प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में भारत चीन संबंधों के नए युग की शुरूआत हुई है। अपनी भारत यात्रा पर शी जिनपिंग व मोदी मिले तो लगा कि वे दोस्ती का रिश्ता कायम रखना चाहते हैं।वास्तव में इन संबंधों के पीछे तथ्य यह है कि आज भारत के पास सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार है, वहीं उत्पादन की क्षमता के मामले में चीन दुनिया में प्रथम क्रम पर है लेकिन उसे अपने उत्पादों के लिए उपभोक्ता भारत में ही दिखाई दे रहा है। उसे भारत से बड़ा एवं बेहतर बाजार और कहीं नहीं मिल सकता वास्तव में भारत व चीन दोनों के लिए एक दूसरे के नजदीक आना जरूरी हो गया है। चीन भारत की युवा शक्ति से प्रभावित है। चीन के लिए एक ओर सकारात्मक पक्ष यह है कि भारत में मोदी की सरकार है व मोदी दीर्घकालीन योजनाएँ बनाने में निपुण है तथा वे अपने पूर्ववर्ती प्रधानमंत्री से इस मामले में भिन्न है कि वे अपने वक्त की जरूरतो को ध्यान में रखते हुए ही चलते है। चीन जानता है कि अब दुनिया बदल रही है अब संबंधों के मूल्य एवं राजनीतिक अभिप्राय भी पूर्व की तरह नहीं हो सकते बदलाव की प्रक्रिया से दोनों देश मुँह नहीं मोड़ सकते। भारत चीन संबंधों का दूसरा पक्ष यह भी है कि चीनी घुसपैठ भारत में अनवरत जारी है ताजा मामले में इसने पोंगोग झील के जरिये भारत में घुसने की कोशिश की। चीन ने अरूणाचल प्रदेश को अपने नक्शे में दिखाया। शी जिनपिंग की मात्रा के दौरान ही चीनी सेना के भारत में घुसपैठ ने कई सवाल खड़े कर दिए है। चीन ने भारतीय सीमा से होकर पाकिस्तान जाने के लिए रेल लाइन बिछाने की तैयारी प्रारंभ कर दी है। पँचशील सिद्धांतों की 60वीं वर्षगांठ पर चीनी सेना की घुसपैठ कई प्रश्न खड़े कर रही है। अप्रैल 2013 में चीनी सैनिक लद्दाख में डटे रहे। सितंबर 2014 से लगातार चीनी सैनिकों के द्वारा देमचौक और चुमार क्षेत्र में गतिरोध जारी है।

भारत चीन के मध्य वर्तमान समझौते– सितंबर 2014 में शी जिनपिंग ने भारत की यात्रा की इस यात्रा के दौरान दोनों देशों के मध्य नए संबंधों को आयाम मिला। भारत व चीन के मध्य कई समझौते हुए इनमें प्रमुख रूप से **गुजरात का विकास**–इस हेतु ग्वागडोंगकांक व गुजरात के विकास में सिस्टर सिटी ग्वांगडोंग की राजस्थानी ग्वांगझू की तर्जपर अहमदाबाद को विकसित किया जायेगा इस हेतु दोनों के मध्य समझौते पर हस्ताक्षर हुए। **औधोगिक पार्क** – गुजरात औधोगिक विकास निगम एवं चाइना डेवलपमेंट बैंक के बीच हुए समझौते के तहत बड़ोदरा के पास औधोगिक पार्क विकसित किया जाएगा।

द्विपक्षीय कारोबार –दोनों राष्ट्रों के मध्य द्विपक्षीय कारोबार के लिए समझौता हुआ इससे आपसी व्यापार को बढ़ाने में गति मिलेगी। **रेल्वे में चीनी मदद–** चीन भारत में रेल सुविधाओ के विस्तार के लिए भारत की मदद करेगा, भारत को 6000 अरब रुपये की मदद करेगा।

रेल्वे यूनिवर्सिटी की स्थापना– भारतीय रेल्वे चीन के सहयोग से रेल्वे यूनिवर्सिटी स्थापित करेगा। मई 2015 में मोदी की चीनी यात्रा के दौरान कई समझौते हुए इसमें प्रमुख रूप से 10 अरब डालर (63 हजार करोड़ रुपय) के 24 समझौते हुए इनमें विदेश नीति और कूटनीति के क्षेत्र में 8, आर्थिक क्षेत्र में 5, विज्ञान के क्षेत्र में 5, शैक्षणिक क्षेत्र में 3, रोजगार के क्षेत्र में 2, सूचना तकनीकि के क्षेत्र में 01, तथा पर्यावरण के क्षेत्र 01, समझौता हुआ। भारत व चीन के मध्य पाँच शहरों को सिस्टर सिटी के रूप में विकसित करने का समझौता हुआ इसके साथ ही नाथुला से मनसरोवर तक नया रास्ता खोलने पर सहमति जताई गई।

टास्कफोर्स का गठन– दोनों देश व्यापारिक संतुलन स्थापित करने के लिए एक नया टास्कफोर्स बनायेंगे दोनों के मध्य हुए समझौते के तहत सीमा पर शांति स्थापित करने हेतु हर माह बैठके आयोजित करने पर सहमति व्यक्त की गई।

शिखर सम्मेलन– मोदी की चीनी यात्रा के दौरान दोनों देशों के मध्य शिखर सम्मेलन हुआ जिसमें जिन प्रमुख मुद्दो पर चर्चा हुई उनमें सीमा संबंधी मुद्दे, संपर्क संबंधी मुद्दे, आतंकवाद के मुकाबले हेतु सहयोग मजबुत करने पर बल, शांति बनाये रखने की बात, व्यापार घाटा दूर किये जाने पर चर्चा, निवेश के अनुकूल माहौल बनाऐ जाने पर चर्चा, सीमा व नदियों पर चर्चा साझा करने का निर्णय, संयुक्त राष्ट्र परिषद में सुधार हेतु सुझाव तथा एनएसपी. में भारत की सदस्यता का मुद्दा आदि प्रमुख रहें।

घुसपैठ एवं सीमा विवाद की वर्तमान स्थिति– चीन ने लद्दाख में ही घुसपैठ नहीं की वरन उसने भारत को घेरने के लिए हिन्दमहासागर में एक परमाणु पनडुब्बी और युद्धपोत भी भेजे। वास्तव में चीन श्रीलंका से नजदीकि बड़ा रहा है वह श्रीलंका की नौसेनिक परियोजनाओं में भारी निवेश कर रहा है। तमिल विद्रोहियो के खिलाफ भी श्रीलंका सेना की कार्यवाही के समय चीनी सेना ने श्रीलंका की घेराबंदी कर रखी थी ताकि विद्रोही देश छोड़कर न भाग सके।

चीनी घुसपैठ रोकने हेतु भारत के नवीन प्रयास– चीनी सेना से मुकाबला करने के लिए चीन से लगी 3488 किलोमीटर लंबी सीमा पर भारत तिब्बत सीमा पुलिस (आई.टी.बी.पी.) के 12000 जवान तैयार किए जाने की योजना है। अरूणाचल प्रदेश की सीमा पर 54 नई चौकियाँ बनाई जाएगी। इनके लिए 12 नई बटालियनों की भर्ती की जाएगी। नई चौकियाँ स्थापित करने की घोषणा सरकार ने की सरकार ने चीनी घुसपैठ को अतिक्रमण करार दिया है। चीन ने अभी तक वर्ष 2015 में 334 बार अतिक्रमण किया। इनका मुकाबला करने के लिए आई टी बी पी तैयार है। आईटीबीटी के पास अभी 62 बटालियन है इनमें से 58 भारत चीन सीमा पर तैनात है शेष चार बटालियन नक्सल प्रभावी इलाकों में हैं।

भारत चीन के मध्य व्यवसायिक संबंध – एशिया के सबसे बड़े औद्योगिक राष्ट्र चीन को यह ज्ञात है कि उसके उत्पाद खरीदने के लिए सबसे बड़ा राष्ट्र भारत ही है। भारत चीन के मध्य व्यवसायिक संबंध पुराने है वर्तमान में चीन ने खुनजॉ बाजार को अपना केन्द्र बनाया है यहॉ से चीन का मोबाइल और चीन निर्मित मोटर साइकिल तक खरीदी जा सकती है। दोनों देशों के मध्य 72 अरब रुपये का सालाना व्यापार है चीन को 12 अरब रुपये का माल भेजते है और 60 अरब रुपये का माल मंगाते है। यहाँ यह उम्मीद की जा रही है कि दोनों देशों के नवीन संबंधों के कारण भारत व चीन का व्यापार 100 अरब डालर तक पहुँच जाएगा यह उम्मीद वर्ष 2015 के लिए लगाई जा रही है भारत और चीन के मध्य द्विपक्षीय व्यापार विश्व के किसी भी देशों के बीच

सबसे अधिक है वर्तमान में चीन का विदेशी मुद्रा भण्डार 3948.55 अरब डालर है जबकि भारत का 317.31 अरब डालर है। हम चीन से 309, 234.96 अरब का आयात करते जबकि चीन को 90561.09 अरब डालर का निर्यात करते हैं यानि व्यापार संतुलन 218673.87 है।

भारत चीन संबंधों में प्रमुख बाधाएँ– भारत एवं चीन के मध्य संबंध सौहाद्र नहीं होने का प्रमुख कारण है भारतीय सीमा पर चीनी धुसपैठ, भारत के क्षेत्र को चीन द्धारा अपने नक्शे में दिखाया जाना, भारत के गलत नक्शे प्रकाशित करना, हिन्दमहासागर क्षेत्र को सामरिक केन्द्र के रूप में स्थापित करना, श्रीलंका, पाकिस्तान, बांग्लादेश, तिब्बत, भूटान एवं नेपाल जैसे राष्ट्रों को भारत के विरूध सामरिक मदद करके भारत के लिए विपरित परिस्थितियाँ निर्मित करना भारत चीन विवाद के प्रमुख कारण है।

भारत चीन संबंध सुधारने के उपाय– भारत को चीन से संबंध अच्छे बनाए रखने के लिए भारतीय सीमा में चीन के द्धारा किए जा रहे सामरिक हस्तक्षेप का प्रबलता से विरोध करना चाहिए, भारत को भी अपने सामरिक हितों को नजर में रखते हुए कठोर नीति का निमार्ण करना चाहिए। भारत को यह भी समझना चाहिए कि चीन निवेश का लालीपाप दिखाकर कहीं भारत के सामरिक हितों को प्रभावित तो नहीं करना चाहता है। भारत को तनाव पैदा करने वाले मुद्दों पर स्पष्टता लानी होगी, भारत को यह तथ्य समझना चाहिए कि चीन भारत में 20 अरब डालर का निवेश कर रहा है जबकि पाकिस्तान में 50 लाख डालर का । हमें यह भी समझना होगा की चीन आर्थिक मोर्चे पर भारत का उपयोग करना चाहता है जबकि सामरिक मोर्चे पर वह पाक को मजबूत कर रहा है। हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिए वैश्विक जी.डी.पी. की ग्रोथ धीमी है। ऐसे में चीन को भारत का बाजार हर हाल में चाहिए।

निष्कर्ष– चीन तेजी से बढ़ता देश है। भारत उसकी अर्थव्यवस्था और सामरिक शक्ति के मुकाबले काफी पीछे है। चीन की यह धौस बार–बार नजर भी आती है पर भारत को जल्द से जल्द उसके खिलाफ संतुलन स्थापित करना चाहिए। चीन को काउंटर बेलेंस करने के लिए हमें सबसे पहले अर्थव्यवस्था विकसित करनी होगी। सामरिक मोर्चे पर हमारी जो खामियाँ है उन्हें हमें खत्म करना होगा। हमें सेना से आधुनीकिकरण एवं सीमा को मजबूत करने के लिए गंभीरता से कार्य करने होंगे। हमने अभी तक अपना सैन्य ढ़ाचा पूरी तरह मजबूत नहीं किया है। हमें सामरिक क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनना होगा। भारत के मुकाबले चीनी अर्थव्यवस्था चार गुनी है हमें इस खाई को पाटना होगा चीन का फाइनेंशियल निजर्व 38 ट्रिलियन डालर है जबकि भारत का केवल 320 अरब डालर अर्थात चीन से मुकाबला करना आसान नहीं है। न तो आर्थिक मोर्चे पर और न ही सामरिक मोर्चे पर । हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि हम जापान या अमेरिका से रिश्ते बढ़ाएगें तो चीन की ओर से खतरा बढ़ने का अंदेशा हैं निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि भारत अपनी ताकत बढ़ा कर ही चीनी खतरे को कम कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुरूस्वामी मोहन एण्ड जोरावर दौलतसिंह, इंडिया चाइना रिलेशंस : द बार्डर इशु एण्ड बियांड, वीना बुक्स, न्यू देहली 2009
2. दीपक डॉ.बी.आर.एण्ड त्रिपाठी डीपी़, इंडिया चाइना रिलेशंस फ्यूचर पर्सपेक्टिव, हार्डबाउंड 2012
3. इंडिया चाइना रिलेशंस : ए न्यू पेराडाइज, इंस्टीट्यूट फार डिफेंस, न्यू देहली 2012
4. राव निरूपमा, द पॉलिटिक्स ऑफ हिस्टोरी : इंडिया एण्ड चाइना
5. भूटानी सुदर्शन, चाइना इंडिया रिलेशंस, सेंटर ऑन ऐशिया एण्ड ग्लोबलाइजेशन।
6. इंडिया एण्ड चाइना : 50 इयर्स आफटर, इंस्टीट्यूट फार डिफेंस स्टेडीस, रोली 2009
7. फ्रांसिस आर फ्रेंकलीन एण्ड हैरी हार्डिंग, द इंडिया चाइना रिलेशनशिप।

****

पंचायती राज व्यवस्था-आवश्यकता, महत्व, समस्या व सुझाव

डॉ. जी. एस. ध्रुवे *

प्रस्तावना – भारत जैसे देश में जहाँ 80 प्रतिशत् जनसंख्या गांवों में बसती है, वहां पंचायती राज के नाम से प्रसिद्ध ग्रामीण स्थानीय शासन का महत्व स्वत: सिद्ध है। पंचायत भारत के प्राचीनतम राजनीतिक संस्थाओं में से एक मानी जाती है। 2 अक्टूबर 1952 को सामुदायिक विकास कार्यक्रम के शुभारंभ के साथ ही इस योजना का प्रारंभ माना जाता है। 2 अक्टूबर का दिन गांधी जी की जन्म तिथि होने के कारण चुना गया है। गांधीजी ग्रामों के हितों को सर्वाधिक महत्व प्रदान करते थे। वे ग्रामीण जीवन का पुनर्निर्माण ग्राम पंचायतों की पुन: स्थापना से संभव मानते थे। भारत के संविधान निर्माता भी इस तथ्य से भली भांति परिचित थे अत: हमारी स्वाधीनता को साकार करने और उसे स्थायी बनाने के लिए ग्रामीण शासन व्यवस्था की ओर पर्याप्त ध्यान दिया गया। हमारे संविधान में यह निर्देश दिया गया है कि राज्य ग्राम पंचायतो के निर्माण के लिये कदम उठाएगा और उन्हें इतनी शक्ति और अधिकार प्रदान करेगा कि वे (ग्राम पंचायते) स्वशासन की इकाई के रूप में कार्य कर सके।

गांधी जी ने ठीक ही कहा था :– यदि गांव नष्ट होते है तो भारत भी नष्ट हो जायेगा। वह भारत भी नहीं होगा विश्व में उसका संदेश समाप्त हो जाएगा।

हमारा जनतंत्र इस बुनियादी धारणा पर आधारित है कि शासन के प्रत्येक स्तर पर जनता अधिक से अधिक शासन कार्यो में हाथ बटाये और अपने पर शासन करने का उत्तरदायित्व स्वयं प्राप्त करे। दूसरे शब्दों में ग्रामीण भारत के लिये पंचायती राज ही एक मात्र उपयुक्त योजना है। पंचायतें ही हमारे राष्ट्रीय जीवन की रीढ़ है। जिसमें गणतंत्र के समस्त गुण पाये जाते है। प्रजातंत्र की सार्थकता विकेन्द्रीकरण में है। यदि शक्तियाँ विकेन्द्रीकृत हो तो जनता की सहभागिता में वृद्धि होगी और स्थानीय समस्याओं का समाधान स्थानीय स्तर पर हो जावेगा। स्थानीय लोगों को अपने आसपास की समस्याओं का ज्ञान तो होता ही है, उसका समाधान भी अच्छी तरह से कर सकेगें। भारतीय संविधान में किया गया 73वां संशोधन इस दिशा में एक सार्थक प्रयास है। लेकिन इसे सरकारी कार्यक्रम की तरह चलाया गया, परिणामस्वरूप यह योजना जनता को आकर्षित नहीं कर सकी। अतएव 1957 में बलवन्त राय मेहता अध्ययन दल बनाया गया। मेहता समिति ने जनभागी सहभागिता में वृद्धि के लिये लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना प्रस्तुत की इस योजना को 2 अक्टूबर 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में पं. नेहरू ने उद्घाटित किया।

वर्तमान युग में प्रशासकीय जटिलतायें इतनी अधिक बढ़ी है कि प्रशासकीय कार्यो का एक ही स्थान पर होना संभव नहीं है। विकेन्द्रीकरण सत्ता शक्ति और उत्तरदायित्व को इस आधार पर विभाजित किया गया है कि मुख्यालय एवं क्षेत्रीय इकाईयों को समन्वित इकाइयों की तरह कार्य करने का सहज अवसर मिलता है। जो दोष हम केन्द्रीय व्यवस्था में पाते है उनसे स्वत: मुक्ति मिल जाती है। नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य में विकास की असीम संभावनाऐं लिऐ 01 नवम्बर 2000 को 26वें राज्य के रूप में अस्तित्व में आया। चूंकि पिछड़े राज्यों की श्रेणी में रहने के कारण पंचायती राज व्यवस्था अधिक कारगर है। लेकिन नक्सली समस्या व नौकरशाहो की अहम् प्रवृत्ति के कारण पंचायती राज व्यवस्था को उतनी कारगर सफलता नहीं मिली जितना मिलना चाहिए थी।

1985 में डॉ. जी.वी. के. राव की अध्यक्षता में नियुक्त समिति ने नीति नियोजन और कार्यक्रम क्रियान्वयन के आधार पर बनाने और पंचायती राज संस्थाओं में नियमित चुनाव कराने की सिफरिश की। 1987 में पंचायती राज संस्थाओं की समीक्षा और उनमें सुधार के उपायो हेतु सुझाव देने के लिए डॉ. लक्ष्मीकांत सिंघवी की अध्यक्षता में नियुक्त समिति ने ग्राम पंचायतों को आत्मनिर्भर बनाने के लिये उन्हें अधिक आर्थिक संसाधन प्रदान करने की सिफारिश की थी। मई 1989 में राजीव गांधी सरकार द्वारा प्रचलित राज प्रणाली की अपर्याप्तताओं को दूर करने के लिए 64वां संशोधन विधेयक लोकसभा में विचारार्थ प्रस्तुत किया गया, जो पारित हो सकता था, लेकिन आज व्यवस्था से जुड़ी अन्य सभी संस्थाओं राजनीतिक दलों की जो बाह्य दुर्दशा एवं धीमामस्ती है, वहीं पंचायतों में भी पाई जाती है। निहित स्वार्थी सत्ता के दलाल कुर्सी के भूखे, राजनीति के अराजक उदण्ड चमचे ही सक्रिय है। इस कारण पंचायत चुनावों के समय ही मारधाड़ हत्या, लूट तथा व सारे हथकण्डे सामने आने–जाने लगते है। जो सत्ता के संबंध रखने वाले अन्य बड़े संकायों के अवसर पर हुआ करते है। समर्थ प्रबल गुण्डातत्व ही आम ग्रामीणो को डरा धमकाकर पंच, सरपंच आदि सभी कुछ चुने जाते है। इस चुने हुये प्रतिनिधियों में जिसका बहुमत अधिक होता है। वे चरागाहों तथा ग्राम पंचायतें की भूमियों तक को स्वयं चट कर जाते है। न्याय के नाम पर मगरमच्छ व भेड़िया न्याय होता हैं आज भी पंचायतें विभिन्न हथकण्डों की गुण्डागर्दी का शिकार हो रहीं है। अत: इस व्यवस्था को बनाये रखने के लिए इन समस्याओं से उसे परे उठाना है। जिससे ग्रामीण जनता तथा गांवों का पंचायत विकास कर अपने उद्देश्य में फलीभूत हो सके।

आवश्यकता और महत्व – प्राचीन काल से ही ग्राम पंचायतें ग्रामीण प्रशासन का महत्वपूर्ण अंग रही है। वस्तुत: पंचायतीराज प्रणाली एक ऐसी प्रणाली है, जिसमें हमें लोकतंत्र का सही ढांचा दिखाई देता है। मगर वर्तमान पंचायत संस्थाऐं इस मायने में कई महत्वपूर्ण अधिकार साधन और उत्तरदायित्व सौपे गये है। स्वाधीनता से पहले और उसके बाद भी इस बात के लिए आंदोलन होता रहा कि अगर हमें सच्चे अर्थो में अपने गांवों में स्वराज्य पहुंचाना है तो उसके लिए पंचायती राज की स्थापना करनी होगी, इनका महत्व और उपयोगिता निम्नलिखित बातों से स्पष्ट है –

पंचायती राज व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है, जो केन्द्रिय एवं राज्य सरकारों को स्थानीय समस्याओं के भार से हल्का करती है। उनके द्वारा ही शासकीय शक्तियों एवं कार्यो का विकेन्द्रीकरण किया जा सकता है। प्राजातांत्रिक प्रणाली में कार्यो का विकेन्द्रीकरण करने पर इस प्रक्रिया में शासकीय सत्ता गिनी चुनी संख्याओं में न रखकर गांव की पंचायत के कार्यकर्ताओं के हाथों में पहुँच जाती है जिससे कि इनके अधिकार और कार्य

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, पथरिया, मुंगेली (छ.ग.) भारत

क्षेत्र बढ़ जाते है। स्थानीय व्यक्ति स्थानीय समस्याओं को अच्छे ढंग से सुलझा सकते है, क्योंकि वे लोग वहाँ की समस्या एवं परिस्थितियों को अधिक अच्छे से जानते है। इन स्थानीय पदाधिकारियों के बिना ऊपर से प्रारंभ किये हुए राष्ट्र निर्माण के क्रियाकलापों का सुचारूपूर्ण ढंग से चलना भी मुश्किल हो जाता है। इस प्रकार ग्राम पंचायत स्वस्थ्य प्रजातांत्रिक परम्पराओं को स्थापित करने के लिए ठोस आधार प्रदान करती है, शासन सत्ता ग्रामवासियों के हाथ में चली जाने से प्रजातांत्रिक संगठनों। प्रति उनकी रूचि जागृत होती है। पंचायती राज व्यवस्था के स्थापित होने से यह संख्या ग्राम व देश के लिए भावी नेतृत्व तैयार करती है। विधायकों तथा मंत्रियों को प्राथमिक अनुभव एवं प्रशिक्षण प्रदान करती है। जिससे वे ग्रामीण भारत की समस्या से अवगत हो। इस प्रकार गांवों में उचित नेतृत्व की निर्माण करने एवं विकास कार्यो में जनता की रूचि बढ़ाने में पंचायतों का प्रभावी योगदान रहता है।

पंचायतें प्रजातंत्र की प्रयोगशाला है। यह नागरिकों को अपने राजनीतिक अधिकारों के प्रयोग की शिक्षा देती है। साथ ही उनमें नागरिक गुणों का विकास करने में मदद करती है। पं. नेहरू ने स्वयं कहा था कि 'मैं पंचायती राज के प्रति पूर्णत: आशान्वित हूँ मैं महसूस करता हूँ कि भारत के संदर्भ में यह बहुत कुछ भौतिक एवं क्रांतिकारी है। प्रो. रजनी कोठारी के अनुसार:– 'इन संस्थाओं ने नये स्थानीय नेताओं को जन्म दिया है जो आगे चलकर राज्य और केन्द्रीय सभाओं के निर्वाचित प्रतिनिधियों से अधिक शक्तिशाली हो सकते है। इस प्रकार इन संस्थाओं ने देश के राजनीतिक आधुनिकीकरण और सामाजीकरण में महत्वूपर्ण भूमिका का निर्वाह किया है तथा हमारी राजनीतिक व्यवस्था में जन हिस्सेदारी में कृषि करके गांवों में जागरूकता उत्पन्न कर दी है।

समस्या – यद्यपि पंचायती राज व्यवस्था विभिन्न कारणों से ग्रामीण जनता में नई आशा और विश्वास पैदा करने में असफल रही है तथापि कुछ मायनों में यह संस्था अवश्य सफल रही है। वस्तुत: जब तक ग्रामीणों में चेतना नहीं आती तब तक ये संस्थाऐं सफल नहीं हो सकती। इसके समक्ष कुछ नई समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं। जिसका निराकरण करना आवश्यक है –

1. अशिक्षा और ग्रामीणों की निर्धनता की विकट समस्या विकराल रूप धारण कर चूकी है। ऐसी स्थिति में ग्रामीण समुदाय व नेतृत्व अपने संकीर्ण स्तरों से ऊपर उठ नहीं पाते हैं। ऐसी स्थिति में ग्रामीण व्यक्ति पंचायती राज की आवश्यता और महत्व के बारे में अज्ञानतावश और अपनी निर्धनता के कारण कुछ भी नहीं कर पाते है।
2. पंचायती राज की सफलता में दलगत राजनीति भी विशेष रूकावट रही है। पंचायतें स्थानीय राजनीति का अखाड़ा बनती जा रही हैं। यही हमारे राजनीतिक दल पंचायतों के चुनावों में हस्तक्षेप करना बंद कर दें तो पंचायतों को दूषित राजनीति से बचाया जा सकता है। लोकतंत्र की सफलता की पहली शर्त सत्ता का स्थानीय संस्थाओं को हस्तांतरण करना है। यह तभी संभव है जब राजनीतिक प्रेरणा नीचे के स्तरों से शुरू हो और उच्च स्तर केवल मार्ग निर्देशन का कार्य करें। राज्य सरकारे इन संस्थाओं को हस्तांतरण करना है। यह तभी संभव है जब राजनीतिक प्रेरणा नीचे के स्तरों से शुरू हो और उच्च स्तर केवल मार्ग निर्देशन का कार्य करें। राज्य सरकारे इन संस्थाओं को अपने आदेशों का पालन करने वाला ऐजेन्ट मात्र न समझे। इसके लिए नौकरशाही की मनोवृत्ति में भी परिवर्तन की आवश्यता है।
3. संस्थाओं में आर्थिक स्त्रोत की कमी इन्हें शासकीय अनुदान पर ही जीवित रहना पड़ता है। अत: पंचायती राज संस्थाओं के संचालन के लिए आय के पर्याप्त एवं स्वतंत्र स्त्रोत प्रदान किये जाने चाहिए ताकि उनकी आर्थिक स्थिति सुदृंढ़ बन सके।
4. राजनीतिक जागरूकता की कमी भी एक महत्वपूर्ण समस्या है जो पंचायती राज समस्याओं की सफलता में रूकावट बनती हैं।
5. स्थानीय निकायों पर स्थानीय, सांसदों, मंत्रियों और प्रभावशाली नेताओं के घरानों एवं रिश्तेदारों का कब्जा हो रहा है।
6. स्थानीय निकायों पर संगठित माफियाँ और अपराधियों का कब्जा हो रहा है।
7. महिला आरक्षण अर्थहीन हो गया है, क्योंकि सरपंच या प्रधान पति नामक एक नवीन प्रजाति का उदय हुआ है।
8. वैमनस्यता में वृद्धि हुई है।
9. स्थानीय निकायों के सदस्य स्वस्थ योजनाओं के बजाय अधिकतम निर्माण कार्यो में रूचि लेते हैं, पंचायतों के अधिकांश ठेकेदार स्वयं पार्षद या उनके रिश्तेदार हैं।
10. छत्तीसगढ़ के अधिकांश पंचायत प्रतिनिधियों पर भ्रष्टाचार एवं गबन के मामले दर्ज हुए हैं।

इस प्रकर स्पष्ट है कि दूषित राजनीतिक संस्कृति के कारण पंचायती राज का क्रियान्वयन संतोषजनक नहीं है।

सुझाव – लोकतंत्र की सार्थकता तभी है जब देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था गांवों से लेकर संसद तक प्रत्येक स्तर पर जनता के प्रतिनिधियों की अधिकतम भागीदारी हो। भारत में गांव आर्थिक समृद्धि के प्रतीक हैं। अत: देश तभी समृद्ध हो सकता है जबकि इसकी आत्मा के रूप में गांवों की प्रगति हो और गांवों का सर्वांगीण विकास पंचायतों की सफलता के द्वारा ही संभव है।

1. आज जरूरत इस बात की है कि योजनाओं के बेहतर समन्वय और क्रियान्वयन पर ध्यान दिया जाये। निगरानी तंत्र को मजबूत बनाया जाय और भ्रष्टाचार पर लगाम लगाने सख्त कार्यवाही की जाये।
2. पूरा प्रशासनिक ढांचा निहित स्वार्थ के कब्जे में है।
3. आवश्यकता इस बात की है कि ग्राम पंचायती व्यवस्था के नाम पर राजनीति के केन्द्र ना बन जाय यदि ऐसा होता है तो पंचायतीराज व्यवस्था की जड़े हिल जायेगी और सच्चे लोकतंत्र की आधार शिला ढह जायेगी।

निष्कर्ष – किसी भी देश, प्रदेश या गांव में पंचायती राज व्यवस्था तभी कारगर हो सकती है जब उसके क्रियाकलापों को दलगत राजनीति से दूर रखा जाय यह भी सच है कि पंचायतीराज लोकतंत्र का यंत्र भी है। अत: पंचायतीराज संस्थाओं में व्याप्त गुटबन्दी को समाप्त करना भी इनके हित में ही होगा। पंचायतों के चुनावों के वित्तिय हालत में भी सुधार अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक अधिकारियों का भी पंचायतों के मित्र, सहयोगी और पथ प्रदर्शक के रूप में कार्य करना चाहिये। पंचायतीराज व्यवस्था को आम जनता और सरकार के बीच सेतु का काम करना चाहिए। आम जनता की भावना की अवज्ञा करके कोई भी देश लोकतंत्र की सफलता का दावा नहीं कर सकता।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. अग्रवाल जी.के.(1976) भारतीय सामाजिक संस्थायें: एस बीपीडी पब्लिशिंग, आगरा।
2. ग्रप्ता एम.एल.तथा शर्मा, डी.डी.(1989) सामाजिक संरचना एवं सामाजिक परिवर्तन; आगरा।
3. जोशी, ओम प्रकाश (डॉ.) (1974) ग्रामीण एवं नगरीय समाजशास्त्र; दिल्ली।
4. मुखर्जी रविन्द्रनाथ, (1989) भारतीय समाज एवं संस्कृति ; दिल्ली।
5. विद्यामातंण्ड, सत्यव्रत (प्रो) भारत की जनजाति तथा संस्थायें, देहरादून।

न्यायिक सक्रियता एवं लोकहित संरक्षण

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – भारत का संविधान कल्याणकारी लोकतन्त्र की स्थापना करता है, कल्याणकारी राज्य नागरिको के जीवन के प्रत्येक पक्ष के प्रति सहज संवेदनशील होता है, यह जनकल्याण की भावना से प्रेरित होकर ही अपनी नीतियां निर्धारित व क्रियान्वित करता है। कल्याणकारी राज्य में व्यवस्थापिका व कार्यपालिका की भूमिका जहां अपने नागरिको व समाज के प्रति समर्पण भाव से सेवा की होती है, वहां न्यायपालिका की भूमिका भी उनके अधिकारो के लिये एक अति सजग प्रहरी की होती है। उसे यह सुनिश्चित करना होता है कि संविधान के द्वारा निर्धारित कल्याणकारी आदेशो का सत्ता पक्ष द्वारा ठीक से क्रियान्वयन हो रहा है अथवा नहीं। इसके लिये न्यायपालिका न्यायिक सक्रियता के माध्यम से संविधान की रक्षक के रूप में, जनता के अधिकारो की लड़ाई में स्वयं एवं पक्ष बनकर उपस्थित होती है।

न्यायिक सक्रियता का यह लोकहित में विधि के शासन के लिये तथा संविधान की मूल भावना के संरक्षण का असामान्य अपरम्परागत, किन्तु प्रभावी एवं सकारात्मक प्रयास है। यह वास्तव में, एक सक्रिय कर्तव्यपरायण न्यायपालिका का कल्याणकारी लोकतन्त्र राज्य की अवधारणा के लिये अपने संवैधनिक दायित्वों के निर्वाह का एक व्यवहारिक किन्तु अपरम्परागत प्रयत्न है। यह विधि के अनुरूप न्याय करने हेतु प्रतिबद्ध न्यायापालिका का अपनी निर्धारित सीमाओं का एक ऐसा उल्लंघन है, जो लोकहित के प्रति निर्दिष्ट होने के मात्र कारण के आधार पर ही सर्वमान्य एवं औचित्यपूर्ण स्वीकार कर लिया गया है।

न्यायिक सक्रियता न्यायिक पूनर्विलोकन का ही एक विस्तारित रूप है, भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री पी.एन. भगवती ने न्यायिक सक्रियता के संदर्भ में कहा है, कि जिन व्यवस्थाओं में न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार है,उनमें न्यायिक सक्रियता कहीं तकनीकी स्तर की होती है, और कहीं सामाजिक सक्रियता के रूप में ।

न्यायमूर्ति श्री वी.आर. कृष्ण अय्यर के अनुसार न्यायालयों का सक्रिय होना यह स्पष्ट करता है कि कार्यपालिका अपने प्रशासनिक दायित्वों के निर्वहन में असफल रही है, तभी न्यायालयों को उसे निर्देश देने की आवश्यकता हुई है। इस स्थिति को न्यायिक सक्रियता कहा जाता है।
भारत में न्यायालय विगत कई वर्षो से अपने विधिक अधिकारों की सीमा में ही कार्य करते रहे है । जब से देश में आर्थिक और सामाजिक अधिकारों तथा सुधारों के संबंध में, संविधान के निर्देशों के अनुरूप, कार्यपालिका के कर्तव्यों में विस्तार हुआ है, तब से सुधारों के प्रकरणों में शासन की उदासीनता, उपेक्षा, पक्षपात, अवहेलना के कारण नागरिको के मूल अधिकारो के हनन के प्रकरण सामने आये तब न्यायपालिका ने संविधान के निर्देशों के अनुपालन में अपनी भूमिका का निर्वाह किया यही न्यायिक सक्रियता है।

जनहित याचिकाओं की सुनवाई को लोक कल्याण के संदर्भ में महत्व देकर सुनवाई के लिये स्वीकृत करने की परम्परा के द्वारा न्यायालय ने अपने दरवाजे आम आदमियों के लिये खोल दिये। न्यायपालिका ने जनहित में अपनी सक्रिय भूमिका जहां से शुभारंभ किया था, उसी का अगला चरण न्यायिक सक्रियता है, जिसमें न्यायालय स्वयं कार्यपालिका तथा व्यवस्थापिका से जवाब मांगती है । इसके साथ ही न्यायालय की भूमिका में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है । केशवानन्द भारतीय बनाम केरल राज्य 1973 के मामले में न्यायालय ने संसद को निर्देश दिया था कि वह संविधान में संशोधन नहीं कर सकती ।

न्यायपालिका की सक्रियता का महत्वपूर्ण आधार जनहित रहा है । संविधान के प्रवर्तन के बाद प्रशासन तंत्र ने अपने को प्राप्त अधिकारों की बहुलता के कारण, स्वच्छन्दतापूर्वक ऐसे कानून बनाये जिनमें प्रशासको व राजनीतिज्ञों की स्वेच्छाचारिता में वृद्धि होती गई। इन कानूनो के अन्तर्गत सत्ता पक्ष की मनमानी कार्यवाहियों के विरूद्ध जनहित याचिकाओं द्वारा न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 32 के आधीन, सन 1979 में सर्वप्रथम मुख्य न्यायमूर्ति श्री विष्णु चन्द्र चुड़ ने सुनवाई की थी। बाद में न्यायमूर्ति श्री पी.एन. भगवती ने जनहित याचिकाओं को नई दिशा प्रदान की। इसके अन्तर्गत जनहित प्रकरणों में मुख्य न्यायाधीश को भेजे गये पत्रों को भी जनहित याचिकाओं के रूप में पंजीबद्ध किया गया। इसके साथ ही न्यायिक सक्रियता का नया युग प्रारंभ हुआ।

उच्चतम न्यायालय ने विगत वर्षो में राजनीतिक और सामाजिक महत्व के कई ऐसे निर्णय किये, जिनसे न्यायालय के प्रति यह धारणा समाप्त हो गई कि वह कभी कानूनी तथा तकनीकि शब्दों की व्याख्या तथा विधि संबंधि निर्णयों के अतिरिक्त कोई अन्य कार्य नहीं कर सकता है। न्यायिक सक्रियता से स्वाभाविक ही न्यायपालिका के प्रति, जन आस्था तथा विश्वास में वृद्धि हुई है।

निम्नलिखित प्रकरणों में न्यायालय की सक्रियता से दिये गये निर्णयों से भारतीय संविधान की मूल भावना की रक्षा हुई है। यह भी स्पष्ट हो गया कि हमारी न्यायपालिका संविधान के आदेशों के अनुपालन के लिये कृत संकल्पित है, वह शब्दो के साथ संविधान की सद्इच्छा का महत्व दती है।

उच्चतम न्यायालय ने देश में समान सिविल संहिता लागु करने के लिये 10 मई 1995 को आदेश दिया कि, संविधान के अनुच्छेद 11 का अनुपालन किया जावे।

उच्चतम न्यायालय ने नवम्बर 1995 को चिकित्सा सेवा को भी उपभोक्ता संरक्षण के आधीन घोषित कर चिकित्सक की लापरवाही को रोगी के प्रति क्षतिपूर्ति का हकदार बनाया।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

उच्चतम न्यायालय ने कार्यपालिका अधिकारियों को भी न्यायालय के निर्णय की अवमानना के लिये दण्डित करते हुए कर्नाटक के मुख्स सचिव तथा हरियाणा के एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को कारावास का दण्ड दिया।

उच्चतम न्यायालय ने यह भी निर्धारित किया की निजी नियन्त्रित निकायों की कार्यवाही से भी व्यक्ति के मूल अधिकार का जब उल्लंघन होता है, तो वह संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ में राज्य नहीं होने से दोष मुक्त नहीं माना जा सकेगा। उसके विरूद्ध कार्यवाही होगी।

अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत शिक्षा का अधिकार मूल अधिकार है, ऊँची केपेटेशन शुल्क वसूल कर किसी को शिक्षा से वंचित नहीं रखा जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया कि अनागरिक (विदेशी) को भी जीवन का अधिकार है। राज्य का कर्तव्य है इस संदर्भ में नागरिक तथा अनागरिक में भेद नहीं करें।

उच्च न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया की किसी व्यक्ति को उसकी सहमति के बिना रक्त परीक्षण कराने हेतु विवश करना व्यक्ति के जीवन तथा स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन होगा। वह अनुच्छेद 21 के उल्लंघन के अन्तर्गत है।

हवाला काण्ड, दूर संचार घोटाला, कोयला खान आंवटन, इलेक्ट्रानिक मामलों तथा विभिन्न भर्ती प्रकरणों में सरकार के एकाधिकार के कारण भ्रष्ट आचरण व सत्ता के दुरूपयोग को समाप्त करने के संदर्भ में न्यायालयों के विविध निर्णय ऐतिहासिक महत्व के है।

निर्वाचन आयोग को किसी दल की मान्यता समाप्त करने की शक्ति को वैध ठहराकर संवैधानिक निकायों की स्वायन्तता न्यायालय द्वारा बनाई रखी गई है।

राजनीति के अपराधीकरण पर बोहरा समिति की रिपोर्ट न्यायालय के समक्ष पेश करने का निर्णय, न्यायिक सक्रियता में वृद्धि का सूचक है, कार्यपालिका व व्यवस्थापिका को कठघरे में खड़ा किया गया है।

बिहार के उच्च न्यायालय ने अपने फैसलो में वहां के राज्य को जंगल राज्य की संज्ञा दी।

इन कतिपय उदाहरणों से सिद्ध होता है कि लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्थाओं में, न्यायपालिका की स्वतंत्रता में वृद्धि और न्यायिक निर्णयों की समाज द्वारा स्वीकृति आदर ओर विश्वास से ही नागरिकों के संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित हो सकती।

शासको की शक्ति दुरूपयोग की प्रवृति को रोकने के लिये संविधान द्वारा सामान्यत: तीन व्यवस्थाऐं की जाती है। प्रथम सत्ता की शक्तियों को संविधान द्वारा ही निर्धारित व सुनिश्चित कर दिया जाता है। दूसरे सत्ता शक्ति को दूसरी शक्ति द्वारा नियन्त्रित किया जाता है, अर्थात् शासन के सभी अंग एक दूसरे की शक्ति के दुरूपयोग पर अंकुश रखते है। तीसरे पृथक स्वतंत्र व निष्पक्ष न्यायपालिका की स्थापना की जाती है। यह व्यवस्था सत्ता के सभी अंगो के व्यवहार को शक्ति नियंत्रक के रूप में अपनी सीमा में आबद्ध करती है। उदारवादी लोकतंत्रीय सिद्धांतों में भी अति शक्तिशाली राज्य से, नागरिको के अधिकारो के संरक्षण के प्रति सदा विशेष ध्यान दिया गया है। अत: प्रजातंत्रीय राजनीतिक व्यवस्था में, सदैव न्यायपालिका की स्वतंत्रता में वृद्धि तथा न्यायिक प्रक्रिया की स्वतंत्रता व निष्पक्षता पर बहुत बल दिया जाता है। वस्तुत: कई राजनीतिक प्रणालियों में न्यायपालिका की स्वतंत्रता व निष्पक्षता को राजनीतिक स्थिरता का एक आवश्यक पहलू तक माना गया है। यह वैसे भी सरकार का तीसरा प्रमुख अंग है।

भारत में न्यायपालिका की सक्रियता से सरकार के कई बड़े घोटालों और भ्रष्टाचार के प्रकरण प्रकाश में आये है, इस कारण हमारे यहां न्यायालय के प्रति सामान्य जन के विश्वास में वृद्धि हुई है, जो देश के लोकतंत्र के लिये शुभ संकेत है। न्यायालय ने अपनी सक्रियता से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से राज्य की शेष सभी प्रशासनिक व संवैधानिक संस्थाओं को न केवल अपने कर्तव्यों के निर्वहन के लिये संविधान की सीमा में रहकर, कानून सम्मत रूप में कार्य करने का आदेश दिया है, वरन् इस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय यह तथ्य है कि भ्रष्टाचारियों तथा कानून का निर्लज्जतापूर्वक उल्लंघन कर निज स्वार्थ साधन करने वाले दबंगो, बाहुबलियों तथा राजनीतिक सामाजिक नेतृत्व को चाहे वह कितना भी प्रभावशाली व उच्च पदासीन हो, जेल की हवा खिला दी है।

न्यायपालिका की यह सक्रियता, विधि के शासन के प्रति उसका आग्रह तथा जनहित याचिकाओं के रूप में न्याय व्यवस्था का लोकव्यापीकरण एवं न्यायिक सक्रियता के रूप में न्यायपालिका द्वारा स्वत: अपने दायित्व का निर्वहन आदि क्रियाकलापों से यह विश्वास किया जा सकता है, कि हमारे लोकतंत्र में अब सत्ता व स्वार्थ की अंधलिप्सा से कुछ हद तक अवश्य मुक्ति मिलेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. परीक्षा मंथन : मंथन प्रकाशन, भाग-प्रथम संपादक अनिल अग्रवाल, सिविल लाइन्स इलाहाबाद (2002) पृ.. 16 - 17
2. प्रतियोगिता दर्पण : फरवरी 1997 : पृष्ठ 1180
3. कश्यप डॉ. सुभाष : राजनीतिक कोष : हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली - विश्वविद्यालय, दिल्ली 1988 पृष्ठ 205 - 209
4. सेबाईन जार्ज एच : राजनीतिक दर्शन का इतिहास : अनुवादक विश्वप्रकाश खण्ड प्रथम : एस. चन्द एण्ड कम्पनी (1964) पृष्ठ 65
5. सेबाईन जार्ज एच : राजनीतिक दर्शन का इतिहास : अनुवादक विश्वप्रकाश खण्ड प्रथम : एस. चन्द एण्ड कम्पनी (1964) पृष्ठ 88
6. परीक्षा मंथन : सम्पादक अनिल अग्रवाल-सिविल लाईन्स इलाहाबाद (2002) पृष्ठ 18
7. नागोरी जीतेश - न्यायापालिका की सक्रियता क्या संवैधानिक अतिक्रमण है। प्रतियोगिता दर्पण (1997) पृष्ठ 1180 - 1181

****

Women Empowerment : Role of Panchayati Raj Institution

Dr. Anita Sonwal *

Introduction - *Overall aim for presenting this paper is* ***"to politically empower the women through Panchayats Raj Institutions; and create an environment for greater transparency and accountability in the development process".*** Gender equality and gender equity are emerging as major challenges in the global development debate. Women's participation in political processes is important for strengthening democracy and for their struggle against marginalization, trivialization and oppression.

Constitutional provision (73rd Amendment) has created a scope for accomplishing development with social justice, which is the mandate of the new Panchayats Raj system. ***'Mahatma Gandhi also believed that full and balanced development of the nation and establishment of a just society is possible only when women participate actively and fully in the political deliberations of the nation.*** **The Balwant Rai Mehta Committee** on Panchayats Raj System emphasised that rural women should not become mere beneficiaries of development but should be made equal partners in its affairs as contributors.'

India is perhaps the first country to have taken concrete measures to draw women into leadership positions and thereby into politics by giving them one-third reservation in what may now be called the **third tier of governance the Panchayati Raj**. The constitutional amendment providing one-third representation to women in elected bodies as well as reserving one-third of the offices of chairpersons for them will have far reaching consequences in Indian political and social life.

Evolution of Panchayati Raj System in India - The Rig Veda, one of India's oldest sacred books and historical source mentions about the existence of village communities across the sub-continent that were self-governing and serving as the main interface between the predominantly agrarian village economies and their higher authorities. Such councils or assemblies called "sabhas" slowly assumed the form of the "Panchayat" (an assembly of five respected elders). These panchayats in north and south India became the pivot of administration, the focus of social solidarity and the principal forum for the dispensation of justice and resolution of local disputes.

Panchayats in Post-Independence India - Article 40 of the Constitution of India included village Panchayats in Part IV of the Constitution which contain the non-mandatory Directive Principles of State Policy. It reads as follows:

"The state shall take steps to organize village panchayats and endow them with such power and authority as may be necessary to enable them to function as units of self-government."

The Report of the Committee on Status of Women in India, 1974, reported that since1911, the condition of Indian women has worsened. Gender disparities were evident in employment, health, education and political participation. The new wave of decentralization in 1990's, through 73rd and 74th Constitutional Amendments gave 33.33% representation for women in local governments. This was seen as a road to political empowerment and gender equity. This gave opportunity for a large number of women to enter into local governments and to be a part of decision making body. **The Committee on the Status of Women, 1974,** recommended reservation for women in local governments. **Lotika Sarkar and Vina Mazumdar** in favor of the recommendation said that, ***equality of opportunities cannot be achieved in the face of the tremendous disabilities and obstacles which the social system imposes on all those sections that traditional India treated as second class citizens.*** Gender advocates argue that the extent that decentralization creates opportunities for women to exercise more control over design and provisions of services and the management of resources it may benefit. Good number of women competing with men in local politics, forwarding gender related agendas is looked as a way towards gender equity.

Women and Panchayati Raj - The entrance of elected women representatives (EWRs) into the grassroots polity through elections to the Panchayati Raj Institutions (PRIs) in massive numbers is a relatively new political phenomenon in India. **Article 243 D introduced through the 73rd Amendment to the Constitution reads as under -**

(1) Seats shall be reserved for –

(a) The Scheduled Castes; and

(b) The Scheduled Tribes,

Intervention of Women in Panchayati Raj: Madhya Pradesh (A Brief Case Study) - Even though it is well known fact that the condition of women in the state is far from satisfactory, the state government is fully determined to improve their standard of life. Government is also taking steps to open up all the opportunities to women so that are able to realize their potential. To draw a comprehensive picture of the situation of women in MP an array of temporal and spatial behavior of social indicators is used to bring in the cultural, social, political, environmental and developmental context

* **Asst. Professor, Govt. Madhav Arts and Commerce College, Ujjain (M.P.) INDIA**

of the region.

Quorum requirements for women in Gram Sabhas in Madhya Pradesh

State	Quorum	Quorum for Women	Mahila Gram Sabha	Any Oth -er	Up-Gram Sabha/ Ward Sabha
Madhya Pradesh	10%or50 members of Gram Sabha, whichever is Less. No quorum for adjourned meetings.	N A	NO		No, because the size of the Gram Sabha is Small.

Rotations of seats reserved for women - The provision for the rotation (between constituencies) of the reserved seats means that these change from one election to the next. This generally works to the detriment of women and their opportunity to craft a political career as even if they have performed effectively in their first term they are unable to reap the benefits of these achievements in the next election, when they are generally sidelined by men who are eager to come back to power.

For Madhya Pradesh it is as follows :

MADHYA PRADESH	Rotation after **EVERY 5** Years

Madhya Pradesh has been one of the first states to make amendments in the **Madhya Pradesh Panchayati Raj Act, 1993** in accordance with the 73rd and 74th Constitutional Amendment. It has provided reservations for women on 33 per cent of the total number of seats at each of the three tiers of the Panchayati Raj system.

The figures portend well for an emerging leadership amongst women as elected representatives. Many have suggested that active and genuine participation by the elected women representatives would depend more on their social status than on their level of education. It is hoped that women would gain acceptance in the political apparatus gradually and would become effective in due course owing to the enabling local governance structures that have been put in place as a result of the 73rd and 74th Amendments to the Indian Constitution.

Number of Panchayats and Elected Women Representatives in the Three Tiers of PRIs (as on 30/5/2014)

State	No: of State Panchayat of all three tiers	Total Re- present -atives	Women Re- present -atives Number	% of Women Represent -atives
M.P.	23412	396516	136196	34.3

Case of Kamla Devi - The first Panchayat we surveyed is in the pansara block of Ujjain district. The total population is around 5000, there are 390 houses and 470 families. The gram Panchayat (GP) is divided into 6 wards and has seven members. Three positions are reserved for SC's and one for ST. Out of the seven, 4 are women. The post of the gram pradhan was reserved for SC woman; consequently Kamla Devi was elected as the Pradhan.

Her father-in-law, an active member of a political party, was the gram pradhan in the earlier term and still accompanies her to the meetings of the gram Panchayat and though she does preside over the meetings of the GP she is unable to voice her opinion on issues and her opinion is not even asked for as all the policy decisions are taken by the male members of the GP which is effectively controlled by her father-in-law. She reiterates that she never felt the need to take any major decisions for whatever is done by the male members of the GP is in the best interests of the village community since they have much more experience and ultimately it is the male members who run from pillar to post in order to get the funds released, to hold parleys with the district officials when some bottleneck crops up tasks she cannot effectively accomplish as she is a woman.

When we questioned her as to whether she would contest the next elections even if the seat was unreserved, she responded that there would be no need for her to do so for the 'Babu', (her father-in-law) would be contesting the elections anyway.

Problems of Qualitative Women Participation - Prior to the reservation bill, statistics regarding women's participation in PRIs were significantly lower (between four and five percent). Today 33 per cent of candidates participating in the PRIs are women. 'In general, participation at local level can be viewed from two angles—quality and quantity. As far as the qualitative aspect is concerned, there are three levels of quality of participation: passive participation, active participation and decision-making participation.' To make women's participation in society and politics a reality, enormous work remains to be done, given their present socio-economic conditions.

Despite reservation for women, effective participation in PRIs has failed due to misuse and manipulation by the local power-brokers. Ignorance of women about their rights and procedures and about their potential and responsibilities has kept them far behind men in the local bodies.The family, community and the state (represented by the officials) have together created a situation wherein elected women representatives are facing many operational constraints while playing their roles and discharging their functions in the PRIs.

Women representatives have some individual weaknesses which include :

1. Illiteracy and low education levels of the majority of the women elected to the PRIs.
2. Overburdened with family responsibilities.
3. Introversion due to the lack of communication skills.
4. Poor socio-economic background with which the women have come into the system and poor capacity building.
5. Patriarchical system indirectly controls and directs their participation.'16
6. There are some other limitations regarding women's qualitative participation in PRIs:
7. Male family members and also leaders from the caste group/community come in the way of the affairs of the

Panchayats.

8. Indifferent attitude and behaviour of officials working in the system.
9. Misguidance by the local bureaucracy.
10. Apprehension of no-confidence motion by the other elected members of the system.

It is clear that mere reservation is not enough because a woman representative lacks qualitative participation due to both internal and external factors. Woman's empowerment is not something which can be handed over to women only. This is a process which involves sincerity, earnestness and capacity and capability on the part of both men and women. It is a challenging task in village India as even today she cannot take any independent decision. She feels subordinate to her husband and even to her son.

Some Recommendations which can effectively workout the aforesaid situation

1. Special adult literacy programmes for EWRs - Illiteracy is the most pertinent hurdle that prevents the entry of rural women into mainstream politics. The AC Nielsen ORG- MARGA study commissioned by the Ministry of Panchayati Raj among elected representatives of PRIs showed that about one fifth of them were illiterates. However, the gender gap was significant (women -24%; men 6%). The general educational attainment was up to middle school or above among elected representatives (48%). Pradhans had higher educational attainment than the Ward Members.

The educational background of EWRs (%) as per the study is as below:

EWRs	Illiterate	Up to primary school	Up to middle school	Middle school and higher
Female Pradhans	11.4	19.8	16.4	52.4
Female Ward Members	26.6	19.2	17.1	37.1

2. Women's Component Plan - The notion of Women's Component Plan (WCP) was adopted in the Ninth Plan. It earmarked a clear unconditional minimum quantum of funds/ benefits for women in the schemes run by all Ministries/ Departments that were perceived to be "women related" and recognized that prioritizing financial resources for programmes/schemes for women is critical for women's empowerment. WCP was a precursor to Gender Budgeting which is widely regarded as an approach to looking at the budget formulation process, budgetary policies, budget allocations and implementation from the gender lens.

However, in the absence of a separate allocation of budget for PRIs, there can be no incorporation of women's component plan. Hence, the Ministry of Panchayati Raj has been pursuing with the States to have provision for a Panchayat sector in their budgets.

3. Involvement of NGOs in strengthening PRIs - The Ministry of Panchayati Raj observed:

"The national capability building frame work prepared by the Ministry and recommended to the States for the training of Elected Panchayati Raj representatives and officials provides for campaigns at the Gram Sabha level in which NGOs and CBOs should be involved in a big way to motivate the people. Such campaigns can focus on important concerns of the people and Panchayats such as alcoholism, literacy, girls education, domestic violence, dowry, water and soil conservation, organic farming etc. through the performance of kala jatha nataks and evocative songs, with the objective of triggering collaboration and common action between Panchayats and the people on a daily basis, instead of only at the time of conduct of the Gram Sabha".

4. State Women's Policy - The state government of Madhya Pradesh has declared the new 'Women Policy-2008-12' for the state in August 2008. The policy tries to address various critical issues related to women in the state. It aims at ensuring total and dignified participation of women in the development process and integrating them with the mainstream development. Specific objectives of the policy include providing protection to women in every field, their empowerment and ensuring result-oriented implementation of the various policies, programmes and schemes for their all-round development and welfare.

5. No Forum to Exchange Ideas - Need for All Women Forum Elected women representatives of three tiers should meet once in three months and formulate integrated plans. The empowerment process requires social change by organizing and mobilizing the women's groups for struggle.

Conclusion - It has to be considered that the inclusion of well qualified women in village Panchayat at the initial state of the interlocution of Panchayati Raj Institution in rural areas would be an important instrumental measure in planning for improving social status and empowering women. This group of women, if provided representation at village Panchayat level can strongly rise in the issues related to the betterment of women, can play dominant role in decision making process and make suitable recommendation for improving the status of women in the meeting. Its creates opportunities for women to exercise more control over design and provisions of services and the management of resources it may benefit. Good number of women competing with men in local politics, forwarding gender related agendas is looked as a way towards gender equity.

References :-

1. Modi M. P. (2007) A journal of Asia for democracy and development, Morena, July - Sept.
2. Report on the Status of Women in India, Towards Equality, Government of India, 1974,
3. Committee on empowerment of women 2009-2010.
4. Madhya Pradesh Development Report published by Academic Foundation New Delhi
5. S.S. Sree Kumar (2006), "Representation of Women in Legislature: A Sociological Perspective in the Indian Con text", in Indian Journal of Political Science, Vol. LXVII, No. 3, Meerut: Indian Political Science Association.
6. Neelima Deshmukh (2005), "Women's Empowerment Through Panchayati Raj Institutions", in Indian Journal of Public Administration, Vol. LI, No. 2, New Delhi: IIPA, p. 194.

आंदोलन की विकृति : राजस्थान का गुर्जर आन्दोलन

डॉ. परेश द्विवेदी *

प्रस्तावना – भारतीय समाज जाति, वर्ग, सजातीयता, धर्म, भाषा और क्षेत्र आदि के सन्दर्भ में स्तरीकृत है। सामाजिक और आर्थिक असमानताओं की जड़ें बहुत गहरी है। अन्तर समूह संबंध, विवाह, धार्मिक और सांस्कृतिक व्यवहार के बारे में आजादी के उपरान्त भी कई मानको में कठोरता पाई जाती है। ऐसी सरंचनात्मक और सांस्कृतिक बाधाओं के विरूद्ध भारत का इतिहास सामाजिक आन्दोलनों से भरा हुआ है। ऐसे सामाजिक आन्दोलन सामान्यतया समतावादी सामाजिक संरचना की ओर प्रेरित रहते है। सामजिक आन्दोलन, सामूहिक व्यवहार का ही एक स्वरूप है। यह सामाजिक उद्विकास, प्रगति और विकास की भांति ही परिवर्तन का एक ढंग भी है। मानव अपने व्यवहार की अभिव्यक्ति दो प्रकार से कर सकता है–व्यक्तिगत तौर पर तथा सामूहिक तौर पर। सामूहिक तौर पर किया गया व्यवहार या तो समान व्यवस्था का पोषक होता है या उसका विरोधी। सामाजिक आन्दोलन का सम्बन्ध सामाजिक व्यवस्था के दोष से अधिक है। सामाजिक आन्दोलनों का संचालन समाज तथा संस्कृति में नवीन परिवर्तन लाने तथा नवीन परिवर्तनों का विरोध करने के लिये होता है। सामाजिक आन्दोलन का उद्देश्य सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्रों में आंशिक अथवा आमूल–चूल परिवर्तन लाना हो सकता है। किसी भी समाज में सामाजिक आन्दोलन तब प्रारम्भ होता है जब वहां के लोग वर्तमान स्थिति से असन्तुष्ट हो और उसमें परिवर्तन लाना चाहते हो। सामाजिक आन्दोलनों के पीछे कोई विचारधारा अवश्य होती है। किसी भी आन्दोलन का प्रभाव पहले असंगठित रूप में होता है और धीरे–धीरे उसमें व्यवस्था व संगठन पैदा हो जाता है। चूंकि सामाजिक आन्दोलन एक सामूहिक व्यवहार है। काम्ट, दुर्खीम, लीबों एवं टार्ड की भी इन विषयों पर काफी रूचि रही है। सामाजिक आन्दोलनों में प्रारम्भिक समाजशास्त्रियों की रूचि परिवर्तन के एक प्रयास के रूप में ही रही जबकि वर्तमान समाजशास्त्री सामाजिक आन्दोलनों को परिवर्तन उत्पन्न करने या उसे रोकने के प्रयास के रूप में देखते है।

सामाजिक आन्दोलनों में वैचारिकी का विस्तृत पुंज होता है जिसका उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्थाओं का पुनर्निर्माण करना है। इस उद्देश्य पर सामाजिक आन्दोलन के कार्यक्रम आधारित होते है। सामाजिक आन्दोलन कुछ संस्थापित सामाजिक सम्बन्धों को रूपान्तरित करने का प्रयत्न है लेकिन आन्दोलन कभी भी एक निरन्तर प्रघटना नहीं होती। एक आन्दोलन द्वारा कुछ आधारभूत मुद्दों पर स्पष्ट बल दिया जाता है। वह तो जनसंख्या के एक 'महत्वपूर्ण' अनुभाग द्वारा कुछ विशिष्ट असहनीय पहलुओं या समाज की प्रक्रिया विधि के विरूद्ध संकेत करते है। वास्तव में एक आन्दोलन में दो बातों की आवश्यकता है प्रथम–कम से कम अंशत: संगठन और दूसरा, परिवर्तन के लिये प्रतिबद्धता।

महत्वपूर्ण संन्दर्भ एवं ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य – कभी सामाजिक आन्दोलन सुधारवादी होते है, तो किसी अन्य समाज या उसी समाज और क्षेत्र में धार्मिक अथवा क्रान्तिकारी प्रकृति के हो सकते है। किसी समाज में कोई आन्दोलन एक ऐसे प्रारम्भिक चरण के रूप में हो सकता है जिसमें पहले कोई महत्वपूर्ण आन्दोलन नहीं हुआ हो। भारत में ब्रह्म समाज, आर्य समाज, थियोसोफिकल सोसायटी एवं रामकृष्ण मिशन द्वारा चलाये गये आन्दोलनों का उद्देश्य सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्रों में परिवर्तन एवं सुधार लाना था। असम में छात्रों द्वारा संचालित आन्दोलन का उद्देश्य वहां से तथाकथित विदेशियों को निकालना था। मध्यप्रदेश की जनजातियों में हुए बिरसा आन्दोलन, भगत आन्दोलन, बीरसिंह आन्दोलन का उद्देश्य जनजातियों के सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन में परिवर्तन लाना एवं कुप्रथाओं से मुक्ति पाना था। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन ने भारतीयों में राष्ट्रीय भावना का संचार किया और देश को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराने के लिये देशवासियों में चेतना पैदा की। कबीर, नानक, तुकाराम, राजा राममोहन राय, दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द एवं गांधीजी द्वारा चलाये गये आन्दोलनों का उद्देश्य भारतीय समाज में प्रचलित अंधविश्वासों रूढ़ियों एव बुराईयों को दूर कर एक स्वस्थ एवं सुदृढ़ समाज की स्थापना करना था।

राजस्थान की पवित्र एवं गौरवशाली धरती पर भी आर्य समाज द्वारा किये गये सुधारवादी प्रयत्नों के साथ सती विरोधी आन्दोलन, भूप सिंह उर्फ विजयसिंह पथिक के नेतृत्व में बिजोलिया का किसान आन्दोलन, मोतीलाल तेजावत एवं मामा बालेश्वर दयाल के नेतृत्व में भीलों में व्याप्त सामाजिक बुराईयों को समाप्त करने के लिये किया गया भगत आन्दोलन, गांधीजी के अछूतोद्धार आन्दोलन आदि का उल्लेख मिलता है। यद्यपि ये सभी आन्दोलन पूर्णत: सफल नहीं रहे परन्तु इन आन्दोलनों का स्वरूप अहिंसक था। आतंकवादी हमले से आहत राजस्थान की जनता ने एकता और सेवा का जो जज्बा दिखाया उसे राजस्थान के गुर्जरों की आरक्षण की लड़ाई ने तार–तार कर दिया। प्रारम्भिक तौर पर गुर्जर आन्दोलन अहिंसक प्रतीत हो रहा था परन्तु समय बीतने के साथ इसमें विकृति आ गई और इसने हिंसक रूप धारण कर लिया।

गुर्जरों की उद्गम की जानकारी तो नहीं है लेकिन परम्परागत रूप से इनका संबंध क्षत्रिय वर्ण से रहा है। हूणों के आक्रमण के समय उत्तर भारत में गुर्जर चर्चा में आए। कुछ गुर्जरों का दावा है कि उनका संबध चेचेन और जार्जिया से है और जार्जिया को परम्परागत रूप से गुजरिस्तान (जोर्जिस्तान) कहा जाता था। कुछ का तो यह भी दावा है कि गुर्जर असल में जर्मन है। वैसे जार्जिया शब्द अरबी और फारसी के शब्द से बना है, गुर्जर से नहीं। इतिहास के अनुसार गुर्जर–प्रतिहार साम्राज्य की राजधानी भीनमाल थी, जिसे गुर्जरों

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) भूपाल नोबल्स पी.जी. कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

ने स्थापित किया। कुछ इतिहासकार ब्रज से भी इनका संबंध बताते है। कहते है कि राधा के पिता बृषभान भी गुर्जर थे। संघर्षशील और जुझारू स्वभाव वाला गुर्जर समुदाय (जाति) स्वामिभक्ति, दोस्ती और विश्वास की रक्षा के लिये अपना जीवन न्यौछावर करने के लिये विख्यात है। अपने कहे पर कायम रहने और उस पर खरे उतरने के मामले में गुर्जरों की विशेष ख्याति रही है। स्व. पं. जवाहरलाल नेहरू ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'भारत की खोज' में भी अपनी मातृभूमि के प्रति गुर्जर समुदाय के साहस, बहादुरी एवं वचनबद्धता की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इस आन्दोलन में भी गुर्जरों की यह मिसाल दृष्टिगोचर हुई। आरक्षण के लिये गुर्जरों द्वारा राजस्थान में किया गया आन्दोलन लगभग सात वर्ष पुराना माना जा रहा है, लेकिन वास्तविकता यह है कि उनका संघर्ष आजादी से पूर्व 1857 से ही चल रहा है। उस समय ब्रिटिश सरकार ने गुर्जरों को आपराधिक जाति का दर्जा दे दिया था, जिससे उत्तेजित होकर उन्होंने संघर्ष छेड़ दिया था। ई. 1924 में गुर्जरों को फिर आपराधिक जाति (क्रीमिनल कास्ट) कानून के तहत कड़े नियमों में शामिल किया गया, जिसे 1951 में सरदार वल्लभ भाई पटेल ने समाप्त कराया था। 1954 में कई आदिम एवं आपराधिक जातियों को अनुसूचित जनजाति की श्रेणी (एस.टी.) में शामिल कर लिया गया लेकिन राजस्थान के गुर्जरों की तब भी उपेक्षा की गई। गुर्जरों को एस.टी. में शामिल करने को लेकर पहली बार एस.टी. दर्जे की मांग की गई। इस प्रस्ताव को तत्कालीन मुख्यमंत्री शिवचरण माथुर ने यह कहकर नकार दिया कि गुर्जर दूध के जरिये कमाने वाले किसान हैं 1993 में गुर्जरों को ओ.बी.सी. की सूची में शामिल किया गया। तब 2000 में गुर्जरों को एस.टी. श्रेणी में शामिल करने का आंदोलन शुरू हुआ।

भारत सरकार द्वारा राजस्थान में अनु. जनजाति की सूचियां अन्तिम बार 1977 में जारी की गई जो अब तक अपरिवर्तित है। वर्ष 1981 में पहली बार गुर्जर जाति सहित कई जातियों ने अ.ज.जा. में शामिल होने हेतु ज्ञापन दिये। समाज कल्याण विभाग द्वारा इन ज्ञापनों का परीक्षण किया गया एवं गुर्जर जाति की माली हालत अच्छी बताते हुए आदिम विशेषता के लक्षण मौजूद नहीं होना बताया गया। शिवचरण माथुर सरकार के समय भी उनकी यह मांग स्वीकार नहीं की गई। भैरोसिंह शेखावत सरकार की सिफारिशों से उन्हें ओ.बी.सी. में शामिल किया गया। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 के अनुसार किसी जाति विशेष को अनुसूचित जनजाति की आरक्षित सूची में शामिल करने सम्बन्धी शक्तियां भारत सरकार के पास है। किसी समूह को अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में तभी सम्मिलित किया जाता है जब उनमें 1) आदिम विशेषता के लक्षण 2) विशिष्ठ संस्कृति 3) भौगोलिक एकाकीपन 4) सामान्य समुदाय के लोगों से सम्पर्क करने में संकोच 5) पिछड़ेपन की विशेषताएं विद्यमान हो। इन मापदण्डों के आधार पर राजस्थान में भील, मीणा, गरासिया आदि आदिम जाति अ.ज.जा. में शामिल की गई।

आन्दोलन की वर्तमान स्थिति – किसी भी घटना के प्रति दो प्रकार का दृष्टिकोण होता है। एक प्रतिक्रियावादी और दूसरा, प्रतिउत्तरात्मक। पहले में हम मात्र आलोचना करते है जबकि, दूसरे में घटना के विविध पहलुओं का विश्लेषण कर सुझाव व समाधान प्रस्तुत करते है। गुर्जर आन्दोलनों को यदि हम प्रति उत्तरात्मक दृष्टिकोण से देखें तो उसके विश्लेषण में तीन बातें उभरकर सामने आती है। पहली-आरक्षण एवं सामाजिक व्यवस्था, दूसरी-जनतांत्रिक नेतृत्व एवं उसके दायित्व, तीसरी-प्रशासन, पुलिस एवं कानून व्यवस्था। भारतीय संविधान में आरक्षण की व्यवस्था समानता आधारित व्यवस्था के निर्माण के लिये की गई थी। इसका लक्ष्य वंचित एवं शोषित वर्गों को विशेष सुविधाएं देकर उन्हें समाज की मुख्य धारा में लाना था। आरक्षण का उद्देश्य कदापि समाज में जातिगत भेदभव बढ़ाना नहीं था, किन्तु संविधान के लागू होने से लेकर वर्तमान स्थिति तक दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट होता है कि आरक्षण जो भेदभाव को मिटाने के लिये लागू किया गया था स्वयं समाज में भेदभाव एवं ध्रुवीकरण का पोशक बन गया है। यह आरक्षण नीति का सबसे बड़ा दुष्परिणाम कहा जा सकता है। राजस्थान के गुर्जर आन्दोलन की जड़ चुनावी व्यवस्था से जन्म लेती है। अपने अल्पकालीन निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिये नेता लोकलुभावन वादे करते है। ऐसे वादे आन्दोलन की वजह बन जाते है। चुनावी प्रचार के दौरान विभिन्न जातिगत समुदायों की आकांक्षाओं, भावनाओं को भड़काकर नेता चुनावों में जीत दर्ज कर लेते हैं लेकिन उसके दुष्परिणामों की जिम्मेदारी संभालने के लिये राजनीतिक नेता तैयार नहीं है।

इस आन्दोलन का प्रारम्भ एक मुद्दे के रूप में उठाकर इसे उचित दिशा प्रदान की गयी थी। जैसे-जैसे आन्दोलन आगे बढ़ा, आन्दोलन को नेतृत्व प्रदान कर रहे लोगों में बिखराव आ गया और पूरा आन्दोलन एक व्यक्ति (कर्नल किरोड़ी सिंह बैंसला) पर केन्द्रित हो गया। आन्दोलनकारियों ने आन्दोलन के लिये जिस जगह का चयन किया, जो पूर्व में घोषित था, बावजूद इसके सरकार द्वारा कोई ठोस कदम न उठाना, एक विचारणीय बिन्दू है। सरकार के मंत्रियों का आन्दोलन के दौरान बातचीत न सुनना, दो जातियों (मीणा और गुर्जर) में टकराव की स्थिति बनना, अपनी पुत्रवधू को मुख्यमंत्री द्वारा मध्यस्थता के लिये भेजना जैसे लिये गये निर्णयों को सरकार की लाचारी कहा जाये या प्रायोजित रूपरेखा ? क्योंकि एक के बाद एक जो भी कदम उठाये जा रहे थे उनसे केवल आन्दोलन के नेतृत्व व सरकारी नेतृत्व के मध्य हठधर्मिता दृष्टिगोचर हो रही थी और ऐसा प्रतीत हो रहा था कि इसे जानबूझ कर आगे बढ़ाया जा रहा है। आन्दोलन से जुड़ी अशिक्षित जनता तो केवल उपयोग की जा रही थी। डाकू जगन गुर्जर जैसे वांछित भी आन्दोलन का हिस्सा बन गये। अन्ततः आन्दोलन के नेतृत्व ने अघोषित रूप से घुटने टेक दिये जिसे एक समझौते का नाम दे दिया गया। पूरे आन्दोलन के पश्चात् भी जिस मांग को लेकर यह प्रारम्भ किया गया था वो मांग अभी भी वैसी ही है। आन्दोलन के नेतृत्व ने आन्दोलन के पश्चात् तत्कालीन सरकार को चुनावों के समय वोट देने की अपील भी गुर्जर समुदाय से कर डाली। इस पूरे आन्दोलन में नागरिक जीवन अस्त-व्यस्त हुआ, सरकारी सम्पत्ति के नुकसान के साथ कई लोगों की जाने गयी। कारण चाहे पुलिस कार्यवाही रही हो या भीड़ का गुस्सा, वह ऐसी परिस्थितियां थी जो किसी भी सामाजिक आन्दोलन को सफल होने के बजाय असफल ही बनाती है और वह आन्दोलन विकृत स्वरूप ले लेता है। गुर्जर आन्दोलन भी इसी प्रकार विकृत हुआ।

कानून व्यवस्था की दृष्टि से भी यह आवश्यक था कि मई 2007 के गुर्जर आन्दोलन के बाद इस तरह की घटनाओं से निपटने के लिये पुख्ता कार्य प्रणाली का निर्माण किया गया। जिसमें आन्दोलनकारियों की पहचान, संवेदनशील स्थानों का चिन्हीकरण, आन्दोलनकारियों की कार्यशैली का अनुमान, औपचारिक एवं अनौपचारिक जनसहभागी सूचनातंत्र प्रणाली, भीड़ को एकत्र होने से रोकने के वैकल्पिक उपायों पर विचार, वार्ता के विफल होने की स्थिति में बल प्रयोग के वैकल्पिक उपायों एवं उनके क्रम का निर्धारण, पुलिस बल का संयम, प्रशासनिक निर्देशों की स्पष्टता, निर्देशों की एकरूपता आदि सम्मिलित है।

इस आन्दोलन की समाप्ति हेतु किये गये समझौते के तहत सरकार ने उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश जस्टिस जसराज चौपड़ा की अध्यक्षता में तीन सदस्यीय उच्चाधिकारी समिति का गठन कर समिति को

तीन माह में रिर्पोट पेश करने को कहा। कमेटी ने भी अपनी सिफारिशों में इन्हें आर्थिक आधार पर राहत पैकेज देने की सिफारिश की। इस कमेटी में सम्मिलित विख्यात समाजशास्त्री प्रो. योगेश अटल ने कहा कि अनु. जनजाति में सम्मिलित करने के संवैधानिक मापदण्डों पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। क्योंकि पूर्व के सभी मापदण्ड वर्तमान परिस्थितियों के सन्दर्भ में प्रासंगिक नहीं रहे है। इसके अतिरिक्त राज्य में आरक्षण का गणित ऐसा नहीं है कि इसमें आरक्षण का प्रतिशत बढ़ाया जा सके। राज्य में आरक्षण का गणित देखा जाए तो एस.सी. को 12 प्रतिशत, एस.टी. को 16 प्रतिशत और ओ.बी.सी. को 21 प्रतिशत हासिल है। इस तरह आरक्षण का प्रदेश में कुल योग 49 प्रतिशत बैठता है जबकि सुप्रीम कोर्ट द्वारा आरक्षण की तय सीमा 50 प्रतिशत है। तत्कालीन राज्य सरकार द्वारा गुर्जर समुदाय को ऐसे में गैर-अनुसूचित जातियों के कोटे में चार से छ: प्रतिशत आरक्षण देने की जो सिफारिश की गई थी। वह उनकी उस घोषणा के अनुरूप है, जो उन्होंने चुनावों से पहले गुर्जर समाज को आरक्षण दिलाने के संदर्भ में की थी। यह घोषणा उस समय भी अव्यवहारिक थी और केन्द्र को भेजे पत्र के समय भी अव्यवहारिक थी, साथ ही इन सिफारिशों को न ही संविधान विशेषज्ञ और न ही समाजशास्त्री व्यावहारिक मानते है।

प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता अरूणा राय ने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि वर्तमान में लोकतांत्रिक पद्धतियों से समस्याओं का समाधान करने के प्रयास कम हो रहे है। समस्या का समाधान हिंसा नहीं बल्कि लोकतांत्रिक पद्धतियां है। बातचीत, चर्चा और समय रहते राजनीतिक समाधान पर ध्यान दिया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि अलग-अलग आन्दोलनों के कारण अलग-अलग होते है। गुर्जर आन्दोलन राजनीतिक आश्वासन का नतीजा है। जब वादा पूरा नहीं हुआ तो एक वर्ग में रोष पैदा हो गया। यद्यपि वैचारिकी की दृष्टि से आन्दोलनों में फर्क होता है लेकिन कोई सीमा जरूरी है। आन्दोलन जनता ही करती है परन्तु आन्दोलन एवं गुण्डागर्दी में फर्क करना आवश्यक है। यह सरकार की जिम्मेदारी है कि वह समय पर बात सुने। जनता कि समस्याओं का निपटारा करें। मामलों को लटकाने की मानसिकता समाप्त करे।

निष्कर्ष – इस आन्दोलन ने राज्य में गुर्जरों और मीणाओं के बीच जातीय वैमनस्यता पैदा की है। इससे विभिन्न जातियों के बीच जातिगत वैमनस्यता को बढ़ावा ही मिला हैं। संविधान में आरक्षण के प्रावधान का उद्देश्य दरअसल समाज के पिछड़े वर्गों को मुख्यधारा में लाने व उनके उत्थान का था, परन्तु धीरे-धीरे चुनावी जीत का हथियार बनाकर आरक्षण को सामाजिक वर्ग-संघर्ष की दिशा में मोड़ दिया गया। इसके दुष्परिणाम न केवल अब उन्हीं राजनीतिक दलों के सामने आ रहे है बल्कि जातिगत वैमनस्य का सबसे बड़ा कारण भी यही आरक्षण बनता जा रहा है। इसलिये राजस्थान में गुर्जर आन्दोलन से फैली हिंसा, भविष्य की उस चेतावनी के रूप में देखी जानी चाहिए, जिसकी आँच उन सभी राजनीतिक दलों को झुलसा सकती है, जो अपने संकीर्ण स्वार्थों की खातिर लोगों की भावनाओं के साथ खेलने से बाज नहीं आते।

भविष्य में इस तरह के आन्दोलन राजस्थान में नहीं हो, जान-माल का नुकसान नहीं हो, इसके लिये आवश्यक है कि शासन, प्रशासन, मीडिया और जन सहभागिता के संयुक्त प्रयासों से कार्य योजना बनाई जाए। प्रशासन भी भविष्य में इस तरह की स्थिति से निपटने की तैयारी रखे। मीडिया के लिये आवश्यक है कि वह जनता को इस बात के लिये शिक्षित करे कि वह हिंसात्मक प्रदर्शन नहीं करे। आजादी से पूर्व हिंसात्मक प्रदर्शन विदेशी शासन व्यवस्था को पंगु बनाने की दृष्टि से होते थे। अब चूँकि शासन व्यवस्था हमारी स्वयं की है। अत: जो भी जान-माल का नुकसान है, वह हमारा स्वयं का नुकसान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित सूचनाओं, सम्पादकीय एवं बुद्धिजीवियों के आलेख।
2. संवैद्यानिक, ऐतिहासिक एवं विविध सामाजिक संदर्भ आधारित विश्लेषणात्मक आलेख।

****

भारतीय जनजातियों में विवाह के विभिन्न स्वरूप - (वर्तमान संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

अंतिम कुमार कलवार *

प्रस्तावना – समाज सामाजिक संबंधो का जाल है। मानव एक सामाजिक प्राणी है जो समाज में जन्म लेता है, जीवन यापन करता है और अंत में उसी में समा जाता है। मानव समाज में अनेक समूह, समुदाय एवं संघ पाये जाते हैं जो सम्मिलित रूप से मानव समाज को निर्मित करते हैं। जनजातिय समुदाय भी इन्हीं में से एक है। डॉ. डी.एन. मजूमदार लिखते हैं कि 'एक जनजाति परिवारों या परिवारों के समूह का संकलन होता है जिसका एक सामान्य नाम होता है, जिसके सदस्य एक निश्चित भूभाग पर रहते हैं, समान भाषा बोलते हैं और विवाह, व्यवसाय, उद्योगों के विषय में निश्चित निषेधात्मक नियमों का पालन करते हैं और पारस्परिक कर्त्तव्यों की एक सुविकसित व्यवस्था को मानते हैं। समाजशास्त्री गिलिन एवं गिलिन लिखते हैं, 'स्थानीय आदिम समूहों के किसी भी संग्रह को जो कि एक सामान्य क्षेत्र में रहता है, एक सामान्य भाषा बोलता है, एक सामान्य संस्कृति का अनुसरण करता है, एक जनजाति कहलाता है। भारतीय संविधान के अनु. 342 खंड(1) द्वारा देश के राष्ट्रपति महोदय द्वारा किसी जनजाति को अनुसूचित जनजाति घोषित किया जाता है। वर्तमान समय वर्ष 2015 में इनकी संख्या 700 से भी अधिक हो गई है। भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक व्यवस्था एवं संगठन में विवाह एक सामाजिक संस्था है। आज से लगभग पाँच हजार पूर्व सिंधु घाटी सभ्यता में भी इसके प्रमाण मिले है। भारतीय समाज में विवाह का उद्देश्य यौन संतुष्टि ही नहीं बल्कि कभी-कभी तो विवाह केवल सामाजिक, सांस्कृतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी किया जाता है। जनजातीय जीवन में विवाह उनके समाज और संस्कृति द्वारा निश्चित होता है।

कुछ भारतीय जनजातियों में आर्थिक जीवन विषय-लिंगियों के बीच सहयोग और श्रम विभाजन पर आधारित है। इस आर्थिक जीवन को बनाने के लिए स्थायी सामाजिक बंधन अर्थात् विवाह में बंधना होता है। कदार जनजाति में जीवन यापन जंगलों से फल-फूल एकत्रित करके किया जाता है। स्त्री और पुरूष दोनों एक दूसरे के सहयोग से कार्य करते हैं। अंडमान द्वीप निवासी ओंगे, जारवा, सेन्टेनली तथा मूरिया, गौंड जनजाति में भी विवाह संस्था का आर्थिक महत्व अधिक है। डॉ. मजूमदार व मदान के शब्दों में 'विवाह से वैयक्तिक स्तर पर शारीरिक, यौन, मनोवैज्ञानिक, संतान प्राप्ति और संतोष प्राप्त होता है तो व्यापक सामूहिक स्तर पर इससे समूह और संस्कृति के अस्तित्व निर्वाह में योग मिलता है। स्पष्ट है कि आदिवासियों में आर्थिक क्रियाओं को स्त्री-पुरूष द्वारा सामूहिक रूप से सम्पन्न करने की आवश्यकता ने भी विवाह को अनिवार्य बना दिया है।

विवाह रूची सामाजिक, सांस्कृतिक संस्था को परिभाषित करते हुए डब्ल्यू.एच.आर. रिवर्स लिखते हैं कि जिन साधनों द्वारा मानव समाज यौन संबंधों का नियमन करता है उन्हें विवाह की संज्ञा दी जा सकती है। समाजशास्त्री वेस्टरमार्क के अनुसार - विवाह एक या अधिक पुरूषों का एक या अधिक स्त्रियों के साथ होने वाला वह संबंध है जिसे प्रथा या कानून स्वीकार करता है और जिसमें विवाह करने वाले व्यक्तियों के और उससे पैदा हुए संभावित बच्चों के एक दूसरे के प्रति होने वाले अधिकारों एवं कर्त्तव्यों का समावेश होता है।

भारतीय जनजातियों में विवाह के प्रमुख भेद (स्वरूप)- भारतीय जनजाति संदर्भ में विवाह में सम्मिलित होने वाले वर और वधू की संख्या के आधार पर विवाह के दो प्रमुख भेद पाये जाते है। 1) एक विवाह और 2) बहु विवाह।

1) एक विवाह (मोनोगैमी) – एक विवाह से तात्पर्य है, एक समय में एक व्यक्ति एक ही स्त्री से विवाह करे। एक पत्नी या पति की मृत्यु होने पर पति या पत्नी को कुछ समाजों में दूसरा विवाह करने की छूट होती है। इस प्रकार के विवाह को क्रमिक एकल विवाह कहते हैं। भारत की खासी, संथाल तथा कदार जनजाति में एक विवाह की प्रथा प्रचलित है। इस संदर्भ में लूसी मेयर का कहना है कि एक विवाही और बहुविवाही शब्द विवाह या समाज के लिए प्रयुक्त होते हैं व्यक्तियों के लिए नहीं।

वर्तमान समय में जहाँ स्त्री एवं पुरूषों की संख्या करीब-करीब समान होती है वहाँ साधारणत: एक विवाह का प्रचलन होता है। उद्विकासवादियों ने एक विवाह को परिवार एवं विवाह के उद्विकास का अंतिम चरण माना है। वर्तमान सभ्य समाजों में विवाह के विभिन्न भेदों में एक विवाह को सर्वोच्च प्रतिमान के रूप में मान्यता प्राप्त है। विश्व के लगभग सभी देशों में उनकी सरकारों का सुझाव एक विवाह को प्रतिष्ठित करने की ओर देखा जा सकता है। बहुविवाह से तात्पर्य एक व्यक्ति का अनेक साथियों से एक ही समय में विवाह होना। जनजातिय भारत में सामान्यत: बहुविवाह 3 स्वरूप में देखने को मिलते हैं।

2) बहुपति विवाह का यह दूसरा रूप है अभातृक बहुपति प्रथा – इसमें स्त्री के पतियों के बीच परस्पर कोई संबधं नहीं होता है। उदाहरण मालाबार तट की नायर जनजाति समूह।

पितृपक्षीय बहुपति प्रथा – टोडा, खस एवं कोटा जनजातियों में स्त्री विवाह के बाद या तो पतियों के सामूहिक निवास पर जाकर रहती हैं या बारी-बारी से सभी पतियों के पास कुछ समय के लिए रहती है। जिस समय वह एक पति के साथ रहती है उस समय दूसरे पतियों का उस पर कोई अधिकार नहीं होता है।

मातृपक्षीय बहुपति विवाह – जनजाति विवाह के इस प्रकार में विवाह के बाद स्त्री अपनी माँ के परिवार में या मूल निवास पर रहती है और पति ही बारी-बारी से यहाँ निवास के लिए आते रहते हैं। यह प्रथा मातृवंशीय नायर लोगों में पाई जाती है।

* अतिथि विद्वान (समाजकार्य) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

समाजशास्त्रीय केस स्टडी अध्ययन – नीलगिरी पर्वत पर निवास करने वाली टोडा जनजाति में भातृक बहुपति विवाह प्रचलित है। सभी भाई एक स्त्री से विवाह करते हैं। यहाँ तक कि बाद में पैदा होने वाले भाई भी उस स्त्री के पति माने जाते हैं। समाजशास्त्रीय डॉ. रिवर्स महोदय ने अपने शोध अनुसंधान से बताया कि कभी–कभी ये सगे भाई ना होकर संगोत्री भाई भी होते हैं। एक ही माता से उत्पन्न सौतेले भाई भी एक ही स्त्री से विवाह कर सकते हैं। रिवर्स का मत है कि टोडा जनजाति में किसी समय बहुपतित्व की प्रथा इतनी दृढ़ भातृ प्रधान नहीं थी जितनी वह इस समय है। इन लोगों में संतान निर्धारण का एक सांस्कृतिक तरीका प्रचलित है। जब स्त्री गर्भवती होती है तो भाईयों में से कोई भी उसे पाँचवे महीने में एक तीर व धनुष भेंट करता है। यह प्रथा पुरसुतपिमी नाम से जानी जाती है और उत्पन्न होने वाली संतान का पिता सामाजिक रूप से यही भाई माना जाता है चाहे जैविक दृष्टि से उसका पिता कोई अन्य भाई भी हो सकता है। दूसरी बार स्त्री के गर्भवती होने पर जब यही संस्कार दूसरे भाई द्वारा किया जाता है तो संतान उसकी मानी जाती है। टोडाओं में बहुपतित्व का कारण स्त्रियों की कमी और पुरूषों की अधिकता है। भारत में खस, टोडा, नायर आदि के अतिरिक्त पूर्वोतर भारत की इरावन हियान दुर्गवासियों एंव कोटा लोगों में भी बहुपति प्रथा का प्रचलन है।

बहुपत्नी विवाह (पोलीगायनी) – बहुपत्नी विवाह का अर्थ है एक पुरूष द्वारा एक से अधिक स्त्रियों से विवाह करना। इस प्रकार के विवाह पर धनवान एवं शक्तिशाली लोंगों को ही विशेषाधिकार रहा है। इस्लाम धर्म में भी बहुपत्नी प्रथा व्यापक रूप से प्रचलित रही है। भारत में नागा, गोंड, बैगा, भील, टोडा लुशाई और मध्य भारत की अधिकांश प्रोटो–आस्ट्रेलाइड जनजातियों में यह प्रथा प्रचलित है। बहुपत्नी प्रथा का एक रूप ही द्विपत्नी प्रथा भी है। इसमें एक पुरूष एक साथ दो स्त्रियों से विवाह करता है। दक्षिण भारत की कुछ जनजातियों में यह प्रथा पाई जाती है।

भील जनजाति में विवाह – केस स्टडी अध्ययन – भील जनजाति में बहुपत्नी विवाह का प्रचलन पाया जाता है। एक से अधिक पत्नियाँ रखना सामाजिक एवं आर्थिक प्रतिष्ठा का सूचक माना जाता है। समाजशास्त्रीय श्री एन.डी. चौधरी ने अपने अध्ययन में उदयपुर जिले के कोटड़ा क्षेत्र में भीलों में 8.8 प्रतिशत पुरूषों में एकाधिक स्त्रियाँ होने का उल्लेख किया है। डॉ. दोषी ने घाटाली गाँव के 110 परिवारों में से 63 में बहुपत्नी विवाह को पाया है कि यहाँ एक पुरूष की दो से पाँच तक स्त्रियाँ थी। पुत्र प्राप्ति की लालसा, आर्थिक कारण, कठोर परिश्रमी जीवन, सामाजिक प्रतिष्ठा, देवर विवाह, अपहरण, युद्ध आदि अनेक कारणों से बहुपत्नी विवाह का प्रचलन आज भी भारतीय जनजातिय समाज में बना हुआ है।

जनजातियों में समूह विवाह – समूह विवाह में पुरूषों का एक समूह स्त्रियों के एक समूह से विवाह करता है और समूह का प्रत्येक पुरूष समूह की प्रत्येक स्त्री का पति होता है। वर्तमान समय में यह प्रथा आस्ट्रेलिया की कुछ जनजातियों में पायी जाती है। समाजशास्त्रीय वेस्टरमार्क का मत है कि ऐसे विवाह तिब्बत, भारत एवं श्रीलंका में बहुपति प्रथा वाले समाजों में किसी समय में पाये जाते रहे हैं।

निष्कर्षत: – उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट है कि भारतीय जनजातियों में विवाह के विभिन्न स्वरूप विद्यमान है। पूर्वी भारत, पश्चिमी भारत, उत्तरी भारत, दक्षिण भारत, मध्य भारत में निवास करने वाली 700 से अधिक अनुसूचित जनजातियों में विवाह के विभिन्न स्वरूप विद्यमान है। विवाह के समय गोत्र, समूह, कुल, वंश, ग्राम का विशेष ध्यान रखा जाता है। कुछ जनजातियों में विवाह पूर्व यौन संबंध पाये जाते हैं। उदाहरण मूरिया जनजाति में घोटुल संस्थान में अविवाहित लड़के, लड़कियों को यौन संबंध बनाने की छूट होती है। जनजातियों में विवाह बाद के अन्य यौन संबंध अनुचित माने जाते हैं। उदा. गौंड जनजातियों में विवाह एक उत्सव के रूप में मनाया जाता है। विवाह के दौरान सामूहिक भोज, नृत्य गान का आयोजन होता है। राजस्थान की कुछ जनजातियों में बाल विवाह प्रथा भी पाई जाती है। देवर विवाह, साली विवाह सामान्यत: देश की अधिकांश जनजातियों में पाया जाता है। समान गौत्र, टोटम में विवाह निषिद्ध होता है। गोंड जनजाति में दूध लौटावा विवाह (बहन की लड़की का विवाह भाई के पुत्र से करना) प्रथा भी प्रचलित है। पश्चिमी मध्यप्रदेश के आदिवासी बहुल धार, झाबुआ, बड़वानी, खरगौन, खंडवा, बुरहानपुर, अलीराजपुर आदि में होली पर्व के समय मनाया जाने वाला भगौरिया भी प्रणय पर्व के रूप में मनाया जाता है। जिसमें जनजातीय युवक–युवतियाँ अपने भावी जीवन साथी का चयन करती है। भारतीय जनजातियों में विवाह संबंधी निषेधों निकटाभिगमन निषेध अंतर्विवाह का दृढ़ता से पालन किया जाता है। भारतीय जनजातियों में आर्थिक जीवन विषम लिंगियों के बीच सहयोग और श्रम विभाजन पर आधारित है। इस आर्थिक जीवन को बनाने के लिए स्थायी सामाजिक बंधन से अर्थात् विवाह में बंधना होता है। आदिवासियों में आर्थिक क्रियाओं को स्त्री–पुरूष द्वारा सामूहिक रूप से सम्पन्न करने की आवश्यकता ने भी विवाह को अनिवार्य बनाया है। अंतिम समग्र विश्लेषण के रूप में यही कहा जा सकता है कि प्रत्येक जनजाति समाज में विवाह का कोई न कोई रूप अनिवार्यत: पाया जाता है। इसमें कानूनी, धार्मिक और सामाजिक स्वीकृति का भी समावेश होता है जो उनसे संबंधित सामाजिक एवं आर्थिक, दायित्वों को निभाने के अधिकार प्रदान करता है। जनजातियों में विवाह केवल वैयक्ति संतुष्टि का साधन मात्र नहीं है वरन् यह एक सामाजिक क्रियाविधि भी है जिससे समाज की संरचना को सुदृढ़ता प्राप्त होती है। इससे सामाजिक क्रियाशीलता आगे बढ़ती है। विवाह से परिवार, परिवार से समाज, समाज से राज्य, राज्य से राष्ट्र, राष्ट्र से सम्पूर्ण मानवता, मानवीय जीवन प्रगति पथ पर अग्रसर होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मजूमदार, डॉ. डी. एन. रेसेस एण्ड कल्चर्स ऑफ इंडिया, पृ–93
2. गिलिन एण्ड गिलिन – कल्चरल सोशियोलाजी, पृ–282
3. बसु डॉ. डी.डी., भारत का संविधान, एक अध्ययन।
4. मजूमदार एवं मदान – एन इंट्रोडक्शन टू सोशल एन्थ्रोपालाजी, पृ–79
5. डब्ल्यु.एच.आर. रिवर्स – सामाजिक संगठन, हिन्दी अनुवाद
6. वेस्टरमार्क, द हिस्ट्री ऑफ हयूमन मैरिज, वाल्यूम–1
7. मेयर, लूसी – सामाजिक नृविज्ञान की भूमिका, वाल्यूम–1, हिन्दी अनुवाद पृ–86
8. डब्ल्यु.एच.आर. रिवर्स – पूर्व उद्धत, पृ–34
9. विभिन्न समाचार पत्रों, पत्रिकाओं रिसर्च जर्नल्सों से प्राप्त शोध अनुसंधान, सामग्री एवं शोध संबंधित उपयोगी आँकड़े।
10. मेहता, प्रकाशचन्द्र – भारत के आदिवासी, पृ–184
11. कपूर, सुभाविनी – राजस्थान के भील और लोक संस्कृति, पृ–198
12. वर्मा, डॉ. रूपचंछ – भारतीय जनजातियाँ अतीत के झरोखे से, पृ–103–04

****

एच.आई.वी/एड्स का मानव समाज पर आर्थिक प्रभाव (एक समसामयिक अध्ययन)

डॉ. मनीष कुमार कलवार *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र एच.आई.वी/एड्स का समाज पर आर्थिक प्रभाव विषय पर केन्द्रित है। इस शोध पत्र में एचआईवी संक्रमण तथा एड्स पीड़ित होने के बाद उत्पन्न होने वाली आर्थिक समस्याओं का बड़े ही विश्लेषणात्मक ढंग से अध्ययन संपन्न किया गया है। कुछ समय पूर्व (1981 में अमेरिका, 1986 में भारत) तक एचआईवी से फैलने वाला एड्स केवल स्वास्थ्य समस्या के रूप में देखा जा रहा था लेकिन हाल ही में वर्ष 2015 में संपन्न आर्थिक प्रभाव संबंधी अध्ययनों ने भारतीय नीति निर्माताओं तथा वैश्विक संगठनों की आँखें खोल कर रख दी हैं। राष्ट्रीय अनुप्रयौगिक आर्थिक अनुसंधान परिषद् के हालिया अनुसंधान के अनुसार एड्स के कारण राष्ट्रीय घरेलू आय में दस प्रतिशत तक की कमी आ सकती है। यही नहीं यदि एड्स मरीजों की संख्या में बढ़ोतरी वर्तमान दर से जारी रहती है तो अगले 10 वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर में एक फीसदी की कमी आ जायेगी। साथ ही प्रति व्यक्ति सफल घरेलू उत्पाद भी इससे अछूता नहीं रहेगा। स्वास्थ्य पर घरेलू एवं सरकारी व्यय में लगातार बढ़ोतरी हो रही है जिससे बचत में कमी आ रही है। परिणामस्वरूप निवेश प्रभावित हो रहा है। निवेश में कमी होने से विकास तो अवरूद्ध होगा ही श्रम आय भी न्यून हो जायेगी तथा बेरोजगारी दर में तीव्र बढ़ोतरी होगी। यह बीमारी सर्वाधिक उत्पादक आयु वर्ग के लोगों को अपना शिकार बनाती है। एड्स के समाज पर दो सबसे भयंकर आर्थिक दुष्परिणाम है, 1) श्रम आपूर्ति में कमी एवं 2) लागत में बढ़ोतरी।

प्रस्तावना – एड्स का पूरा नाम एक्वायर्ड इम्यूनो डेफिसियंशी सिण्ड्रोम है। यह रोग एक वायरस जिसे एच.आई.वी.कहते है के मानव रक्त में प्रवेश कर जाने से फैलता है। वर्तमान समय में इस बीमारी से बचाव के लिये न तो कोई वैक्सीन है और न ही कोई समुचित इलाज। यह वायरस घातक और खतरनाक होता है क्योंकि यह मानव शरीर में रोग प्रतिरोधक प्रणाली यानी शरीर में बिना स्पष्ट लक्षणों के वर्षों तक पड़ा रहता है। एचआईवी संक्रमण से प्रभावित होकर एड्स महामारी को भारत में आए 26 वर्ष से अधिक हो रहे हैं। इस समयावधि में यह बीमारी देश में एक अत्यन्त गंभीर स्वास्थ्य समस्या, सामाजिक समस्या, और आर्थिक समस्या के रूप में उभरी है। एड्स रोग की पहचान अफ्रीका से हुई थी इसलिए अफ्रीका को एड्स का जनक और युगांडा को इसकी राजधानी माना जाता है।[1] एचआईवी सबसे पहले 1959 में अफ्रीकी देश कांगो की राजधानी किंगशासा में एक व्यक्ति के रक्त के नमूने में मिला था।[2] विश्व में पहली बार एड्स की बीमारी 1981 में अमेरिका के कैलिफोर्निया में तथा भारत में 1986 में चैन्नई में महिला सेक्स वर्कर में सामने आई है। मध्यप्रदेश में एड्स का पहला मामला 1988 में पाया गया था जबकि इन्दौर में ऐसा मरीज 1993 में पाया गया।[3] वर्ष 1982 में एड्स रोग उत्पन्न करने वाले विषाणु को एच.आई.वी नाम दिया गया।[4] यह 1/1000 एमएम व्यास का एक गोलाकार विषाणु है जो दो प्रकार के ग्लाइकोप्रोटीन का बना होता है।

एड्स उत्पन्न करने वाले एचआईवी वायरस का संक्रमण मुख्यत: 4 कारणों से फैलता है–

1. असुरक्षित यौन संबंधी 2. संक्रमित रक्त के आदान प्रदान से।
3. संक्रमित सुई और सीरिंज के इस्तेमाल करने से।
4. संक्रमित माता से गर्भस्थ शिशु को।[5]

एचआईवी वायरस मानव शरीर में द्रव्य पदार्थों के माध्यम से ही प्रवेश कर पाता है। रक्त में उपस्थित डब्ल्यू.बी.सी. के टि. लिम्फोसाईट्स से चिपक कर यह उन्हें ही नष्ट करने लग जाता है। फलस्वरूप शरीर में विभिन्न रोगों का आक्रमण होने लगता है जिससे अनेकानेक बीमारियाँ पैदा होती हैं और पीड़ित व्यक्ति अंतत: असमय ही अनेकानेक सामाजिक, शारीरिक, आर्थिक समस्याओं का सामना करते हुय मृत्यु के मुँह में चला जाता है।[6]

एच.आई.वी./एड्स का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव – कुछ समय पूर्व तक एचआईवी से फैलने वाला एड्स केवल स्वास्थ्य समस्या के रूप में देखा जा रहा था एवं इससे प्रभावित होने वाले अन्य पहलूओं की ओर शायद ही किसी संस्था या देश का ध्यान गया हो। हाल के कुछ विशिष्ट (एचआईवी/एड्स का समाज पर आर्थिक प्रभाव संबंधित) अध्ययनों ने देश के नीति-निर्माताओं की आँखें खोलकर रख दी है। राष्ट्रीय अनुप्रयौगिक आर्थिक अनुसंधान परिषद् के हाल ही में संपन्न अनुसंधानों के अनुसार एड्स के कारण राष्ट्रीय घरेलू आय में 10 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है। यही नहीं यदि एड्स मरीजों की संख्या में बढ़ोतरी की वर्तमान दर जारी रहती है तो अगले 10 वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर में एक फीसदी की कमी आ जाएगी। साथ ही प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद भी इससे अछूता नहीं रहेगा। अध्ययन के हवाले से कहा गया है कि एचआईवी वायरस के संक्रमण पर विराम नहीं लगने की परिस्थिति में स्वास्थ्य पर घरेलू एवं सरकारी व्यय में बढ़ोतरी होगी। इससे बचत में भी कमी आएगी। बचत में कमी होने पर निवेश प्रभावित होगा। निवेश में कमी होने से विकास तो अवरूद्ध होगा ही श्रम आय भी न्यून हो जाएगी एवं बेरोजगारी दर में भी बढ़ोतरी होगी। ज्ञातव्य है कि जिन घरों में एचआईवी/एड्स से ग्रस्त कोई व्यक्ति होता है, ऐसे दो तिहाई घरों में इसके कारण पारिवारिक आय में 10-15 प्रतिशत की हानि होती है। यह हानि विशेष रूप से कृषि मजदूरों को प्रभावित करती है।

श्रम की दुनिया एचआईवी/एड्स – एचआईवी/एड्स ने 15 से 49 वर्ष के अत्यधिक उत्पादक आयु समूह के लोगों को विशेष रूप से संक्रमित किया है। बुरी तरह प्रभावित देशों में प्राय: सभी क्षेत्र के श्रमिक अधिक प्रभावित हुए हैं फिर भी एचआईवी/एड्स ने अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के श्रमिकों को और अधिक प्रभावित किया है। सूचना एवं सेवाऐं प्रदान करने के संबंध में किसी सुगठित व्यवस्था के अभाव में इन श्रमिकों के पास एचआईवी/एड्स के जोखिम के बारे में कोई जानकारी नहीं है। यदि है तो भी वह अपर्याप्त है। कुछ समूहों में इसका खतरा बहुत अधिक है क्योंकि वे बहुत लम्बी अवधि तक

* सीनियर रिसर्च फैलो (समाजशास्त्र) यू.जी.सी., देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अपने घर/परिवार से दूर रहते हैं। इतना ही नहीं भेदभाव तथा अमैत्रीपूर्ण कार्य स्थितियाँ खतरे को और अधिक बढ़ाती है। एचआईवी की जानकारी इन समूहों तक पहुँचाना बहुत ही महत्वपूर्ण साथ ही कठिन भी है। भारत देश में लगभग 93 प्रतिशत कार्यरत् जनसंख्या अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में है।[7] यह महामारी शहरी एवं ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में आजीविका और उत्पादकता में कमी लाती है। विशेषत: महिलाओं पर इसका बहुत बुरा असर है चूंकि वे घर के बीमार सदस्यों की देखभाल करने तथा जीने के लिए कमाने दोनों की भूमिकाऐं निभाती है।

एचआईवी/एड्स एक आर्थिक समस्या – एड्स रोग का इलाज अत्यन्त महँगा होता है। इसलिए देश में वर्तमान स्वास्थ्य बजट से कई गुना अधिक बजट की आवश्यकता है। अकेले भारत में एड्स के मरीजों के इलाज एवं रोकथाम के लिए प्रतिवर्ष अरबों रूपयों की आवश्यकता होती है। विकसित देशों के लिए भी यह आर्थिक समस्या है ही, साथ ही भारत जैसे विकासशील देश के लिए सामाजिक समस्या के साथ-साथ अरबों रूपये का बजट आर्थिक समस्या का रूप धारण कर सकता है।[8]

तालिका क्रमांक-1(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

आँकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट है कि एचआईवी का संक्रमण सबसे अधिक कार्यशील या रोजगार करने वाले आयु समूह को संक्रमित करता है जो 25-34 में 40 प्रतिशत एवं 35-49 वर्ष में 35 प्रतिशत है। हम जानते हैं कि आय प्राप्त करने वाले युवा समूहों को यदि किसी भी कारण से कार्य करने में असुविधा हो तो परिवार की आर्थिक स्थिति इगमगाना स्वाभाविक है अत: एचआईवी/एड्स ने पीड़ितों की आर्थिक स्थिति को बुरी तरह प्रभावित किया है।

एचआईवी संक्रमण/एड्स की बीमारी अन्य रोगों अथवा महामारियों से नितांत भिन्न है। यह महामारी सर्वाधिक उत्पादक आयु वर्ग के लोगों को अपना शिकार बनाती है। इसके प्रमुख आर्थिक दुष्परिणाम निम्नवत् हैं :- एड्स के दो सबसे भयंकर दुष्परिणाम हैं - श्रम आपूर्ति में कमी एवं लागत में बढ़ोतरी।

1. **श्रम आपूर्ति में कमी –** जिस आयु वर्ग में युवा सदस्य अर्थव्यवस्था को सर्वाधिक योगदान देने की स्थिति में होता है, एड्स ऐसे आयु वर्ग के लोगों को ही अपना ग्रास बनाता है।

यदि एड्स अर्थव्यवस्था के विशिष्ट लोगों तक अपना पहुँच बना चुका है तो फिर इसका दुष्परिणाम एड्स में मरने वाले लोगों की संख्या के अनुपात में अधिक होगा।

2. **लागत पर प्रभाव –** एड्स का लागत पर प्रत्यक्ष प्रभावों में शामिल प्रमुख तथ्य हैं - चिकित्सकीय देखभाल, दवा एवं दाह संस्कार पर व्यय।

अप्रत्यक्ष आर्थिक दुष्प्रभावों में बीमारी के कारण समय लागत, बीमार कुशल कर्मचारियों के बदले नये कर्मचारियों की नियुक्ति एवं प्रशिक्षण पर व्यय तथा अनाथ हुए बच्चों एवं अन्य लोगों पर व्यय। यदि लागत आपूर्ति बचत से की जाती है तो फिर निवेश प्रभावित होगा जिससे आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण कमी आ जाएगी।

कारपोरेट सेक्टर और एड्स – विश्व बैंक की वर्ष 2012-2013 की एक विशेष रिपोर्ट के अनुसार कॉरपोरेट सेक्टर में कार्यरत देश की बड़ी आबादी के इस बीमारी के चपेट में आने की संभावना अधिक है। इस रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि यदि एड्स से प्रभावित कर्मचारी ज्यादा अनुपस्थित रहेंगे तो कंपनियों को अतिरिक्त भर्ती करनी होगी। रोगी कर्मियों और स्वास्थ्य बीमा पर भारी रकम खर्च करनी होगी और इन सबका प्रभाव उनके लाभ पर पड़ेगा। रिपोर्ट के अनुसार अभी तो इस प्रभाव का आँकलन नहीं किया गया है परन्तु जिन देशों में एचआईवी/एड्स महामारी की तरह फैल गया है। वहाँ सकल घरेलू उत्पाद व विकास दर पर कम से कम 2 प्रतिशत का अंतर आया है। इसलिए भारत जैसे अपेक्षाकृत कम प्रभावित देशों में एड्स प्रभावित लोगों के महँगे इलाज का खर्च अर्थव्यवस्था पर भारी पड़ सकता है अत: भारतीय कंपनियों को सुरक्षा के कदम उठाने चाहिए। कंपनियों ने इस बीमारी के प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए जितने प्रयास करने चाहिए थे, उतने उन्होंने नहीं किए हैं। केवल 70 प्रतिशत कंपनियां ही इस दिशा में उल्लेखनीय काम कर रही हैं। यदि कॉरपोरेट सेक्टर इस दिशा में प्रयास करे तो एड्स पर अंकुश लगाया जा सकता है।

एड्स के रोगी को न्यूनतम स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने में भारत जैसे विकासशील देश को प्रतिमाह 10-12 हजार रू. खर्च करने पड़ते हैं जबकि विकसित देश अमेरिका में करीब 50,000 रू. खर्च करने पड़ते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि भारत में लगभग 38-40 लाख एड्स रोगियों पर जो रकम खर्च करनी होगी। यह देश के सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी) के लगभग 5 प्रतिशत के बराबर होती है।[9] यह एक चिंतनीय तथ्य है।

साधारणत: भारतीय महिलाओं में एचआईवी संक्रमण का खतरा बहुत अधिक रहता है। इसका कारण उनमें शारीरिक तथा सामजिक/सांस्कृतिक अतिसंवेदनशीलता है। भारत में लगभग 90 प्रतिशत महिला श्रमिक अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में पाई जाती है। रोजगार एवं वेतन के मामलों में अक्सर उनके साथ अन्याय होता है इससे वे आर्थिक रूप से पुरूषों पर निर्भर रहने को मजबूर होती है। परिणामस्वरूप महिलाऐं सुरक्षित यौन संबंधों के लिए आग्रह नहीं कर पाती है। इस प्रकार वे एचआईवी/एड्स/एसटीडी की शिकार हो जाती है जिससे घर परिवार की अर्थव्यस्था गड़बड़ा जाती है।[10]

परिवार पर एड्स का आर्थिक प्रभाव – ज्यों ही परिवार का कोई सदस्य इस रोग का शिकार होता है, उसी समय से संबंधित परिवार आर्थिक दुष्परिणाम के चपेट में आ जाता है -

1. परिवार को पीड़ित व्यक्ति की आय मिलना तुरंत बंद हो जाती है। (पीड़ित व्यक्ति के आय का एकमात्र साधन होने की दशा में आय के स्त्रोत का बंद हो जाना है)
2. परिवार का चिकित्सा व्यय अचानक बढ़ जाता है।
3. परिवार के अन्य सदस्य यथा पीड़ित की लड़की या पत्नी उसकी देखभाल के लिए क्रमश: अपना कार्य या स्कूल छोड़ देती है। इससे भी परिवार आर्थिक दृष्टि से प्रभावित होता है।
4. एड्स पीड़ित व्यक्ति की मृत्यु की दशा में स्थाई रूप से आय बंद हो जाती है।
5. एचआईवी पीड़ित को संतुलिन एवं नियमित भोजन की अनिवार्य आवश्यकता होती है क्योंकि उसे लगातार दवाईयों का सेवन करना होता है।[11]

एड्स पीड़ित मानव के जीवनकाल और शायद उसके बाद भी इस सार्वदेशिक व्याधि के दुष्प्रभावों का पूर्ण पता लगा पाना कठिन है। प्रारंभ में जो बीमारी में कुछ समलैंगिकों तक ही सीमित दिखाई देती थी उसी ने पिछले दो दशकों में सम्पूर्ण विष्व के लाखों स्त्रियों, पुरूषों और बच्चों को अपने शिकंजे में कस लिया है। वर्तमान में एड्स केवल स्वास्थ्य संबंधित समस्या मात्र नहीं है बल्कि यह एक बड़ी आर्थिक समस्या का रूप धारण करती जा रही है।

इसके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक पक्ष भी है। इसके आर्थिक परिणाम अत्यन्त गंभीर होते हैं क्योंकि स्वास्थ्य पर राष्ट्र का आधा बजट व्यय (लगभग 50 प्रतिशत) तक एड्स की रोकथाम में ही लग सकता है, यदि एड्स के रोगियों की आवश्यकताओं को पूरा किया जाने लगे। एड्स विशेष तरीके से संक्रमित लोगों को आर्थिक और सामाजिक रूप से उत्पादनशील वर्षों में आक्रमण करता है जबकि वह दूसरों की देखभाल और परवरिश के लिए उत्तरदायी होते हैं। परिणामस्वरूप जब परिवार का धन उपार्जन करने वाला मुखिया ही मर जाता है तो, वह परिवार को जीवन यापन के साधन विहीन छोड़ जाता है।

इस प्रकार एचआईवी संक्रमण से प्रभावित लोग न केवल प्रारंभ में संवेगात्मक आघातों से और बाद में सामाजिकता से अलगाव तथा अंत में एक या दो वर्षों तक शारीरिक समस्याओं से पीड़ित रहते हैं बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी एड्स पीड़ित लोग बर्बाद हो जाते हैं। यह लोग अपने काम धंधों से हाथ धो बैठते हैं, अपने परिवारजनों एवं समाज के लोगों, समुदाय से अलग कर दिये जाते हैं। मित्रों द्वारा अस्वीकार, डॉक्टरों, नर्सों द्वारा इलाज करने से इंकार, स्कूलों, कॉलेजों, कोचिंग संस्थानों, विश्वविद्यालयों से बहिष्कृत हो जाते हैं, यहां तक कि अपमानित भी होते हैं। उनके परिवारों को भी पारिवारिक, मनोवैज्ञानिक एवं आर्थिक रूप से कष्ट उठाना पड़ता है। युवा और विवाहित एड्स रोगियों की पत्नियां विधवापन भोगती है। उनके बच्चे अनाथ हो जाते हैं। इस प्रकार एचआईवी संक्रमण और एड्स की बीमारी के समाज पर असंख्य आर्थिक दुष्प्रभाव पड़ रहे हैं।

निष्कर्षत – वर्तमान समय में एचआईवी संक्रमण तथा एड्स की बीमारी के नियंत्रण हेतु शासन स्तर पर केन्द्र तथा राज्य सरकारें, विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यु.एच.ओ.) सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों द्वारा विभिन्न एड्स नियंत्रण कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है। भारत सरकार ने राष्ट्रीय एड्स कमेटी की स्थापना 1986 में करके बचाव कार्य संबंधी कार्यक्रमों को आरंभ किया था, जिसके अन्तर्गत देश के प्रत्येक प्रदेश में जिला स्तर पर, तहसील स्तर पर, विभिन्न एड्स नियंत्रण समितियों के द्वारा एड्स से बचाव एवं जागरूकता कार्यक्रमों का प्रभावी क्रियान्वयन किया जा रहा है। इन कार्यों पर प्रति वर्ष लाखों करोड़ों रूपयों का व्यय शासन द्वारा किया जाता है। स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं के बजट का बड़ा भाग केवल एड्स की बीमारी पर खर्च होने से असंतुलन की स्थिति पैदा हो रही है। एड्स पीड़ितें की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाने से वे अनेकानेक समस्याओं का सामना कर रहे हैं। एड्स जानकारी ही बचाव है, संबंधी अवधारणा का व्यापक प्रचार-प्रसार करके ही हम एचआईवी संक्रमण को बढ़ने से तथा एड्स नियंत्रण करने में में पूर्ण सफलता प्राप्त कर प्रति वर्ष करोड़ों, अरबों रूपयों के आर्थिक खर्च को निर्धारित, नियंत्रित एवं निर्देशित कर एड्स पीड़ितों के मानवीय जीवन की रक्षा कर सकते हैं। हमारे प्राचीन महान भारतीय दर्शन ग्रंथों में कहा गया है कि –

सर्वे भवन्तु सुखनि: सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पशयन्तु, मा कश्चिद् दु:ख भाग्भवेत्।।'
'सबका मंगल हो, सबका कल्याण हो, सभी शांत, प्रसन्न, स्वस्थ एवं रोगमुक्त हों।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गौतम, डॉ.नीरज कुमार, 'एड्स एक विश्वव्यापी समस्या', कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका, अंक-फरवरी, 2010, प्रकाशन-ग्रामीण विकास मंत्रालय,भारत सरकार नई दिल्ली, पृ. क्रं.-19
2. नईदुनिया समाचार पत्र, रविवार, 28 जनवरी, 2010, पृ.क्रं.-4
3. दैनिक भास्कर समाचार पत्र, मधुमिता, 1 दिसंबर, 2010
4. तिवारी, आलोक कुमार- 'ग्रामीण भारत में एड्स का बढ़ता प्रकोप', कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका, अंक दिसंबर 2007, पृ.क्रं.-22
5. आहूजा, डॉ. राम – 'सामाजिक समस्याऐं' – एड्स, संस्करण -2008, रावत पब्लिकेशन, जयपुर (राजस्थान), पृष्ठ क्रमांक – 459
6. आप्टे, डॉ. प्रदीप – 'काया और एड्स – एक अंतर्युद्ध', एचआईवी का प्रहार, पृष्ठ क्रमांक- 83
7. परमेश्वरन्, के. – 'श्रम की दुनिया में एचआईवी/एड्स की रोकथाम : एक त्रिपक्षीय प्रतिक्रिया', निदेशक, केन्द्रीय श्रमिक शिक्षा बोर्ड, श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार प्रकाशन, पृष्ठ क्रमांक-02
8. सरकार, दीपक – 'गरीबी एवं बेरोजगारी का सामाजिक समस्याओं से संबंध', (एचआईवी/एड्स के विशेष संदर्भ में), भारत में सामाजिक समस्याऐं, पृष्ठ क्र-272, 273
9. सिंह, डॉ. एम.एन. – 'एड्स तथा आधुनिक समाज', विश्व में एड्स तथा अर्थव्यवस्था, पृष्ठ क्रमांक-112, 113
10. मुहम्मद, एस. – राष्ट्रीय परियोजना समन्वयक (एचआईवी/एड्स), 'अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के श्रमिकों को एचआईवी/एड्स का खतरा', पृष्ठ क्रमांक-04
11. शर्मा, डॉ. शिवशंकर (असि. प्रोफेसर), मेडीसीन, एमजीएम मेडिकल कॉलेज, इन्दौर 'एचआईवी/एड्स का आहार' – नईदुनिया सेहत पत्रिका, नवम्बर, 2008, पृष्ठ क्रमांक-08

अन्य सहायक संदर्भ ग्रंथ :-

1. मुकर्जी, रविन्द्रनाथ – सामाजिक शोध व सांख्यिकी (2002), विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली-7
2. सोनबेर, डॉ. बसंत कुमार – भारत में सामाजिक समस्याऐं (2012), प्रकाशक – मानव नवनिर्माण संस्थान, राजनंदगांव (छत्तीसगढ़)
3. आहूजा, राम – सामाजिक समस्याऐं (2008), रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली
4. सिंह, डॉ. एम. एन. – एड्स तथा आधुनिक समाज (2007), विवेक प्रकाशन 7-यू.ए. जवाहर नगर, दिल्ली-7
5. बवेजा, हरिन्दर एवं कटियार, अरूण – भारत पर कसते एड्स के पंजे, इण्डिया टुडे पत्रिका, पृष्ठ- 12-16, 28, नवम्बर 1992
6. वाशिया, फराह – हर दरवाजे पर मौत का हरकारा, इंडिया टुडे पत्रिका, पृष्ठ-37 से 41, 20 मार्च, 1997।
7. छूने से नहीं फैलता एड्स, नईदुनिया समाचार पत्र, सेहत पत्रिका, नवंबर 2012, पृष्ठ-10
8. ब्लैक, राबर्ट जी., बरोज, डी.एल.- एड्स दिवालिया होगी दुनिया, 15 अक्टूबर, 1992, पृष्ठ-53-55,
9. सेन, डॉ. सुषमा – 'वुमन इन एड्स', 1995
10. आप्टे, प्रदीप – 'काया और एड्स – एक अंतर्युद्ध', (1995) प्रकाशक, असर कम्प्यूटर्स एण्ड ग्राफिक्स, इन्दौर
11. पाण्डेय, तेजस्कर (2009), वेश्यावृत्ति तथा एड्स, भारत बुक्स सेंटर, लखनऊ, पृष्ठ-356
12. कुमार, अंतिम (2008), 'वर्तमान समय में नगरीय क्षेत्रों में बढ़ रही गंभीर सामाजिक समस्या एड्स' अप्रकाशित लघु शोध प्रबंध, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.), पृष्ठ-198
13. व्यास, आर.के. – एचआईवी/एड्स संक्रमित व्यक्ति की पीड़ा एवं हमारा सामाजिक उत्तरदायित्व, स्वर्ण कलश पत्रिका, पृष्ठ-33

तालिका क्रमांक-1 उत्पादन आयु के आधार पर एचआईवी संक्रमितों का विवरण

वर्ष	14 वर्ष से कम (प्रतिशत में)	15-24 (प्रतिशत में)	25-34 (प्रतिशत में)	35-49 (प्रतिशत में)	50 से अधिक (प्रतिशत में)
2008	7.88	9.55	41.03	34.94	6.61
2009	6.44	10.52	41.37	34.83	6.84
2010	7.9	10.13	42.17	37.24	8.29

(स्त्रोत – म.प्र. राज्य एड्स नियंत्रण समिति रिपोर्ट, वर्ष-2010)

सामाजिक अनुसंधान में आधुनिक प्रवृत्तियाँ (वर्तमान समय वर्ष – 2015 के विशेष संदर्भ में)

डॉ. अरविन्द पाल * चमका गेहलोद **

प्रस्तावना – जिस प्रकार विधाता की सर्वोत्तम कृति मेधावी मानव है कि ठीक उसी प्रकार मानव की सर्वोत्तम रचना मानव समाज व उसकी विभिन्न घटनाऐं हैं। मानव बुद्धिजीवी हैं, जिज्ञासा से भरपूर ज्ञानपिपासु है। वह केवल प्रकृति का ही अध्ययन नहीं करता है बल्कि अपना एवं अपने सामाजिक, सांस्कृतिक परिदृश्य का भी अध्ययन करता है। **'सामाजिक घटनाओं के संबंध में सत्य की खोज ही सामाजिक शोध है।'** मानव सामाजिक क्रिया के सभी क्षेत्रों में शोध कार्य का अर्थ ज्ञान तथा बोध की निरंतर खोज करने से है। इनमें भी दो आवश्यक तथ्य अवश्य विद्यमान होना चाहिए। (1) निरीक्षण (2) कारण दर्शाना। निरीक्षण के द्वारा जहाँ हम प्रत्यक्ष रूप से देख कर तथ्यों के विषय में ज्ञान प्राप्त करते हैं तथा कारण दर्शाना के द्वारा इन तथ्यों का अर्थ, उनका पारस्परिक संबंध एवं विद्यमान वैज्ञानिक ज्ञान से उनका संबंध निश्चित किया जाता है। यही दोनों तत्व यदि सामाजिक तथ्यों के संबंध में किये गये अनुसंधान में विद्यमान हैं तो उसे 'सामाजिक शोध' कहते हैं।

समाजशास्त्री श्रीमती पी.वी. यंग तथा बोगार्डस महोदय ने सामाजिक अनुसंधान के विषय में लिखा है कि – सामाजिक शोध वह वैज्ञानिक विधि है, जिसके द्वारा सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक समस्याओं के कारणों, अंत संबंधों तथा उनमें अन्त:निहित प्रक्रियाओं का अध्ययन, विश्लेषण, विवेचन किया जाता है। अर्थात् सामाजिक शोध ही सामाजिक जीवन का वैज्ञानिक अनुसंधान है।

सम्पूर्ण पृथ्वी पर जहाँ कहीं भी मनुष्य रहते हैं वही समाज और समाज में सामाजिक घटनाऐं हैं। सामाजिक घटनाओं में विविधता, जटिलता, अर्मूतता, और परिवर्तनशीलता की विशेषताऐं पाई जाती हैं। सामाजिक अनुसंधानकर्ताओं के लिये यह परम आवश्यक है कि वह सामाजिक घटनाओं की प्रकृति का भी अध्ययन करे, विशेष रूप से एक सामाजिक अनुसंधानकर्ता जब किसी समाज विशेष से अध्ययन समस्या को चुने तो अनुसंधान संपादन से पूर्व आवश्यक है कि वह उस समाज की सामाजिक घटनाओं को भली प्रकार समझ ले। वर्तमान युग विज्ञान व प्रौद्योगिकी का है जिसमें एक ओर मानव जहाँ चन्द्रयान प्रथम मिशन (2008) के द्वारा चन्द्रमा पर पहुँच गया है वहीं दूसरी ओर हमारे बौद्धिक एवं शैक्षणिक विकास हेतु 'सामाजिक अनुसंधान' में नित नई प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर हो रही है।

वर्तमान समय में बदलता हुआ स्वरूप – वर्तमान युग विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का है। तीव्र गति से बढ़ता हुआ नगरीकरण, औद्योगिकीकरण, आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण ने हमारी सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्था के ढ़ाँचे को ही क्षतिग्रस्त कर दिया है। लोगों में खुलापन लगातार बढ़ रहा है। टी.वी. चैनल, आज के अभिनेता, अभिनेत्री कुछ ऐसे सामाजिक परिवर्तनों की ओर अग्रसर हो रहे हैं जिन पर अधिक शोध कार्य होने की परम आवश्यकता है। इसी से हमारे महान नैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक मूल्यों का पतन होने से बचाया जा सकता है। सामाजिक शोध का धीरे–धीरे ही सही लेकिन क्रमबद्ध निरंतर विकास हो रहा है।

वर्तमान समय में सामाजिक अनुसंधान के द्वारा अनुसंधानकर्ता समाज विशेष की किसी समस्या विशेष का हल निकालता है। समाज में सामाजिक अनुसंधानकर्ता नवीन तथ्यों का अन्वेंषण ही नहीं करता है बल्कि वह प्राचीन तथ्यों की पुन: परीक्षा भी सम्पन्न करता है। अनुसंधान के द्वारा वह अन्त:संबंधों, कारणों, व्याख्याओं और सामाजिक घटनाओं को संचालित करने वाले कारकों का भी विश्लेषण, वर्गीकरण एवं व्याख्या सम्पन्न करता है।

वर्तमान इक्कीसवीं शताब्दी के इस द्वितीय दशक (2011–2020) में अनुसंधानात्मक कार्यों में विभिन्नताऐं देखने को मिल रही है। पहले जहाँ वर्णनात्मक अनुसंधान कार्य अधिक होते थे वहीं अब विश्लेषणात्मक (Analytical) तथा निदानात्मक (Diagnostic) शोध कार्यो पर अधिक अनुसंधान कार्य संपादित हो रहे हैं। वर्तमान समय वर्ष–2015 में सामाजिक अनुसंधान एक वैज्ञानिक योजना भी बन रहा है। इसका उद्देश्य तार्किक तथा क्रमबद्ध पद्धतियों के द्वारा नवीन तथ्यों का अन्वेंषण या पुराने तथ्यों की पुन: परीक्षा उनमें पाये जाने वाले अनुक्रमों अन्त:संबंधों, कारणात्मक व्याख्याओं तथा उन्हें संचालित करने वाले प्राकृतिक नियमों का भी वर्गीकरण, विश्लेषण, विवेचन करना है। अनुसंधान अर्थात् सभी दिशाओं में जाना जिससे कि एक विशिष्ट एवं सर्वमान्य तथ्य को ज्ञात किया जा सके। वर्तमान समय में अनुसंधानकर्ता, अनुसंधान चिंतन की एक ऐसी क्रमबद्ध तथा विशुद्ध प्रविधि के रूप में स्वीकार कर रहे है जिसमें विशिष्ट यन्त्रों, उपकरणों तथा प्रक्रियाओं का उपयोग इस उद्देश्य से कर रहे हैं कि विभिन्न सामाजिक समस्याओं का अधिक समुचित समाधान उपलब्ध हो सके।

शोध में व्यावहारिक पक्ष (Applied Aspects) को बढ़ावा – वर्तमान समय में सामाजिक अनुसंधान के व्यावहारिक पक्ष को अधिक बढ़ावा दिया जा रहा है जिससे कि आधुनिकीकरण, नगरीकरण, वैश्वीकरण तथा बढ़ते हुए पश्चिमीकरण से उत्पन्न सामाजिक, सांस्कृतिक समस्याओं के समुचित निराकरण में अनुसंधान कार्य के व्यावहारिक पक्ष से प्राप्त ज्ञान का

* प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र विभाग) प.म.ब. गुजराती कला एवं विधि महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (समाजशास्त्र) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अधिकाधिक उपयोग किया जा सके। शुद्ध अनुसंधान एक व्यावहारिक समस्या के केन्द्रीय कारकों का पता लगाने में सहायता प्रदान करता है। इसके सामान्य सिद्धांतों को विकसित करके, इन्हीं के सफल, अनुप्रयोगों द्वारा बहुत सी सामाजिक अनुसंधानात्मक समस्याओं का समाधान खोजा जा रहा है। प्रशासनिक दृष्टिकोण से अनुसंधान तात्कालिक समस्याओं के उत्तर देने के लिए एक प्रमाणिक प्रणाली हो सकती है। सामाजिक शोध का व्यवहारिक अनुसंधान वाला पक्ष नए तथ्यों का योगदान कर सकता है। यह सिद्धांतों की परीक्षा भी कर सकता है। तीव्र जिज्ञासा, उर्वर कल्पना और प्रयोगात्मक परीक्षण द्वारा भी हम अपने शोध कार्य में नयापन ला सकते हैं।

प्रोफेसर ए.आर. एन. सक्सेना ने 'अखिल भारतीय समाज शास्त्रीय सम्मेलन में भारत वर्ष में सामाजिक शोध अनुसंधान की आवश्यकता के बारे में एक बार कहा था कि पिछले 60 वर्षो से सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिये अनुसंधान की आधुनिक पद्धतियों को लागू करने की तत्परता सतत् बढ़ती ही जा रही है। सामाजिक, आर्थिक समस्याओं के समाधान के सर्वोत्तम साधन के रूप में हमने शोध अनुसंधान कार्यों की अत्यधिक आवश्यकता स्वीकार कर ली है। वर्तमान समय में भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भ में शोध प्रक्रिया, अनुंसधान की अनिवार्यता आधुनिक प्रवृत्तियों के साथ स्वत: सिद्ध हो रही है जो इसके उज्जवल भविष्य का सूचक है।

वर्तमान भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भ में जब भी नित नई-नई सामाजिक, सांस्कृतिक समस्याऐं हमारे सामने आ रही हैं उनके सम्पूर्ण समाधान खोजने में भी सामाजिक शोध अध्ययनों का महत्व लगातार ही बढ़ता जा रहा है। व्यावहारिक अनुसंधान का संबंध मानव के सामाजिक जीवन के व्यावहारिक पक्ष से होता है। इस प्रकार के शोध अनुसंधान कार्यों का उद्देश्य समाज को व्यावहारिक लाभ प्रदान करना होता है। व्यावहारिक अनुसंधान के अन्तर्गत सामाजिक समस्याओं का न केवल अध्ययन किया जाता है बल्कि उसके प्रभावी निराकरण के उपाय भी खोजे जाते हैं प्रत्येक देश, समाज में किसी न किसी प्रकार की सामाजिक समस्याऐं प्रत्येक समय, काल, परिस्थिति में उपस्थित रही है। देश के समुचित विकास और प्रगति के लिए इन समस्याओं का समाधान अनिवार्य है। समाज में व्याप्त इन सामाजिक समस्याओं का प्रभावी समाधान तब तक नहीं किया जा सकता है जब तक कि इन समस्याओं के बारे में सम्पूर्ण वैज्ञानिक जानकारी प्राप्त ना हो। व्यावहारिक अनुसंधानों के द्वारा समाज में व्याप्त विषमताओं को दूर करने में भी एक नई सोच तथा मदद मिलती है। विश्वसनीय तथा नवीन ज्ञान की प्राप्ति, अज्ञानता और अंधविश्वास का नाश वैज्ञानिक अध्ययन प्रबंधन संबंधी ज्ञान की प्राप्ति करने में समाज कल्याण, सामाजिक प्रगति, सामाजिक जीवन में नियंत्रण, वैज्ञानिक अवधारणाओं के प्रभावी निर्माण सहित वर्तमान समय की अनेकानेक समस्याओं के समाधान खोजने में सामाजिक शोध तथा अनुसंधान कार्यों का महत्व लगातार बढ़ता ही जा रहा है। वर्तमान समय में समाज में सामाजिक जनजागरूकता रही है। लोग अपने अधिकारों, कर्तव्यों के प्रति अधिक जागरूक हो रहे हैं। सामाजिक जीवन का वैज्ञानिक, सुव्यवस्थित तथा क्रमबद्ध अध्ययन महत्वपूर्ण होता जा रहा है क्योंकि इसी के द्वारा मानव का सर्वांगीण विकास को संभव किया जा सकता है अत: भारत जैसे विकासशील देश में सामाजिक शोध तथा अनुसंधान कार्यों की नई दृष्टिकोण, नई अवधारणाओं, नई चुनौतियाँ, नये अवसर, नई संभावानऐं के साथ प्रभावी, कुषल अनुप्रयोग की बहुत अधिक आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गौतम, अलंकार - सामाजिक शोध में नवीन अनुप्रयोग, शोधार्थी समाजकार्य (शोध प्रबंध) देवी अहिल्या विष्वविद्यालय, इन्दौर, वर्ष 2012, पृष्ठ क्रमांक-16
2. तंवर, कमलसिंह - सामाजिक शोध - दशा और दिशा प्रतियोगिता दर्पण पत्रिका, जुलाई-2009, पृष्ठ क्रमांक-2284
3. त्रिपाठी, डॉ. उमेश - नई सदी में सामाजिक शोध का बढ़ता महत्व, एक समीक्षात्मक अध्ययन, सिविल सर्विस क्रॉनिकल पत्रिका, फरवरी-2013, पृष्ठ क्रमांक-94-95
4. मुखर्जी, रविन्द्रनाथ - सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी।
5. गुप्ता एवं शर्मा - समाजशास्त्र सामाजिक अनुसंधान।
6. चाँदेकर, डॉ. रमेश - सामाजिक अनुसंधान - नवीन तकनीक, सत प्रकाशन संचार केन्द्र, इन्दौर (म.प्र.)।
7. विभिन्न शोध तथा सर्वे रिपोट्स संबंधित आंकड़े (द्वितीयक तथ्य)।
8. सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी - स्प्रेक्ट्म प्रकाशन, सी-3, जनकपुरी, नई दिल्ली।
9. नईदुनिया, पत्रिका, हिन्दुस्तान, जनसत्ता समाचार पत्रों से प्राप्त अध्ययन सामग्री।
10. क्रॉनिकल, इंडिया टुडे, प्रतियोगिता दर्पण के आलेख।
11. सूचना - शोध तकनीक - प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
12. इंटरनेट, कम्प्यूटर पर उपलब्ध विषय संबंधित अति महत्वपूर्ण जानकारियाँ।

****

DSS Divya Shodh Samiksha (An International Refereed Research Journal) April to June 2015
ISSN 2394-3807, E-ISSN 2394-3513, Imapct Factor - 0.745 (2014)

संयुक्त परिवार प्रणाली एक श्रेयस्कर परम्परा

डॉ. उमा लवानिया *

शोध सारांश – परिवार समाज की प्राथमिक व मौलिक इकाई है। यह सार्वभौमिक सत्य है। सार्वभौमिक से तात्पर्य परिवार रूपी संस्था प्रत्येक युग में, प्रत्येक काल, प्रत्येक समय में अर्थात प्राचीन काल से वर्तमान काल तक इसका स्वरूप है एवं निरन्तर जब तक सृष्टि है रहेगा। जब से मनुष्य है तब से परिवार भी है। भारतीय समाज के हिन्दू परिवारों में दो प्रकार के परिवार पाये जाते हैं :– एकाकी परिवार जिसमें माता–पिता एवं उनके अविवाहित बच्चों को शामिल किया जाता है एवं दूसरे संयुक्त परिवार यह एक ऐसा रक्त समूह है, जो अधिकारों, कर्तव्यों एवं दायित्वों द्वारा तीन या तीन से अधिक पीढ़ियों के सदस्यों को एक घर में रहने, साथ–साथ खाने–पीने, आय–व्यय करने तथा कुल पूजा में सहभागी बनाने से संबंधित है। हिन्दू परिवारों में संयुक्त परिवार प्रणाली एक श्रेयस्कर प्रणाली है ।परिवार को एक सहकारी समिति मानकर इस प्रकार गठित किया जाना चाहिए कि हर व्यक्ति को अपना कर्तव्य पालन करने के लिए स्वेच्छापूर्वक विवश होना पडे। एक–दूसरे के लिऐ असीम प्यार रखें और अपनी अपेक्षा अन्यों की सुविधा को प्राथमिकता देते रहें। आवेश और कटुता का, दुर्भाव और तिरस्कार का, आलस्य और अर्कमण्यता का, अहंकार और दबाब की क्षुद्रताएँ यदि निरस्त की जा सके, तो बिखरते परिवारों को पुन: संयुक्त रहने के लिए सहमत किया जा सकता है। सुव्यवस्थित आचार संहिता पर निर्धारित हमारी संयुक्त परिवार प्रणाली अपने देश के लिए तो उपयोगी सिद्ध होगी ही साथ ही समस्त संसार को भी इस परम्परा को अपनाने के लिए आकर्षित करेंगी।

प्रस्तावना – परिवार समाज की प्राथमिक व मौलिक इकाई है। यह सार्वभौमिक सत्य है। सार्वभौमिक से तात्पर्य परिवार रूपी संस्था प्रत्येक युग में, प्रत्येक काल, प्रत्येक समय में अर्थात प्राचीन काल से वर्तमान काल तक इसका स्वरूप है एवं निरन्तर जब तक सृष्टि है रहेगा। जब से मनुष्य है तब से परिवार भी है। इस अर्थ में परिवार के दो स्वरूप है – एक जन्म का परिवार तथा दूसरा प्रजनोत्पत्ति का परिवार अर्थात एक परिवार तो वह है जिसका कि सदस्य मनुष्य माता–पिता से उत्पन्न होने के कारण होता है और दूसरे में वह विवाह करके परिवार को बसाता है।

भारतीय समाज के हिन्दू परिवारों में दो प्रकार के परिवार पाये जाते हैं– एकाकी परिवार जिसमें माता–पिता एवं उनके अविवाहित बच्चों को शामिल किया जाता है एवं दूसरे संयुक्त परिवार यह एक ऐसा रक्त समूह है, जो अधिकारों, कर्तव्यों एवं दायित्वों द्वारा तीन या तीन से अधिक पीढ़ियों के सदस्यों को एक घर में रहने, साथ–साथ खाने–पीने, आय–व्यय करने तथा कुल पूजा में सहभागी बनाने से संबंधित है। इसको हम इस प्रकार स्पष्ट कर सकते है –

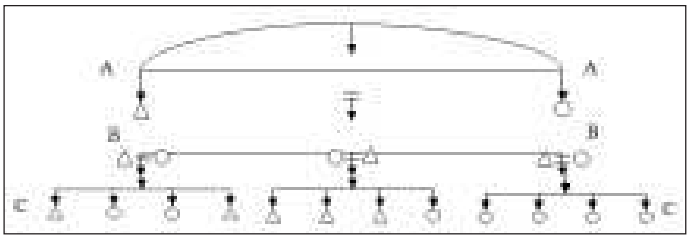

उक्त चित्र उस प्रथम पीढ़ी के स्त्री–पुरूष को दर्शाता है जिनके वैवाहिक संबंधों द्वारा तीन संतानें हुई, जिनमें दो लड़के तथा एक लड़की थी। दो लड़के तथा लड़की इस परिवार की द्वितीय पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती है। दो लड़के व लड़की की शादी होने पर उनके पुत्र तथा पुत्रियां उत्पन्न हुई, जो तीसरी पीढ़ी का दर्शाती है। यदि ये सभी अपने माता–पिता के परिवार में साथ–साथ रहकर अपनी–अपनी शक्ति एवं बौद्धिकतानुसार आर्थिक कामों से जुड़े रहकर सहयोग करते हैं तथा एक साथ एक चूल्हे से बना भोजन करते हैं व कुल पूजा को करते है साथ ही अपने–अपने कर्त्तव्यों का पालन संयुक्त रहते हुए करते है तो ऐसे परिवार को संयुक्त परिवार कहते है।

हिन्दू परिवारों में संयुक्त परिवार प्रणाली एक श्रेयस्कर प्रणाली है यदि संयुक्त परिवार प्रणाली को तोड़ा जाए और उसके स्थान पर पति–पत्नि मात्र के छोटे परिवार बसाए जाऍ। जब तक बच्चे समर्थ न हों, तब तक माता–पिता उनका संरक्षण करें और जैसे ही वे विवाह और अजीविका की दृष्टि से समर्थ हो जाऍ, वैसे ही उन्हें अलग परिवार बसाने के लिए स्वतंत्र कर दिया जाए। पाश्चात्य देशों में यह प्रयोग बड़े उत्साह के साथ हुआ। आज अधिकांश व्यक्ति छोटा परिवार ही बसाते है ताकि सम्मिलित कुटुम्ब के बोझ, उत्तरदायित्व और नियंत्रण से मुक्त रह कर सुविधाजनक तरीके से जीवन काट सके।

इस अलगाववादी बढती हुई प्रवृति के कारण हमें कई पहलुओं पर विचार करना होगा। प्रथम पाश्चात्य देश जहां से यह प्रवृत्ति आरंभ हुई उनके सामने प्रस्तुत हुए प्रतिफलों को देखना पड़ेगा। आरंभ में पति–पत्नि को अधिक खर्च करने व कम काम करने की सुविधा अवश्य मिल जाती है पर कुछ ही दिनों में उन्हें यह अपनी भूल के रूप में दिखाई देने लगती है जब घर में किसी नये बच्चे के आगमन की तैयारी होती है तब घर में किसी बड़े बुजुर्ग की आवश्यकता होती है। बच्चा एक पूरे गृहस्थ के बराबर काम लेकर आता है। हर समय उसकी निगरानी, सफाई सेवा की जरूरत पड़ती है अस्वस्थ्य होने पर वह बहुत रोता है एवं अन्य बहुत सी समस्याऍ होती है जो संयुक्त परिवार में पता भी नहीं चलती है और सब कुछ संभल जाता है।

असमर्थता, दुर्घटना, बीमारी आदि अवसरों पर संयुक्त परिवार का लाभ प्रतीत होता है जब एक की विपत्ति में दूसरे सभी सहयोग के लिए तैयार रहते है और अपने–अपने ढंग से सहायता कर बोझ हल्का करते है कुटुम्ब की मिली जुली पूँजी से आर्थिक स्थिति भी सदैव मजबूत रहती है सभी मिल जुलकर घर के आय–व्यय में सहयोग करते है। पारिवारिक संरचना के अंतर्गत किसी विकास को आर्थिक संकट और विधुरों को गृह व्यवस्था की कठिनाई नहीं उठानी पड़ती वे भी सामूहिक खर्च में शामिल हो जाते है संयुक्त परिवार प्रणाली ही है, जिसमें अयोग्य, असमर्थ, पागल, दुर्गुणी व्यक्ति का जीवन चल जाता है अन्यथा एकाकी परिवार में जीवित रहना कठिन पड़ता है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.) भारत

संयुक्त परिवार प्रथा में सब सदस्यों का उपार्जन एक जगह इकट्ठा होता है और उस सम्मिलित पूँजी से बडे व्यवसाय आसानी से आरंभ हो जाते है।

वृद्धावस्था का जीवन शान और शांति से संयुक्त कुटुम्ब में ही संभव है। जीर्ण शरीर जब अपना बोझ नहीं उठा पाता और रूग्णता साथी बन जाती है, तब कुटुम्बियों की सेवा-सहायता अपेक्षित रहती है। शारीरिक और मानसिक दृष्टि से दुर्बल बने व्यक्ति की आमतौर से उपेक्षा ही होती है, पर संयुक्त परिवार में मान-इज्जत ज्यों की त्यों बनी रहती है, वरन् अधिक बढ़ जाती है बिना पूछे कोई बड़ा काम नहीं होता, इससे वृद्ध का गर्व-गौरव एवं सम्मान भी अक्षुण्ण बना रहता है।

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए संयुक्त परिवार प्रणाली एक वरदान है। उसके अनेक लाभ है। आध्यात्मिक और भावनात्मक विकास की दृष्टि से भी उसका महत्व है। माता-पिता की सेवा, भाई-बहिनों की सहायता, कुटुम्बियों की समस्याएँ सुलझाने में संलग्न रहकर व्यक्ति अपनी स्वार्थपरता को घटाता और उदारता को बढ़ाता है 'वसुधैव कुटुंबकम' की महानता अपनाने का एक प्रारंभिक महत्वपूर्ण कदम है।

संयुक्त परिवार प्रणाली का भविष्य - भारत में संयुक्त परिवार प्रणाली का भविष्य क्या है, इसका उत्तर देने के लिए तीन तथ्यों पर विचार करना होगा-

पहला-भारत में संयुक्त परिवार व्यवस्था को विकसित क्यों किया जाता है ?

दूसरा-जिन दशाओं ने संयुक्त परिवारों को विघटित किया, वे दशाएं भविष्य में कितनी प्रभावकारी होंगी ?

तीसरा-वे कौन सी दशाएं होंगी जो भविष्य में संयुक्त परिवारों को पुन: एक उपयोगी संस्था बना सकती है ?

पहले पक्ष के संबंध में कहा है कि - भारत में संयुक्त परिवारों को एक ऐसी परिस्थिति में विकसित किया गया जब ग्रामीण अर्थ व्यवस्था ही भारतीय समाज की मुख्य विशेषता थी। एक धर्म-प्रधान संस्कृति में सरल और नियंत्रित जीवन का अधिक महत्व होने के कारण यह आवश्यक था कि सभी व्यक्ति कम से कम साधनों के द्वारा अपनी आवश्यकताओं को पूरा करे तथा कृषि भूमि पर मिल-जुलकर काम करे। उस समय श्रम विभाजन व विशेषीकरण का कोई महत्व नहीं था।

दूसरे पक्ष के संबंध में, संयुक्त परिवारों के विघटन के लिए उत्तरदायी अनेक कारण हैं इनमें औद्योगिकरण, नगरीकरण , शिक्षा की वृद्धि तथा नवीन साधारण मूल्य सबसे अधिक उत्तरदायी है। भारत में औद्योगिकरण व नगरीयकरण की प्रक्रिया, आज भी तेजी से बढ़ रही है, जिसके फलस्वरूप गांवों की जनसंख्या का प्रतिशत निरंतर कम होता जा रहा है जैसे-जैसे शिक्षा में वृद्धि से हो रही है, व्यक्ति उन परम्परागत व्यवहारों और विश्वासों को अपने लिऐ अनुपयोगी समझते जा रहे है जिन पर संयुक्त परिवारों का ढांचा निर्भर था। नये सामाजिक मूल्य के रूप में धर्म की परिभाषाएं बदल रही है, कर्मकाण्डों का प्रभाव कम होता जा रहा है, जीवन की सफलता के लिए व्यक्तिगत योग्यता का महत्व बढ़ रहा है तथा वास्तातिक स्वतंत्रता को व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक माना जाने लगा है। यह सभी दशाएँ वे है जिनका प्रभाव भविष्य में भी कम होने की सम्भावना नहीं की जा सकती।

इस आधार पर कह सकते हैं कि संयुक्त परिवार प्रणाली का भविष्य सुरक्षित नहीं है।

तीसरा-वे कौन सी दशाएँ होगी जो संयुक्त परिवारों को पुन: एक उपयोगी संस्था बना सकती है तो इसके लिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं सांस्कृतिक विशेषताएँ महत्वपूर्ण है भारत की लगभव 74 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामों में निवास करती है। गांवों में जहां भाई-चारे एवं सामूहिक जीवन का विशेष महत्व है, वहीं उनके जीवन में आज भी परम्परागत व धर्म प्रधान संस्कृति का प्रभाव बना हुआ है।

परिवार को एक इकाई मानकर चला जाए तब भी हम संयुक्त परिवारों का भविष्य सुरक्षित रख सकते है, परिवार के हर सदस्य की अपनी अपनी निजी इच्छाएँ तथा आवश्यकताएँ होती है इसके साथ ही साथ पूरे परिवार की घरेलू आवश्यकताएँ भी होती है इन आवश्यकताओं की पूर्ति का कार्य गृह संचालकों पर होता है जो सम्मिलित आय से करते हैं। परिवार के प्रत्येक सदस्य का उत्तरदायित्व यह है कि पारिवारिक सुव्यवस्था एवं प्रगति में सहयोग प्रदान करे। यदि प्रत्येक सदस्य अपनी-अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति को महत्वपूर्ण बताने लगेगा तो परिवार में कलह पूर्ण वातावरण निर्मित हो जायेगा।

किसी एक की आवश्यकता की पूर्ति पहले कर देने पर उस सदस्य के प्रति ईर्ष्या का विकार जग जाना स्वाभाविक है। यही ईर्ष्या अशांति का कारण बनती है। आय के स्त्रोत सीमित होते है यह कैसे संभव है कि सभी की बड़ी-बड़ी आवश्यकताओं को सीमित आय के द्वारा पूरा किया जा सके ? फिर आवश्यकताओं का महत्व भिन्न-भिन्न क्रम में होता है। बीमार व्यक्ति की आवश्यकताएं और किसी के शौक को पूरा करने की आवश्यकता में अंतर है। परिवार की सभी आवश्यकताओं के बीच सामंजस्य एवं संतुलन बना रहे, इसका उत्तरदायित्व गृह संचालकों पर होता है। इसके लिए परस्पर सौजन्य, शिष्टाचार, स्नेह, सद्भाव, सम्मान और सहयोग की भावनाएँ आवश्यक है। यह भी आवश्यक है कि एक आचार संहिता संयुक्त परिवारों को संचालित करने के लिए होनी चाहिए जिसके आधार पर हर छोटे-बडे को अपने कर्त्तव्यों का पूरा ध्यान रहे और हर कोई अधिकार पाने की उपेक्षा करके कर्तव्यपालन के लिए अधिक तत्परता पूर्वक संलग्न रहे। अपनी आवश्यकताओं में कमी करके सादगी का जीवन जीते हुए घर की जिम्मेदार महिलाएँ परिवार के अन्य सदस्यों के लिए अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत कर सकती है। त्याग का प्रभाव आपके परिवार के अन्य सदस्यों पर भी पडेगा। परस्पर त्याग भरा वातावरण सम्पूर्ण परिवार में संतुलन एवं सामन्जस्य स्थापित कर देगा।

परिवार को एक सहकारी समिति मानकर इस प्रकार गठित किया जाना चाहिए कि हर व्यक्ति को अपना कर्तव्य पालन करने के लिए स्वेच्छापूर्वक विवश होना पडे। एक-दूसरे के लिऐ असीम प्यार रखे और अपनी अपेक्षा अन्यों की सुविधा को प्राथमिकता देते रहे। आवेश और कटुता का, दुर्भाव और तिरस्कार का, आलस्य और अर्कमण्यता का, अहंकार और दबाब की क्षुद्रताएँ यदि निरस्त की जा सकें, तो बिखरते परिवारों को पुन: संयुक्त रहने के लिए सहमत किया जा सकता है। सुव्यवस्थित आचार संहिता पर निर्धारित हमारी संयुक्त परिवार प्रणाली अपने देश के लिए तो उपयोगी सिद्ध होगी ही साथ ही समस्त संसार को भी इस परम्परा को अपनाने के लिए आकर्षित करेंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाजशास्त्र - डॉ0 अशोक, डी. पाटिल, डॉ0 एस.एस. भदौरिया।
2. समाजशास्त्र - आर.बी. ताम्रकार।
3. समाजशास्त्र - जी.के. अग्रवाल।
4. परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र- डॉ. जी.आर. मदान।
5. शिक्षा और समाज - डॉ. मनोज कुमार सिंह।
6. आत्म निर्भरता का स्वरूप - आज की नारी - विनय दुबे, डॉ. उमा लवानिया, डॉ. भावना रमैया।
7. जनजातीय समाज का समाजशास्त्र - एम.एल. गुप्ता, डॉ. डी.डी. शर्मा।
8. युग निर्माण योजना- 2013, अगस्त।
9. युग निर्माण योजना- 2014 जुलाई।
10. अखण्ड ज्योति- 2013 फरवरी।
11. अखण्ड ज्योति- 2014 फरवरी।
12. युग निर्माण योजना- 2015 अप्रैल।

शिक्षा का अधिकार कानून एवं सामाजिक दायित्व

डॉ. निशा जैन *

प्रस्तावना – शिक्षा किसी भी राष्ट्र या समाज के विकास की आधारशिला है। कोई भी राष्ट्र या समाज बिना शिक्षा के विकसित नहीं हो सकता। शिक्षा व्यक्ति को स्वाभिमान, निर्भिक, निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती है। शिक्षा नैतिक मूल्यों का विकास करने में सहायक होती है। महात्मा गांधी का कथन है कि शिक्षा बालक तथा व्यक्ति के शरीर, मन एवं आत्मा की सर्वोत्मता का सामान्य प्रकटीकरण है। शिक्षा व्यक्ति के शारीरिक, बौद्धिक, संवेगात्मक, नैतिक एवं आर्थिक विकास से सम्बद्ध है। शिक्षित व्यक्ति विनम्र होता है। कहा गया है 'विद्या ददाति विनयम' जो जीवन को जड़ता, कुंठा, अहंकार जैसे नकारात्मक कारकों से मुक्त करती है – 'सा विद्या या या विमुक्तये' और जो जीवन जीने की कला एवं कुशलता सिखाती है। बालकों का व्यक्तित्व विकास सामाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता है। सी.एच. कूले ने प्राथमिक समूहों के साथ-साथ द्वैतियक समूहों को भी व्यक्तित्व विकास में सहायक माना है इसमें विद्यालय के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् शिक्षा के स्वरूप में व्यापक बदलाव आया है। ब्रिटिश शासन काल में लार्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति थी जो देश में सिर्फ बाबू तैयार करती थी किन्तु पिछले कुछ वर्षो में लोकतंत्र में शिक्षा के उद्देश्य परिवर्तित हुए हैं। प्राथमिक स्तर के स्कूलों में शिक्षा को अनिवार्य किया जिससे ग्रामीण समाज की तस्वरी बदली है। देश की स्वतंत्रता को 67 वर्ष हो गये हैं। सरकार निरंतर शिक्षा के विस्तार हेतु प्रयास कर रही है। समस्या ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों में अधिक है। नगरीय क्षेत्रों में शिक्षित जनसंख्या एवं कामकाजी माता-पिता होने के कारण बच्चों को उम्र से पहले ही प्ले स्कूलों एवं नर्सरी कक्षाओं में डाल दिया जाता है। डेढ़ से दो वर्ष के बच्चे जिन्हें पारिवारिक परिवेश एवं माता का संरक्षण चाहिए वे मजबूरीवश झूला घर, प्ले स्कूलो एवं नर्सरी में समय व्यतीत करते हैं। ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों में सराकार सर्वशिक्षा अभियान के माध्यम से 'मिड डे मील' योजना के द्वारा बच्चों को स्कूल जाने के लिए प्रेरित कर रही है। किंतु इच्छित लक्ष्य को अभी भी प्राप्त नहीं किया जा सका है। इसी दिशा में भारत में शिक्षा का अधिकार कानून 2009 पारित किया गया जिससे प्रत्येक बालक को साक्षर बनाने की परिकल्पना की गई है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व प्रयास – भारत में 19 मार्च 1910 में गोपालकृष्ण ने सर्वप्रथम विधान परिषद् में अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा के लिए प्रस्ताव पेश किया था। 16 मार्च 1911 को गोखले ने इसी प्रस्ताव को केन्द्रीय सभा में विधेयक के रूप में पेश किया जिससे ब्रिटिश सरकार हिल गई। 1917 में विट्ठल भाई पटेल ने दोबारा यह मांग रखी और शिक्षा पर पहला कानून पारित हो गया।

महात्मा गांधी भी नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के पक्षधर थे उन्होंने लिखा है मैं भारत के लिए नि:शुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के सिद्धांत का दृढ़ समर्थक हूँ। बच्चों को दी जाने वाली शिक्षा ऐसी हो जिससे उनका शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास हो सके। यह बुनियादी शिक्षा 7-14 आयु वर्ग के बच्चों के लिए हो।

स्वतंत्रता के पश्चात् प्रयास – 1964-66 में कोठारी कमीशन ने प्राथमिक एवं बुनियादी शिक्षा को राष्ट्रीय महत्व का विषय माना जिसकी जिम्मेदारी स्थानीय सरकार एवं राज्य की समझी गई। भारत के संविधान की शुरूआत में शिक्षा का अधिकार अनुच्छेद 41 के तहत् संवैधानिक अधिकार था जिसे मौलिक अधिकार के रूप में मान्य किया गया। 1986 की शिक्षा नीति के अन्तर्गत प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने हेतु 1 किलोमीटर की दूरी पर प्राथमिक स्कूल एवं 3 किलोमीटर पर एक उच्च प्राथमिक विद्यालय खोलने की बात कही गई।

1992-93 में भारत में बाल शिक्षा के क्षेत्र में नई संकल्पनाओं का जन्म हुआ। 1993 में .....कृष्णन बनाम आंधप्रदेश मामले में सर्वोच्च न्यायलय ने शिक्षा के अधिकार का संविधान के अध्याय 3 के अनुच्छेद 21 में जीवन के मौलिक अधिकार के संदर्भ में विवेचन किया।

कानूनी स्वरूप– 2002 में 86वां संविधान संशोधन प्रस्तावित किया गया जिसमें अनुच्छेद 21 ए को शामिल किया गया जिसके तहत् 6-14 वर्ष के बच्चों के लिए अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा का प्रावधान है। 4 अगस्त 2009 को शिक्षा का अधिकार कानून ससंद में पारित किया गया और 27 अगस्त 2009 को भारत सरकार के गजट में प्रकाशित हुआ। अप्रैल 2010 में इस कानून को लागू किया गया।

शिक्षा का अधिकारी कानून में प्रावधान –

1. 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को अपने पड़ौस के विद्यालय में प्राथमिक शिक्षा नि:शुल्क और अनिवार्य पाने का हक होगा।
2. बच्चों को शिक्षा देना माता-पिता का कर्तव्य है।
3. निजी स्कूलों में 25 प्रतिषत सीटें गरीब बच्चों के लिए है जो सरकारी खर्च से पढ़ाई के लिए है।
4. बच्चों के लिए घर से 1 कि.मी. पर ही स्कूल का प्रावधान है।
5. छात्र शिक्षक अनुपात एवं भौतिक संसाधन ..... प्रबंधन का दायित्व राज्य एवं केन्द्र सरकार का होगा।
6. शिक्षा के गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए योग्य ..... एवं प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति की व्यवस्था
7. विकलांग बच्चों की शिक्षा के लिए प्रशिक्षित शिक्षकों की व्यवस्था।

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

8. बच्चों को शारीरिक दंड एवं मानसिक उत्पीड़न पर प्रतिबंध।
9. स्कूल में प्रवेश हेतु साक्षात्कार एवं प्रतियोगिता शुल्क पर प्रतिबंध।
10. प्रारंभिक शिक्षा में किसी भी विद्यार्थी को अगली कक्षा में जाने से रोका नहीं जा सकता।
11. इस कानून में ऐसे पाठ्यक्रम निर्धारित किये गए हैं जिसमें ज्ञान क्षमता, तर्कशीलता एवं संपूर्ण प्रतिभा का विकास बच्चों में हो सके।
12. शिक्षकों को जनगणना एवं चुनाव ड्यूटी के अलावा अन्य कार्यों में ड्यूटी लगाने पर पूर्ण प्रतिबंध।
13. विद्यालयों की प्रबंध व्यवस्था हेतु निगरानी समितियों का गठन।
14. संपूर्ण खर्च राज्य एवं केन्द्र सरकार द्वारा वहन किया जावेगा।

शिक्षा का अधिकार कानून की सफलता में बाधाऐं –

शिक्षा का कानून के उद्देश्य एवं इस कानून का स्वस्थ सामाजिक अधिकार व विकास को दृष्टिगत रखते हैं किन्तु इसकी सफलता में निम्नलिखित बाधाऐं हैं –

1. भारत में ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों में निर्धनता प्रमुख समस्या है जिससे बच्चों से मजदूरी करवायी जाती है।
2. माता–पिता की अशिक्षा जिसके कारण वे शिक्षा के महत्व से अनभिज्ञ हैं।
3. शिक्षा के अधिकार कानून के प्रति जनजाग्रति नहीं है।
4. राजनीतिज्ञों के निहित स्वार्थ के चलते कानून सफल नहीं हो पाया है।
5. स्वैच्छिक संगठन एवं जन प्रतिनिधियों की रूचि का अभाव।

कानून को सफल बनाने हेतु सुझाव।

1. माता–पिता को बच्चों को स्कूल न भेजने पर दंडित किया जाऐ।
2. बाल मजदूरी प्रथा पर कड़ाई से रोक लगायी जाऐ।
3. समान विद्यालय प्रणाली लागू की जाए जिससे एक ही स्थान पर सभी बच्चों को स्कुली शिक्षा एवं एक ही स्कूल में प्रवेश मिले।
4. प्राथमिक स्तर की शिक्षा मातृ भाषा में ही दी जाऐ।
5. शिक्षकों को प्रशिक्षण की उचित व्यवस्था की जाए एवं कर्तव्य निर्वहन न करने पर दंडित किया जाऐ।
6. प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों के माध्यम से अभिभावकों को भी शिक्षित किया जाऐ।
7. विद्यालय का पर्यावरण मनोरंजक हो जहाँ खेलकूद एवं ललित कलाओं से संबंधित ज्ञान भी छात्रों को दिया जाऐ। जिससे बच्चों की स्कूल आने में रूचि जाग्रत हो सके।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सिर्फ कानून बना देने से ही हम लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकते हैं जब तक संपूर्ण समाज एवं जनप्रतिनिधियों का इस अभियान में सहयोग नहीं होगा हम भारत को शक्तिशाली एवं विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में खड़ा नहीं कर सकते।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शिक्षा क्या है – जे. कृष्णमूर्ति।
2. हिन्दी वेब दुनिया डॉट कॉम – कैरियर प्लानिंग शिक्षा का अधिकारी।
3. दैनिक नई दुनिया 23 सितम्बर, 2009

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कामकाजी महिलाओं की स्थिति एवं उनके वैधानिक अधिकार

डॉ. रंजना श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – इतिहास की दृष्टि से यदि देखा जाये तो महिलाओं की समाज में स्थिति निरंतर परिवर्तित होती रही है। भारत में आदि काल से नारी ने समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन की है। चाहे वह क्षेत्र ज्ञान का हो या विज्ञान का नारी ने हर क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज की है 21वीं सदी में जहां नारी पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही है, वहीं इस सफर में उसके सामने कई चुनौतियां आ रही हैं, शिक्षित महिलाओं को आज दोहरी भूमिका निभानी पड़ रही है। एक भूमिका पत्नी, मॉ, गृहणी की तथा दूसरी नौकरी की। उसके जीवन में जितना अधिक व्यवसाय संबंधी उत्तरदायित्व महत्वपूर्ण है, उतना ही महत्वपूर्ण उसका पारिवारिक उत्तरदायित्व है। इन दोनों को संतुलित करना ही उसका सबसे महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है।

जब कामकाजी महिलाओं की बात होती है तो सभी वर्गों की कामकाजी महिलाओं की ओर ध्यान देना आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत महिलाएं जो अधिकांशत: अशिक्षित होती हैं, शहरी क्षेत्रों में कार्यरत महिलाएं उच्चस्तरीय प्रशासनिक, पुलिस, व्याख्याता, चिकित्सक, अभियंता, अधिवक्ता, विभिन्न कारपोरेट सेक्टर में कार्यरत आर्थिक आत्मनिर्भर एवं शक्तिशाली स्थिति प्राप्त कर रही हैं, घर से बाहर इनके लिए चुनौतियां भी बढी हैं। आज की नयी पीढ़ी की लडकियां जीवन के हर पहलू की समझ रखती हैं और वे खूब आगे बढ़ना चाहती हैं, वे आधुनिकता के परिवेश में जी रही हैं, तथा अनेक समस्याओं के साथ संघर्ष कर रही हैं।

वर्तमान में नवीन जनचेतना विकास संवैधानिक व्यवस्था, विवाह तथा परिवार की मान्याताओं में बदलाव के कारण स्त्री की भूमिका में भी परिवर्तन हुए हैं। स्वयं स्त्री भी प्रगतिशील मौलिक चेतना से लैस होने के कारण इस बदलाव की कारक बनी हुई है। महानगरीय युवा वर्ग में अविवाह की स्थिति देखने को मिलती है। विवाह किये बिना पुरूष मित्र के साथ रहने के निर्णय में युवा स्त्री की छवि क्या होगी। प्राचीन युग में देवदासी की प्रथाएं थी, वर्तमान में यौन उत्पीड़न के मामले अधिक बढ़ गये हैं। काम के सिलसिले में महिलाऐं घर से बाहर निकलती हैं इसलिए कामकाजी महिलाऐं इसकी शिकार ज्यादा होती हैं।

आज सभी देशों में महिलाऐं जहां 21वीं सदी की वैशविक समस्याओं और चुनौतियों से जूझ रही हैं, वहीं बढ़ती गरीबी, आर्थिक अनिश्चितता तथा आये दिन महिला उत्पीड़न और दिल दहला देने वाली हिंसात्मक घटनाओं का शिकार महिलाएं होती हैं। महिलाओं को लिंग भेद के कारण कानूनी अधिकार सामाजिक अधिकार और आर्थिक अधिकारों का न मिलना भूमण्डलीकरण की एक बड़ी चुनौती है। स्वतंत्र भारत में नारी एक ऐसे संक्रांतिकाल दोराहे पर खड़ी है जिसके एक ओर परंपराऐं, रूढ़ियां, आडंम्बर हैं, दूसरी ओर नवीनता, स्वतंत्रता, प्रगतिशीलता। समकालीन नारी की स्थिति दूसरे मार्ग पर तीव्रता से चलने का प्रयत्न कर रही हैं। आधुनिक नारी को तमाम पारिवारिक सामाजिक, जटिलताओं के बीच अपनी गरिमा और प्रतिष्ठा पूर्व जीने का प्राकृतिक रूप से जीने का अधिकार मिला, किन्तु सामाजिक व पारिवारिक स्तर पर नैतिकता, मर्यादा, संस्कार आदि के प्रश्न व जटिल नियमों को नारी आस्तित्व के साथ इतने गहरे स्तर पर जोड दिया गया कि वह उनसे परिवर्तित परिवेश में भी छुटकारा नहीं पा सकी है। महिलाओं के अधिकारों का हनन परिवार से लेकर कार्यस्थल तक हर कदम पर होता है। सच तो यह है कि हमारा सामाजिक दृष्टिकोण कामकाजी महिलाओं के प्रति अति संकुचित है।

महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार की हिंसा को समाप्त करने के लिए हुए सम्मेलन 1979 के घोषणा पत्र को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा स्वीकार किये जाने के बाद से प्राय: महिलाओं संबंधी अधिकारों का अंतर्राष्ट्रीय बिल कहा जाता है। इस घोषणा पत्र में प्रस्तावना की 30 धाराएं यह परिभाषित करती हैं कि महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव किसे कहते हैं। जिसके द्वारा ऐसे भेदभाव समाप्त करने चाहिये।

आज महिला के हक में अनेक कानून हैं, संविधान के अनुच्छेद 12 से 34 में भारत के नागरिकों के मौलिक अधिकारों में लिंग, धर्म, जाति, भाषा के अलग अलग लोगों को समूह माना गया है। 'रूल्स ऑफ लॉ' यथा संभव महिलाओं को पूर्ण प्रतिनिधित्व देने की बात करता है, संविधान की धारा 14, 15, 16 विकास की प्रक्रिया में महिलाओं को पूर्ण प्रतिनिधित्व देने की बात की है। संविधान के नीतिनिर्देशक सिद्धांत भी महिला को न्याय, स्वतंत्र और समानता की गारंटी देते धारा 31(अ)(डी)(ई) के निर्देशक सिद्धांत और धारा महिलाओं को अजीविका के पर्याप्त अवसर पाने का अधिकार समान कार्य का समान वेतन, और स्वास्थ्य की सुरक्षा को सुनिश्चित करते हैं, संविधान महिला की प्रतिष्ठा और विकास के लिए जरूरी विधान की व्याख्या करते है।

भारत में महिलाओं को संवैधानिक तथा कानूनी सुरक्षा प्रदान करने के लिए जनवरी 1992 में राष्ट्रीय महिला आयोग की शाखा का गठन किया गया तथा भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त मूल अधिकार दिये गये। वे निम्न हैं–

1. समानता का अधिकार।
2. स्वतंत्रता का अधिकार।
3. शोषण के विरूद्ध अधिकार।
4. धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार।
5. संस्कृति एवं शिक्षा का अधिकार।

*प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मी बाई कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार।

उच्चतम न्यायालय के विभिन्न वादों में अपने निर्णयों द्वारा अनुच्छेद 21 का विस्तृत निर्वचन कर महिलाओं को विभिन्न अधिकार प्रदान किये गये हैं।

1. एकांतता का अधिकार।
2. मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार।
3. शिक्षा पाने का अधिकार।
4. चिकित्सा सहायता पाने का अधिकार।
5. नियोजन के दौरान यौन शोषण के विरूद्ध अधिकार।
6. बलात्कार से पीड़ित महिला का अंतरिम प्रतिकर पाने का अधिकार।
7. महिलाओं को वैश्यावृत्ति से बचाने तथा उनकी संतानों को पुनर्वास हेतु सरकार को निर्देश देने का अधिकार।
8. अमानवीय व्यवहार के विरूद्ध अधिकार।
9. मृत्युदंड से निलंबन का अधिकार।

महिलाओं की सुरक्षा के लिए अनेक कानून भी बनाये गये हैं।

पिता की संपत्ति में हक, हिन्दु स्त्रियों को संपत्ति पर अधिकार अधिनियम 1937, हिन्दु उत्तराधिकार अधिनियम 1956, स्त्रियों और कन्याओं का अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम 1956,विशेषविवाह अधिनियम 1954, सति प्रथा निषेध अधिनियम 1839,बाल विवाह निरोधक अधिनियम 1929, हिन्दु गोद लेना तथा भरण पोषण अधिनियम 1956, दहेज निरोधक अधिनियम 1961, हिन्दु विवाह विच्छेद अधिनियम 1955, स्त्रियों का अशिष्ट प्रस्तुतिकरण अधिनियम 1986, कन्याभ्रूण हत्या अधिनियम 1971, आदि अधिनियम महिलाओं की सुरक्षा हेतु बनाये गये हैं। नवीन अधिनियमों के अंतर्गत लिवइन रिलेशन शिप-लिवइन- रिलेशन शिप में रहने वाली महिलाओं को डोमिस्टिक वायलेंस एक्ट के तहत प्रोटेक्शन मिला है। कानूनी जानकारों के मुताबिक लिव में नियम तय किये गये हैं। सिर्फ उन रिश्तों को लिव इन रिलेशन शिप माना जा सकता है जिसमें स्त्री और पुरूष विवाह किये बिना पति पत्नी की तरह रहते हो, इनके लिए जरूरी है कि दोनों बालिग एवं शादी योग्य हों। लिवइन रिलेशन शिप में पैदा हुई संतान वैध मानी जायेगी। और संपत्ति 4 में उसे भी हिस्सा पाने का अधिकार होगा।

सेक्शुअल हैरेसमेंट से प्रोटेक्शन एक्ट-इसके तहत आई.पी.सी. की धारा 354ए के तहत प्रावधान है कि सेक्शुअल नेचर का कांटेक्ट करना एवं सेक्सुअल फेवर मांगना आदि छेड़छाड़ के दायरे में आयेगा। इसमें दोषी पाये जाने पर तीन साल की सजा का प्रावधान है।

कामकाजी महिलाओं के अधिकार -

1. न्यूनतम वेतन अधिनियमय 1948 इसके अनुसार मजदूरी सरकार के द्वारा तय दर से कम नहीं होगी और नगद प्रदान की जायेगी। इसके बाद बेगार श्रम अधिनियम 1951 एवं 1976, खान अधिनियम 1952 पारित किया गया। महिलाओं से एक सप्ताह में 48 घंटे से अधिक कार्य नहीं लिया जा सकता।
2. प्रसूति सुविधा अधिनियम 1961 इस अधिनियम के तहत पहले तीन माह और वर्तमान में छ: माह का अवकाश पूर्ण वेतन का दिया जाता है।
3. समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, समान कार्य हेतु महिलाओं के लिए पुरूषों के समान पारिश्रमिक के प्रावधान हैं।
4. ठेका श्रम अधिनियम 1976, इसमें महिला श्रमिकों को प्रात: 6 बजे से सांयकाल 7 बजे के बीच 9 घंटे से अधिक काम लेने पर रोक लगाने हेतु यह नियम पारित किया गया।
5. बागान व श्रम अधिनियम 1951, इसमें महिला कर्मचारी को बच्चों को दूध पिलाने हेतु अवकाश देने की आवश्यक रूप से व्यवस्था करने हेतु प्रावधान किया गया है।

सुझाव - आज की नारी किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं है वास्तव में आवश्यकता महिला आन्दोलनों की नहीं है, बल्कि महिलाओं के समग्र विकास व सशक्तिकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें समाज की मानसिकता को बदलना होगा, तथा सामाजिक स्तर पर नारी को मान्यता प्रदान करनी होगी। अबला को सबला बनाना होगा तभी हम वर्षो से बनी तस्वीर तथा तकदीर को बदल सकेगें। महिलाओं को समानता का दर्जा देना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. देवसरे विभा- घरेलू हिंसा वैश्विक प्रयास।
2. शर्मा मंजू- नारी शोषण और मानवाधिकार।
3. आहूजा राम - सामाजिक समस्याएं।
4. श्रीवास्तव सुधारानी- मानवाधिकार एवं महिला उत्पीड़न।
5. गुप्ता सुभाषचन्द्र - कार्यशील महिलाएं एवं भारतीय समाज।
6. शर्मा रमा मिश्रा एम के - भारतीय समाज में कार्यशील माहिलाएं।

****

स्वरोजगार से महिला सशक्तिकरण

डॉ. निशा जैन *

प्रस्तावना – विकासशील देशो में महिलाऐं बहुत तथा महत्वपूर्ण तथा लाभ संवाहक मानवीय घटक हैं। आर्थिक शक्ति में उनका योगदान 30 प्रतिशत से भी अधिक आंका गया है। इसी कारण भारतीय नियोजन के व्यापक प्रारूप में परिवार कल्याण पोषण एवं महिला तथा बच्चो के लिए शिक्षा को समन्वित करके न्यूनतम स्वस्थ्य सुविधाओं को प्रदान करने पर विशेष बल दिया है। महिलाओं की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति में उल्लेखनीय सुधार करने की दृष्टि से उन्हें विकास की मुख्य धारा में अगली सीढ़ी पर खड़ा करके तथा सामाजिक संसाधनों एवं सामग्री पर नियंत्रण करने के लिए विविध कल्याण एवं विकास सेवाओं का शुभारम्भ किया गया। विभिन्न क्षेत्रों और पहलुओं में अधिकार सम्पन्न आत्म निर्भर बनाने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए गए। वर्ष 1987 में राष्ट्रीय महिला अयोग की स्थापना, 73वाँ संविधान संशोधन के अंतर्गत महिलाओं को अधिकार सम्पन्न बनाने के प्रयास, पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत सीटों का आरक्षण, राष्ट्रीय महिला नीति की घोषणा वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में घोषित करना तथा महिला अस्मिता की सुरक्षा एवं महिला उद्यमिता के प्रोत्साहन हेतु चलाई जा रही विभिन्न योजनाऐं इन्ही प्रयासो के कुछ उदाहरण है।

राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हुए विभिन्न अध्ययन इस तत्य का खुलासा करते है कि समाज में स्त्री पुरूष असमानता कम करने से अधिक आर्थिक समृद्धि आ सकती है और गरीबी कम करने में मदद मिल सकती है। समाज में महिलाओं का दर्जा बढ़ाने का एक महत्वपूर्ण उपाय स्वरोजगार है। जिससे एक तरफ वे आय अर्जित करने में समर्थ होती है वही उनमें आत्मविश्वास की वृद्धि भी होती है जिसके फलस्वरूप वे संसाधनों पर अधिक नियंत्रण रख सकती है। आज के आधुनिक आर्थिक युग में महिलाओं के सर्वाणीय विकास के लिए उनका अर्थिक विकास से तात्पर्य है कि महिलाओं की जीवन निर्वाह के लिए जिन मूलभूत आवश्यताओं की जरूरत होती है, वे मानवीय गौरव व मूल्यों को कायम रखते हुए प्राप्त हो जिससे महिलाएं आत्मनिर्भरता एवं सम्मान से अपना जीवन व्यतीत कर सके।

वर्तमान में भारत में ऐसी महिलाओं की संख्या बहुत अधिक है, जिन्हें जीवन जीने के लिए बहुत ही संघर्ष करना पड़ता है। जिसमें अधिकांश रूप से उन्हें कई समस्याओं का सामना अर्थिक क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने के लिए करता पड़ता है। कई अध्ययनों से जानकारी मिली है कि – 'महिलाऐं कुल काम का 23 भाग काम करती हैं क्योंकि महिलाओं के कई कार्यों से प्रत्यक्ष आमदनी नहीं होती है जैसे घर के काम, बच्चों का पालन पोषण, पारिवारिक स्वजनों की सेवा कई ऐसे अनौपचारिक कार्य महिलाएँ करती है, जिसका आय प्राप्ति से सीधा संबंध नहीं होता।'

महिलाओं के श्रम को **'आय प्राप्ति'** में गिना जाऐं और उन्हें आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त हो इस उद्देश्य को लेकर महिलाओं को स्वरोजगार और प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जा रहे है। भारत में या विश्व में अन्य देशों में स्वरोजगार द्वारा जीवन या पकरने के लिए आमदनी या आय प्राप्त की जाती हे। स्वरोजगार कार्य का अर्थ है कि स्वयं व्यवसाय मजदूरी करके या वस्तुओं को बनाकर बेचा जाए और उससे प्राप्त धन से अपना जीवन निर्वाह किया जाए, उससे नियमित आय का प्रावधान नहीं होता ऐसा अनुमान है कि भारत में नियमित रोजगार प्राप्त करने वालों मे महिलाओं की संख्या केवल 6 प्रतिशत है और निर्वाह के लिए आय या आमदानी प्राप्त करने का कार्य करती है। **('इला भटट 145')** स्वरोजगार को तीन भागों में बांटा गया है –

1. **घर पर काम करने वाली महिलाऐं** – बीड़ी, अगरबत्ती बनाना, पापड़, आचार, मसाला, बनाने वाले सिलाई, बुनाई का कार्य, हस्त उद्योग को कार्य करने वाले ये सभी ऐसे कार्य है जिन्हें महिलाऐं घर में रहकर करती है।
2. **सड़कों एवं गलियों में फेरी लगाकर अपना समान बेचने वाली महिलाऐं–** सब्जी बेचने, मनिहारी का समान बेचने वाली, चूड़ी बेचने वाली आदि।
3. **वे मजदूर महिलाऐं जो विविध सेवाओं को बेचकर कार्य करने वाली महिलाएं** –कृषि कार्य, बांध बनाने का कार्य, मकान बनाने, जंगली उत्पादन को इकट्ठा करके बेचने वाले कार्य।

उपरोक्त तीनों तरह के गृह रोजगार उद्योगों के माध्यम से महिलाऐं अपने जीवन एवं परिवार की भौतिक आवश्यकताओं की सहज उपलब्धता का कार्य करती रही है। उपरोक्त स्वरोजगार लघु उद्योगों के माध्यम से अपनी जीविका यापन करने के साथ–साथ अपने परिवार के सदस्यों की भी आर्थिक आवश्कता पूरी कर रही थी परन्तु अपने उद्यम का अपेक्षित लाभांश का प्रतिशत प्राप्त करने में वे पूर्णत: सफल नहीं हो पाती है। इसका प्रमुख कारण वे चुनौतियां व समस्याऐं है जिनका सामना स्वरोजगार से जुड़ी महिलाओं को आये दिन करना पड़ता है। महिला उत्थान हेतुदिन प्रतिदिन नई–नई योजनाएं घोषित होने के बाबजूद तथा महिलाओं की भागीदारी के बिना देश समाज की सफलता असंभव मानने के बावजूद जब महिला उद्यमियों की समस्या या परेशानी की बात आती है तो आज भी वही वस्तुस्थिति देखने को मिलती है जो आज से कई दशक पहले देखने को मिलती थी। यही वजह है कि महिलाओं के आर्थिक उत्थान हेतु प्रस्तुत की गई कई योजनाओं के संचालन में इसके संचालक इसलिए हिचकिचा रहे है क्योंकि महिलाएं इन योजनाओं का लाभ पूरा नहीं उठा पा रही है कुछ महिला उद्यमी को छोड़ दिया जाए तो अधिकांश महिला उद्यमी नाम मात्र की महिला उद्यमी है तथा उनमें से भी अधिकांश का कार्यक्षेत्र पापड़, बीड़ी निर्माण, रेडीमेड गारमेंटस, बीड़ी अगरबत्ती निर्माण तक ही सीमित है। यही वजह है कि महिला उद्यमियों द्वारा प्राय: यह शिकायत रहती है कि उन्हें गम्भीरता से नहीं लिया जा रहा है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

समस्त क्षमताएं होने के बाबजूद समाज के आर्थिक विकास में वह योगदान नहीं दे पा रही है। जितना कि अपेक्षित है। सम्भवत: इसका प्रमुख कारण हो सकता है। – महिलाओं के वे विशेष जिम्मेदारी कठिनाइयां जो पुरूष उद्यमी के सामने नहीं होती।

महिलाओं को स्वरोजगार के लिए प्राय: कच्चे माल की समस्या, बिजली की समस्या, मार्केट की समस्या, आदि समस्याओं के साथ–साथ अनेक अन्य समस्याओं से भी जुझना पड़ता है। महिला उद्यमियों को जिन प्रमुख अवरोधो का सामना करना पड़ता है वे प्रमुख समस्याऐं है –

महिलाओं की गतिशीलता पर सीमाएं – महिला उद्यमियों पर किए गए एक शोध अध्ययन में स्वरोजगार से जुड़ी महिलाओं का साक्षात्कार लिया गया तो पाया कि महिला उद्यमी की प्रमुख समस्या क्रयादेश प्राप्त करने हेतु आने जाने में कठिनाई होना, कच्चा माल खरीदने हेतु दूसरे शहर या संचालक के यहां आने जाने में कठिनाई होना। निश्चित है महिला द्वारा अपना रोजगार संचालित करने से संबंधित महसूस की जाने वाली प्रमुख समस्या है। जो महिला उद्यमी इस वस्तु स्थिति का सामना करने के लिए तैयार रहती है वे अंतत: सफल हो जाती है शेष घबराकर उद्योग व्यवसाय छोड़कर घर बैठ जाते है।

निर्णय क्षमता का अभाव – रोजगार के क्षेत्र में सफल होने के लिए एक आवश्यक तत्व होता है उचित समय पर सही निर्णय लेने की क्षमता। दुर्भाग्यवश महिलाओं में इस क्षमता का बहुधा अभाव पाया जाता है। प्रमुखत: उस वस्तु स्थिति के जिम्मेदार है हमारी भारतीय सामाजिक व्यवस्था जिसके अंतर्गत महिलाओं को बचपन से ही अधिकांश: आत्मनिर्णय लेने की स्वतंत्रता नहीं होती तथा इसी वस्तु स्थिति से उसे जीवन भर गुजरना पड़ता है। इस प्रकार उन्हें जीवन भर स्वतंत्र निर्णय लेने का मौका ही नहीं मिलता तथा स्वंतत्र रूप से निर्णय न ले पाने की उनकी क्षमता अंतत: उद्यमी के रूप में उनकी रोजगार में सफलता को प्रभावित करती है।

वर्तमान व्यवसाय व्यवस्था से समझौता – भ्रष्टाचार हमारे जीवन का विशेषकर व्यवसायिक जीवन का एक ऐसा अभिन्न अंग बन चुका है कि इसे भ्रष्टाचार न कहा जाकर 'शिष्टाचार' की संज्ञा दी जाती है। इस वस्तु स्थिति में सभी महिलाऐं कार्य नहीं कर पाती तथा प्रचलित व्यवसायिक तरीकों से समझोता न कर पाने के कारण इनमें से अधिकांश महिलाएं अपना कार्य नहीं करवा पाती है। वैसे भी महिलाएं ईमानदार होती है। जो सदैव व्यवसाय के हित में नहीं होता है। इसका अंतत: प्रतिकूल प्रभाव रोजगार की सफलता पर पड़ता है।

भारतीय पुरूष की दोहरी मानसिकता – अधिकांश पतियों द्वारा खड़ी की गई समस्याओं का समाना महिलाऐं नहीं कर पाती तथा यहां आकर महिला उत्थान तथा महिला स्वतंत्रता की अधिकांश बाते धरी की धरी रह जाती है। वस्तु स्थिति ओर भी ज्यादा खराब हो जाती जब इसमें भारतीय पुरूष की दोहरी मानसिकता आड़े आने लगती है। 21 वीं सदी की बात करने वाला पुरूष आज भी वही दोहरी मानसिकता लिए बैठा है। जिसमें पिस रही महिला उद्यमी।

समय प्रबंधन का अभाव – भारतीय महिला चाहे कितने भी बड़े पद पर कार्य कर रही हो चाहे कितनी भी आधुनिक हो, चाहे कितनी भी बड़ी उद्यमी हो उसके सामने सर्वप्रमुख प्राथमिकता उसका **'घर–संसार'** होता है। ऐसा इसलिए नहीं कि समाज की उससे यह अपेक्षा होती है बल्कि विशेषकर इसलिए भी क्योंकि बचपन से ही उसके मन मस्तिष्क में यह बात बैठी हुई है कि वह कितनी भी बड़ी अधिकारी हो जाए यदि वह अपने बच्चों को पर्याप्त समय नहीं दे पाती अथवा बच्चों का सही लालन पालन नहीं कर पाती तो बाकी बेकार है। यही वजह है कि महिलाओं द्वारा स्थापित की गई इकाइयों में वे पर्याप्त समय ध्यान नहीं दे पाती तथा प्राय: उनके द्वारा स्थापित रोजगार की ईकाइयां अपनी स्थापित समता के 90–50 प्रतिशत तक भी नहीं चल पाती है।

उपरोक्त अवरोध की चर्चा का मूल उद्देश्य महिलाओं को उन परेशानियों से अवगत कराना था जो उनके स्वरोजगार व्यवसायिक जीवन में आने की संभावना है। यदि महिलाएँ इन अवरोधों को समाप्त कर उचित रणनीति के साथ स्वरोजगार के क्षेत्र में आगें आती है तो निश्चित ये व्यवसाय महिलाओं के सशक्तिकरण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकते है। क्योंकि यही स्वरोजगार उन्हें आर्थिक क्षेत्र में स्वावलम्बी बनाएगें बल्कि उनके स्वाभिमान, गौरव व आत्मनिर्भरता में भी वृद्धि करेगें। परिणामस्वरूप महिलाओं की कार्य क्षमता में भी बढ़ोत्तरी होगी। आज भारत दुनियाँ भर में महिलाओं द्वारा संचालित स्वरोजगार के क्षेत्र में सर्वोपरि स्थान रखता है। किन्तु हमारे देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक, राजनीतिक व व्यवहारिकता व साध्यता में अनेक चुनौतियों खड़ी होती है। इन चुनौतियों को कम करने में महिला संगठनों, समाजसेवी, संस्थाओं, गैर सरकारी संगठनों, सरकारी एजेसियों इत्यादि द्वारा कार्य किया जा रहा है। जिसके फलस्वरूप महिला स्वरोजगार की सक्रियता व सामाजिक अर्थिक जीवन में भागीदारी व महिला सशक्तिकरण से उनके जीवन के विविध क्षेत्रों में परिवर्तन देखने को मिल रहा है जिसके द्वारा महिलाओं के स्वयं पर निर्णय, अपने परिवार के बारे में महत्वपूर्ण निर्णयों में साझेदारी तथा घर से बाहर रोजगार संबंधी कार्यो में निर्णय की भूमिका निर्धारित करता है। इसके तहत् महिलाओं में सुरक्षा की भावना, मात्त्व, मृत्यु दर में कमी इत्यादि रूप में देखा जा सकता है। सशक्तिकरण महिलाओं द्वारा अपनी क्षमता के दायरे में आत्म विश्वास एवं आत्मसम्मान की भावना भी शामिल होती है। महिलाओं को सशक्त करने में कुछ कारकों की अहम भूमिका होती है जैसे–शिक्षा, स्वास्थ, रोजगार, प्रशिक्षण प्रौद्योगिकीय ज्ञान में स्वरोजगार के माध्यम से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समानता स्वतंत्रता व न्याय के उचित अवसर प्राप्त करके आत्म निर्भर बनकर गौरवपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. इला यह – महिलाऐं और सर्व विकास 1994
2. दिलीप बासु – भारत में आर्थिक विकास 1986
3. पुष्पा मोतीयानी – महिला विकास की नई दिशाऐं 1998
4. आशुरानी – महिला विकास कार्यक्रम 2006
5. डॉ. सुभाष चंद्रगुप्ता – कार्यशील महिलाऐं एवं समाज 2007

****

The Evolution Of Gender Discrimination Gender : India Better Than Neighbours

Dr. Mamta Barman *

Abstract - There is an everygrowing interest in **Women Studies** in various fields of disciplines such as sociology, anthropology, psychology, political science etc. in the new millennium. Both males as well as females are talking about the rights of and social justice for women at state, national and global level. Research on women has focused on such diverse issues as women's status, role definitions, autonomy, empowerment, gender discrimination etc., The present article sheds light on the changing attitude towards women and the **evolution of gender discrimination.**

Introduction - Gender is a basic element in-self concept. Knowing that "I am a man" or "I am a woman" is as core part of our personal identity. Knowledge that we are male or female, our sense of **Gender Identity** is acquired early in the life.

Within sociology, 'discrimination' is the prejudicial treatment of an individual based on their membership in a certain group or category. Women & men are considered as the supporting counterpart for each other. Gender discrimination is the major conflict in this systematic support. It is often based on gender stereotypes of a particular society. Gender stereotypes are beliefs about the typical personal attributes of males & females. Cultural stereotypes are societal level of images of the sexes found in the media, art and literature. Personal stereotypes are the unique beliefs held by an individual about the typical attributes of men and women. Four broad perspectives on the causes of gender differences emphasize the influence of biology, childhood socialization, social roles and social situation.

A biological approach emphasizes the impact of physical differences, harmones and genetics. A childhood socialization approach emphasize ways in which we acquire relatively stable gender-typed characteristics through social learning processes. A social roles perspective emphasize that people tend to conform to the expectations of gender-linked social roles such as nurse or husband. A final approach emphasizes that people's behaviour varies from situation to situation, depending on such factors as the sex composition of the group, the nature of the task or activity and the social expectations of others.

'Gender is a social differentiation of individuals which categorizes them as 'masculine' and 'feminine'. Gender discrimination in its originality is a phenomenon, by which the role of individuals is determined with in a particular society. Gender Discrimination allows the distribution of the social responsibilities among the members of the society in such an effective manner that one can fulfill his/her responsibilities by using his/ her physical and mental capabilities at optimum. The conflict of gender discrimination arises when only physical part of one's strengths is considered and the mental part is neglected. It is responsible for many types of injustice. And when there is unfair environment with unequal distribution of opportunities, the balance of the world disturbs, and one of the counterparts which nature has designed to support the other one loses its potential to support the other. It is a long term issue. Formulating a law is not the solution of the problem. Laws which have already been made are comprehensive. Need is there to put them in practice. Domestic regional and international organizations should plan and execute these laws in collaboration with the local governments. Mass media can play a vital role in bringing awareness among the general public.

Evaluating Performance - In the word of work stereotypes often depict men as more competent than women. In on national survey, male managers generally perceived women workers as lower than men in skill, motivation, and work habits (Rosen & Jerdee 1987).

Gender is only one of many factors that affect how we assess other people. Research has found that men's success is more often seen as resulting from ability. In contrast, women's success is more often attributed to the ease of the task (Feather & Simon, 1975), to extreme effort (Taynor & Deanx, 1975), or to luck (Deanx & Emswiller, 1974). Yee & Eccles : 1988, studied gender-based attribution differences, and found that parents gave significantly different explanation for the performation of sons versus daughters. Mother credited a son's success more to talent than a daughter's, mother attributed a daughter's success more to effort than a son's.

Gender : India Better Than Neighbours - The World

* **Asst. Prof. (Psychology) Govt. P.G. College, Narsinghpur (M.P.) INDIA**

Economic Forum's Gender Gap Report States, "No country in the world has yet managed to eliminate the gender gap."

Discrimination varies between countries. The U.S. Bureau of Labour Statistics cites (2009) women working 41 to 44 hours per week earn 84.6% of what men working similar hours earn. It gets worse as women work longer hours – women working more than 60 hours per week earn only 78.3% of what men in the same time category earn.

The China's leading headhunter, Chinahr.com, reported (2007) that the average salary for white-collar men was 44,000 yuan ($ 6,441), compared with 28,700 yuan ($ 4,201) for women.

The PwC research found that among FTSE 350 companies in the U.K. in 2002, almost 40% of senior management posts were occupied by women. When that research was repeated in 2007, the number of senior management posts held by women had fallen to 22%.

The gender ratio of population, that is the proportion of females per thousand males, has grown from 933 in 2001 to 940 in 2011 in India.

Even as the latest UNDP Report rank India 119 in the Human Development Index. Women don't seem to be doing too badly in India, when we consider just South Asia. Indias gender-related development index (GDI) rank is 96 out of 177 countries, one of the best in the region if we do not count Sri Lanka, way ahead at rank 68. But, as always, the ranking hides more than it reveals about gender equality. While Sri Lanka soars ahead on most counts, when it comes to women's political participation, it is behind most countries in the region and so is India. Pakistan leads the way with 20.4%, highest percentage of women in Parliament. In Sri Lanka, the figure is 4.9% and in India 9.2%. Bangladesh too is better off with 14.8% of seats in Parliament held by women.

WOMEN ON TOP

Country	GDI Rank	Women at Ministerial Level %
India	96	3.4
Bangladesh	102	8.3
Pakistan	105	5.6
Nepal	106	7.4
Sri Lanka	68	10.3
China	64	6.3

Female life expectancy in India is 65.3, Bangladesh is not too far behind at 64.2 – years. Sri Lanka is way ahead with a female life expectancy of 71.3 and its adult female literacy rate is almost double the India figure of 47.8%. India's only comfort is that it has better literacy rates then Pakistan and Nepal.

In gross school enrollment of women too, India's percentage is just 58, same as Bangladesh. On most counts, including the GDI ranking China (Rank 64) is far ahead of all the countries in South Asia. The estimated earned income of women in India is $ 1,471 per capita in purchasing power parity (PPP) terms, might be high in the region, but again Sri Lankan women earn almost twice as much and Chinese women three times the amount.

Yet again, Bangladesh is close behind India with it's women earning $ 1,170 while in Pakistan & Nepal, they earn less than $ 1,000 per capita. Interestingly, when it comes to the proportion of females involved in economic activity, Sri Lanka & India are almost equally badly off – India's rates is 34% & Sri Lanka's is 35%. Here, Bangladesh does a lot better with 52.9% and Nepal with 49.7%.

What is really revealing in terms of gender disparity is a comparison of the time spent by men & women on market – oriented activity as opposed to non-market activities, which would mean work that is not paid for.

Women in India spend 35% of their time on market activity and the rest on non-market activity. This figure in itself is not too shocking because there is a similar divide, and some-times a sharper one, even in the developed countries, between time spent by women on market and non-market activities.

Finally it may be conclude that, 'gender discrimination' in its originality is not a curse. Nature has structured individuals in different physical proportions, but mental capabilities are kept same for both-men and women. The problem of gender discrimination can be resolved by maintaining a balance between the distribution of responsibilities on the basis of equality and equity.

References :-

1. Internet Sources.
2. Sears, Peplou, Taylor – Social Psychology, Seventh Edition.
3. UNDP Report Card.

****

Effect Of Locality On Mental Health Of Middle And High School Students

Kamlesh Upadhyay *

Abstract - The purpose of the study is to find out the effect of locality and level of education on mental health. A 2x2 factorial design was followed for this purpose. **M*ental Health scale constructed by Dr.Kamlesh Sharma , Indore*** was used for the random collection of data. 40 students (20 Rural and 20 Urban) from class VIII and 40 students (20 Rural and 20 Urban) from studying in class XII were taken as subjects. The results indicate that – **(a)** Locality area dose not affect significantly to the mental health. (**b)** Level of education affects mental health at .01 level of confidence **(c)-** The interaction of locality and Level of education affect significantly at .05 level to the mental health**. (d)** Students of class XII differ significantly at .01 level of significance in relation to their mental health.

Introduction - There was hardly any research data available on mental health in India at the time of independence. The first major mental health survey was undertaken by aegis of ICMR in Agra,U.P.,in a study sample of 29,468 in 1961. NATIONAL MENTAL HEALTH PROGRAMM formulated in august 1982 and the NATIONAL HEALTH POLICY adopted by the parliament in 1983. Indian Council of Medical Research (ICMR) was established in 1984 and with this mental health research in India (Technical Monograph on ICMR Mental Health Studies) was began. **(1)**As many as 450 million people suffer from a mental or behavioral disorder. Nearly one million people commit suicide every year.WHO's Mental Health Programme (mhGAP) is based on strategies aimed at improving the mental health of population. For the fulfillment of this purpose WHO is undertaking different projects and activities.

WHO is also developing guidelines for mental health interventions in emergencies, and for the management of depression, schizophrenia, alcohol-related disorders, drug use, epilepsy and other neurological disorders. **(2)**Mental health is defined as, "A state of well-being in which every individual realized his or her own potential, can cope with the normal stress of life, can work productively and fruitfully, and is able to make a contribution to her or his commitment." Mental illness are common and universal. Worldwide, mental and behavioral disorders represented 11 percent of the total disease. This is predicted to increase to 15 percent by 2020 (WHO2001b). **(3)**

"If you don't have the capacity to change yourself and your attitudes, then nothing around you can be changed." –The Koran

Objectives –To measure the effect of Mental Health, the following criteria were taken under this study -

A. Effect of Locality Area on Mental Health.

B. Effect of Level of education on Mental Health.

C. Effect of interaction between locality area and level of education on Mental Health.

Hypothesis –To examine the relevance of above mentioned criteria it is hypothesized that, statistically there exist no significant difference between the means of the following groups –

H01— Locality Area –Rural and Urban.

H02- Level of Education –Class VII and IX.

H03 -Interaction between locality area and level of education on Mental Health.

Sampling –The sample of the present study was collected from the Neemuch district of M.P. 40 students (20 Rural and 20 Urban) from class VIII and 40 students (20 Rural and 20 Urban) from studying in class XII were taken as subjects randomly ,with age of the subjects from 11 to 18 years.

Tool used – M*ental Health scale constructed by Dr. Kamlesh Sharma , Indore* was employed for the random collection of data .Subject was asked to respond in three different categories like–Yes, indefinite and No. Out of total 60 items 30 were positive and 30 were negative equally. The scoring for Positive items are 2 marks for yes, 1 mark for indefinite and zero for no response and just reverse for process has been adopted for negative statements.

The scale was standardized on a sample of 1200 male and female Ss, aging from 11to 45 years. The reliability of the test is .86 to .88 and the validity is .79. Category of mental health can be sorted out by the Ss raw scores, with the help of Percentile Norms given in the manual.

Design –A 2x2 factorial design was followed for the study .The data was collected on 80 Ss from VIII and XII. Totally40 male and 40 female studying in class VIII and XII. They are hailing from rural and urban areas of Neemuch Dist. in M. P.

***Asst. Professor (Psychology) S.R.J. Govt. Girls College, Neemuch (M.P.) INDIA**

Analysis and data interpretation

Table -1 - (See)

Table -1 presents the results of analysis conducted on the impact of mental health based on locality area. The result clearly reveals that no significant difference exist in the mental health of rural and urban Ss. Subjects with (t-cal=0.27;t-crit=2.64;df=78;P>.01 level) is not significant, Which means hypothesis **H01** , is accepted in favors of urban subjects.

Table -2 - (See)

Table -2 presents the results of analysis conducted on the impact of mental health based on level of education. The result clearly indicates that significant difference exist in the mental health of Ss studying in class VIII and XII. Subjects, with (t-cal= 3.02; t-crit=2.64;df=78;P<.01) is significant at .01 level. Therefore null hypothesis (**H02)** that there exists no significant difference between the mental health of the students of class VIII and XII stands rejected in favor of XII class Ss.

T**able -3 - (See in the next page)**

Table -3 shows the results of analysis of variance (ANOVA) on the impact of interaction between the locality area and level of education on mental health. The analysis indicates that there exists significant difference between the interactions of both independent variables. Subjects with (F-cal=3.239;F-crit=2.02; df=3,76 ; at p<.05 level),Which means hypothesis H_{03},is rejected .

Table -4 - (See in the next page)

Table -4 shows the't'-value of groups of the study. Although statistically obtained most of the't'-values are not found significant, Even on the basis of means it is clear that urban/ rural Ss of class xii are having better mental health, in compare to urban/rural Ss of the class viii. It is also noticeable that rural Ss of class xii are having more mental health in comparison to urban Ss of same class. Rural Ss of class xii differ significantly from urban Ss (t=2.68;df=38;p>.05=2.02) at .05 level of confidence in relation to their mental health.

Inferences –

1. A significant effect of locality area on mental health is not found.
2. Level of education affects significantly to the level of mental health.
3. A significant effect of interaction between locality area and level of education is found on mental health.
4. On the basis of mean it is explored that rural Ss of class xii were having better mental health than other counter parts of the study.
5. Whereas the rural Ss of class viii were having the least mental health in comparison to other groups of the study.

Recommendations –

1. Urban Ss are having lesser mental health in compare to rural Ss. They are suggested to make a balance between their behavior and feelings in life for the improvement in their mental health.
2. Class VIII Ss are suggested to manage the level of mental health for coping up with school and family pressures of the life.
3. To keep up your behavior within the limits is essential for the improvement in the level of mental health.
4. Be practical, realistic and facts oriented in your life, for maintaining the higher level of mental health.
5. Ss of class XII are suggested to keep up the process of mental health managed by them.

References :–

1. Dr. Bela Shah et al, "Mental Health Research in India." Division of Non-communiciable Diseases 2005,A Project report by ICMR, pp-01-136
2. World Health Organization, "Inveating in Mental Health." 2003, Department of Mental Health and Substance Dependence,Geneva27,Switzerland,ISBN 9241562579 PP01-43
3. www.who.int/factfile/mental-health/en/
4. Kavita Dhakad, "A Comparative Study of Mental Health." A filed study report submited under my supervision in the Department of Psychology, SRJ Government Girls' College, Neemuch affiliated to Vikram University, Ujjain. (M.P.)
5. A Manual of M*ental Health scale constructed by Dr. Kamlesh Sharma , Indore.*

Table -1: t-Test showing the impact of mental health on Locality area.

Locality Area	N	Mean	SD	df	t-cal	t-crit	Decision
Rural	40	76.98	12.65	78	.27	2.64	Non-significant
Urban	40	77.78	13.62				

Table -2: t-Test showing the impact of mental health on level of Education

Level of Education	N	Mean	SD	df	t-cal	t-crit	Decision
Class VIII	40	73.13	12.77	78	3.02	2.64	Significant
Class XII	40	81.63	12.11				at .01 level

Table - 3 - ANOVA source Table summary of Locality area and level of Education on mental health

Source of variation	Sum of Squares	df	Mean Squares	F-cal	F-critical	Decision
Between group	1568.25	3	522.75	3.239	2.02	Significant at .05 level
Within group	12264.50	76	161.38			

Table - 4 - Showing the mean, SDs and t- values of allthe groups of the study

S.No.	Groups of the study	Means	SDs	t-cal	t-Crit	Descion
I	Only Urban	73.90 80.05	3.70 3.27	1.54	2.71	NS
II	Only Rural	72.35 83.20	3.42 3.64	2.68	2.02	Sig at .05
III	Only VIII	73.90 72.35	3.70 3.42	.37	2.71	NS
VI	Only XII	80.05 83.20	3.27 3.64	.81	2.71	NS

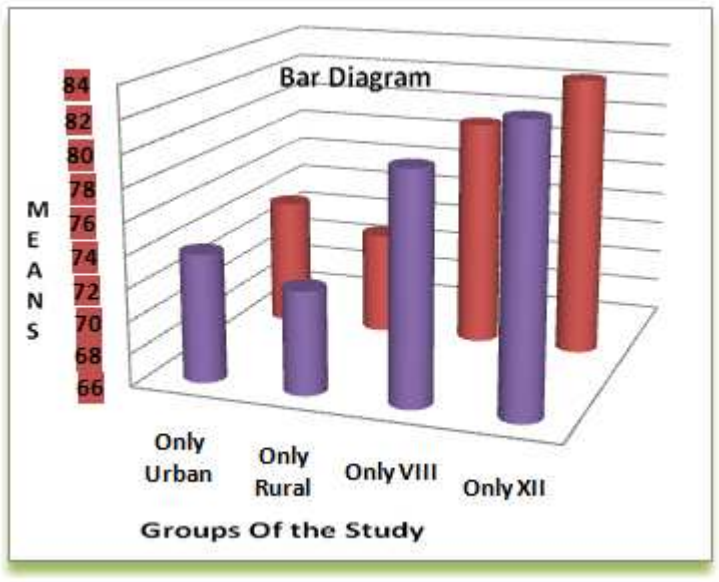

****

पर्यावरण सुरक्षा में पर्यावरण शिक्षा का योगदान

सुधा शाक्य *

शोध सारांश – मनुष्य एवं पर्यावरण एक दूसरे के अभिन्न अंग हैं। व्यक्ति के चारों ओर की प्रकृति तथा मानव निर्मित जो वातावरण है उससे ही मिलकर 'पर्यावरण' का निर्माण होता है, और इसी पर्यावरण में व्यक्ति का संपूर्ण जीवन व्यतीत होता है। इस पर्यावरण का सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव हमारे जीवन, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, कार्यक्षमता आदि पर होता है। अध्ययनों से भी ज्ञात हुआ है स्वच्छ वातावरण में रहने वाले व्यक्तियों का शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, कार्य क्षमता प्रदूषित वातावरण में रहने वाले व्यक्तियों की तुलना में उत्तम होती है। इसलिए यह हर व्यक्ति का नैतिक दायित्व है कि वह पर्यावरण की सुरक्षा करे और इसके लिए पर्यावरण शिक्षा देना अनिवार्य है। प्रस्तुत शोध आलेख पर्यावरण सुरक्षा में पर्यावरण शिक्षा का क्या योगदान है के उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रस्तुत है। वर्तमान में मुख्य रुप से जनसंख्या वृद्धि की समस्या, प्राकृतिक संसाधनों के ह्रास की समस्या तथा प्रदूषण की समस्या, परिलक्षित हो रही है, जिसके दुष्प्रभाव से अन्य कई प्रकार के संकट उत्पन्न हो रहे हैं, इसलिए इन सभी समस्याओं से उबरने एवं मुक्त होने के लिए 'पर्यावरण शिक्षा' की नितांत आवश्यकता महसूस हो रही है। पर्यावरण शिक्षा की विभिन्न शिक्षण विधियों जैसे भ्रमण प्रविधि, विचार विमर्श विधि, समस्या समाधान विधि, परियोजना विधि, क्रियात्मक विधि, खोल विधि, सूचना एवं संचार विधि आदि के द्वारा व्यक्तियों में पर्यावरण जागरुकता लाकर पर्यावरण संरक्षण सुरक्षा एवं संवर्धन किया जा सकता है। यदि पर्यावरण सुरक्षित रहेगा तो मानव का अस्तित्व भी सुरक्षित रहेगा।

प्रस्तावना – व्यक्ति के आसपास या चारों ओर जो कुछ भी है वही उसका पर्यावरण है। व्यक्ति के चारों ओर फैले हुए वातावरण को पर्यावरण की परिधि में माना गया है। टेल्सले महोदय ने वातावरण में प्रभावकारी दशाओं का वह योग माना है जिसमें जीव रहते हैं। पर्यावरण के अंतर्गत हमारी सारी धरती और उस पर उपस्थित प्रत्येक वस्तु आती है। जे.एस.रॉस ने भी पर्यावरण को एक बाह्य शक्ति माना है जो हमें प्रभावित करती है। पर्यावरण और मानव का घनिष्ठ संबंध है। पर्यावरण के अंतर्गत संपूर्ण प्रकृति, नदियां, जलाशय,वन, झरने, पर्वत श्रंखला, चट्टान, खनिज पेड़ पौधे, वायु, भूमि, जल, ताप, वन्य प्राणी सभी आते हैं। इनके बिना मानव के जीवन का अस्तित्व ही नहीं है। महान दार्शनिक अरस्तु का कथन है कि 'स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास रहता है।' हम तभी स्वस्थ्य रह सकते हैं जब हमारा पर्यावरण शुद्ध, स्वस्थ तथा सुरक्षित रहेगा। पर्यावरण को सुरक्षित रखने की अवधारणा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। जल, भूमि, पेड़ पौधों की पूजा करना हमारी संस्कृति में है परंतु आज विकास हमारे लिए वरदान साबित हो रहा है। परंतु इस विकास की दौड़ में हम अपने ही पर्यावरण को क्षति पहुंचा रहे हैं। ऐसी स्थिति के लोगों में पर्यावरण के प्रति जन–चेतना लाना, जागरुकता एवं सुरक्षा की भावना लाना अतिआवश्यक हो गया है, जो 'पर्यावरण शिक्षा से संभव है। पर्यावरण से संबंधित समस्त जानकारियां देना चाहे वह संरक्षक, संवर्धन या प्रदूषण से संबंधित हो पर्यावरण शिक्षा के अंतर्गत आती है। पर्यावरण शिक्षा से तात्पर्य विश्व समुदाय के पर्यावरण के संबंध में ही दी जाने वाली वह शिक्षा है, जिससे वे समस्याओं से अवगत होकर उनका हल खोज सकें, और साथ ही भविष्य में आने वाली समस्याओं को रोक सकें। शिक्षा हमें सिर्फ स्वयं के पर्यावरण के अनुकूल करना ही नहीं सिखाती वरन् उसे सुरक्षित और नियंत्रित करना सिखाती है। पर्यावरण शिक्षा वह शिक्षा है जो पर्यावरण के माध्यम से पर्यावरण के विषय में पर्यावरण के लिए होती है। रवीन्द्रनाथ टैगोर भी उस समय शांति निकेतन में छात्रों को प्रकृति के और अधिक निकट लाए। पर्यावरण शिक्षा के द्वारा व्यक्ति में चेतना, संज्ञान और समझ विकसित होती है, जिससे वह पर्यावरण का संरक्षण एवं संवर्धन कर सकता है।

पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता – पर्यावरण प्रदूषण एक विश्व व्यापी समस्या बन चुकी है, और आज मानव, जीव जंतु, वनस्पति इस दुष्प्रभाव से अछूते नहीं हैं, आज कहीं भी यदि निगाह उठा कर देखें तो गंदगी, कचरे का ढेर, पशुओं का आवागमन, धुएं उगलती फैक्ट्री, प्रदूषित जल, नदियों तालाबों में गंदगी, वनों की कटाई, लोगों का विस्थापन आदि कई समस्याएं दृष्टिगत हो रही हैं। वहीं जनसंख्या की वृद्धि भी एक गंभीर समस्या होती जा रही है, जिससे भी कई प्रकार की समस्याएं जन्म ले रही हैं। प्रकृति और पर्यावरण असंतुलित हो रहा है। व्यक्ति अपने स्वयं के सुख विकास और स्वार्थ के लिए प्राकृतिक संसाधनों का दोहन निर्दयता से कर रहा है। व्यक्तियों में वातावरण जनित रोग उत्पन्न हो रहे हैं। इन सभी समस्याओं से मुक्त होने के लिए आज पर्यावरण शिक्षा की नितांत आवश्यकता महसूस हो रही है, जिससे व्यक्ति पर्यावरण की समस्याओं को समझ कर उसका समाधान बौद्धिक क्षमता एवं कौशल से कर प्रदूषण से मुक्त होकर प्राकृतिक संसाधनों को सुरक्षित कर सके। नवीन शिक्षा नीति (1986) ने भी विद्यालयों और महाविद्यालयों में पर्यावरण जागरुकता की शिक्षा दिए जाने की आवश्यकता पर जोर दिया है।

पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य –सन् 1975 में ब्रेलग्रेउ में अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में पर्यावरणीय शिक्षा के कई उद्देश्य बतलाए।

1. इसके द्वारा व्यक्ति के पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति जागरुकता एवं संवेदनशील बनाया जा सकता है।
2. पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति समझ विकसित करने और जिम्मेदारी विकसित करने में सहायक है।
3. पर्यावरण के प्रति सामाजिक दायित्व निभाने, पर्यावरण सुरक्षा एवं

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

सुधार के प्रति प्रेरित किया जाता है।

4. पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान करने में सहभागिता के लिए प्रेरित किया जाता है।
5. पर्यावरणीय उपाय एवं विभिन्न क्षेत्रों में मूल्यांकन करने में सहायक है।

पर्यावरण शिक्षण की शिक्षण विधियां – विद्यार्थियों व अन्य व्यक्तियों को पर्यावरण के प्रति जागरुक करने, संज्ञान एवं कौशल विकसित करने, सहभागिता बढ़ाने, पर्यावरण मूल्य विकसित करने, प्राकृतिक संसाधनों के प्रति निष्ठा, सुरक्षा एवं सम्मान की भावना विकसित करने तथा सकारात्मक सोच तथा मनोवृत्ति के विकसित करने के उद्देश्य से विभिन्न विधियों के द्वारा पर्यावरण शिक्षा दी जा सकती है।

1. निरीक्षण विधि।
2. व्याख्यान विधि।
3. खेल विधि।
4. नाटकीय विधि।
5. सामूहिक वाद विवाद।
6. प्रश्नोत्तर विधि।
7. सामूहिक परिचर्चा विधि।
8. सर्वेक्षण विधि।
9. प्रयोगात्मक विधि।
10. क्रियात्मक विधि।
11. शैक्षिक भ्रमण विधि।
12. परियोजना विधि।
13. सेमीनार तथा कार्यशाला विधि।

इसके अलावा शासन द्वारा भी पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन के लिए कई प्रयास, योजनाएं एवं अधिनियम लागू किए जा रहे हैं।

निष्कर्ष – यदि व्यक्ति पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए पर्यावरण शिक्षा की विभिन्न विधियों के आधार पर पर्यावरण के प्रति सकारात्मक सोच को विकसित कर ले वह जीवनपर्यन्त स्वस्थ और खुशहाल जीवन व्यतीत कर सकता है, तथा स्वयं को, वन्य प्राणियों और प्राकृतिक धरोहरों को सुरक्षित रख सकता है।

पर्यावरण सुरक्षा हेतु सुझाव –

1. पर्यावरण को संरक्षित और संवर्धित रखने के लिए हर व्यक्ति को पर्यावरण के प्रति सकारात्मक सोच को विकसित करना होगा।
2. पर्यावरण के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए पर्यावरण जागरुकता से संबंधित विभिन्न कार्यक्रम, नुक्कड़ नाटक, कार्यशाला एवं संगोष्ठियों का आयोजन किया जाए।
3. पर्यावरण की सुरक्षा हेतु शासन द्वारा किए गए प्रयासों को क्रियान्वित करने को जन सहयोग प्रदान किया जाए।
4. पर्यावरण की सुरक्षा हेतु वातावरण को प्रदूषण मुक्त करने में सहयोग प्रदान किया जाए।
5. राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण को क्षति पहुंचाने वाले व्यक्तियों को कठोर आर्थिक दंड का प्रावधान किया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चौधरी, व्ही.(2004), पर्यावरण विकास एवं हमारा स्वास्थ्य, रिसर्च लिंक जर्नल 14, 3 . पृ. 83
2. गौतम, के.(2006), 'पर्यावरण चेतना एवं जनचेतना,' रिसर्च लिंक जर्नल, 32, 5. पृ. 106
3. शर्मा, एच.एस. एवं सिंह, एच.पी.(2010),पर्यावरण शिक्षा शिक्षण, राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा, पृ.140-142
4. तिवारी, ए.(2014), जनसंख्या वृद्धि और पर्यावरण सुरक्षा, कृष्ण कम्प्यूटर्स एंड प्रिंटर्स सागर पृ. 124.
5. ठाकुर, के.(2014), 'पर्यावरणीय समस्या: लोगों का विस्थापन एवं पुनर्वास' Naveen Shodh Sansaar. An International Multidisciplinary Refereed Journal.2, 3, p 248-249

****

भारत का गौरवशाली अतीत व विज्ञान

डॉ. नितिन सहारिया * डॉ. उमाशंकर पटले **

प्रस्तावना – जिज्ञासा खोज तक पहुँचाती है। जब हम वेद, उपनिषद, ब्राम्हण, आरण्यक, पुराण, महाभारत, रामायण आदि भारत का प्राचीन साहित्य पढ़ते हैं। तो उसमें वर्णित कुछ घटनाएँ वैज्ञानिक विकास का आभास देती हैं। जैसे उपनिषद् में वर्णित घटना कि उपमन्यु की नेत्र ज्योति जाती है तो अश्विनी कुमार उसे पुन: ज्योति देते हैं। शाण्डिली के पति की मृत्यु पर अनुसूया उसे पुन: जीवित करती है। च्यवन ऋषि का वार्धक्य अश्विनी कुमार दूर करते हैं। रावण द्वारा विभिन्न भौतिक शक्तियों पर नियंत्रण, त्रिपुरासुर के तीन नगर जमीन, आसमान व जल पर गतिमान होते थे, पौलुमी आकाशस्य नगरवासी असुरो से अर्जुन का युद्ध, विभिन्न देवताओं के अंतरिक्षयान, दिव्यास्त्रो का वर्णन, रामायण में इच्छानुसार चलने वाला पुष्पक विमान आदि पढ़ते हैं। तो चित्र एक विकसित सभ्यता का उभरता हैं। परंतु फिर प्रश्न उठता है, क्या ये मात्र कथा–कहानी या कवि कल्पना हैं। क्योंकि यदि ऐसा हुआ था तो उसकी तकनीक क्या थी? इस तकनीक को बताने वाले ग्रंथ है क्या? यह जानने का प्रयत्न करने में सबसे बड़ी बाधा है, जो जानकारी है वह संस्कृत में है और आज भी हजारों, लाखों पाडुलिपियाँ यत्र–तत्र विखरी पड़ी हैं।

वर्तमान में सूर्य के प्रकाश की चाल $3x10^8$ है। अर्थात 1 लाख 86 हजार मील/ सैकेण्ड की गति से प्रकाश सूर्य से पृथ्वी तक की दूरी तय करता है यही बात ऋग्वेद के प्रथम मण्डल में दो ऋचाओ में कही गई है। इन ऋचाओं (1–71–9, 1–50–9) के भाष्य में सायणाचार्य शीघ्रगमन का वर्णन करते हुए एक श्लोक लिखते हैं जिसमें प्रकाश की गति का वर्णन है–

योजनानां सहस्रे द्वे द्वेषते द्वे च योजने।
एकेन निमिषार्धेन क्रममाण नमोऽस्तु ते।।

अर्थात– अर्ध निमेष में 2202 योजन का मार्ग क्रमण करने वाले प्रकाश तुम्हे नमस्कार है।

इसमें 1 योजन= 9 मील 160 गज
अर्थात 1 योजन= 9. 11 मील
1 दिन रात में = 810000 अर्ध निमेष

इस प्रकार 2202 x 9 . 11 = 20060.22 मील प्रति अर्ध निमेष तथा 20060.22 x 9 . 41 = 188766.67 मील प्रति सेकेण्ड आधुनिक विज्ञान को मान्य प्रकाश गति के यह अत्यधिक निकट है। सिद्धांत शिरोमणीगोलाध्याय–भुवन कोष में एक प्रसंग आता है, जिसमें लीलावती ने हजारो वर्ष पूर्व अपने पिता भास्कराचार्य के प्रश्न पूछा पिताजी, यह पृथ्वी जिस पर हम निवास करते हैं किस पर टिकी हुई है? तब उत्तर में भास्कराचार्य श्लोक कहते हैं कि–

मरूच्चलो भूरचला स्वभावतो यतो।, विचित्रावतवस्तु शक्त्य:।।
आकृष्टिशक्तिश्च मही तयायत् खस्थं, कुरू स्वाभिमुखं स्वशक्तया।
आकृष्यते ततृपततीव भाति समेसमन्तात् क्व पतत्वियं खे।।

अर्थात–पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है। पृथ्वी अपनी आकर्षण शक्ति से भारी पदार्थो को अपनी ओर खींचती है और आकर्षण के कारण यह जमीन पर गिरते हैं पर जब आकाश में समान ताकत चारों ओर से लगे, तो कोई कैसे गिरे? अर्थात आकाश में ग्रह निरावलम्ब रहते हैं। क्योकि विविध ग्रहों की गुरूत्व शक्तियॉ संतुलन बनाये रखती हैं।

आजकल हम कहते है कि न्यूटन ने ही सर्वप्रथम गुरूत्वाकर्षण की खोज की, परंतु उसके 550 वर्ष पूर्व भास्कराचार्य ने यह बता दिया था। विज्ञान की अनेक खोजों को पूर्व में कल्पना का अंधविश्वास माना गया। बहुत सी परिकल्पनाएँ सदियों बाद सिद्धांत बनी। इन अनुभवों से मानव की वैज्ञानिक चेतना विकसित हुई। आज विज्ञान कहता है कि बिना सिद्ध किए, बिना परीक्षण किए किसी बात को मान लेना अंधविश्वास है। पर उन लोगों को क्या कहेंगे जो बिना परीक्षण किए किसी बात को नकार देते हैं।

भारतीय मूल के कैनेडियन–अमेरिकन गणितज्ञ हैं चालीस वर्षीय 'मंजुल भार्गव'। गतवर्ष 2014 में उन्हें गणित के क्षेत्र का नोबल पुरूस्कार कहलाने वाला 'फिल्डस मेडल' पुरस्कार प्रदान किया गया। एक साक्षात्कार में मंजुल कहते हैं। कि– 'मैने अपने नाना से संस्कृत सीखी और भारतीय गणित की प्राचीन परंम्परा का गहन अध्ययन किया। जब मैं बड़ा हो रहा था तो मुझे महान गुरूओ को पढ़ने का अवसर मिला। इनमें पाणिनी, पिंगल, और हेमचंद्र जैसे महान भाषा वैज्ञानिक और कवि तथा आर्यभट्ट, भास्कर और ब्रम्हागुप्त जैसे महान गणितज्ञ शामिल हैं इनके काम में गणित की महान खोजे छिपी हुई है, जिन्होंने मुझे जैसे युवा गणितज्ञ को गहराई से प्रभावित किया।'

मंजुल जर्मन गणितज्ञ कार्ल फैड्रिक गौस के कामो के सामने आई, दो सौ साल पुरानी गणितीय उलझन को सुलझाया। उन्हें इसकी दिशा 628 ई0 के भारतीय गणितज्ञ ब्रम्हागुप्त के संस्कृत ग्रंथ से मिली।

लेकिन सबकी समझ मंजुल भार्गव की तरह नहीं होती। कुछ लोगों की समझ पर पूर्वाग्रहों के ताले जडे होते हैं। कुछ लोगों को अपने घर का कुंआ नहीं पडोस का पोखर ही ज्यादा अच्छा लगता है और कुछ लोग सत्य को अपने वाद के जंगले में कैद रखना चाहते हैं। विज्ञान में जो सिद्ध हो जाता है वह सिद्धांत बनता है, लेकिन परिकल्पनाओं का भी अपना महत्व है। हम भी प्रेरणाओं और परिकल्पनाओं (जब तक हम उन्हे सिद्ध न कर सकें) के लिए अपने पूर्वजों के प्रति कृतज्ञ तो हो ही सकते हैं और प्रेरणा ले सकते हैं। जिस

* अतिथि विद्वान, शासकीय एम.एम. कॉलेज कोतमा, जिला – अनूपपुर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, शासकीय नर्मदा महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

प्रकार परीक्षण किए बिना किसी बात को मान लेना अवैज्ञानिक है, उसी प्रकार बिना परीक्षण नकार देना भी उतनी ही अवैज्ञानिक बात है।

अभी कुछ दिन पूर्व 3 जनवरी 2015 को 102 वीं भारतीय विज्ञान कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमें प्राचीन भारतीय विज्ञान के प्रसंगो, परिकल्पनाओ पर प्रकाश डाला गया। इसी दौरान सोशल मीडिया में किसी ने एक सवाल उठाया कि– विमान उड़ाने वालों को घोड़ो पर आए हमलावरों ने कैसे परास्त किया? इसका उत्तर तलाश जाना चाहिए। पहली बात, आज से दो हजार साल पहले (यूनानियों का आक्रमण ईसा पूर्व) जब विदेशियों के आक्रमण शुरू हुए उस काल में वैमानिकी शाखा लुप्त दिखती है। जन सामान्य को लग सकता है कि इतनी बड़ी उपलब्धि का लुप्त हो जाना कैसे संभव है, लेकिन विज्ञान केवल ज्ञान नहीं है, अपितु संस्था भी है। विज्ञान संस्थाएँ ही विज्ञान के विकास एवं शिक्षा का आधार है। संस्था के नष्ट हो जाने से विज्ञान भी गाथा बनकर रह जाता है। यदि आज किसी कारण से नाभिकीय ऊर्जा पर काम करने वाले संस्थान नष्ट हो जाए तो कुछ ही दशकों में परमाणु ऊर्जा कथा–कहानी बनकर रह जाएगी। हम उसे अगली पीढ़ी को बताएंगे लेकिन सिद्ध नहीं कर पाएंगे। कई विद्धानो का मत है कि महाभारत युद्ध के बाद भारत की वैज्ञानिक संस्थाएं नष्ट हुई एवं महाविनाश की प्रतिक्रिया में शस्त्रो से भारत का मोहभंग हुआ। दूसरा भारतवर्ष में ज्ञान की शक्ति को गलत हाथों में जाने से बचाने के लिए उसे केवल चुने हुए योग्य लोगो को ही प्रदान करने की प्राचीन परंपरा रही है समय के साथ वैदिक कालीन लुप्त सरस्वती नदी के आस्तित्व के वैज्ञानिक प्रमाण सामने आ चुके हैं, खंभात की खाड़ी में महाभारत में वर्णित स्थान पर 'द्धारिका' के अवशेष खोजे जा चुके हैं और रामायण में वर्णित 'श्रीरामसेतु' को अमेरिकी वैज्ञानिक एजेंसी NASA ने ढूढ़कर भारत सरकार को उसकी आयु 17 लाख 25 हजार वर्ष बताई। रामसेतु आज भी अस्तित्व में है। जिस आर्यो के आक्रमण के सिद्धान्त को दुनिया भर के वैज्ञानिकों ने नकार दिया है, उसे भारत के कुछ वामपंथी इतिहासकार आज भी सीने से लगाए घूमते हैं।

प्राचीन भारतीय विज्ञान की वे उपलब्धियाँ जो समयसिद्ध, तर्कसिद्ध और प्रमाण सिद्ध हैं उन्हें हमें जानना चाहिए और दुनिया को उनके बारे में बताना चाहिए। 'सुश्रुत' पहले व्यक्ति थे जिन्होंने हृदय के शरीर की रक्त परिवहन व्यवस्था का केन्द्र होने को बतलाया। सुश्रुत संहिता में 1120 बीमारियों, 700 औषधीय वनस्पतियो के बार में बतलाया गया है। साथ ही खनिजो व लवणो से बनने वाली 64 और जीव जंतुओं से मिलने वाली 57 दबाओ का वर्णन है। इसमें अनेक प्रकार की जटिल शल्य चिकित्सा, भ्रूण विकास, अस्थि विभाग आदि के बारे में विस्तार से बताया गया है सुश्रुत संहिता का 8 वीं शताब्दी में 'किताब–ए–सुश्रुद्' के नाम से अरबी में भाषांतर हुआ। यहाँ से यह ज्ञान इटली होते हुए यूरोप पहुँचा।1794 में लंदन की 'जेंटलमैनस् मैगजीन' में कुमार बैध नामक भारतीय की नाक का पुनर्निर्माण (प्लास्टिक सर्जरी) विषय पर रिपोर्ट छपी। आज से 200 साल पहले ब्रिटिश सर्जन जोसेफ कान्स्टेंटाइन कार्प ने 20 वर्ष तक सर्जरी का अध्ययन किया। और 1815 में पश्चिमी जगत की पहली प्लास्टिक सर्जरी थी। टीपू सुलतान ने ब्रिटिश बंधको (मैसूर युद्ध 1792) के नाक व हाथ काटने का वर्णन आता है। बाद में भारतीय वैधों ने उनमें से अनेक की नाक का निमार्ण कर दिया। दो ब्रिटिश डॉक्टर थॉमस क्रुसो और जेम्स फिंडले इस घटना के गवाह बने। 'मद्रास गजेट' ने इस घटना को फोटो फीचर के साथ छापा। बाद में यही रिपोर्ट जेंटलमैन मैग्जीन में प्रकाशित हुई।

अंग्रेज स्वयं को बड़ा बुद्धिमान मानते हैं। परंतु वे जब हिन्दुस्तान आये तो उन्होंने कभी रूई नहीं देखी थी। उन्हें तो ज्ञात था कि ऊन भेड पर होती है ओर उससे वस्त्र बुनते हैं। अत: वे कहते थे कि– यह हिन्दुस्तानी बड़ा चालाक है यह ऊन जो भेड़ पर होना चाहिए, वह यह पेड़ पर उगाता है। ये तथ्य यूरोपीय मानसिकता व प्रयोगशीलता के प्रति उनकी दृष्टि को बताते हैं।

वैदिक आख्यानों में वर्णन आता है कि सर्व प्रथम वस्त्र का अविष्कार ऋषि 'गृत्स्मद' ने भारत वर्ष में किया। भारतीय वस्त्रो का वर्णन करते हुए प्रमोद कुमार दत्त अपने प्रबंध की प्रस्तावना में लिखते हैं कि– 'नवीं शताब्दी में दो अरब यात्री यहाँ आये। उन्होंने लिखा कि भारतीय वस्त्र इतने असामान्य है कि ऐसे वस्त्र और कहीं नहीं देखे गये। इतना महीन तथा इतनी सफाई और सुंदरता का वस्त्र बनता है कि एक पूरा थान अँगूठी के अंदर से निकाल लिया जाये।'

एक प्रसंग मुगल काल का भी है। जिसमें एक बार औरंगजेब की पुत्री दरबार में गई, तो औरंगजेब उसके वस्त्रो को देखकर बहुत खफा हुआ और उसने कहा नामाकुल! तेरे अंदर की शर्म हया कहाँ चली गई, जो दुनियाँ को तू अपने अंग दिखा रही है। उस पर उसकी पुत्री ने कहा, क्या करूँ अब्बाजान, यह वस्त्र जो पहना है, वह एक के ऊपर एक ऐसे सात बार तह करने के बाद पहना है। सत्रहवी सदी के फ्रांसीसी व्यापारी टेवर्नीय अपने संस्मरण में लिखता है कि– 'एक पर्शियन राजदूत भारत से वापस गया, तो उसने अपने सुल्तान को एक नारियल भेंट में दिया। दरबारियों को आश्चर्य हुआ कि सुल्तान को नारियल भेंट में दे रहा है, पर उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उस नारियल को खोला तो उसमें से 30 यार्ड लम्बा मलमल का थान निकला।'

अंग्रेजी शासन काल में सर जोसेफ बेक को मिस्टर विलकीन्स ने ढाका मलमल का एक टुकड़ा दिया। मि. बेक अपने विश्लेषण, माप उस वस्त्र का निकालकर Indiahouse लिखकर भेजा, यह निम्नप्रकार हैं– मलमल के टुकडे का बजन–34.3 ग्रेन था। (एक पाउण्ड में 70000 ग्रेन होते है तथा 1 ग्राम में 15.5 ग्रेन होते है।) लंबाई 5 गज 7 इंच थी, इसमें धागे–198 थे। याने धागे की कुल लंबाई– 1028.5 गज थी। अर्थात 1 ग्रेन में 29.98 गज धागा बना था। इसका मतलब है कि यह धागा 2425 काउंट का था। आज भी आधुनिक तकनीक में भी धागा 500–600 काउंट से ज्यादा बारीक नही होता है। सर जी. बर्डवुड अपने ग्रंथ– दी इंडस्ट्रियल आईस ऑफ इंडिया' के पृष्ट 83 पर लिखते हैं कि– 'बताया जाता है कि जहॉगीर के काल में पंद्रह गज लम्बी और एक गज चौड़ी ढाका की मलमल का वजन केवल 100 ग्रेन होता था।'

ये तो फिर भी कुछ नहीं जरा रामायण के प्रसंग पर विचार तो करें,– वर्णन आता है कि अरण्य कांड में ऋषियो ने प्रभु श्रीराम चन्द्र, सीताजी व लक्ष्मण जी को ऐसे दिव्य वस्त्र भेंट किए थे कि वह 14 वर्ष तक न फटे, न गंदे हुए अर्थात (Unwashable Cloth) क्या तकनीकि व विज्ञान रहा होगा। प्रसिद्ध इतिहासकार बिल ड्यूरान्ट ने 'द स्टोरी ऑफ सिविलाइजेशन नामक पुस्तक में 'अवर ओरिएंटल हेरिटेज' नामक आध्याय में भारत के विज्ञान के बारे में लिखते हैं कि – 'छठवीं शताब्दी में हिन्दु यूरोप के रसायन उद्योग से मीलो आगे थे। वे कैल्सिनेशन, डिस्टिलेयशन, सब्लिमेशन, स्टीमिंग, फिक्सेशन, बिना ऊष्मा के प्रकाश उत्पन्न करना, धात्विक लवणो, रसायनों और मिश्र धातुओं के निमार्ण के उस्ताद थे। स्टील निमार्ण में भी वे पूर्णता हासिल कर चुके थे।' इसी प्रकार गणित के योगदान को बताते हुए प्रो0 सी0के0 राजू अपने किताब 'कलचरल फाउडेशन्स ऑफ मैथेमेटिक्स (पीयर्सन

लान्गमैन, 2007) में लिखते हैं कि- कलन (कैलकुलस) भारत से यूरोप पहूँचा। भारतीय गणितज्ञों माधव, नीलकंठ, ज्येष्ठदेव के कार्य का लाभ यूरोपीय गणितज्ञों ने उठाया। परंतु किसी ने भारत के इस योगदान का अध्ययन करने का प्रयास नही किया।

ऋषि बोधायन भारत के प्राचीन गणितज्ञ और शुल्ब सूत्र तथा श्रोतसूत्र के रचयिता हैं। पाईथागोरस के सिद्धांत से पूर्व ही बोधायन ने ज्यामिति के सूत्र रचे थे। इन्होने 2800 वर्ष पूर्व रेखागणित, ज्यामिति के महत्वपूर्ण नियमों की खोज की थी। ऋषि कणाद ने 2500 वर्ष पूर्व वेदो में लिखे सूत्रो के आधार पर परमाणु सिंद्धात का प्रतिपादन किया था। भारतीय इतिहास में ऋषि कणाद को परमाणु शास्त्र का जनक माना जाता है। आचार्य कणाद ने बताया कि द्रव्य के परमाणु होते हैं। महर्षि भारद्धाज ने राइट बंधुओ से 2500 वर्ष पूर्व वायूयान की खोजकर ली थी। पुष्पक विमान का उल्लेख इस बात का प्रमाण है। ऋषि भारद्धाज ने 600 इ.उ. पूर्व इस पर एक विस्तृत शास्त्र लिखा था। जिसे 'विमानशास्त्र' के नाम से जाना जाता है।

यजुर्वेद के तैत्तरीय अरण्यक में वर्णन आता है कि- 'सत्ये सर्व प्रतिष्ठितम्' यजुर्वेद के रचनाकार सत्य अथवा ज्ञान की इस खोज में आगे जिन साधनो की चर्चा करते हैं वे हैं श्रद्धा, मेधा, मनीषा, मानस, अथवा मन, चित्त (चेतना की उच्च अवस्था), शांति, स्मृति, स्मरण और विज्ञान (ज्ञान को कर्म में बदलने की क्षमता) यही वह स्तभ है जिन पर हमारे पूर्वजो ने ज्ञान और विज्ञान के नए प्रतिमान स्थापित किए।

भारत में अंधश्रद्धा प्रमाण से ऊपर तर्क का स्थान रहा। विचारो को पूर्ण स्वतंत्रता तथा प्रत्यक्ष प्रयोग करने की परंम्परा उस काल से है, जब पश्चिमी जगत् में इसकी कल्पना करना स्वप्न में भी संभव नहीं था। अत: अपने देश की वैज्ञानिक पंरपराओं से आज की पीढ़ी को परिचित कराना वह माध्यम है, जिससे देश, परानुकरण और हीनताबोध की ग्रंथी से मुक्त होकर स्वावलंबन व स्वाभिमान की अनुभूति कर सकता है। 15 अगस्त 1947 के बाद भारतीय शिक्षा का उपनिवेशवादी चलन पहले जैसा बना रहा। आजादी के बाद नव निमार्ण की आशाओं पर तुषारापात हुआ। राजकाज और भाषा की बंदिशो ने हमारी सोच को पंगु बना दिया। भारत की वैज्ञानिक प्रतिभा पर पड़ी ये बंदिशे हटेंगी तो विज्ञान और वैज्ञानिक उपलब्धियों का विस्फोट होकर रहेगा। अत: हमें अपने देश भारत वर्ष के गौरवशाली अतीत पर गर्व करते हुए उस पर रिसर्च करना चाहिए। तभी बात बनेंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ऋग्वेद- सायणभाष्य, 1-71-9, 1-50-9।
2. भास्कराचार्य- सिद्धांत शिरोमणी-पृ. 344,346
3. पांचजन्य- पत्रिका 18/01/2015 पृ.8-9-10, संपादक-हितेश शंकर, संस्कृति भवन, देशवंधु गुप्ता मार्ग, झण्डेवाला, नई दिल्ली।
4. सुरेश सोनी-भारत में विज्ञान की उज्जवल परम्परा , पृ. 97-98 अर्चना प्रकाशन, भोपाल, 2008।
5. शिल्प संशोधन प्रतिष्ठान, नागपुर-ढाका मसलिन-पृ.5 (ढाका, मसलिन-मार्डन रिव्यु-जुलाई-1911)
6. डॉ. मुरलीमनोहर जोशी-भारत वर्ष में विज्ञान व प्रोद्योगिकी की स्थिति- पृ. 13, आर.एस. चितलांग्या फाउन्डेशन-कलकत्ता ।
7. रामायण-महर्षि बाल्मीकि, गीताप्रेस गोरखपुर, उ.प्र. ।
8. यजुर्वेद ।

****

ग्वालियर राज्य में नारी पुनर्जागरण

डॉ. शुक्ला ओझा *

प्रस्तावना – भौगोलिक दृष्टि से ग्वालियर भारत के हृदय–पटल पर सुशोभित है। उसके प्राचीन तथा मध्य–युगीन इतिहास का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि भारत के उत्तरी भाग की प्रवृत्तियों दक्षिण की ओर जाते समय इसी प्र देश में निखार पाते हुए आगे बढ़ती थी । दक्षिण भारत की मंजुल परम्पराएं इसी क्षेत्र के माध्यम से उत्तर–भारत की ओर अग्रसर होती थी । पश्चिम भारत का, देश की अन्य दिशाओ ंके प्रदेशों से सम्पर्क इस क्षेत्र पर से होता था। शरीर–तंत्र में रक्त–शिराओं के संचालन का जो कार्य हृदय करता है, वही कार्य भारत राष्ट्र के परिप्रेक्ष्य में उसका यह ग्वालियर राज्य करता था। राष्ट्रव्यापी सांस्कृतिक हलचलों को इसी कारण उसका यह हृदय स्थल–आत्मसात भी करता था तथा उन्हें परिष्कृत भी करता था।[1] भारत के राष्ट्रीय आं दो लन के प्रसार में भारतीय पुनर्जागरण का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 19 वीं शताब्दी में होने वाले धर्म एवं समाज सुधार आंदोलनों तथा गतिविधियों को इसकी परिधि में रखा जाता है जो बीसवीं शताब्दी में भी कायम रहा। जिसका प्रारंभ बंगाल से हुआ और उसकी दीप शिखा भारत के अन्य भागों में भी प्रज्वलित हो गयी। पुनर्जागरण से अभिप्राय किसी भी राष्ट्र के जीवन में एक नवीन स्फूर्ति, नये उत्साह, नवीन उमंग व जो श अथवा गौरव के युग से है। इसे उस राष्ट्र के जीवन में बंसत ऋतु का काल माना जा सकता है। डॉ. जकारिया ने अपनी पुस्तक 'रिनेसेण्ट इण्डिया' में लिखा है कि 'भारत का पुनर्जागरण मुख्यत: आध्यात्मिक था तथा एक राष्ट्रीय आंदोलन का रूप धारण करने से पूर्व इसने अनेक सामाजिक और धार्मिक आंदोलनों का सूत्रपात किया' जो भारत में राष्ट्रीयता एवं समाज सुधार के विकास में बहुत अधिक सहायक सिद्ध हुए।[2] इस प्रकार के सुधार आंदोलनों में ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन आदि प्रमुख है। इनमें स्त्री उत्कर्ष पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया गया। ए. आर. देसाई के अनुसार 'ये आंदोलन कम – अधिक मात्रा में व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक समानता के लिये संघर्ष थे।'[3]

किसी भी सभ्यता की विशेषता एवं उसकी सीमा को जानने के लिये नारी की सामाजिक स्थिति का अध्ययन आवश्यक है। सभ्यता के प्रारं भ से आज तक नारी इतिहास के पृष्ठों पर उस नक्षत्र की भांति टिमटिमाती रही है, जिसकी धूमिलता अथवा प्रखरता अप्रत्यक्ष रूप से उस सभ्यता की शिथिलता अथवा गतिशीलता का संकेत करती रही है। मातृ सत्तात्मक समाज से पितृ सत्तात्मक व्यवस्था नारी जीवन के उत्कर्ष और अपकर्ष की वह बोलती कहानी है जो सदियों से इतिहास को झकझोरती रही है। जिसे उपेक्षित कर देने से सभ्यता का उचित मूल्यांकन संभव नहीं है।[4] उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दी में भारतीय चिन्तकों तथा समाज सुधारकों ने स्त्रियों की निम्न स्थिति को सुधारने की दिशा में पहल प्रारंभ की तथा उनके प्रति अपनाये जाने वाले दोहरे मापदंडों को समाप्त करने के प्रयास किये। उनका विचार था कि घर का मोर्चा हो या राजनीति का रणक्षेत्र, नारी ने जिस साहस, सहिष्णुता और वीरता से अपनी भूमिकी निभायी, वह इतिहास धरोहर है।[5] इस महान परिवर्तन में प्रारंभ में एक छोटे जन समूह को प्रभावित किया किन्तु शीध्र ही यह विचार अधिकाधिक लोगों तक फैल गये।[6] पुनर्जागरण युग में राजा राम मोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, केशवचंद्र सेन, एम. जी. रानाडे, दयानंद सरस्वती, सर सैयद अहमद खां, एनी बीसेन्ट, महात्मा गाँधी आदि चिन्तको ने स्त्रियों की अवस्था सुधारने हेतु विशेष प्रयत्न किये।

इस युग में भारतीय समाज स्त्री उत्कर्ष, स्त्री शिक्षा, स्त्री स्वालंबन, विधवा पुनर्विवाह के प्रति सामाजिक चेतना, सती प्रथा निषेध जैसे व्यापक प्रयासों से आप्लावित था। इस युग के स्त्री उत्कर्ष के प्रयासों का ग्वालियर राज्य पर गहन प्रभाव पड़ा। यह राज्य वर्तमान मध्यप्रदेश के ग्वालियर तथा निकटवर्ती क्षेत्र में स्थापित था जो ब्रिटिश भारत में 'ग्वालियर स्टेट' के नाम से जाना जाता था। पुनर्जागरण युग में यहाँ सिंधिया वंश का राज्य था जिसकी स्थापना सन् 1765 ई. में महादजी सिंधिया द्धारा ग्वालियर दुर्ग विजय द्धारा की गयी थी।[7] दौलतराव सिंधिया द्धारा सन् 1811 ई. में ग्वालियर को सिंधिया राज्य की राजधानी बनाने से यह शक्तिशाली रूप धारण कर सका।[8] ग्वालियर में स्त्री पुनर्जागरण में सिंधिया शासन की भूमिका अनमोल रही हैं यहाँ के शासक तथा अन्य राज परिवार जन का आधुनिक एवं सुधारवादी दृष्टिकोण विशेष रूप से सहायक रहा है। भारतीय पुनर्जागरण से प्रसारित प्रकाश किरणों से ग्वालियर राज्य भी प्रकाशित हुआ तथा इस दिशा में यहाँ भी उल्लेखनीय प्रयत्न किये गये जिनमें से स्त्री उत्कर्ष हेतु किये गये प्रयासों का उल्लेख करना यहाँ प्रासंगिक होगा। इस पुनीत कार्य में ग्वालियर राज्य के सिंधिया नरेश जीवाजी राव सिंधिया एवं उनकी महारानी विजया राजे सिंधिया का विशेष योगदान रहा। अटल बिहारी बाजपेयी के शब्दों में कहा जाये तो भारतीय संस्कृति में नारी को शक्ति, सरस्वती और लक्ष्मी के रूप में देखा गया है। असुरों का मानमर्दन करने हेतु करने के लिये शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। ज्ञान का आलोक देने के लिये सरस्वती अवतरित होती है। दीनता और दरिद्रता पर विजय प्राप्त करने हेतु लक्ष्मी का आव्हान किया जाता है। भारतीय समाज में अनेक ऐसी नारियां हुई हैं जिन्होंने सृजन और संहार दोनों का समन्वय किया और समाज को समुत्कर्ष के पथ पर आगे बढ़ाया।[9] किन्तु पुनर्जागरण युग के प्रारंभ के समय उनकी स्थिति शोचनीय दृष्टिगोचर होती है। भारत की लम्बी पराधीनता का एक महत्वपूर्ण दुष्परिणाम स्त्रियों की दशा में गिरावट आना था। इस युग के नवीन वातावरण में स्त्री उत्थान के महत्व को समझा गया एवं इस दिशा में सार्थक प्रयास भी प्रारंभ हुए इस हेतु अनेक संघ, संस्थाओं और समितियों का गठन किया गया। महात्मा गाँधी ने तो विकास हेतु पुरूषों के समान नारियों के योगदान को भी आवश्यक मानकर स्त्री उत्कर्ष पर विशेष बल दिया जो ग्वालियर राज्य में भी कार्य रूप में परिणित होता दृष्टिगोचर होता है। यहाँ इस कार्य को व्यापक रूप

* प्राध्यापक (इतिहास) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

प्रदान करने का श्रेय विजया राजे सिंधिया को विशेष रूप से जाता है। वे श्रीमती एनी बीसेन्ट के विचारों से अत्यंत प्रभावित थी। इस युग ने देश में कतिपय ऐसी शिक्षण संस्थाओं को जन्म दिया था, जिनमें पश्चिम व पूर्व की संस्कृतियों के सद्गुणों का समन्वय था। विजया राजे उन्हीं संस्थाओं में से एक संस्था बनारस के बसंताश्रम में शिक्षा प्राप्त कर, भारतीय संस्कृति से अनुप्राणित होकर निकली थी। [10] जिन्होंने ग्वालियर राज्य में विवाहोपरान्त स्त्री शिक्षा एवं स्त्रियोद्धार के पुनीत कार्य को आगे बढ़ाया।

ग्वालियर नरेश जीवाजी राव सिंधिया के प्रयासों से यहाँ स्त्री शिक्षा का श्री गणेश हो चुका था। लड़कियों की शिक्षा के मामले में ग्वालियर पहले से अलग रहा है। सौ साल पहले इसके लिये सालाना 60 हजार रूपये के बजट की व्यवस्था की जाती थी। शहर में पहला गर्ल्स स्कूल 1898 में पं. प्राणनाथ ने स्थापित किया था। इसका नाम रखा था महारानी गर्ल्स स्कूल। 18 नवम्बर 1898 को जेडब्ल्यूडी जोन स्टोन जो शिक्षा महानिदेशक थे, ने स्कूल का उछ्घाटन किया था। इसी वर्ष शहर में दूसरा गर्ल्स स्कूल खोला गया। वर्ष 1900 में मिसफ्लोरेंस होपटेस्का इसकी अधीक्षक नियुक्त की गई। स्त्री शिक्षा पर ध्यान देने के लिये राज्य ने सालाना 60 हजार रूपये के अनुदान की व्यवस्था कर पं. प्राणनाथ को उप महानिरीक्षक शिक्षा के पद पर नियुक्त किया। इस पद के साथ ही उन्हें स्त्री शिक्षा का प्रभारी भी बनाया गया। 1947 तक जिले में कन्या शिक्षा के लिये 27 प्राथमिक, 4 पूर्व माध्यमिक और 02 उप शालाएं संचालित होने लगी थी। इसी सिलसिले के चलते 1956 में सिंधिया कन्या विद्यालय की स्थापना की गई।[11] सन् 1969 में वर्तमान मध्यप्रदेश के प्राचीनतम एवं सुप्रसिद्ध कन्या महाविद्यालय, कमला राजे कन्या महाविद्यालय, ग्वालियर की इंटर मीडियेट कॉलेज के रूप में स्थापना परिवर्तनकारी कदम था। ग्वालियर राज्य में कन्या शिक्षा को सही दिशा देने के लिये एक समिति का गठन किया गया जिसका अध्यक्ष विजया राजे को बनाया गया एवं ग्वालियर नरेश ने कन्या शिक्षा के प्रसार का दायित्व उन्हें सौंप दिया गया। वर्तमान ग्वालियर की स्त्री शिक्षा संस्थाओं यथा कमला राजे कन्या महाविद्यालय, पदमा राजे कन्या विद्यालय, गजरा राजे कन्या विद्यालय इत्यादि का जो स्वरूप है, यह उसी प्रयत्न एवं उसी अदम्य उत्साह का परिणाम है। उनके इस प्रयत्न ने न केवल ग्वालियर नगर को एक श्रेष्ठ शिक्षण केन्द्र के रूप में संवारा, वरन् इसके साथ-साथ स्त्रियों स्वालंबी बनाने में भी सहयोग प्रदान किया।

स्त्री उत्कर्ष का कार्य केवल शिक्षण संस्थाओं तक ही सीमित नहीं रहा। परिवार की व्यस्त गृहणी भी कला का रसास्वादन कर सके, पर्दे के भीतर रहने वाली नारी भी कुछ क्षण के लिये अपना मनोरंजन कर सके, इस उद्देश्य से वयस्क महिलाओं के सांस्कृतिक केन्द्र के रूप में 'विजया लेडीज क्लब' की स्थापना की गयी जिसमें सर्वधर्म समानत्व के आधार पर विविध धर्मों के त्यौहारों के संयुक्त आयोजन होते थे। यह क्लब साहित्यिक चर्चाओं का भी केन्द्र था। नाटक, अभिनय द्वारा धन एकत्रित कर समाजसेवी गतिविधियों में धन व्यय करने की श्रेष्ठ परम्परा भी इसी की देन है। मॉन्टेसरी पद्धति के अनुयायी 'शिशु मंदिर' बाल विद्यालय इसी क्लब के प्रयासों से अस्तित्व में आये। इन विद्यालयों में शिक्षण, प्रबंधन का दायित्व महिलाओं ने ही संभाल रखा था। इस युग में पुनर्जागरण के प्रभाव से आत्म निर्भरता की भावना भी नारियों में जागृत हुयी। यही कारण है कि महिलाओं की यह पीढ़ी ज्ञानार्जण कर विभिन्न अंचलों में समाज के रचनात्मक कार्यों में रत थी।

ग्वालियर राज्य में महिलाओं में चेतना लाने की दृष्टि से नारी समाज के संगठन का कार्य लक्ष्मी बाई रजवाड़े के द्वारा प्रारंभ हो चुका था, यद्यपि यह अधिक गतिशील नहीं था। विजया राजे के प्रयास से सन् 1930 में यहाँ 'ग्वालियर महिला मंडल' के नाम से अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की शाखा स्थापित की गयी तथा उन्हीं की सक्रियता से ग्वालियर राज्य के समस्त जिलों में ग्वालियर महिला मंडल की शाखाएं स्थापित हुई। कहीं विवाहित महिलाओं के साक्षरता कक्षाएं तो कहीं बच्चों के खेल-कूद केन्द्र स्थापित हुए। जहाँ स्त्रियाँ संसार की गतिविधियों से दूर, अपने हित - अनहित से अनभिज्ञ, मशीन की भाँति परिचालित जीवन व्यतीत कर रही थीं, वहाँ चेतना उत्पन्न हुयी। ग्वालियर के अनेक मोहल्लों में साक्षरता कक्षाएं खुलीं। ग्वालियर शासक ने दानाओली स्थित नारी उद्योग मंदिर ग्वालियर महिला मंडल को उसकी गतिविधियों के संचालन हेतु दे दिया।

ग्वालियर में स्त्री उत्कर्ष के प्रयासों के अन्तर्गत निराश्रित महिलाओं के लिये छात्रावास खोला गया जिसमें रहकर वे विद्याध्ययन कर अपने पैरों पर खड़ी हो सकें। इसके अतिरिक्त सिलाई - कढ़ाई केन्द्र की स्थापना भी की गयी जिसमें ये कलाएं सीखकर स्त्रियाँ जीविकोपार्जन कर सकें। यहाँ विद्या विनोदिनी कक्षाएं भी प्रारंभ की गयी। इन केन्द्रों में शिक्षा प्राप्त कर अनेक महिलाएं अध्यापिका, प्रधानाध्यापिका, ग्राम सेविका आदि पदों पर कार्यरत हुई एवं उन्होंने ससम्मान अपने परिवार के भरण-पोषण में सहयोग कर गर्व का अनुभव किया। नगर के कम आय वाले परिवारों के बच्चों के लिये मॉन्टेसरी पद्धति पर संचालित बालक मंदिर विद्यालयों की स्थापना हुई जिनका प्रबंधन महिलाओं के हाथ में ही रहा। यह विवरण स्पष्ट कर देता है कि पुनर्जागरण युग में ग्वालियर राज्य में स्त्री उत्कर्ष के पुनीत कार्य को पनपने का अवसर प्रदान किया जिसमें ग्वालियर के शासक वर्ग तथा शिक्षित महिला वर्ग की भूमिका विशेष रूप से सराहनीय रही। भारतीय पुनर्जागरण की जो दीपशिखा पश्चिमी बंगाल से प्रज्वलित हुयी[12] वह ग्वालियर राज्य में विशेष रूप से आलोकित स्वरूप में दृष्टिगोचर होती है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. द्विवेदी हरिहर निवास - भारत का सुदेश - मनीषा - पृष्ठ क्रमांक 185
2. जैन पुखराज - भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन, शासन एवं राजनीति - पृष्ठ क्रमांक 04
3. ठाकुर उपेन्द्र - साहित्य और संस्कृति - पृष्ठ क्रमांक 01
4. देसाई ए. आर. - सोशल बैकग्राउंड ऑफ इंडियन नेशनलिज्म - पृष्ठ क्रमांक 210
5. राव हंसा - मध्यप्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम - पृष्ठ क्रमांक 229
6. मजुमदार, राय चौधरी, दत्ता - भारत का वृहत इतिहास - पृष्ठ क्रमांक 182
7. माहेश्वरी हरिवल्लभ - ग्वालियर इतिहास संस्कृति एवं पर्यटन - पृष्ठ क्रमांक 16
8. कुरैशी नईम - ग्वालियर के आसपास - पृष्ठ क्रमांक 12
9. बाजपेयी अटल बिहारी - लेख राज माता - किंजल्क - पृष्ठ क्रमांक 41
10. सहाय चंद्रकला - संस्मरण - पृष्ठ क्रमांक 32
11. दैनिक भास्कर - विशेष परिशिष्ट - दिनांक 15 अगस्त 2013
12. मुखर्जी हरिदास - दि ग्रोथ ऑफ नेशनलिज्म - पृष्ठ क्रमांक 75

****

चारूकेश्वर स्थित सिद्धवट वृक्ष- बड़वाह

डॉ. मंगला ठाकुर *

शोध सारांश – चारूकेश्वर आश्रम – 'सिद्ध वटवृक्ष' बड़वाह की मानचित्र में भौगोलिक स्थिति 22° 15' उत्तर तथा 76° 02' पूर्व हैं। यह सिद्ध क्षेत्र मध्यप्रदेश की जीवनदायिनी, पूजनीय सप्तसरित में से एक मॉ नर्मदा के उत्तर तट पर नर्मदा घाटी में स्थित हैं । बड़वाह नगर के आसपास प्रकृति के विविध रंग बिखरे पड़े हैं। नगर के दक्षिण दिशा में 3 किमी दूर नर्मदा नदी, पूर्व दिशा में चोरल एवं बड़ाली नदी समानान्तर रूप में उत्तर में विन्ध्य पर्वत श्रृखला, सघन वन, झरने, जंगली पशु-पक्षियों से युक्त हैं। इन्दिरा सागर, ओंकारेश्वर बाँधों ने पूरे क्षैत्र का परिदृश्य बदल दिया हैं। नर्मदाजी का तट प्राचीनकाल से ही ऋषि-मुनियों, तपस्वियों एवं ज्ञान की खोज में संलग्न तपस्वियों के लिये प्रेरणादायी एवं आकर्षण का केन्द्र रहा हैं।

बड़वाह से मात्र 5 किमी. दूर उत्तर तट पर डेहरिया आश्रम अपने सुरम्य नैसर्गिक वातावरण आध्यात्मिक खोज, विशाल सिद्धवट वृक्ष, प्राचीन चारूकेश्वर मन्दिर के लिए धर्म परायण जनों में जाना जाता हैं।यह आश्रम चोरल नर्मदा के संगम पर स्थित हैं। नर्मदा तट पर भव्य विलासिता युक्त आधुनिक अनेक आश्रम स्थापित हैं, किन्तु चारूकेश्वर आश्रम में आज भी प्राचीन आश्रमों सी सरलता, सादगी, पवित्रता, उच्च आध्यात्मिकता के सहज ही दर्शन होते हैं। अपने शोध-पत्र के माध्यम से चारूकेश्वर आश्रम स्थित ' दिव्य सिद्ध वट-वृक्ष' एवं चारूकेश्वर मन्दिर की महती सांस्कृतिक विरासत को प्रस्तुत करने का मेरा लघु प्रयास हैं।

प्रस्तावना – बड़वाह की मानचित्र में भौगोलिक स्थिति 22° 15' उत्तर तथा 76° 02' पूर्व हैं।[1] मध्यप्रदेश की जीवन दायिनी पतित पावनी नर्मदा के उत्तर पूर्वी छोर पर मात्र 03 कि0मी0 की दूरी पर स्थित यह नगर बड़वाह, इन्दौर और खण्डवा मार्ग पर लगभग समान दूरी पर हैं। यहॉ ब्रिटिश-होलकर कालीन अजमेर-खण्डवा मीटर गेज रेलवे लाईन यहॉ से गुजरती है। खेड़ीघाट एवं नर्मदा तट से करीब 02 किमी की दूरी एवं बड़वाह से 05 किमी दूर पर चारूकेश्वर आश्रम स्थित हैं।

चारूकेश्वर आश्रम चोरल एवं नर्मदा नदी के संगम पर स्थित हैं, इसलिए इसे चारूकेश्वर के नाम से जाना जाता है।[2] कहीं-कही इस स्थान का उल्लेख चारूलेश्वर के नाम से भी हैं। इस नामकरण का मुख्य कारण इस क्षेत्र में बहु-उपयोगी औषधीय वृक्ष 'चरूल' की बहुलता हैं, जिसे आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में 'अर्जुन' कहा जाता हैं। इन वृक्षों की चोरल घाटी में सघनता के कारण ही इसें **'चरूलेश्वर'** के नाम से भी संबोधित किया गया हैं।[3]

किवदन्ती यह हैं कि खेड़ीघाट के बालाजी केवट को नर्मदा नदी के उत्तर-दक्षिण के तट के साढ़े बारह घाटों की जागीर ओंकारेश्वर के तत्कालीन महाराज मान्धाता के द्वारा तामपत्र पर दी गई थी, इन्ही केवट जागीरदार के वंशजों द्वारा, जिनकी ग्यारहवीं पीढ़ी वर्तमान में मौजूद हैं, ग्राम डेहरिया का पॉच एकड़ ज़मीन चारूकेश्वर आश्रम के संस्थापक संतश्री बालकदासजी बापू चैतन्य ब्रह्मचारीजी को दी गई थी।[4]

चारूकेश्वर आश्रम प्राचीन नहीं हैं किन्तु इस आश्रम में स्थित चारूकेश्वर शिव मंदिर अति प्राचीन हैं। इसके अलावा हजारों वर्ष पुराना सिद्धवट एवं नर्मदा नदी पर बना छोटा सा घाट इस बात के सशक्त प्रमाण हैं कि यह क्षेत्र पौराणिक समय से तपस्थली रहा हैं। नर्मदा नदी से लगभग 500 मीटर ऊपर, आश्रम एवं मंदिर के दक्षिण-पूर्व में विशाल सिद्धवट हैं।

शास्त्रीय परम्परा एवं मान्यतानुसार जिस वटवृक्ष की 110 शाखायें पुन: जमीन में चली जाती हैं, वह सिद्धवट कहलाता हैं। ऐसे वटवृक्ष के नीचे मनोरथों की पूर्ती, तप, ध्यान, प्राणायाम, प्रार्थना अतिशीघ्र फलिभूत होते है।[5] क्योंकि परमेश्वर वहॉ साक्षात् रूप से वास करते हैं। वैसे भी शास्त्रों में इस बात का स्पष्ट उल्लेख हैं कि नर्मदा नदी का उत्तर तट देवभूमी एवं दक्षिण भूमी पितृ भूमी है।

चारूकेश्वर स्थित सिद्धवट का आकार 100 बाय 100 फीट के आयताकार भू-भाग में फैला हुआ हैं। यह वृक्ष करीब 30से 35 फीट लम्बाई लिये हुए हैं, इसकी जड़े लगभग 200 मीटर के क्षेत्र में फैली हुई हैं, इन्हीं जड़ों का पोषण नर्मदा-चोरल नदी करती हैं, जिससे यह वट-वृक्ष बहुत ही विशाल और सदा हरा-भरा रहता हैं। इस वट-वृक्ष की 110 से कहीं ज्यादा शाखाऐं पुन: ज़मीन में चली गई हैं, मुख्य तना कौन सा हैं, यह कह सकना मुश्किल है। पूरे परिसर को वृक्ष ने आच्छादित कर रखा हैं। अत: यह स्थान ठण्डा और आलौकिक हैं। इस सिद्धवट को हजारों पखेरूओं ने अपना नीड़ बना रखा हैं। वृक्ष वट के नीचे आते ही मन निर्विकार हो जाता हैं। शुद्ध प्राणवायु आध्यात्मिक और शांतिप्रिय वातावरण, ताजगी, स्फूर्ति एवं ऊर्जा प्रदान करता हैं। समूचा वातावरण सकारात्मक ऊर्जा से ओतप्रोत है।

चारूकेश्वर आश्रम के संस्थापक सन्तश्री बालकदासजी बापू ने इसी सिद्धवट वृक्ष के नीचे ध्यान लगाकर ज्ञानार्जन किया था। वहॉ उनकी सजीव प्रतिमा एवं विशाल शिवलिंग स्थापित हैं, सन्तश्री के उत्तराधिकारी श्री लक्ष्मण चैतन्य ब्रह्मचारीजी ने तप करते हुए दुर्लभ ऋषि दर्शन का आलौकिक अनुभव प्राप्त किया था। श्री लक्ष्मण बापू इस वटवृक्ष को 'बड़-बाबा' संबोधित करते थे।[6]

साक्षात् ऋषिदर्शनों से यह क्षेत्र अत्यधिक पावन और परम श्रृद्धेय माना जाने लगा हैं अत: पूरे परिसर को लौहे की रैलिंग से घेर कर एकमात्र प्रवेश द्वार

* प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय,बड़वाह (म.प्र.) भारत

रखा गया है। पूरा परिसर गोबर से लिपा हुआ हैं। आश्रम के साधक एवं अन्य ज्ञान पिपासु जनों के लिये प्राणायाम एवं ध्यान हेतू बारह चतूबरों युक्त छत्रियॉ भी पूर्व दिशा की ओर बनाई गई हैं। सिद्धवट वृक्ष के प्रागंण में हॅसी ठिठोली, अभद्र बातचीत, धूम्रपान, नशा खाना-पीना इत्यादि की सख्त मनाही है। परिसर में जूते-चप्पल ले जाना भी प्रतिबंधित हैं। ऐसा कहा जाता हैं कि निमाड़-मालवा क्षेत्र में केवल दो ही सिद्धवट हैं।[7] पहला मालवा अंचल के अवन्तिका (उज्जैन) में शिव त्रिशुल से प्रकट हुई नदी क्षिप्रा के तट पर, जहॉ आज भी पितृ-तर्पण किया जाता है। जो धीरे-धीरे क्षतिग्रस्त हो रहा हैं। दूसरा निमाड़ अंचल के बड़वाह में स्थित चारूकेश्वर आश्रम में जो आज भी उच्चतर आध्यामिक चेतना, कुण्डलिनी जागरण एवं दिव्य दर्शनों को साक्षी हैं। ऐसी मान्यता हैं कि अमावस्या, पूर्णिमा अथवा विशेष अवसरों पर वटवृक्ष की 108 परिक्रमा करने पर मनोकामनाऍ पूर्ण होती हैं।

यह सिद्धवट पूर्णत: संरक्षित एवं पोषित हैं। इस तरह निमाड़-मालवा में केवल अपनी पूर्ण ऊर्जा के साथ यहीं एकमात्र सिद्धवट है। हड़प्पा सभ्यता से आज तक वृक्ष पूजा सनातन धर्म एवं भारतीय संस्कृति का एक अविभाज्य अंग रही है, नर्मदा किनारे स्थित चारूकेश्वर आश्रम का यह सिद्धवट उसी जीवंत संस्कृति का परिचायक हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पश्चिम निमाड़ स्टेट गजेटियर - पृ. 32
2. प.पू. श्री शिवचैतन्य ब्रह्मचारीजी कृत श्रीमद नर्मदा रहस्यम् - पृ. 740 एवं स्वामी ओंकार नन्द गिरीजीकृत श्री नर्मदा प्रदक्षिणा - पृ. 160
3. संपा रमेश बम निर्मल प्रकाशन-पश्चिम निमाड़ दर्शिका - 1977- पृ. 55।
4. श्री अशोक सोलंकी (केवट) से प्राप्त जानकारी अनुसार।
5. चारूकेश्वर आश्रम स्थित अभिलेख ।
6. चैतन्य अमृत पत्रिका - पृ. 13 एवं आश्रम में संरक्षित अभिलेखानुसार।
7. प्रो0 डी0के0 अत्रे के अनुसार।

****

Eco-Tourism Development In Madhya Pradesh Influence On Local Communities

Dr. Mini Kochar *

Abstract - Madhya Pradesh is one of the few states which have enormous potential with rich and diverse flora and fauna to become a popular destination of nature based travel. The tourism industry of the state is flourishing mainly due to "Tiger Viewing". There are nine national parks and twenty five wildlife sanctuaries. The state is also blessed with some of endangered species of India such as Gangetic Dolphin, the Ghariyal, the great Indian Bustard and the Kharmor.

Eco-Tourism or ecological tourism is described as nature based travel that creates understanding of cultural and natural environment while protecting the integrity of undisturbed nature and to increase the economy of the region. Eco-Tourism also helps in creating awareness among the local communities, tourists, government and the private sector about natural environment.

Key Words - Eco-Tourism, Biodiversity, nature-based travel, natural environment, local community.

Introduction - Tourism is defined as 'Temporary, short term movement of people to destination outside the places, where they normally live and work. It includes movements for all purposes. (Tourism society of England1976).

Now days, tourism is considered as a fiercely competitive global market ,as governments of different countries are giving priority to this industry as means of short term economic earnings over long term environmental health. The report of World Tourism Organization (2004) also forecast that the international tourism will continue to grow at an average growth rate of 4% and will be one of largest profit making industries by 2020. Depending upon the course and purpose the tourism can be categorized as:

(1) Seasonal tourism
(2) Leisure tourism
(3) Health tourism
(4) Adventure tourism
(5) Niche tourism

Nature- Based Or Eco-Tourism - The term 'Ecotourism' was taken up by a marketing agency in Costa Rica which was promoting a Rain forest destination for adventure based tourism as it was recognized as Niche market by the World Tourism Organization. The purpose behind it was to use the resources linked to biodiversity of third world countries, which have been forced into tourism as a core competency area by inter-governmental agencies for development.

The World Conservation Union (UNC) defines ecotourism as: "purposeful travel that creates an understanding of cultural and natural history, while safeguarding the integrity of the ecosystem and producing economic benefits that encourage conservation…The long -term survival of this special type of travel is inextricably linked to the existence of the natural resources that support it" (Bandy, 1996: Ryel and Grasse 1991:164). The International Ecotourism Society defines ecotourism as: "responsible travel to natural areas that conserve the environment and improves the welfare of local people."

According to World Tourism Organization (UNWTO) Tourism that involves travelling to relatively undisturbed natural areas with the specified objective of studying, admiring and enjoying the scenery and its wild plants and animals, as well as any existing cultural aspect found in these areas is defined as ecotourism. An optimum number of friendly visitor activities, which do not have any serious impact on the ecosystem and the local community and the positive involvement of the local community in maintaining the ecological balance are some of its key elements (UNWTO, 2002).

Study Area - Madhya Pradesh, situated in the centre of India, is often called the heart of Incredible India. It is surrounded by Chhattisgarh, Uttar Pradesh, Madhya Pradesh, Maharashtra, Gujarat and Rajasthan. Madhya Pradesh is the second largest Indian state in size with an area of 3, 08,252 sq km. Though the state of Madhya Pradesh came into existence on November 1, 1956 but it came into its present form on November 1, 2000 following its bifurcation to create a new state of Madhya Pradesh.

Madhya Pradesh consists largely of a plateau streaked with the hill ranges of Vindhyas and Satpuras. The hills give rise to major river systems- the Narmada, and the Tapti running from east to west, and the Chambal, Son and Betwa, from west to east. Intersected by these meandering rivers and dotted with hills and lakes, the State has varied natural settings of great beauty.

Its cultural heritage is ancient and chequered. One-third of the State is forested which is 12% of India's total forest area. It offers a unique and exciting panorama of flora and fauna. The National Parks of Kanha, Bhandhavgarh, Pench,

* Asst. Professor (Geography) M.L.B. Govt. College, Bhopal (M.P.) INDIA

Satpura, Panna, Shivpuri and many others offer a rare opportunity to see the tiger, the bison and a wide variety of deer and antelope in sylvan surroundings. The State is called as Tiger state as it has 22% of country's Tigers in its account.

Features	MP	India	National %
Geographical Area	3,08, 252 Sq. Km	32,87,000 Sq. Km	9.38
Forest Area	95221 Sq. Km(31%)	768436 Sq. Km(23.4%)	12.39
Forest Cover	77,265 Sq. Km(25%)	675538 Sq. Km (20.5%)	11.43

Source: Tourism Department of Madhya Pradesh

Ecotourism Potential In Madhya Pradesh - Madhya Pradesh is a unique state endowed with a rich spectrum of scenic and undisturbed landscapes, forests, wildlife and cultural diversity and heritage. According to planners and ecologists the state is intermittently one of the hotspots for ecotourism in coming years.

State has largest tiger population housed in five world famous tiger reserves. It is also home to several endangered species including Gangetic Dolphin, the Ghariyal, the Indian Bustard and the Kharmor amongst others. The state has long been a premier wildlife destination especially for 'Tiger viewing'.

In the state 80% of tourism is nature based or ecotourism. Ecotourism in state also play an important role in creating environmental and cultural awareness amongst local communities, tourists, government and private sector. It is estimated that Madhya Pradesh has about 2.7million opportunities which generates income equivalent to Rs. 2400 crores annually.

Features	MP	India	National %
National Parks	9	90	10
Sanctuaries	25	502	5
ProtectedArea Km.Sq	10862	156934	7

Source: Tourism Department of Madhya Pradesh

The Government of Madhya Pradesh had announced its Tourism Policy in 1995, which had, as one of its major objectives, the promotion of Eco and Adventure Tourism. In keeping with this change in attitude of tourists, the State Government has decided to actively promote Ecotourism and adventure tourism. In order to popularize and develop these forms of tourism, the State Government seeks participation of private sector investors.This result of promoting ecotourism can be observed by the table given below:

Number of Tourists visited in Madhya Pradesh (2008-2010)

Year	Domestic Tourists (In Lakhs)	Foreign Tourists (In Lakhs)
2008	228.89	2.52
2009	231.06	2.01
2010	380.80	2.50

Source: India Tourist Statistics, 2010, Ministry of Tourism, New- Delhi

Objectives And Methodology :

1. The objective behind this study is to assess the benefits of development of eco-tourism on local economy.
2. To assess the economic and social impact on local communities.
3. To analyse the stress upon local participation, employment opportunities and income generation.
4. To analyse the role of local communities in conservation of biodiversity.

This study is descriptive analysis of the problem in which the data is mainly collected from secondary records, pamphlets' regarding Eco-Tourism and different websites etc. The study has been conducted in some areas of tourist importance in Madhya Pradesh.

Pachmarhi Bio Reserve - Main areas of tourist interests are Pachmarhi Bio Reserve which includes Satpura National Park, Bori Wild life Sanctuary and Pachmarhi Sanctuary. A survey was conducted in which is found that role of communities has been low in decision making process regarding management of resources. Further, Displacement is a major issue in existing frame work of Satpura National Park.

Most of the locals now in this region are engaged mainly in vehicle driving, hotels& Restaurants and lodging etc. This place has been very popular tourist destination in central India.

Ratapani Wildlife Sanctuary - This Sanctuary is located in Raisen district and has been proposed as Tiger Reserve and is expected to be declared as one shortly. In the centre of this Sanctuary Delawadi is situated. There are several villages located on the way to Delawadi, none of which are part of tourism activities. Only some residents own a Restaurant. As the sanctuary due to thick forest cover and proximity to Bhopal (55 Kms) MPTDC has declared it as Tiger Reserve. This declaration is not welcomed by villagers as they do not want to relocate from the sanctuary as most of them own acres of agriculture land.

Findings :

1. Displacement of Adivasis from the areas which are promoted as ecotourism destinations cause discontentment.
2. The impact of ecotourism development is clearly visible on availability of basic amenities such as food, shelter and clothing to villagers in this area. Local people now spend more on eatable items.
3. The change in clothing pattern and texture has been observed. Pucca or cemented houses have become a common feature in the villages now. It is observed that expenses on education and social functions have increased in last decade.
4. More people are engaged in hotel and lodging, driving vehicles for tours. Some locals have created markets for poaching and other forest products to sell to tourists.
5. The increase in tourist arrivals has resulted in increase in number o hotels and lodges. This has led to migration

of population from neighbouring villages in search of work which has given birth to small shanty towns.
6. There has been substantial increase in vehicular traffic in this particular area leading to air and noise pollution
7. The Forest Department has not taken into confidence the community and that the eco development activities lack transparency and accountability op people living in this region. The communities have been repeatedly displaced from their lands and even they have lost their livelihood.

Conclusions & Suggestions - Being the popular nature based tourist place not only for state tourists but also for National and foreign tourists it has inadequate infrastructural facilities such as roads, cheap lodging facilities, touring vehicles and skilled and well informed guides. The stake-holders of tourism industry in this region are few who collaborate with hotels and lodges thus grab most of the monetary benefit. Therefore, the local people do not get benefit from the revenue.

The development of ecotourism which creates unequal distribution of income contributing to many socio- economic problems, affect wildlife and indigenous conflict with conservation efforts [2]. The use of vehicles disturbs wildlife through noise and encroachment in nesting areas, feeding grounds and water holes. Indirect effects can result in habitat degradation through pollution and trail cutting (Groom et al., 2000).

Conservation efforts to protect valuable wildlife and their forest habitat may conflict with the interests of local communities. Therefore, intentions of conservation can be misunderstood by the local communities [3]. If tourism industry has to be benefitted then measures need to be taken to study the long term effects of nature viewing on wildlife and their environment.[4]Nature based tourism generates a substantial amount of revenue every year. Tourists pay a considerable amount of money to participate in viewing wildlife. The monetary gain in this industry serves to benefit not only the conservation efforts to manage wild habitats but also provides an income for local people.

1. While planning for any ecotourism destination the rehabilitation and livelihood should be provided to make the locals self- reliant.
2. There should be a strict regulation for ecotourism activities to ensure the protection of wildlife and their habitat.
3. Involvement of local communities should be encouraged so that they can understand the preservation of their natural resources.
4. Local people should be given economic incentives in performing tourist activities such as guides, driving the vehicles etc.

References :-

1. Annual Report Tourism Survey, State of Madhya Pradesh, June 2011- May2012
2. Benson A, Clifton J (2004). Assessing Tourism's impact using local communities' In Sustainable Tourism, eds. Pinela and C.A. Brebbia. WIT press, pp.3-16.
3. Bhatt, S and Syed, L. Ecotourism development in India-communities, capital and conservation. Cambridge University Press, New Delhi.
4. Crouch D, Scott M (2003). Culture, Consumption, and Ecotourism Policies. In Ecotourism Policy and Planning, eds. Ross Dowling and David Fennel, CABI publishing, pp. 77-98
5. Department of Tourism, Government of Madhya Pradesh. Ecotourism Policy 2007.Website http://www.mpecoto-urism.com.
6. EQUATIONS, December 2010, community involvement in Ecotourism in Madhya Pradesh, Bangalore.
7. Sheryl Ross& Geoffrey wall (1999), Ecotourism: towards congruence between theory and practice. Tourism Management 20 pg123-132

****

नीमच नगर की जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर प्रभाव

डॉ. अख्तर बानो *

शोध सारांश – नगरीय क्षेत्रो के विकास में मानव की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। नगर का आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास मानव द्वारा ही नियंत्रित होता है । नगर का पर्यावरण (प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक) स्थानीय निवासियों से प्रभावित होता है । मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संसाधनो का उपयोग कर नगरीय क्षेत्र का विकास करते है । यह विकास नगरीय पर्यावरण पर सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों ही प्रकार का प्रभाव डालते है । नगरीय क्षेत्र की जनसंख्या में वृद्धि होती रहती है । इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर शोध का विषय जनसंख्या वृद्धि तथा नीमच नगर के पर्यावरण पर इसका प्रभाव लिया गया है ।

नीमच नगर की जनसंख्या वृद्धि विगत चालीस वर्षो से लगातार हो रही है । जनसंख्या वृद्धि के कारण इसका वितरण नगर में असमान है । नीमच नगर में 36 वार्ड है जिनमें 33 वार्डो में जनसंख्या 3000 से अधिक प्रतिवार्ड है । शेष तीन वार्डो में जनसंख्या का वितरण 2000 से 3000 तक प्रतिवार्ड है । नगर का विकास नियोजित तरीके से नहीं होने के कारण कई समस्याएँ उत्पन्न हो रही है । इन समस्याओं का निराकरण नागरिकों में जागरूकता लाकर किया जाना चाहिए इस हेतु सर्वप्रथम जनसंख्या वृद्धि कम करने की आवश्यकता है ।

शब्द कुंजी – नगर , जनसंख्या, पर्यावरण, समस्या ।

प्रस्तावना –अध्ययन क्षेत्र – नीमच नगर मध्यप्रदेश के पश्चिम में मालवा पठार पर स्थित है । इसका कुल क्षेत्रफल 40 वर्ग किमी है । नीमच नगर नीमच जिले का मुख्यालय है ।

उद्देश्य –

- नीमच नगर की जनसंख्या वृद्धि का अध्ययन करना ।
- जनसंख्या वृद्धि से नगर के विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना ।
- नगर में उत्पन्न समस्याओं को हल करने हेतु सुझाव देना शोध कार्य का उद्देश्य है , ताकि नीमच नगर का पर्यावरण स्वच्छ और स्वस्थ हो ।

विधि तंत्र – प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक आंकडो और पर्यवेक्षण पर आधारित है । आकड़े जिला सांख्यिकी कार्यालय नीमच और नगर तथा ग्राम निवेश , संचालनालय, नीमच विकास योजना मध्यप्रदेश से लिये गये है । जनसंख्या वृद्धि के आंकड़े वर्ष 1971 से 2011 तक के लिए गए है ।

जनसंख्या – तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि नीमच नगर में 1971(49748) से 2011(128095) तक निरन्तर वृद्धि हुई है ।

तालिका क्रमांक 1

नीमच नगर : जनंसख्या वृद्धि (1971 –2011)

क्र.	वर्ष	जनसंख्या	वृद्धि दर (प्रतिशत में)
1	1971	49748	37.10
2	1981	68853	38.40
3	1991	90474	31.38
4	2001	112852	24.73
5	2011	128095	13.50

स्त्रोत – जिला सांख्यिकी पुस्तिका , नीमच

1971 से 2011 तक जनंसख्या में दुगुने से अधिक हो गई । जनसंख्या वृद्धि के कई कारण है जैसे देश की जलवायु, स्वास्थ्य सुविधाओं में वृद्धि होने के कारण मृत्यू दर में कमी, कृषि पर निर्भरता इत्यादि । नीमच नगर की जनसंख्या वृद्धि दर में कमी वर्ष 1981 के (38.40) पश्चात आई है । वर्ष 2011 में यह वृद्धि दर 13.50 प्रतिशत हो गई है जो नगर के लिए एक अच्छा संकेत है (तालिका क्रमांक 1.1)

जनसंख्या वृद्धि का अध्ययन क्षेत्र के पर्यावरण पर प्रभाव –

1. **आवासीय क्षेत्र में वृद्धि –** आवास मनुष्य की महत्वपूर्ण आवश्यकता है । नगर में यह क्षेत्र सर्वाधिक होता है और यह नगर के सामाजिक सांस्कृतिक जीवन को प्रभावित करता है । नीमच नगर की आवासीय सघनता में काफी असमानता है । नीमच नगर में कुल 36 वार्ड है जिनमें वार्ड क्रमांक 19 गांधी वार्ड में 2426 व्यक्ति प्रति हेक्टयर निवास करते है , वही वार्ड क्रमांक 29 रामगोपाल वार्ड में यह घनत्व 87 है । नीमच नगर में वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार नीमच नगर में औसत अधिवासी दर 6.32 है और परिवार का आकार 6.01 आता है । यह आकड़े परिवार के बड़े आकार एवं नगर में अधिकासों की कमी को दशति है । नगर में पक्के मकान केवल 45 प्रतिशत है इसका अर्थ यह है कि लोग अपने पुश्तेनी मकानो में रहते है । अत: जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में पक्के मकान नही बन पाए है ।

गंदी बस्ती क्षेत्र – जनसंख्या वृद्धि तथा आवास की कमी से गंदी बस्तियां विकसित होती है । नीमच में सर्वेक्षण के आधार पर गंदी बस्तियों का औसत आवासीय घनत्व .1974 व्यक्ति प्रति हैक्टेयर आता है जो बहुत अधिक है । नगर में लगभग 2993 झुग्गियां है जिनमें लगभग 17960 व्यक्ति निवास करते है । इन बस्तियों के आवास कच्चे, टुटे फुटे मकान, अस्वास्थ्यकर पर्यावरण और इनमें मूलभूत सुविधाओं का अभाव है ।

छावनी क्षेत्र के बंगला बगीचा समस्या – नीमच नगर में ब्रिटिश शासन के समय के बड़े –बड़े बंगले और उनसे लगी भूमि संबंधी विवाद अभी भी चल रहे है । फलत: मूल भूत सुविधाओं की कमी बड़ी समस्या है ।

नगर आबादी के बीच कृषि भूमि – नीमच नगर के बीच बीच में तथा आबादी से लगे क्षेत्र में पट्टे की खेती वाली जमीन है जिस पर लोग मकान बना रहे है और पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव पड रहा है क्योंकि जनसंख्या वृद्धि

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) आर.जी.शासकीय पी.जी. महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

हो रही है।

2. **यातायात** – जनसंख्या वृद्धि के कारण नगर के नीमच सिटी और बघाना क्षेत्र में यातायात असुविधाजनक है क्योंकि मार्गों के किनारो पर निर्माण कार्य हो गए है। रास्ते संकरे हो गए है। फुट पाथों पर दुकाने लग रही है।

नगर में घास मण्डी स्थित है तथा आरा मशीने बस स्टेण्ड पर होने से यातायात अवरूद्ध हाता है। पर्यावरण भी प्रदूषित होता है।

3 **शैक्षणिक तथा स्वास्थ्य सुविधाओं में वृद्धि –** 1971 में नगर में केवल दो महाविद्यालय थे एक शासकीय व एक प्रायवेट ज्ञान मंदिर महाविद्यालय आज कन्या महाविद्यालय भी है।

स्कूल शिक्षा भी बहुत कुछ ऐसी ही थी। वर्तमान में नगर में 28 उच्चतर माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक विद्यालय है। आज कई प्रायवेट व्यावसायिक कालेज भी शहर में खुल गए है।

नगर में जनसंख्या वृद्धि के कारण चिकित्सालयों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। वर्तमान में शासकीय व अशासकीय कुल 25 चिकित्सालय नगर में है।

4. **पेयजल की व्यवस्था** – वर्तमान में जाजू सागर व दो बड़े कुए जल पूर्ति करते है जो नगर की जनसंख्या के हिसाब से अपर्याप्त है।

5. **जल मल विसर्जन** – नगर का गंदा पानी खुली नालियों द्वारा बड़े नालों में जाता तथा स्वास्थ्य को हानि पहुंचाता है।

इस प्रकार जहॉ एक और जनसंख्या वृद्धि से नीमच नगर का विस्तार व विकास हुआ है वही कई समस्याओं ने जन्म लिया है इन समस्याओं को दूर करने के उपाय निम्नलिखित है –

1 **आवास** – नीमच नगर के मध्य तथा बघाना और नीमच सिटी में आवासीय दबाव को कम कर विकेन्द्रीकृत किया जाना चाहिए।

प्रतिहजार जनसंख्या पर 3.91 हैक्टर भूमि के हिसाब से भू–आबंटन होना चाहिए जो कि प्रस्तावित है।नियोजित कॉलोनिया के आसपास झुग्गी झोपड़ियों को सुनियोजित तरीके से बसाकर उनके लिए न्यूनतम आवश्यकताओं की व्यवस्था सरकार को करना चाहिए, ताकि कमजोर वर्ग भी सम्मान का जीवन जी सके।

शहर की बंगला बगीचा समस्या अतिशीध्र हल करने की आवश्यकता है।

2 **यातायात समस्या का निराकरण** – फुटपाथ खाली कराकर तथा नीमच सिटी व बघाना में सडको के किनारे अतिक्रमण हटाकर समस्या का निराकरण किया जा सकता है। इस हेतु प्रशासन को कदम उठाना चाहिए।

3 नगर में मेडिकल कॉलेज होना चाहिए , ताकि यहॉ के विद्यार्थियों को बाहर न जाना पड़े।

4 पेयजल की व्यवस्था हेतु जाजू सागर की जल संग्रहण क्षमता बढ़ाने की आवश्यकता है इस हेतु विश्व बैंक को प्रस्ताव भेजा गया है। जनंसख्या वृद्धि के अनुसार नीमच सिटी और बघाना क्षेत्र में नई टंकिया बनाने की जरूरत है और जाजू सागर से नई पाईप लाईन बिछाकर पानी की पूर्ति की जा सकती है। भूमि के जल स्तर को बढाने के लिए दोनों नालो पर स्टॉप डेम बनाना चाहिए।

5 जल मल निकास हेतु अण्डर ग्राउण्ड ड्रेनेज सिस्टम लागू करना चाहिए ताकि वायु और जल प्रदूषण न हो।

6 बस स्टेण्ड पर जो आरा मशीनों की दुकाने लगी है उन्हें अन्यत्र स्थानान्तरित करने की आवश्यकता है। ईट भट्टा उद्योग शहर के बिलकुल करीब आ गए है इन्हें भी हटाने का कार्य प्रशासन द्वारा किया जाना चाहिए ताकि शहर प्रदूषण मुक्त हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चांदना, अरसी(1980) – जनसंख्या भूगोल का परिचय, कल्याणी पब्लिशर्स न्यू देहली।
2. राव.बी.पी. (2008) – नगरीय , भूगोल, वसुधंरा प्रकाशन, गोरखपुर।
3. विकास योजना , नीमच संचालनालय नगर तथा ग्राम निवेश नीमच (म.प्र.)।

****

हिन्दू धर्म में तीर्थ यात्रा का महत्व

डॉ. जगमोहन सिंह पूषाम *

शोध सारांश – भारत वर्ष धर्मभूमि है। इस भूमि में धर्म कण कण में व्याप्त है। प्रत्येक व्यक्ति धर्मयुक्त है। यहां के निवासियों की पहचान यहाँ की परम्पराऐं और पुरातनवादिता हैं। इस धरती पर अनेको धार्मिक सम्प्रदाय पनपते रहे हैं और जिसमें हिन्दु धर्म में तीर्थ यात्रा का विशेष महत्व हैं। इसका संबंध जहाँ एक ओर गंगा ,यमुना ,सरस्वती ,गोदावरी आदि पवित्र सलिला से है वहीं दूसरी ओर कैलाश और गोवर्धन आदि पर्वतों से, तो कहीं पुष्कर, मथुरा, गया, काँची और रामेश्वरम के तीर्थ से हैं। ये सभी पौराणिक तीर्थ है। जिनका उल्लेख वेद पुराणों में है। इस शोध आलेख में हिन्दू धर्म में तीर्थ यात्रा का महत्व के साथ धार्मिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, तीर्थयात्रा की मान्यताओं व परम्पराओं आदि का वर्णन किया गया है।

प्रस्तावना – हिन्दु धर्म में तीर्थ यात्रा का विशिष्ट स्थान है।वैदिक संहिताओं में तीर्थ शब्द प्रयुक्त हुआ है। महाभारत एवं पुराणों में उनकी महिमा गायी गई है और उन्हें यज्ञों से श्रेष्ठ माना गया हैं। पुराणों का कथन है कि भूमि के तीर्थो के अतिरिक्त कुछ सदाचार और सुशील आचार भी है ,जिन्हें मानस तीर्थ,कहा जाताहै।हिन्दुधर्म में तीर्थयात्रा का विस्तृत वर्णन वैदिक संहिताओं एवं पुराणों में हैं।

धार्मिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि – धार्मिक दृष्टि से कुछ विशिष्ट स्थलों की पवित्रता पर बल दिया गया है और वहाँ जाने के लिए धार्मिक और उनकी तीर्थयात्रा करने के विषय में कहा गया है।मुसलमानों के पाँच धार्मिक कर्तव्यों में एक है कम से कम एक बार हज करना, यानी मक्का एवं मदीना जाना जो क्रम से मुहम्मद साहब के जन्म एवं मृत्यु के स्थल हैं।[1] बौद्धों के चार तीर्थ–स्थल हैं, लुम्बिनी बोध–गया, सारनाथ एवं कुशीनारा, जो क्रम से भगवान् बुद्ध के जन्म–स्थान, सम्बोधि–स्थल , धर्मचक्र–प्रवर्तन–स्लि एवं निर्वाणस्थल के नाम से प्रसिद्ध हैं। ईसाइयों के लिए जेरूसलेम सर्वोच्च पवित्र स्थल है, जहाँ ऐतिहासिक कालों में बड़ी से बड़ी सैनिक तीर्थयात्राएँ की गयी थी। सैनिक तीर्थयात्रियों ने अपने इस पुनीत स्थल को मुसलमानों के अधिकार से छीनना चाहा था। ऐसी भयानक सैनिक तीर्थयात्राएँ किसी अन्य धार्मिक जाति में नहीं पायी गयी है। प्रसिद्ध इतिहासकार गिब्बन ने निन्दात्मक ढंग से इन सैनिक तीर्थयात्राओं का वर्णन किया है।[2] किन्तु इतना तो मानना ही पड़ेगा कि उन सैनिक धर्मयात्रियों में सहस्त्रों ऐसे थे, जिन्होंने अपने आदर्श के परिपालन में अपना जीवन एवं सर्वस्व त्याग कर दिया था।

ऋग्वेद एवं वैदिक संहिताओं में तीर्थ शब्द बहुधा प्रयुक्त हुआ है। ऋग्वेद की कतिपय उक्तियों में तीर्थ शब्द, ऐसा लगता है, मार्ग या सड़के के अर्थ में आया है, यथा–तीर्थे नार्यः पौस्यानि तस्थुः,[3] तीर्थे नाच्छा तातृषाणमोकोय,[4] करत्र इन्द्रः सुतीर्थाभयं च।[5] कुछ स्थानों पर इसका तात्पर्य नदी का सुतार (उथला स्थान) है, यथा–सुतीर्थमर्वतो यथानु नो नेषथा सुगम्,[6] अरित्रं वां दिवस्पृथु तीर्थे सिन्धूनां रथः',[7] की उक्ति 'तीर्थ न दस्ममुप थन्त्यूमाः' तीर्थ शब्द का सम्भवतः अर्थ है एक पवित्र स्थान।[8] की संवास्त्वा अधितुग्वनि' की व्याख्या में निरूक्त (4।14) ने कहा है कि 'सुवास्तु' एक नदी है और 'तुग्वन' का अर्थ है 'तीर्थ' (तरण–स्थान या पवित्र–स्थल)। तै0संहिता (6/1/1/12) में आया है कि यजमान को तीर्थ (सम्भवतः पवित्र स्थल) पर स्नान करना चाहिए।[9] तै0 सं0 (4/5/11/1–2) एवं वाज0 सं0 (16/16) में रूद्रों को तीर्थो में विचरण करते हुए लिखा गया है। शांखायन ब्राह्मण में आया है कि रात एवं दिन समुद्र हैं जो सबको समाहित कर लेते हैं और संध्याएँ (समुद्र के) अगाध तीर्थ है।[10] तीर्थ उस मार्ग को भी कहते है जो स्थल (विहार) से आने–जाने के लिए 'उत्कर' एवं 'चात्वल' (गड्ढा) के बीच पड़ता है।[11] ऐसा कहा गया है कि जिस प्रकार मानव शरीर के कुछ अंग, यथा दाहिना हाथ या कर्ण, अन्य अंगों से अपेक्षाकृत पवित्र माने जाते हैं, उसी प्रकार पृथ्वी के कुछ स्थल पवित्र माने जाते हैं। तीर्थ तीन कारणों से पवित्र माने जाते हैं, यथा–स्थल की कुछ आश्यचर्यजनक प्राकृतिक विशेषताओं के कारण, या किसी जलीय स्थल की अनोखी रमणीयता के कारण, या किसी तपःपूत ऋषि या मुनि के वहाँ रहने के कारण। अतः तीर्थ का अर्थ है वह स्थान या स्थल या जलयुक्त स्थान जो अपने विलक्षण स्वरूप के कारण पुण्यार्जन की भावना को जाग्रत करे। इसके लिए आकस्मिक परिस्थिति का होना आवश्यक नहीं है।ऐसा भी कहा जा सकता है कि वे स्थल जिन्हें ऋषिमुनियों ने तीर्थो की संज्ञा दी, तीर्थ हैं, जैसा कि अपने व्याकरण में पाणिनि ने 'नदी' एवं 'वृद्धि' जैसे पारिभाषित शब्दों का प्रयोग किया है।

स्कन्द0 (1/2/13/10) ने कहा है कि जहाँ प्राचीन काल के सत् पुरूष पुण्यार्जन के लिए रहते थे, वे स्थल तीर्थ है। मुख्य बात महान् पुरूषों के समीप जाना है, तीर्थयात्रा करना तो गौण है।[12] गौतम बौ.ध.सू. एवं वशिष्टधर्मसूत्र में भी वही सूत्र आया है कि वे क्षेत्र जो पुनीत है और पाप के नाशक है, वे हैं पर्वत नदियाँ, पवित्र सरोवर, तीर्थ–स्थल, ऋषि–निवास,गोशाला एवं देवों के मंदिर।[13] वायु. (77/117) एवं कूर्मपुराण (2/37/49/50) का कथन है कि हिमालय के सभी भाग पुनीत है, गंगा सभी स्थानों में पुण्य (पवित्र) है, समुद्र में गिरनेवाली सभी नदियाँ पुष्य है और समुद्र सर्वाधिक पवित्र है।[14] हिमाच्छादित पर्वतों, प्राणदायिनी विशाल नदियों एवं बड़े वनों की सौर्न्यशोभा एवं गरिमा सभी लोगों के मन को मुग्ध कर लेती है और यह सोचने को प्रेरित करती है कि उनमें कोई देवी सत्ता हे और ऐसे परिवेश में परम ब्रह्मा आंशिक रूप में अभिव्यंजित रहता है।

सूत्रों एवं मनुस्मृति तथा याज्ञ0 जैसी प्राचीन स्मृतियों में तीर्थो को कोई महत्वपूर्ण स्थिति नहीं दर्शायी गयी है किन्तु महाभारत एवं पुराणों में उनकी महिमा गायी गयी है और उन्हें यज्ञों से बढ़कर माना गया है। वनपर्व (82/13–17) में देवयज्ञों एवं तीर्थयात्राओं की तुलना की गयी है, यज्ञों में बहुत से पात्रों, यन्त्रों, संभार–संचयन, पुरोहित का सहयोग, पत्नी की उपस्थिति

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

आदि की आवश्यकता होती है, अत: उनका सम्पादन सम्भव नहीं। तीर्थयात्रा द्वारा जो पुण्य प्राप्त होते हैं वे जैसे यज्ञों द्वारा जिनमें पुरोहितों को अधिक दक्षिणा देनी पड़ती है, प्राप्त नहीं हो सकते अत: तीर्थयात्रा यज्ञों से उत्तम है।[15] किन्तु वनपर्व (82/9-12) एवं अनुशासनपर्व (108/3/-4) ने तीर्थयात्रा से पूर्ण पुण्य प्राप्त करने के लिए उच्च नैतिक एवं आध्यात्मिक गुणों पर बल दिया हे। ऐसा कहा गया है-जिसके हाथ, पॉव, मन सुसंयत हैं जिसे विद्या, तप एवं कीर्ति प्राप्त है वही तीर्थयात्रा से पूर्ण फल प्राप्त कर सकता है। जो प्रतिग्रह से दूर रहता है, जो कुछ मिल जाय उससे सन्तुष्ट रहता है एवं अहंकार से रहित है, वह तीर्थ फल प्राप्त करता है। जो अकल्क है, निराम्भ है लघ्वाहारी है, जितेन्द्रिय अर्थात् जो अपनी इन्द्रियों के संयम द्वारा पापकर्मो से दूर रहता है और वह भी जो अक्रोधी है, सत्यशील है, दृढव्रती है अपने समान ही अन्यों को जानने-मानने वाला है, वह तीर्थयात्राओं से पूर्ण फल प्राप्त करता हैं।[16] इसका तात्पर्य यह है कि जिन्हें ये विशेषताएँ नहीं प्राप्त हैं वे तीर्थयात्रा द्वारा पापों का नाश कर सकते है किन्तु जो इन गुणों से युक्त हैं वे और भी अधिक पुण्यफल प्राप्त करते हैं। स्कन्द0 (काशीखण्ड 6/3) ने दृढतापूर्वक कहा है-जिसका शरीर जल से सिक्त है उसे केवल इतने से ही स्नान किया हुआ नहीं कह सकते, जो इन्द्रियसंयम से सिक्त है जो पुनीत है सभी प्रकार के दोषों से मुक्त एवं कलंक रहित है। केवल वही स्नात (स्नान किया हुआ) कहा जा सकता है। यही बात अनुशासनपर्व (108/9) में भी कही गयी है।[17] वायुपुराण में आया है-'पापकर्म कर लेने पर यदि धीर श्रद्धावान एवं जितेन्द्रिय व्यक्ति तीर्थयात्रा करने से शुद्ध हो जाता है, तो उसके विषय में क्या कहना जिसके कर्म शुद्ध है। किन्तु जो अश्रद्धावान् है पापी है, नास्तिक है संशयात्मा है और जो हेतुद्रष्टा है-ये पॉचों तीर्थफलभागी नहीं होते ।'[18] स्कन्द0 (1/1/31/37) का कथन है कि पुनीत स्थान (तीर्थ) यज्ञ एवं भॉति-भॉति के दान मन की शुद्धि का साधन हैं। पक्ष0 (4/80/9) में आया है-'यज्ञ, व्रत, तप एवं दान कलियुग में भले प्रकार से सम्पादित नहीं हो सकते किन्तु गंगा-स्नान एवं हरिनाम स्मरण सभी प्रकार के दोषों से मुक्त है। विष्णुधर्मोत्तर0(3/273/6एवं 9) ने बहुत ही स्पष्ट कहा हैं-जब तीर्थयात्रा की जाती है तो पापी के पाप कटते हैं,सज्जन की धर्मवृद्धि होती है,सभी वर्णो एवं आश्रमों के लोगों को तीर्थ फल देता है।[19]

पुराणों (यथा-स्कन्द0, काशीखण्ड 6,पद्मपुराण उत्तरखण्ड 236) का कथन है कि भूमि के तीर्थो के अतिरिक्त कुछ ऐसे सदाचार एवं सुन्दर शील-आचार भी हैं-जिन्हें मानस तीर्थ कहा जाता है। उनके अनुसार सत्य क्षमा, इन्द्रिय संयम, दया दान, आत्मनिग्रह, सन्तोष, ब्रह्मचर्य, मृदुवाणी, ज्ञान, धैर्य और तप तीर्थ है और सर्वोच्च तीर्थ मन:शुद्धि है।' उनमें यह भी आया है कि जो लोभी, दुष्ट, क्रुर, प्रवञ्चक, कपटाचारी, विषयासक्त हैं, वे सभी तीर्थो में स्नान करने के उपरान्त भी पापी एवं अपवित्र रहते है। क्योंकि मछलियॉ जल में जन्म लेती है, वही मर जाती है और स्वर्ग को नहीं जाती क्योंकि उनके मन पवित्र नहीं होते-यदि मन शुद्ध नहीं होता है तो दान, यज्ञ, तप, स्वच्छता, तीर्थयात्रा एवं विद्या को तीर्थ का पद नहीं प्राप्त हो सकता।[20] ब्रह्मपुराण (25/4-6) का कथन है कि जो दुष्ट ह्रदय है वह तीर्थो में स्नान करने से शुद्ध नहीं हो सकता, जिस प्रकार वह पात्र जिसमें सुरा रखी गयी थी, सैकड़ों बार धोने से भी अपवित्र रहता है, उसी प्रकार तीर्थ, दान, व्रत, आश्रम उस व्यक्ति को पवित्र नहीं करते, जिसका ह्रदय दुष्ट रहता है, जो कपटी होता है और जिसकी इन्द्रियाँ असंयमित रहती है। जितेन्द्रिय जहाँ भी कहीं रहे, वहीं कुरूक्षेत्र, प्रयाग एवं पुष्कर है। वामनपुराण (43/25) में एक सुन्दर रूपक आया है-आत्मा संयमरूपी जल से पूर्ण नदी है, जो सत्य से प्रवहमान है जिसका शील ही तट है और जिसकी लहरें दया है, उसी में गोता लगाना चाहिए अन्त:करण जल से स्वच्छ नहीं होता।[21] पद्म पुराण (2/39/56/61) ने तीर्थो के अर्थ एवं परिधि को विस्तृत कर दिया है-जहाँ अग्निहोत्र एवं श्राद्ध होता है, मन्दिर , वह घर जहाँ वैदिक अध्ययन होता है गोशाला, वह स्थान जहॉ सोम पीनेवाला रहता है, वाटिकाएँ जहॉ पुराण पाठ होता है या जहॉ किसी का गुरू रहता है या पतिव्रता स्त्री रहती है या जहॉ पिता एवं योग्य पुत्र का निवास होता है-वे सभी स्थान पवित्र है।

प्राचीन काल से तीर्थो एवं पुनीत धार्मिक स्थलों का उल्लेख होता आया है। मत्स्य: (110/7), नारदीय0 (उत्तर, 63,53-54) एवं पद्य0 (4/89/16-17 एवं 5/20/16-150), वराह (159/6-7), ब्रह्म0 (25/7-8 एवं 174/83) आदि में तीर्थो की संख्याएँ दी गयी है। मत्स्य0 का कथन है कि वायु ने घोषित किया है कि 35 कोटि तीर्थ हैं जो आकाश, अन्तरिक्ष एवं भूमि में पाये जाते हैं और सभी गंगा में अवस्थित माने जाते है। वामन0 (46/53) का कथन है कि 35 करोड़ लिंग है। ब्रह्म0 (25/7-8) का कहना है कि तीर्थो एवं पुनीत धार्मिक स्थलों की इतनी बड़ी संख्या है कि उन्हें सैकड़ों वर्षो में भी नहीं गिना जा सकता। वनपर्व (83/202) का कथन है कि पृथ्वी पर नैमिष एवं अन्तरिक्ष में पुष्कर सर्वश्रेष्ठ तीर्थ हैं, कुरूक्षेत्र तीनों लोकों में विशिष्ट तीर्थ है और दस सहस्त्र कोटि तीर्थ पुष्कर में पाये जाते हैं (82/21)। अस्तु, समय-समय पर नये तीर्थ भी जोड़े गये तथा तीर्थो में स्थायी रूप से रहने वाले, विशेषत: तीर्थ-पुरोहितों (पण्डों) ने धन-लाभ से उत्तेजित होकर संदिग्ध प्रमाणों से युक्त बहुत से माहात्म्यों का निर्माण कर दिया और उन पर महाभारत एवं पुराणों के प्रसिद्ध रचयिता व्यास का नाम जोड़ दिया। वनपर्व[22] में यहॉ तक आया है कि देव एवं ऋषियों ने पुष्कर में सिद्धि प्राप्त की । और जो कोई वहाँ स्नान करता है एवं श्रद्धापूर्वक देवों एवं अपने पितरों की पूजा करता है वह अश्वमेध करने का दस गुना फल पाता हैं। पद्मपुराण[23] (5वाँ खण्ड, 27/78) ने पुष्कर के विषय में लिखा है कि इससे बढ़कर संसार में कोई अन्य तीर्थ नहीं है। वनपर्व (83/145) ने पृथूदक की प्रशस्ति करते हुए कहा है कि कुरूक्षेत्र पुनीत है, सरस्वती कुरूक्षेत्र से अधिक पुनीत है । मत्स्य0 (186/11) ने कतिपय तीर्थो की तुलनात्मक उल्लेख किया है-'सरस्वती का जल तीन दिनों के स्नान से पवित्र करता है, यमुना का सात दिनों में गंगा का जल तत्क्षण, किन्तु नर्मदा का जल केवल दर्शन से ही पवित्र करता है।[24] वाराणसी से बढ़कर कोई अन्य स्थल नहीं है और न ही कोई ऐसा होगा । अतिशयोक्ति लोगों ने यहाँ तक कह दिया कि आमरण काशी में निवास कर लेने से न केवल व्यक्ति ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त हो जाता है, प्रत्युत वह जन्म-मरण के चक्र से भी बच जाता है और पुन: जन्म नहीं लेता।[25] यही बात लिंगपुराण (1/92/63 एवं 94) ने भी कही है। वामनपुराण में आया है-चार प्रकार से मुक्ति प्राप्त हो सकती है ब्रह्मज्ञान, गयाश्राद्ध, छीनकर या भगाकर ले जायी जाती गायों को बचाने में कुरूक्षेत्र में निवास। जो कुरूक्षेत्र में मर जाते हैं वे पुन: पृथ्वी पर लौटकर नहीं आते है।[26] मत्स्य0 (181/23) अग्नि0 (112/3) एवं अन्य पुराणों ने काशी में जाने के उपरान्त व्यक्ति को अपने पैरों को पत्थर से कुचल डालना चाहिए और सदा के लिए काशी में ही रह जाना चाहिए[27] इसी प्रकार काशी, पुष्कर एवं प्रभास देवतीर्थ हैं (तीर्थप्रकाश, पृ0 18)। ब्रह्मपुराण (174/31/32) ने दैव, आसुर, आर्ष एवं मानुष तीर्थो को क्रम से कृत (सत्य), त्रेता, द्वापर एवं कल नामक युगों से सम्बन्धित माना है।

तीर्थचिन्तामणि एवं तीर्थप्रकाश ने कूर्मपुराण का उद्धरण देकर वाराणसी की महत्ता निम्न रूप से प्रकट की है[28]- 'ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य,

शूद्र, वर्णसंकर, स्त्रियॉ और वे लोग जो संकीर्ण रूप में पाप योनियों में उत्पन्न हुए हैं, कीट, चीटियाँ, आदि जब अविमुक्त (वाराणसी) में मरते हैं तो वहॉ वे मानव रूप मे जन्म लेते हैं तथा अविमुक्त में जो पापी मनुष्य मरते हैं वे नरक में नहीं जाते है।' स्त्रियों एवं शूद्रों के विषय में एक स्मृति वचन है-'जप, तप, तीर्थयात्रा प्रव्रज्या (संन्यास-ग्रहण), मन्त्रसाधन एवं देवताराधन (पुरोहित रूप में)-ये छ: स्त्रियों एवं शूद्रों को पाप की ओर ले जाते हैं (अर्थात् ये उनके लिए वर्जित हैं)।[29] कात्यायन (पृ0 113) ने व्यवस्था दी है-'नारी जो कुछ करती है वह उसके भविष्य (के पुण्यफल) से संबंधित है, जो बिना पिता या ससुर , पति या पुत्र की अनुमति के विफल होता है।[30] इससे स्पष्ट होता है कि आरम्भिक काल में सभी वर्णो के पुरूषों एवं नारियों का तीर्थयात्रा करना पापों से छुटकारा पाने के लिए अच्छा समझा जाता था। यद्यपि पति की सम्पत्ति के उत्तराधिकार पर नारी का स्वामित्व सीमित होता है, किन्तु न्यायालय के निर्णयों से स्पष्ट है कि वह पति की सम्पत्ति का एक अल्प अंश पति के गयाश्राद्ध में या पण्ढरपुर की तीर्थयात्रा में खर्च कर सकती है। पवित्र तीर्थो में स्नान करते समय छूआछूत का विचार नहीं किया जाता।[31] विष्णुधर्मसूत्र (5/132-133) में आया है कि वैदिक विद्यार्थियों, वानप्रस्थों, संन्यासियों, गर्भवती नारियों एवं यात्रियों से नाविक या शौल्किक को शुल्क नहीं लेना चाहिए, यदि वे इनसे शुक्ल लेते थे तो उन्हें लौटाना पड़ता था।[32] किन्तु इस व्यवस्था का पालन हिन्दू राजाओं द्वारा भी नहीं किया गया।

राजतरंगिणी (6/254-255 एवं 7/1008) में उल्लेख है कि गया श्राद्ध करने वाले कश्मीरियों पर कर लगता था।[33] अनहिल्लवाड़ के राजा सिद्धराज (1094-1143 ई0) द्वारा सोमनाथ के यात्रियों पर बाहुलोद नामक नगर की सीमा पर कर लगाया जाता था, जिसे उसकी माता ने बन्द करा दिया। मुसलमान राजाओं द्वारा भी कर लगाया जाता था। ऐसा लगता है कि कवीन्द्राचार्य नामक एक बड़े विद्वान् ने शाहजहाँ के समक्ष प्रयाग एवं काशी के यात्रियों के पक्ष में ऐसी सुन्दर उक्तियॉ कहीं कि उसने उन्हें कर -मुक्त कर दिया और उनको 'सर्वविद्या-निधान' की पदवी दी।[34] ब्रह्मपुराण ने व्यवस्था दी है कि तीर्थयात्रा के इच्छुक व्यक्ति को एक दिन पूर्व से ब्रह्मचर्यपूर्वक रहना चाहिए और उपवास करना चाहिए, दूसरे दिन उसे गणेश, देवों, पितरों की पूजा करनी चाहिए और अपनी सामर्थ्य के अनुसार अच्छे ब्राह्मणों का सम्मान करना चाहिए, तथा लौटने पर भी वैसा ही करना चाहिए।[32] तीर्थयात्रा करते समय मुण्डन कराने के विषय में निबन्धकारों में ऐकमत्य नहीं है। पद्म0 एवं स्कन्द0 ने इसे अनिवार्य माना है।[35] तीर्थकल्प0 (पृ0 11) ने शिरमुण्डन की चर्चा ही नहीं की है और उपवास को वैकल्पिक ठहराया है। पश्चात्कालीन निबन्धों ने सामान्यत: धार्मिक कृत्यों को अति विस्तृत एवं दुश्कर बना डाला है। चातुर्मास्य एवं अग्निश्टोम जैसे वैदिक यज्ञों के लिए यजमान को दाढ़ी-मूँछ बनवा लेने की व्यवस्था दी गयी है (शतपथ ब्राह्मण, 2/6/3/14)। समावर्तन के समय भी मुण्डन की व्यवस्था थी।[36] पापों से मुक्ति पाने के लिए किये जाने वाले प्रायश्चित्तों में भी मुण्डन किया जाता था।

तीर्थचिन्तामणि एवं तीर्थप्रकाश ने स्मृतिसमुच्चय से विष्णु का एक श्लोक उद्धृत किया है-प्रयाग में, तीर्थयात्रा पर, माता या पिता की मृत्यु पर बाल कटाने चाहिए, किन्तु अकारण नहीं।[37] मिताक्षर (याज्ञ0 3/17) ने एक श्लोक उद्धृत किया है-'गंगा पर, भास्कर-क्षेत्र में, माता, पिता या गुरू की मृत्यु पर, वैदिक अग्निहोत्र प्रारम्भ करते समय एवं सोमयज्ञ में-इन सात अवसरों या स्थानों में मुण्डन करना चाहिए।' तीर्थचि0 एवं तीर्थप्र0 ने एक श्लोक उद्धृत किया है-कुरूक्षेत्र, विशाला (उज्जयिनी या वदरिका), विरजा (उड़ीसा की एक नदी) एवं गया को छोड़कर सभी तीर्थो में मुण्डन एवं उपवास के कृत्य अवश्य करने चाहिए।[38] प्रभासखण्ड में आया है कि जो धनिक व्यक्ति अन्य को धन या यान द्वारा तीर्थयात्रा की सुविधा देता है वह तीर्थयात्राफल का चौथाई भाग पाता है।[39] रघुनन्दनकृत प्रायश्चित्तत्व ने ब्रह्मण्डपुराण से उद्धरण देकर उन 14 कर्मो का उल्लेख किया है जिन्हें गंगा के तट पर त्याग दिया जाता है, जो निम्न हैं-शौच (शरीर-शुद्धि के लिए अति सूक्ष्मता पर ध्यान देना, अर्थात् शरीर को रगड़-रगड़कर स्वच्छ करना या तेल-साबून लगाना आदि) आचमन (दिन में कई अवसरों पर ऐसा करना), केश-श्रृंगार, निर्माल्य धारण (देवपूजा के उपरान्त पुष्पों का प्रयोग), अघमर्शण सूक्त-पाठ,[40] देह मलवाना, क्रीडा-कौतुक, दानग्रहा, संभोग-कृत्य, अन्य तीर्थ की भवति, अन्य तीर्थ की प्रशंसा, अपने पहने हुए वस्त्रों का दान, किसी को मारना-पीटना एवं तीर्थजल को तैरकर पार करना। वराह0 (165/57-58) ने कहा है कि मथुरा के यात्री को चाहिए कि वह मथुरा में उत्पन्न एवं पालित-पोषित ब्राह्मणों को चारों वेदों के ज्ञाता ब्राह्मण की अपेक्षा वरीयता दे।[41] वायुपुराण (82/25-27) में आया है कि जब पुत्र गया जाय प्रकल्पित ब्राह्मणों को ही आमन्त्रित करना चाहिए, ये ब्राह्मण साधारण लोगों से ऊपर (अमानुष) होते हैं, जब वे सन्तुष्ट हो जाते हैं, तो देवों के साथ पितर भी सन्तुष्ट हो जाते हैं, उनके कुल, चरित्र, ज्ञान, तप आदि पर ध्यान नहीं देना चाहिए और जब वे (गया के ब्राह्मण अर्थात् गयावाल) सम्मानित होते हैं तो कृत्यकर्ता (सम्मान देनेवाला) संसार से मुक्ति पाता है।[42] गयावाल ब्राह्मणों का एक प्रारम्भिक ऐतिहासिक उल्लेख बंगाल के राजा लक्ष्मणसेन (लगभग 1183 ई0) के शक्तिपुर ताम्रपत्र में पाया जाता है।[43] पुराणों की वाणी का यह परिणाम हुआ कि गया के ब्राह्मणों ने एक अपना समुदाय बना लिया, जिसमें किसी अन्य के प्रवेश वर्जित है। कट्टर हिन्दू यात्रियों में ऐसा आचरण पाया जाता है कि जब वे गया जाते हैं तो वे सर्वप्रथम पुन-पुना नदी के तट पर मुण्डन कराते हैं और गया पहुँचने पर किसी गयावाल ब्राह्मण के चरण पूजते हैं।[44]

वैदिक साहित्य को छोड़कर, महाभारत एवं पुराणों में कम से कम 40,000 श्लोक तीर्थो, उपतीर्थो एवं उनसे सम्बन्धित किंवदन्तियों के विषय में ही प्रणीत हैं। वनपर्व (अध्याय 82-156) एवं शल्यपर्व (अध्याय 34-54) में ही 3900 के लगभग केवल तीर्थयात्रा-सम्बन्धी श्लोक है। मत्स्य0 के 14002 श्लोकों में 1200 श्लोक तीर्थ-सम्बन्धी है। इसके अतिरिक्त तीर्थ-सम्बन्धी ग्रन्थ उल्लेखनीय हैं। लक्ष्मीधर के कल्पतरू का तीर्थ विवेचन काण्ड, हेमाद्रि की चतुर्वर्ग-चिन्तामणि का तीर्थखण्ड (जो अभी उपलब्ध नहीं हुआ है), वाचस्पति (1450-1480 ई0) की तीर्थचिन्तामणि, नृसिंहप्रसाद (लगभग 1500 ई0) का तीर्थसार, नारायण भट्ट का त्रिस्थलीसेतु (1550-1580 ई0) टोडरानन्द (1565-1589 ई0) रघुनन्दन (1520-1570 ई0) का तीर्थ तत्व या तीर्थयात्रा-विधितत्व, मित्र मिश्र (1610-1640 ई0) का तीर्थप्रकाश: भट्टोजि (लगभग1624ई0) का त्रिस्थलीसेतुसारसंग्रह, नागेश का त्रिस्थलीसेतुसारसंग्रह, नागेश या नागोजि का तीर्थेन्दुखेर। इसके अतिरिक्त विशिष्ट तीर्थो पर भी पृथक्-पृथक् ग्रन्थ हैं, यथा-विद्यापति (1400-1450 ई0) का गंगावाक्यावली नामका ग्रन्थ, सुरेश्वराचार्य का काशीमृतिमोक्ष-विचार, रघुनन्दन की गयाश्राद्धपद्धति एवं पुरूषोत्तम क्षेत्रतत्व।

निष्कर्ष - हिन्दू धर्म में तीर्थ यात्रा करने का उल्लेख पुराणों में है। तीर्थस्थल प्राकृतिक विशेषताओं या किसी पवित्र सलिला अथवा जलीय स्थल की रमणीयता या ईश्वरीय अथवा किसी महापुरूष के विलक्षण स्वरूप के कारण

पवित्र माने गये है। तीर्थ यात्रा से पुण्य प्राप्त करने के लिये उच्च नैतिक एवं आध्यात्मिक गुणों पर बल दिया गया है। पुराणों के अनुसार तीर्थो के अतिरिक्त कुछ सदाचार भी हैं जिन्हें मानस 'तीर्थ कहा गया है ,जिनमें सत्य, क्षमा, दया, ज्ञान, दान, संतोष, ब्रम्हचर्य, इन्द्रिय संयम, धैर्य, आत्म निग्रह और तप तीर्थ हैं।सर्वश्रेष्ठ तीर्थ मन: शुद्धि है। यह भी आया है कि जो लोभी, दुष्ट, क्रूर कपटाचारी, विषयासक्त हैं ,वे तीर्थो में स्नान करने के पश्चात् भी पापी एवं अपवित्र रहते हैं। 'कात्यायन' में पुरूषों एवं नारियों के लिये तीर्थयात्रा करना पापो से छुटकारा पाने का उचित माध्यम बताया गया हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. देखिए सैकेड बुक आव दि ईस्ट (जिल्द 6,भूमिका) जहॉ पॉच कर्तव्यों का उल्लेख है। मक्का एवं मदीना की तीर्थयात्रा को हज कहा जाता है और जो मुसलमान हज करता है उसे हाजी कहलाने का अधिकार है।
2. गिब्बन ने लिखा है-अपने पादरी की पुकार पर सहस्त्रों की संख्या में डाकू, गृहदाही एवं नर-घाती लोग अपनी आत्माओं को पापमुक्त करने के लिए उठ खड़े हुए और अधार्मिकों पर वही अत्याचार ढाहने लगे जिसे वे स्वयं अपने इसाई भाइयों पर करते थे और पापमुक्ति के ये साधन सभी प्रकार के अपराधियों द्वारा अपनाये गये डेक्लाइन एण्ड फाल आव दि रोमन एम्पायर, जिल्द 7 संस्करण 1862 पृ0 188
3. ऋग्वेद 1।169।-6
4. ऋग्वेद 1।173-11
5. ऋ0 4।29।-3
6. ऋ0 8।47।-11
7. ऋ0 10।19।-37
8. ऋ0 8।19।-36
9. अप्सु स्नाति साक्षादेव दीक्षातपसी अवरून्धे तीर्थे स्नाति।
10. समुद्रो वा एष सर्वहरो यदहोरात्रे तस्य हैते अगाधे तीर्थे यत्सन्ध्ये तद्यथा अगाधाम्यां तीर्थाभ्यां समुद्रसतीयात्तावक् तत्।
11. ते अन्तरेण चात्वालोत्करा उपनिष्क्रान्ति तद्धि यज्ञस्य तीर्थमाप्नानं नाम।
12. मुख्या पुरूषयात्रा हि तीर्थयात्रानुषंगत:।
13. सर्वे शिलोच्चया: सर्वा: स्त्रवन्त्य: पुण्या ह्रदास्तीर्थान्यृषिनिवासा गोष्ठपरिस्कन्दा इति देशा:।
14. सर्वे पुण्यं हिमवतो गंगा पुण्या च सर्वत: ।
15. ऋषिभि: ऋतव: प्रोक्ता देवेष्विव यथाक्रमम्। फलं चेव यथातथ्यं प्रेत्य चेह च सर्वश: ।।
16. यस्य हस्दौ च पादौ चमनश्चैव सुसंयतम्। विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते।।
17. नोदकक्लित्रगात्रस्तु स्नात इत्यभिधीयते। स स्नातो यो दमस्नात: स बाह्यभ्यन्तर शुचि: ।।
18. तीर्थान्यनुसरन् धीर: श्रद्दधानो जितेन्द्रिय: । कृतपापो विशुध्येत किं पुन: शुभकर्मकृत्।।
19. पापानं पापशमनं धर्म0द्धिस्तथा सताम्। विज्ञेयं संवितं तीर्थ तस्मात्तीर्थपरों भवेत्।।
20. सत्यं तीर्थ क्षमा तीर्थ..................तीर्थानामुत्मं तीर्थ विशुद्धिर्मनस: पुन:।।
21. आत्मा नदी संयमतोयपूर्णा सत्यावहा शीलतटा दयोर्भि:। तत्राभिषेंक कुरू पाण्डुपुत्र न वारिणा शुध्यति चान्तरात्मा।।
22. वनपर्व (82/26-27)
23. पद्मपुराण (5वॉ खण्ड, 27/78)
24. त्रिभि: सारस्वतं तोयं सप्ताहेन तु यामुनस्। सद्य: पुनाति गांगेय दर्शनादेव नार्मदम्।।
25. आ देहपतनाद्यावतत्क्षेत्रं यो न मुचति। न केवलं ब्रह्महत्या प्राकृतं च निवर्तते।।
26. ब्रह्मज्ञानं गयाश्राद्धं गोग्रहें मरणं ध्रुवम्। वास: पुसा कुरूक्षेत्रे मुक्तिरूक्ता चतुर्विद्या।।
27. अश्मना चरणौ हत्वा वसेत्काशीं न हिं त्यजेत्। अग्नि0 (112/3) अविमुक्तं यदा गच्छेत् कदाचित्काल पर्ययात्। अश्मना चरौ भित्वा तत्रैव निधनं व्रजेत्।।
28. ब्रह्मण क्षत्रिया वैश्या: शूद्रा ये वर्णसंकरा:। स्त्रियों म्लेच्छाश्च ये चान्ये संकीर्णा: पापयोनय:।।
29. जपस्तपस्तीर्थयात्रा प्रव्रज्या मन्त्रसाधनम्। देवताराधनं चेति स्त्रीशूद्रपतनातिन षट्।।
30. नारी खल्वननुज्ञाता पित्रा सुतेन वा। विफलं तद् भवेत्तस्या यत्करोत्यौर्ध्वदेहिकम्।।
31. तीर्थे विवाहे यात्रायां संग्रामे देशविप्लवे। नगरग्रामदाहे च स्पृष्टास्पृष्टिर्न दुष्यति।।
32. ब्रह्मचारिवानप्रस्थिभिक्षुगुविणीतीर्थानुसारिणां नाविक: शौल्किक: शुल्कमाददानश्च। तच्च तेषां दद्यात्।
33. काश्मीरिकाणां य: श्राद्धशुल्कोच्छेता गयान्तरे। सोप्येरमन्तक: शूर: परिहासपुराश्रय:।।
34. इण्डियन एण्टीक्वेरी, जिल्द 41 (1992 ई0) पृ0 7
35. यो य: कश्चितीर्थयात्रां तु गच्छेत्सु संयत: स च पूर्व गृहे स्वे। कृतोपवास: शुचिरप्रमत्त: सम्पूजयेद् भक्तिनम्त्रो गणेषम्।।
36. तीर्थोपवास: कर्तव्य: शिरसो मुण्डनं तथा। षिरोगतानि पापानि यान्ति मुण्डनतों यत:।।
37 पारस्करगृ0 (2/6/17), खादिरगृ0 (3/1/2/23), शांखयनगृ0 (3/1/1-2)। खादिरगृ0 में आया है-'प्राष्य वापयेत् शिखावर्ज केषष्मश्रुलोमनखानि।'
38. मनुष्याणां तु पापानि तीर्थानि प्रतिगच्छताम्। केशानाश्रित्य तिष्ठन्ति तस्मात्तद्वपनं चरेत्।।
39. मुण्डनं चोपवासश्च सर्वतीर्थेश्वयें विधि:। वर्जयित्वा कुरूक्षेत्रं विषालां विरजां गयाम्।।
40. यश्चान्यं कारयेत् शक्त्या तीर्थयात्रां तथेश्वर:। स्वकीयद्र व्यानाम्यां तस्य पुण्यं चतुर्गुणम्।।
41. ऋग्वेद 190/1-3
42. चतुर्वेदं परित्यज्य माथुरं पूजयेत्सदा। मथुरायां ये वसन्ति विष्णुरूपा हि ते नरा:।।
43. यदि पुत्रों गयां गच्छेत्कदाचित्कालपर्ययात्। तानेव भोजयेद्विप्रान् ब्राह्मण ये प्रकल्पिता:।।
44. श्रीबल्लालसेनदेवप्रदत्त-गयाल-ब्राह्मणसाहरिवासेन प्रति गृहीत पचशतोत्पतिक क्षेत्रपांटकाभिषानशासनविनिमयेन।।
45. गरूड़पुराण में आया है-वाराणस्यां कृतआद्धस्तीर्षे शोणनदे तथा। पुन:पुनामहानद्यां श्राद्धं स्वर्ग पितृत्रयेत्।।

सूर्यबाला की कहानियों में निम्नवर्ग का यथार्थ चित्रण

प्रो. डी. पी. चन्द्रवंशी *

शोध सारांश – विश्व का कोना-कोना सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित है, अमीर-गरीब के बीच भेदभाव करना उसे आता ही नहीं, उसे तो बस जीवन में उजियारा फैलाना हैं सूर्यबाला अर्थात सूर्यपुत्री की कलम ने भी उच्च वर्ग से निम्न वर्ग तक अपनी संवेदना पहुँचाई हैं। गॉव से नगर, महानगर होते हुए विदेशी धरा तक को अपनी कहानियों में पिरोया है। वे जीवन-मूल्यों को विशेष महत्व देती है इसलिए उनकी कहानियों के पात्र दु:ख अभाव, भय के बीच जीते हुए भी साहस के साथ उनका सामना करते हुए जीवन में सुकुन की तलाश कर ही लेते है। विद्रोह की भावना कहीं नहीं है।

प्रस्तावना – हिन्दी कथा-लेखन में महिला कथाकारों ने अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज कराई है। कहानीकार, उपन्यासकार, व्यंग्यकार के रूप में सूर्यबाला विशिष्ट और अलग अंदाज के साथ उपस्थित है। वे जीवन, समाज, परंपरा एवं उनसे जुड़ी समस्याओं को अपनी मुक्त दृष्टि से देखने का प्रयास करती है। किसी आंदोलन में शामिल न होकर अपना मार्ग स्वयं बनाती हुई चुपचाप सृजन-प्रक्रिया में लीन है। उनकी कहानियाँ कल्पना की धरातल पर नहीं वरन् अनुभव के ठोस धरातल पर खड़ी है, जहॉ जीवन के प्रत्येक स्पंदन को महसूस किया जा सकता है। रोजमर्रा की सामान्य सी जिंदगी से भी सामाजिक विडंबना व त्रासदी को सूर्यबाला की सूक्ष्म व पारखी नजरे ढूँढ निकालती है। 'सारिका' में अक्टूबर 1972 में छपी पहली कहानी से अब तक प्रकाशित तेरह कहानी संग्रह, पॉच उपन्यास, चार व्यंग्य-संग्रह एवं बालकथा ने उनके साहित्य लेखन को समृद्ध किया है। किसी विमर्श के फेर में नहीं पड़ने वाली सूर्यबाला की कहानियों में रिश्तों की आत्मीयता महसूस होती है।

कहानियों में निम्नवर्ग की यथार्थता – मध्यमवर्गीय परिवेश से होने के नाते सूर्यवबाला की कहानियाँ मध्मय वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है, किंतु उन्होंने निम्नवर्गीय जीवन - शैली को भी गहराई से महसूस किया है। वे निम्नवर्गीय पात्रों के साथ बौद्धिकता मात्र से नहीं बल्कि पूरे मार्मिकता के साथ जुड़ी हुई है। इसलिए इनके जीवन की यथार्थता को गहरी संवेदना के साथ अभिव्यक्त किया है।

'रहमदिल' कहानी का निम्नवर्गीय पात्र रहमत अली इतना रहमदिल है कि स्टेशन में टी.सी. और पुलिस वालों के शोषण का शिकार होकर भी वह इस बात से अनजान है और स्वयं निर्दोष होते हुए भी वह भ्रष्ट पुलिस वालों के उपकार तले दबा होकर सुकून की सॉस लेता है - 'अल्लाताला की बड़ी मेहरबानी .... कि बेदाग बच आया नहीं तो फॅसा बड़ी बुरी तरह था कानून के शिकंजे में ..... वो तो पुलिसवाला रहमदिल निकला, जो छुड़वा दिया बेचारे ने, अल्ला भला करे उसका'...। ऊँचे पूरे कद की, मर्द की तरह ड़ील ड़ौल वाली महिला पर केंद्रित कहानी 'आदमकद' में लेखिका ने नारी की कर्मठता, सहृदयता, सहनशीलता एवं ममतामयी रूप का चित्रण किया है। रिश्तेदारों के आसरे पर पलने वाला नकारा आदमी पति के रूप में मिला, इसलिए औरत ही घर का बोझ, मजदूरी करके उठाती है। कड़ी मेहनत से संवारे गए घर को नशेड़ी पति बर्बाद कर देता है, पर वह हिम्मत नहीं हारती और बच्चे के अच्छे भविष्य हेतु फिर से जीवन का नए सिरे से शुरूवात करने का जज्बा रखती है।

चिथड़ों में लिपटे नौकर को देख लोग हमें क्या कहेंगे, इसलिए काम पर आए बालक चंदू को नए 'कपड़े' सिला कर दिए गए, सख्त हिदायत के साथ कि काम पर आओ तो इसे ही पहने। एहसान करने के गर्व से फूल मेमसाहब को सूर्यबाला जमीन पर पटक देती है। जब उसे पता चलता है कि जिन फटे कपड़ो में चंदू को आने से मना किया था, वो कपड़े भी उसने दूसरे से उधार लिए थे, काम पर आने के लिए। इस कहानी से स्पष्ट है कि गरीब बच्चे भी पढ़ाई की चिंता करते है तभी तो फीस के पैसे जुटाने हेतु चंदु छुट्टी के दिनों में घरेलू काम पर लग गया। घर का खर्च उसके जुटाए पैसों से चलता है- 'जी, मैं तीन दिन और काम करूँ? ..... क्यों ? स्कूल खुलेगा न ?.....सोमवार से इक्ठे चला जाऊँगा।.. पिछली फीस बकाया है, इम्तहानी फीस भी जमा नहीं होगी तो नाम कट जाएगा। [2] लेखिका ने निम्न वर्ग की मजबूरी व मेहनत का यथार्थ चित्र खींचा है।

वयोवृद्ध कव्वाली उस्ताद की जर्जर व्यथा की कथा है 'एक इद्रंधनुष जुबेदा के नाम'। बेटी जुबेदा के आने की खबर से वह बेटी, दामाद व नातिन के लिए कपड़े व अन्य जरूरी सामान लाने हेतु पैसों के जुगाड़ में लग जाता है। आसमान के इन्द्रधनुष के समान उसके मन में भी सतरंगी आशाएं उभर चुकी है। उधार के कपड़े पहनकर वह अपने शागिर्द जो आज मशहूर कव्वाल है, के मजलिसों में जाकर पीछे की पंक्ति में बैठ कर उसका भरपूर साथ देता है। दोबारा पुराने उस्ताद को वाहवाही मिलते देख आज का उस्ताद ईर्ष्या व भावी खतरे को भांप कर वृद्ध उस्ताद को भविष्य में किसी भी कार्यक्रम में आने से मना करवा देता है' - 'आप तकलीफ न करें। बुढ़ापे में दम वम उखड़ जाएगा... आराम की जरूरत है आपको ..। [3] आसमान से लुप्त होते इन्द्रधनुष की तरह उसके मन की आशाएं भी सपाट हो गई। इस प्रकार लेखिका ने पिता की तंगहाली से उपजे दर्द व विवश्ता का जीवंत चित्रण किया है।

अत्यंत दीन हीन दशा में भी सहजतापूर्वक जी रही 'सुमितरा की बेटियाँ' पिता के दूसरे विवाह के विरोध स्वरूप दुल्हा दुल्हन की जाती गाड़ी के पीछे में मुट्ठी भर रेत फेंक कर अपने जीवित पिता के लिये खेल-खेल में मिट्टी से कब्र का प्रतीक बना कर बहुत खुश है - 'ढोंढे मर गया, उठी लहासा'। मानों वे

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय, तखतपुर, जिला - बिलासपुर (छ.ग.) भारत

अपने अतीत को गाड़ कर जीवन की नई शुरूवात के लिये तैयार है।

'नीली थैली वाला पैराशूट' बड़े घर की नखरीली तान्या बेबी की कहानी है। आलीशान घर व मँहगे विदेशी खिलौने के बीच घिरी तान्या बेबी एक गरीब चार साल के बच्चे द्वारा उड़ाई जा रही प्लास्टिक थैले को ललचाई दृष्टि से देख उसे पाने की जिद करती है और प्राप्त होने पर उसे पैरों तले रौंदकर गर्व का अनुभव करती है किंतु वह गरीब बालक प्रतिकार स्वरूप रेत का बवंडर उड़ाकर भाग गया। कौशल्याबाई जो अपने घर में ज्वर से पीडित नाति को अकेला छोड तान्या बेबी की खिदमत कर रही है, को भी सुकुन दिला गया। सह छोटी मेमसाहब यानी तान्य बेबी के नखरों से काफी परेशान है। अपनी बढ़ती उम्र से वह भयग्रस्त है। क्योंकि आजकल अंग्रेजी बोलने वाली युवतियाँ आया के रूप में सहजता से उपलब्ध है, इसलिए वह भी सही गलत जैसा भी हो अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करने लगी। सूर्यबाला ने उच्चवर्गीय मानसिकता को उद्घाटित किया है कि उन्हें जो चीज पंसद आ गई उसे प्राप्त करके ही दम लेती है, खासकर कमजोर वर्ग को रौंदने में वे गर्व अनुभव करते है।

दीवाली 'उत्सव' न होकर अब सामर्थ्य प्रदर्शन का माध्यम बन गया है। अपनी हैसियत का दंभ भरने वाले अमीर वर्ग शान-ओ शौकत को ही लक्ष्मी पूजन मानता है। इस कहानी में इस बार कीमती उपहार न मिलने पर भौतिक सुविधाओं से संपन्न पति-पत्नि तनावग्रस्त है, उनकी दीवाली बिगड़ गई। दूसरी तरफ उनकी नौकरानी जिसका पति मर चुका है, उसे चॉदी के देवता से कोई लेना-देना नहीं है। वह अपने बेटे के साथ अनार फोड कर उत्सव मना रही है, 'एक अंधेरी सी झोपड़ी के सामने सुनहरे हरे और सफेद बूटो वाला छोटा सा अनार छूट रहा था और उसमें घुली सी दो मुक्त गगन खिलखिलाहटे'।[5] दोनों वर्गो को आमने-सामने लाकर लेखिका ने रेखांकित किया कि जीवन का असली सुख उन गरीब लोगों को प्राप्त है जो आडंबर रहित सहज भाव से जीवन जीते है, जो मिला उसे सहर्ष स्वीकारा व खुश रहे, जो नहीं मिला उसका मलाल नहीं।

भुख्खड़ की औलाद गरीबी और विवशता की कहानी है। बैजनाथ जैसे असंख्य मजदूर महानगर में काम करके भी रिते-के-रिते रह जाते हैं। कुछ कर गुजरने की चाह महानगर तक पहुँचा तो देती है, लेकिन अपना घर-परिवार खेत-खलिहान की यादें पीछा नहीं छोड़ती। मेहनत से जो भी कमाया उसे गॉव जाकर खर्च किया, उसके टीन के बक्से में कुछ भी न था। सिर्फ मक्की के दानों की एक गंदी सी पोटली थी।'[6] यह दरिद्रता मेहनत करने पर भी पीछा नहीं छोड़ती, क्योंकि आमदनी कम और आवश्यकता ज्यादा है।

महानगर घुमाने के नाम पर गाँव से लाए गए बाल-श्रमिक की कथा है 'मटियाला तीतर'। समय के साथ देबू की तेज बुद्धि गृहस्वामिनी की मंशा समझ चुकी थी। गांव का स्वतंत्र, उन्मुक्त जीवन मॉ, बहन का आकर्षण उसे खींच रहा था। देवा की घुमंतू प्रवृत्ति व बढ़ते गलत कार्यो की वजह से माँ ने मन मारकर बंबई भेजा था, 'बड़ी मुश्किल से पटाया इसकी माँ को गरीब होने पर भी औलाद को ऑखों की ओट करने को तैयार नहीं हो रही थी इसकी माँ'।[7] लेकिन महानगर में देवा को बहला-फुसलाकर कितने दिनों तक कैद रखा जा सकता था। एक दिन अवसर देखकर वह घर से उड़ गया मटियाला तीतर की तरह, जीवन के इस महासमर में जूझने के लिए परतंत्रता व छल उसे पसंद नहीं था।

'बिहिश्त बनाम मौजीराम की झाडू' कहानी मौजीराम की है, जो विशालकाय रहवासी कॉम्प्लेक्स में महँगी कारें और उसमें उतरते-चढ़ते साहब-मेमसाहब के बीच झाडू लगाते हुए खुद को धन्य समझता है। ऊँची नस्ल के कुत्ते, यूनिफार्म में सजे नौकर, गवर्नेस, यह सब उसे चमत्कृत कर देती है, उसे लगता है कि यदि कहीं स्वर्ग है तो यहीं और वह खुश व संतुष्ट है। अमीरों की मानवीय असंतुष्टि, अतृप्त भावना (कथा-नायिका) ने उन्हें तनाव ग्रस्त बना दिया है, वही निम्न वर्ग पात्र अपनी हैसियत को समझता है और वो उसी में संतोषप्रद खुशहाल है।

अन्य कहानियाँ 'सुखातंकी' में भूख के आगे विवश आदमी का पत्नी का क्रिया-कर्म करके आने पर सहज भाव से माँग कर भोजन करना परिस्थिति की विवशता को उजागर करती है। 'सिंड्रेला का सपना' सुनंदा छोकरी की डायरी 'अंतरंग' बालश्रमिक बालिकाओं पर आधारित कहानियाँ है। 'कागज की नावें चांदी के बल मातम' कहानी में भी निम्नवर्गीय पात्रों की यथार्थ सहज, सरल, संवेदनशील भावनाओं का चित्रण है।

निष्कर्ष – अंतत: हम देखते है कि कथा – सृजन को सिर्फ नारेबाजी न मानने वाली सूर्यबाला अपनी गहन अंतर्दृष्टि से कहानियों में निम्नवर्गीय पात्रों की यथार्थ स्थिति को बड़े ही मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त करती है। उच्चवर्ग के सामने निम्नवर्गीय पात्रों को लाकर उनके संतोषप्रद जीवन का चित्रण किया है, जो गरीबी और विवशता का साहस के साथ सामना करते हुए जीवन-यापन करते है। उनकी कहानियों में दुख संत्रास हम जिसे जानते है उसकी पुनर्परिभाषा नहीं होती, अपितु बिल्कुल नए ढंग से उद्घाटित होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सूर्यबाला, 21 श्रेष्ठ कहानियाँ नई दिल्ली; डायमंउ पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि. सं. 2009, पृ. 33
2. वहीं, गौरा गुनवन्ती, नई दिल्ली; भारतीय ज्ञानपीठ, दूसरा संस्करण 2011 पृ. 26
3. वहीं, एक इंद्रधनुष जुबेदा के नाम नई दिल्ली; विद्या विहार सं. 2008, पृ. 128
4. वहीं, 21 श्रेष्ठ कहानियाँ, पृ. 171
5. वहीं, कात्यायनी संवाद, नई दिल्ली ; ग्रंथ अकादमी, सं. 2011 पृ. 69
6. वहीं, पाँच लंबी कहानियाँ, वही, पृ. 53
7. वहीं. पृ 84

****

21वीं सदी के उभरते परिदृष्य में हिन्दी पत्रकारिता एक अवलोकन

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – पत्रकारिता यदि एक ओर सूचनाओं और समाचारों का संकलन, संपादन, प्रकाशन और प्रेषण है तो दूसरी ओर वह वर्तमान समय की धड़कनों को महसूस करने का माध्यम भी है। हिन्दी पत्रकारिता का अतीत राष्ट्रीय पुनर्जागरण और स्वाधीनता संग्राम का इतिहास रहा है। पत्रकारिता एक ऐसी आँख है जो सम्पूर्ण देश व समाज में व्याप्त स्थितियों को एक साथ देख लेती है तथा उसे प्रतिबिम्बित करती है। भारतीय हिन्दी पत्रकारिता का सूर्य 'उदन्त मार्तण्ड' 30 मई, 1826 ई0 को कलकत्ता में उदित हुआ। उसने अपनी प्रखर किरणों से हिन्दी–जगत् को प्रकाशित किया। पं0 युगलकिशोर शुक्ल उसके जन्मदाता थे। 11 दिसम्बर, 1828 ई0 को 'उदन्त मार्तण्ड' अस्त हो गया, किन्तु अस्त होने के बावजूद उसने अपनी प्रखरता से हिन्दी–जगत् को जागृत किया। आज के संचार क्रांति की इस दुनिया में अचानक ही हिन्दी पत्रकारिता की दुनिया बदल गई है। इसकी निगाहें अंतरिक्ष में मँडराते आधुनिकतम संचार उपग्रहों पर, उँगलियां कम्प्यूटर प्रोसेसरों के की–बोर्ड पर हैं और इसकी जुबान पर एक ऐसी नई शब्दावली है, जिसका कुछ वर्षों पहले बजूद ही नहीं था।

शब्द कुंजी – पत्रकारिता, संचार क्रांति, दायित्व, निष्ठा, समाज, राष्ट्रीय पुनर्जागरण।

प्रस्तावना – पत्रकारिता के लिए अंग्रेजी में 'जर्नलिज्म' शब्द व्यवहृत होता है जो 'जर्नल' से निकला है। इसका शाब्दिक अर्थ दैनिक है। दिन–प्रतिदिन के क्रियाकलापों, सरकारी बैठकों का विवरण 'जर्नल' में रहता था। सत्रहवीं एवं अठारहवीं शताब्दी में 'पीरियॉडिकल' के स्थान पर लैटिन शब्द 'डियूरनल' और जर्नल के प्रयोग हुए। बीसवीं सदी में गंभीर समालोचना और विद्धतापूर्ण प्रकाशन को इसके अंतर्गत माना गया। 'जर्नल से बना 'जर्नलिज्म' अपेक्षाकृत व्यापक शब्द है। समाचार पत्रों और विविध कालिक पत्रिकाओं के संपादन और लेखन और तत्संबंधी कार्यों को पत्रकारिता के अंतर्गत रखा गया। इस प्रकार समाचारों का संकलन, प्रसारण, विज्ञापन की कला एवं पत्र का व्यावसायिक संगठन पत्रकारिता है।[1] हिन्दी पत्रकारिता का अतीत राष्ट्रीय पुनर्जागरण और स्वाधीनता संग्राम का इतिहास रहा है।[2] इस संघर्ष में 'कविवचन सुधा', 'भारत मित्र', 'केसरी', 'मराठा', 'स्वराज्य', 'अभ्युदय', हिन्दुस्तान' आदि अनेक पत्रकारिताओं का योगदान अविस्मरणीय है। यह कहा जा सकता है कि कभी मिशन रही हिन्दी पत्रकारिता आज पूर्ण रूप से व्यावसायिक हो गई है। वास्तव में हिन्दी पत्रकारिता का उद्योग में बदल जाना सर्वाधिक चिन्ता का विषय है। आज के बदलते परिवेश में वह पंख लगाकर उड़ रही है। आज पत्रकारिता के अनेक आयाम हैं जैसे कि– ग्रामीण पत्रकारिता, कृषि पत्रकारिता, नगरीय पत्रकारिता, साहित्यिक पत्रकारिता, सांस्कृतिक पत्रकारिता, वैज्ञानिक पत्रकारिता, खेलकूद पत्रकारिता, फिल्म पत्रकारिता, सर्वोदय पत्रकारिता, बाल पत्रकारिता, वाणिज्य एवं व्यावसायिक पत्रकारिता, हास्य–व्यंग्य पत्रकारिता, रेडियो एवं दूरदर्शन पत्रकारिता, हास्य–व्यंग्य पत्रकारिता, रेडियो एवं दूरदर्शन पत्रकारिता, विविध चैनल की पत्रकारिता, स्वास्थ्य एवं परिवार की पत्रकारिता आदि।[3]

पत्रकारिता एक ऐसी आँख है जो सम्पूर्ण देश व समाज में व्याप्त स्थितियों को एक साथ देख लेती है तथा उसे प्रतिबिम्बित करती है। हिन्दी पत्रकारिता का व्यक्ति चेतन्य हेतु पारिवारिक एवं सामाजिक चेतना हेतु प्रशंसनीय कार्य कर रहा है। भारतेन्दू युगीन पत्रकारिता में सामाजिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना के लिए भी मार्मिक रूप में लिखा गया है।[4] हरिश्चन्द्र मेगजीन, हरिश्चन्द्र चंद्रिक, हिन्दी बंग बंगवासी, भारतमाता, बालबोधिनी, सुगृहिणी, सन् 1826 की उदन्त मार्तण्ड, साम्यदंत मार्तण्ड, बिहार बंधु, हिन्दी प्रदीप, नागरी नीरद, उचित वक्ता, क्षत्रिय, ब्राह्मण, सारसुधानिधि, भारत मित्र, हिन्दुस्तान, आर्यावर्त, आज, सन्मार्ग, कौमी आवाज, राँची एक्सप्रेस, राष्ट्रवाणी, प्रभात खबर, सण्डेमेल, राजस्थान पत्रिका, हिन्दी विद्यापीठ, विश्व भारती पत्रिका, हंस, अरावली उद्घोष, साहित्य परिवार, गुर्जर वीणा, ज्योति बिम्ब, भारतवाणी, अक्षरा, संयोग साहित्य, केरल ज्योति, मैसूर हिन्दी पत्रिका, भाषा, सम्पर्क पत्रिका, अभिनव प्रत्यक्ष, आजकल, मधुमति, राष्ट्रभाषा, गवेषणा, साम्यांतर, सरस्वती सुमन, गगनाचंल, पहल, सरिता, कादम्बिनी, संचेतना, कथन, साक्षात्कार, तद्भव, हिन्दुस्तानी, विश्व हिन्दी दर्शन, संगीत, सुमन सौरभ एवं कुरूक्षेत्र, आदि हिन्दी पत्रिकाओं ने अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया है।[5]

देखा जाए तो भारतीय हिन्दी पत्रकारिता का सूर्य 'उदन्त मार्तण्ड' 30 मई, 1826 ई0 को कलकत्ता में उदित हुआ। उसने अपनी प्रखर किरणों से हिन्दी–जगत् को प्रकाशित किया। पं0 युगलकिशोर शुक्ल उसके जन्मदाता थे। 11 दिसम्बर, 1828 ई0 को 'उदन्त मार्तण्ड' अस्त हो गया, किन्तु अस्त होने के बावजूद उसने अपनी प्रखरता से हिन्दी–जगत् को जागृत किया। देश की जनता को अभिव्यक्ति की दिशा मिली, वाणी मिली, भाषा मिली, विचार मिले, ज्ञान का द्वार उन्मुक्त हुआ। 1857 ई0 के विद्रोह से पूर्व 1850 में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म हो चुका था। 1867 ई0 में 17 वर्ष की अवस्था में भारतेन्दु 'कविवचन सुधा' को लेकर अवतीर्ण हुए। सम्पूर्ण देश के व्यक्तित्व को जागृत करने वालक उस बीजमंत्र ने देश के बौद्धिक जगत् में क्रान्ति कर दी, 1873 ई0 में 'हरिश्चन्द्र मैगजीन', 1874 ई0 में 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' और उसी वर्ष 'बालाबोधिनी' का प्रकाशन किया। 1877 ई0 में

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

बालकृष्ण भट्ट ने 'हिन्दी प्रदीपय निकाला, 1878 ई0 में बालमुकुन्द गुप्त का 'भारतमित्र', 1881 ई0 में बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' का 'आनन्दकादम्बिनी' और प्रतापनारायण मिश्र का 'ब्राह्मण' 1883 में निकाले गए। पं0 मदनमोहन मालवीय भी पत्रकारिता के क्षेत्र में अवतीर्ण हुए। कालाकाँकर से 'हिन्दोस्थान' निकला। उन्नीसवीं शताब्दी भारतेन्दु की शताब्दी थी, जिसमें पत्रकारिता के विविध रूपों का विकास हुआ।[6] बीसवीं शताब्दी में नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा 'सरस्वती' की शुरुआत हुई। 1903 ई0 में पत्रकारिता-जगत् के भीष्म पितामह महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' के माध्यम से हिन्दी भाषा और साहित्य को सारस्वत स्वरूप प्रदान किया। द्विवेदी जी के कार्यकाल में भाषा को संस्कार मिला, विषय मिला, विविध ज्ञान-विज्ञान की जानकारी हुई। खड़ी बोली हिन्दी का विकास हुआ व प्रेमचन्द, मैथिलीशरण गुप्त, निराला सभी ने 'सरस्वती' में प्रवेश पाया। साहित्य देश की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष का माध्यम बना। 1910 ई0 में इलाहाबाद से पं. कृष्णाकान्त मालवीय द्वारा 'मर्यादा' निकाली गई। जयशंकर प्रसाद और महावीर प्रसाद द्विवेदी की विचारधारा में मतभेद होने के कारण 'सरस्वती' में उनकी रचनाओं को स्थान नहीं मिलता था।

अत: 1911 ई0 में प्रसाद जी ने अपने भान्जे अम्बिकाप्रसाद के माध्यम से 'इन्दु' पत्रिका निकाली जिसमें छायावादी रचनाएँ प्रकाशित होने लगीं। बाद में 'सरस्वती' में भी प्रसादजी की रचनाएँ प्रकाशित हुईं। 1913 ई0 में खंडवा से माखनलाल चतुर्वेदी जी की 'प्रभा' प्रकशित हुई। 'मुझे तोड़ लेना वनमाली, उस पथ में देना तुम फेंक, जिस पथ जाते वीर अनेक' उस उद्घोष से एक नये तेवर के साथ मध्यप्रदेश से निकला। उसी वर्ष कानपुर से गणेशंकर विद्यार्थी की 'प्रतापय प्रकाशित हुई। 1919 ई0 में माखनलाल चतुर्वेदी ने जबलपुर से 'कर्मवीर' निकाला जो बाद में खंडवा से निकला। 1919 ई0 में उत्तार प्रदेश गोरखपुर से स्वदेश निकाला। 1920 ई0 में जबलपुर से 'श्रीशारदा' जिसके सम्पादक माखनलाल चतुर्वेदी थे, उसी वर्ष इलाहाबाद से 'चाँद' और काशी से शिवप्रसाद गुप्त ने 'आज' दैनिक निकाला जो अब तक प्रकाशित हो रहे हैं। 'आज' दैनिक होते हुए अपने समय के साहित्यकारों, मनीषियों-प्रेमचंद, प्रसाद, निराला, उग्र, पं0 हजारीप्रसाद द्विवेदी, सम्पूर्णानन्द, कमलापति त्रिपाठी, डॉ. भगवानदास, श्रीप्रकाश, गोपीनाथ कविराज प्रभृति की रचनाएँ अपने साप्ताहिक पृष्ठों में प्रकाशित की। 'आज' सम्पादक बाबूराव विष्णु पराड़कर ने सारे देश में हिन्दी पत्रकारिता का मानक प्रस्तुत किया। 1922 ई0 में लखनऊ से 'माधुरी' का प्रकाशन हुआ। पं0 रूपनारायण पाण्डेय, कृष्णबिहारी मिश्र, प्रेमचन्द्र, शिवपूजन सहाय सभी उस पत्रिका में सहायक थे। 1923 ई0 में हास्य-व्यंग्यप्रधान 'मतवाला' कलकत्ता से प्रकाशित हुआ। महादेवप्रसाद सेठ के उस 'मतवाला' के प्रमुख मतवाले थे मुंशी नवजादिकलाल श्रीवास्तव, शिवपूजन सहाय, निराला और उग्र।

वर्तमान समय के बदलते परिवेश में पत्रकारिता अत्यंत समृद्ध की ओर अग्रसर है। प्राप्त सर्वेक्षणों से प्राप्त रिपोर्ट के अनुसार भारत में वर्तमान में 43000 से अधिक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है जिनकी प्रसार संख्या 16 करोड़ के पार है, किन्तु हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के पठन-पाठन में कमी पाई जा रही है। हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषा में यह दुर्लभ ही है कि शिक्षा के प्रसार के साथ दिनमान, सारिका, धर्मयुग, जैसी पत्रिकाएँ बन्द हो जाएँ। इस प्रकार पढ़ने की संस्कृति का पुनर्निर्माण ही आज के दौर में, हिन्दी पत्रकारिता के समक्ष कठिन चुनौती है।[7] आज के बदलते परिवेश में 'समकालीन तीसरी दुनिया' की रिपोर्ट के अनुसार अधिकांश पत्रकार संवेदनहीन और सुविधाभोगी हो गए हैं। पत्रकार संगठनों को राष्ट्रीय और सामाजिक समस्याओं पर विचार विमर्श की फुरसत ही नहीं है। परिवर्तन के दौर में आज की पत्रकारिता मात्र समाचार पत्र तक सीमित नहीं है, वह तो जीवन, समाज, राष्ट्र एवं विश्व का सुंदर विशाल प्रभावी दर्पण है। पत्रकारिता का मूल तो समाचार होते हैं। लेकिन वर्तमान में पत्रकारिता केवल समाचारो का संकलन नहीं है, वह तो मानव जीवन, समाज, राष्ट्र और विश्व का कल्याणकारी माध्यम है। पत्रकारिता का जीवन्त इतिहास है, जो प्रतिदिन लिखा जाता है। पत्रकारिता केवल समाचार या सूचना देने का माध्यम नहीं है लेकिन समाज को शिक्षित, संस्कारित तथा सचेत भी करती है। अज्ञेय जी ने लिखा है कि, 'लोकतांत्रिक समाज में समाचार-पत्र का एक विशिष्ट स्थान होता है क्योंकि उस समाज के साथ उसका अस्तित्व अधिक गहरे ढंग से जुड़ा होता है।

पत्रकारों को सामाजिक प्रतिबद्धता के प्रति विशेष जागृत रहना चाहिए, पत्रकार की कलम आग भी उलग सकती है और अमृत भी बरसा सकती है। पत्रकारों को अपनी मातृभूमि के प्रति अटूट प्रेम, निष्ठा और विशेष लगाव होना चाहिए। राष्ट्र एवं विश्व के सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार, समाजशास्त्री, धार्मिक नेता, राजनीतिक नेता, संस्कृति उद्धारक, चित्रकार, शिल्पकार, संगीतकार, वैज्ञानिक चिकित्सक आदि जो समाज के प्रहरी रहे हैं उसी को सही मायने में सामाजिक दायित्व का ज्ञान होना चाहिए। आज दैनिक पत्रों में गुजरात समाचार, संदेश, दिव्य भास्कर, राजस्थान पत्रिका, टाइम्स ऑफ इण्डिया, इण्डिया टुडे, आउटलुक, अभियान, भूमिपुत्र, द वीक, फ्रन्टलाइन, दैनिक जागरण, दैनिक भास्कर , अमर उजाला, हिन्दुस्तान, प्रभात और मैं राष्ट्र आदि। स्वतंत्रता के पश्चात् की पत्रकारिता और आज की पत्रकारिता में अनेक उतार-चढ़ाव देख सकते हैं। पराडकरजी ने सत्यता पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि, 'दुर्भाग्य से हिन्दी पत्रकारिता अनेक दृष्टि में उस राह पर चली जिस राह पर उसे नहीं चलना चहिए था। कुछ प्रबुद्ध विद्धानों ने आरोप लगाया है कि 'वर्तमान पत्रकारिता एक विशुद्ध व्यावसायिक पत्रकारिता है। लोक शिक्षा की अपेक्षा उसका ध्यान लोकानुरंजन की ओर अधिक लगा हुआ है।' इस आरोप पर गौर से देखें, सोचे तो इसमें भी थोड़ा बहुत सत्य और तथ्य के दर्शन होते हैं। वर्तमान औद्योगिकों का, राजनीतिज्ञों का, पूँजीपतियों का प्रभाव पत्रकारिता पर दिखाई पड़ता है। लेकिन इन कुछ दोषों, क्षतियों के बावजूद पत्रकारिता ने सामाजिक दायित्व में अपना विशेष प्रेरक प्रभावशाली दायित्व निभाया है। मानव जीवन एवं समाज के विकास में पत्रकारिता का दायित्व अभिनंदनीय रहा है ओर रहेगा। केवल सावधनी बरतनी पड़ेगी कि कुप्रभाव, अश्लीलता, निजी क्षणिक स्वार्थ और समाज एवं संस्कृति को नुकसान करने वाली गलत शक्तियों की गलत त्रासदी हावी न हो। पत्रकारिता का मूलाधार है पत्रकार व पत्रकार के आदर्श गुण।[8]

निष्कर्ष यह है कि हिन्दी पत्रकारिता उदन्त मार्तण्ड से प्रारम्भ हुई थी वह विविध स्तरों को पार कर शिखरता की ऊँचाइयों को स्पर्श कर रही हैं। पर बदलते समय के बदलते परिवेश में पत्रकारिता का रूप भी बदल गया है, संचार क्रांति की इस दुनिया में अचानक ही हिन्दी पत्रकारिता की दुनिया बदल गई है। इसकी निगाहें अंतरिक्ष में मँडराते आधुनिकतम संचार उपग्रहों पर, उँगलियां कम्प्यूटर प्रोसेसरों के की-बोर्ड पर हैं और इसकी जुबान पर एक ऐसी नई शब्दावली है, जिसका कुछ वर्षों पहले बजूद ही नहीं था। हाल ही के कुछ दशकों में संचार का क्षेत्र हिन्दी पत्रकारिता के एक नये सीमान्त के रूप में उभरा है। ऐतिहासिक नजरिए से भाषा का विकास संचार प्रक्रिया की पहली क्रान्ति, लिपि का आविष्कार, दूसरी क्रांति, चित्र-लिपि या

'पिक्टोग्राफी' तीसरी, कागज और मुद्रण की तकनीकों को संचार की चौथी क्रांति माना जाता है। संचार के क्षेत्र में इसके बाद भी कई क्रान्तियाँ हुई हैं। संचार के प्रत्येक साधनों जैसे टेलीग्राफ, टेलीप्रिंटर, टेलेक्स, टेलीफोन, फैक्स, कैमरों, टेप रिकार्डरों तथा कम्प्यूटरों आदि में भी इतने परिवर्तन हुए हैं कि उनके आरंभिक रूप तो अब नजर तक नहीं आते। परंपरागत तथा आधुनिक पत्रकारिता में सबसे बड़ा अंतर यह है कि अब सूचना और विश्लेषण में अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय के मुकाबले क्षेत्रीय तथा स्थानीय को कहीं ज्यादा महत्तव मिल रहा है। [9]

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. आधुनिक पत्रकारिता डायमंड बुक्स नई दिल्ली, पृ. 28, 40
2. छत्तीसगढ़ विवके, सितम्बर, 2012, भिलाई, पृ. 40, 46
3. राष्ट्रवाणी, फरवरी, 2012, अंक 5, पुणे, पृ. 27, 35
4. हिन्दी पत्रकारिता–डॉ. धीरेन्द्र सिंह, विश्वविद्यालय प्रकाशन, बनारस, पृ. 6, 8, 10
5. वीणा मासिक पत्रिका, जनवरी, 2010, इन्दौर, पृ. 28
6. महिला पत्रकार और पत्रिकाएँ, साहित्य संगम, इलाहाबाद, पृ. 28, 30
7. जनसत्ता समाचार पत्र, नई दिल्ली 2008, पृ. 04
8. स्वयं का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

संत रविदास के दर्शन की प्रासंगिकता

डॉ. मधुमती नामदेव *

शोध सारांश – संत विचारक, समाज सुधारक अपने युग की सीमाओं में बंधे नहीं होते हैं, उनकी दृष्टि भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों को ही अपने में समेटे रहती है, इसीलिये वे प्रासंगिक कहलाते हैं, आगे आने वाली पीढ़ियों के लिये प्रेरणास्रोत बने रहते हैं, हम उनका अनुगम करते हुए अपनी सभी समस्याओं का निदान करते हैं, स्वामी रामानंद की शिष्य परंपरा में प्रमुख स्थान रखने वाले संत रविदास उन महान संतों में से एक हैं, जिन्होंने तत्कालीन विकट परिस्थितियों में, निराशा में डूबे हुए मानव के हृदय में आशा की लौ जागृत करके नवजीवन प्रदान किया और आज के वैश्वीकरण के युग में जब चारो ओर जातिगत वैमन्स्यता व्याप्त है, आर्थिक विषमताओं की खाई बढ़ती जा रही है, इतना ही नहीं, नारी भी अपने ही घर पर असुरक्षित हो रही है, तब संत रविदास के विचारों की आवश्यकता और अधिक बढ़ जाती है। समाज में एकता, समानता, सहृदयता, शिष्टता, भाई–चारे की भावनाओं को विकसित करने, धर्म के प्रति आस्था उत्पन्न करने के लिये संत रविदास के विचार प्रासंगिक हैं, और रहेंगे।

प्रस्तावना – युग चेत्ता, युग दृष्टा, संत, विचारक, समाज सुधारक अपने युग की सीमाओं तक ही सीमित नहीं होते अपितु वे वर्तमान को भेदकर भविष्य को देखते हैं इसीलिये ये अपने विचारों से प्रासंगिक कहलाते हैं। इनकी दृष्टि सार्वकालिक और सार्वभौमिक होती है। उनके विचारों का यह तत्व उन्हें निरंतर प्रासंगिक बनाये रखता है, जिससे आने वाली पीढ़ियों के लिये वे प्रेरणास्रोत बने रहते हैं। नि:संदेह इस दृष्टि से संत कवि रैदास आज भी प्रासंगिक हैं, हमें इनके विचारों की उस युग में भी उतनी ही आवश्यकता थी और आज वैश्वीकरण के युग में जब व्यक्ति तेरा–मेरा में लगा हुआ है तो और भी आवश्यकता है। 'संत कवि रैदास के काव्य में अनुभूति की गहराई मिलती है, उन्होंने तत्कालीन समाज का यथार्थ चित्र अंकित किया है।'[1] इनका साहित्य आत्मविश्वास, आशावाद और आस्था की भावना संस्थापित करने में सहायक है। यह जीवन शक्ति का अजस्र स्रोत है इसमें युग चेतना और युगबोध का व्यापक रूप प्रतिफलित है।

'संत काव्य के आविर्भाव से बहुत पहले ही रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, रामानंद आदि आचार्यों ने वैष्णव भक्ति आंदोलन का व्यापक प्रचार–प्रसार कर दिया था। कबीर, रैदास, सेना, पीपा आदि रामानंद के ही शिष्य थे।'[2]

'देश और समाज के कल्याणार्थ देवदूतों के सदृश्य आये इन अति महान संतों ने जन–चेतना की जो मशाल प्रज्ज्वलित की थी और जिसकी चिनगारियाँ स्थान–स्थान पर चमकी भी थी उन्हें देश और देश की व्यवस्था ने पूरी तरह प्रज्ज्वलित होकर प्रकाश फैलाने का अवसर नहीं दिया।'[3]

तत्कालीन हिन्दू समाज जिन विकट परिस्थितियों का सामना कर रहा था, आधुनिक युग में भी समाज उन्हीं राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक और सामाजिक परिस्थितियों से गुजर रहा है, आज धर्म के प्रति आस्था धीरे–धीरे लुप्त हो रही है, आर्थिक विषमता बढ़ती जा रही है, धन संचय की प्रवृत्ति ने मनुष्य में भ्रष्टाचारिता को बढ़ा दिया है। अनेक प्रावधानों के बावजूद जातिगत वैशम्यता बढ़ रही है इन सभी विसंगतियों के दोषों से अवगत कराने के लिये एवं इन समस्याओं को दूर करने के लिये आज संत रविदास और कबीरदास, नामदेव, पीपा आदि संतों की अनिवार्यता है। भक्तिकाल को स्वर्णयुग की संज्ञा प्रदान करने वाले ऐसे संतों को याद करना, उनके विचारों से शिक्षित समाज को परिचित कराना इस शोध पत्र का उद्देश्य है।

स्वामी रामानंद के शिष्यों में संत रविदास का प्रमुख और महत्वपूर्ण स्थान है। भगवद्भक्ति के उच्चतम् शिखर पर आरूढ़ होने वाले महान कर्मयोगी भक्त संत रविदास अनपढ़ और अशिक्षित थे, लेकिन वे प्रचलित सनातन धर्म और हिन्दुत्व से पूर्णत: परिचित थे। संत रविदास की साखियों में मंत्र–तंत्र उनके शास्त्रीय ज्ञान का परिचय मिलता है – **'बटक बीज जैसा ओंकारा, पसरयो तीन लोक विस्तारा'।** कहकर आज भी हमारे लिये शास्त्रीय ज्ञान को अनिवार्य बतलाया। 'संत रैदास के काव्य का कोई प्रामाणिक संग्रह अभी तक उपलब्ध नहीं हो सका है। उनकी कतिपय फुटकर रचनायें ही मिलती हैं। उनका आत्मनिवेदन बड़ा ही मर्मस्पर्शी है। उनकी प्रेमाभक्ति उच्च कोटि की है। सीधे–सादे पदों में संत कवि के भाव बड़ी गहराई से प्रकट हुए हैं, जो अनायास सहृदय पाठक को विचलित करते हैं।'[4]

मध्यकालीन विकट एवं घोर अंधकारपूर्ण परिस्थितियों में तत्कालीन महामानव स्वामी रामानंद के मार्ग का अनुसरण करते हुए जिन संत भक्तों ने भारतीय समाज को, उसमें भी विशेषतया निराश एवं दलित प्रपीड़ित वर्ग को नवजीवन और आशा का व्यावहारिक संदेश दिया उनमें संत रविदास जी अग्रणी हैं।[5]

तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक वैमन्स्यता के युग में, एकता, विनम्रता, शिष्टता के युगों का विकास कर अभिमान त्याग कर मानवतावादी युग की प्रतिष्ठा करने वाले संत रविदास जाति से निम्न – **'कहै रैदास खलास चमारा, कहु रविदास चमार,'** होते हुए भी ऐसा मानवतावाद राज्य चाहते हैं, जहाँ छोटे बड़े कोई न हों, सब समान हो और सदैव प्रसन्न हों–

ऐसा चाहौ राज मैं, जहाँ मिलै सबन को अन्न।
छोट बड़ौ सभ सम बसै, 'रविदास' रहै प्रसन्न।

इसीलिये तो रविदास आधुनिक युग में ही नहीं वरन् अनेक युग युगांतर तक याद किये जायेंगे, प्रासंगिक रहेंगे।

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ओ.एफ.के. महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

संत रविदास जन्मजात भक्त होते हुए भी एक महान क्रांतिकारी व समाज सुधारक थे। जन–जन की पीड़ा देखकर वे सहज ही द्रवित हो जाया करते थे। राम नाम को सब दु:खों की निवृत्ति की एकमात्र औषधि मानकर कहते हैं कि –

'हरि सा हीरा छोड़ कै, करै आन की आस।
ते नर जमपुर जाहिगे, सत भाषै रविदास।।'

क्योंकि यह आज भी सच है, कि जब मनुष्य अपने जीवन से निराश हो जाता है, तो उस निराशा रूपी बीमारी के गर्त से आशा की औषधि ईश्वर भक्ति से ही मिलती है। इसीलिये बाहरी आडम्बरों का विरोध करते हुए कहते हैं, कि तीर्थ यात्रा नहीं करना चाहिये अपितु अपने मन में ही ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है। –

का मथुरा, का द्वारिका, का काशी, हरिद्वार।
रविदास खोजा दिल आपना, तउ मिलिया दिलदार।।

ईश्वर की प्राप्ति प्रेम से ही हो सकती है इसीलिये कहते हैं कि –

जोगीसर पावहिं नहीं, तुअ गुण कथन अपार।
प्रेम भगति कै कारणै, कहु रविदास चमार।।

पूजापाठ, व्रत, उपवास का विरोध करते हुए कहते हैं, कि–

कहै रैदास प्रकास परम पद, का जप तप व्रत पूजा।
एक, अनेक एक हरि, करौं कवण विधि दूजा।।

कहकर परम् पिता ईश्वर के एकेश्वर वाद को प्रतिपादित करके तत्कालीन समाज में व्याप्त हिन्दू–मुस्लिम वैमन्यस्यता में एकता स्थापित की।

रैदास कनक और कंगन माहि, जिमि अंतर कछु नाहिं।
तैसे ही अंतर नहीं, हिन्दुअन तुरकन माहि।।

इतना ही नहीं राम–रहीम की एकता को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि –

रविदास हमारी रामजोई, सोई है रहमान।
काबा, काशी जानी यही, दोनों एक समान।।

इसलिये अंत में कह उठते हैं कि –

हिन्दु तुरुक दोउ एक है भाई, सच भाखे रविदासा।

इनकी इसी एकता का परिणाम है कि भारत पाकिस्तान अलग होते हुए भी भारत के प्रत्येक हिस्से में हिन्दू मुसलमान साथ–साथ रहते हैं मंदिर और मस्जिद भी एक ही स्थल पर देखने को मिलते हैं, यथा – हनुमान ताल में बड़ी खेरमाई है तो वहाँ सामने मस्जिद भी है।

ईश्वर प्राप्ति के लिये हिन्दुओं में व्याप्त जप, तप, तीर्थ ही नहीं सिर मुंडाने की प्रथा को भी व्यर्थ कहा है –

'कहा भयौ जू मूँड मुँडायौ, बहु तीरथ व्रत कीन्हें।
स्वामी दास भगत अरू सेवग, जो परम तन नहीं चीन्है।'

क्योंकि भक्तिभावना के बिना बाहरी आडम्बर व्यर्थ है –

राम नाम बिन जे कुछ करिए, सो सब भरम कहाई।

इसीलिये मानव जीवन की सफलता भक्ति को मानते हुए कहते हैं कि अहं का त्याग करके ही भक्ति प्राप्त हो सकती है।

कह रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।।
तजि अभिमान मेटि आपा पर, पिपिलक हवै चुनि खावै।।

भक्ति के लिये घर–बार छोड़ना आवश्यक नहीं है। मनुष्य द्वारा हरि–नाम स्मरण करते हुए **'कोटि जग जे कोई करै, राम नाम सम तउ न निस्तेरे'** निष्काम भाव से स्वकर्म एवं सत्कर्म किया जाने को ही भक्ति कहा है इसीलिये तो अपने प्रमुख कर्म जूते बनाने के कार्य को अनिवार्य मानकर वे गंगा स्नान नहीं जाते हैं और कहा भी है कि – **'मन चंगा तो कठौती में गंगा।'** 'नाम की महिमा ही कलियुग में एकमात्र मुक्ति तथा सुखी जीवन का आधार है।'[6] इस प्रेम रस को महारस की संज्ञा दी है। भक्ति की सार्थकता भक्त और भगवान के एकाकार होने में है। **'जन रविदास राम रंगिराता'** के अनुसार रविदास राम–रंग में पूर्णतया रंग गए थे, इनकी प्रेम की रस्सी बड़ी मजबूत है। जिससे इन्होंने ईश्वर को बांध रखा है। तभी यो कह उठते हैं कि **'अब कैसे टूटे नाम रट लागी'**[7]

भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र वसुधैव कुटुम्बकम् को स्पष्ट करने वाली राष्ट्रीय एकता को प्रेरित करने की कोशिश ही नहीं की अपितु तत्कालीन समाज में व्याप्त जातिगत विषमता, ब्राह्मणवादिता और सामंतवादिता पर कुठाराघात किया है। तात्कालिक समाज वर्णव्यवस्था के अंतर्गत बँटा हुआ था, शूद्र को निम्न दृष्टि से देखा जाता था, सवर्ण द्वारा जानवरों के छुये बर्तनों का उपयोग किया जाता था, लेकिन शूद्र के स्पर्श कर लेने पर उसका बहिष्कार कर दिया जाता था, इसीलिये उन्होंने कहा, कि–

जाति–जाति में जाति है, जो केतन के पात।
रैदास मनुष ना जुड़ सकै, जब तक जाति न जात।।

उनका कहना था, कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जन्म से नहीं होते अगर कोई सवर्ण जाति का बनना चाहता है तो वह अच्छे कर्मों से ही बन सकता है अर्थात् अच्छे कर्म से मनुष्य ऊँचा और बुरे कर्मों से निम्न बनता है –

रविदास जनम के कारनै होत न कोउ नीच।
नर कूँ नीच करि डारि हैं, ओछे करम की नीच।।

वर्ण व्यवस्था में उलझ कर मनुष्य इतना निष्कृष्ट हो जाता है, कि वह मानवता को भूल गया है–

जात–पांत के फेर मांहि, उरझि रहइ सभ लोग
मानुषता कूँ खात हइ, रविदास जात कर रोग।।

ब्राह्मणों के कर्मकाण्डों को व्यर्थ बतलाते हुए कहते हैं कि –

कृश्न करीम राम हरि राधै, जब लग एक एक नहीं पेख्या।
वेद कतेब कुरान पुरोननि, सहजि एक नहीं देख्या।।

इसीलिये वर्णाश्रम का त्याग कर ईश्वर भक्ति में लीन रहना चाहिये –

वर्णाश्रम अभिमान तजि, पद रज बंद हिजासु की।

बाह्डम्बरों के खंडन की जो शैली संत रविदास ने अपनाई थी वह कबीर की शैली से कहीं अधिक उदार और उत्कृष्ट थी। कबीर की प्रवृत्ति में कहीं–कहीं विद्रोह और उपहास की भावना नज़र आती है किन्तु संत रविदास ने खंडन का कार्य बड़े संयत रूप में शालीनता के साथ किया है जिसे एक बड़े संत की सहिष्णुता की देन ही समझा जाना चाहिये।

संत रविदास मनुष्य के लिये श्रम–साधना रूपी ईश्वर की पूजा द्वारा ही भवसागर से पार होने का अपना दृढ़ विश्वास प्रकट करते हुए कहते है, कि श्रम साधना ही संसार में सुख–शांति का अद्वितीय किन्तु सरल साधन है। इसी श्रम साधना से सत्य, संतोष, सदाचार जैसे नैतिक मूल्यों के साथ–साथ वचन पालन को बल देते हैं – 'कायम दायम राम इक, दोयम सत्ता इमान' जो आधुनिक वैश्वीकरण के युग की आवश्यकता है।

आर्थिक दृष्टि से समाज में सामंतवादी व्यवस्था व्याप्त थी जिसमें धनी और धनवान होते जा रहे थे और गरीब और दरिद्र, दीन होते जा रहे थे इस खाई को पाटने के लिये ही उन्हें धन संग्रह का विरोध किया –

'धन संचय दुख देत है, धन त्यागे सुख होय।
रविदास सीख गुरूदेव की, धन मति जोरे कोय।।'

इसीलिये कबीर ऐसा राज्य चाहते हैं–

छोटे बड़ो सभ सम बसै, रविदास रहै प्रसन्न।।

अत: डॉ. मैनेजर पाण्डे का यह कथन सत्य है कि– 'कबीर, दादू, रैदास आदि कवि भारत की उच्च वर्गीय सांस्कृतिक परम्परा के लिये चुनौती बनकर सामने आए। सगुण भक्ति की पुराणमतवादी चिन्ताधारा से संत कवियों की उदारवादी, सुधारवादी ओर विद्रोही चेतना का जो संघर्ष हुआ वह उच्च वर्ग और दलित वर्ग का सांस्कृति संघर्ष था।[7] इसीलिये वे धनवानों को भी संबोधित करते हुए कहते हैं, कि–

धन–जोबन की झूठी आसा। सत–सत भाषै जन रैदासा।
धन–जोबन हरि न मिलै। दुख–दासन अधिक अपारा।।

संत रविदास ने जाति–पांति ऊँच–नीच के भेदभाव को समाप्त करके तथाकथित निम्नजातियों को उच्चजातियों के अमानुषिक अत्याचार से बचाकर उनमें आत्मबल का संचार किया, और हिन्दू मुस्लिम एकता का प्रयास किया जो आज स्वतंत्र भारत में भी परिहार्य है। यही कारण है कि संत रविदास संत कबीर ने **'संतों में श्रेष्ठ संत'** कहकर संबोधित किया है।

आधुनिक युग में भी चारो ओर राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक विषमतायें थोड़े–बहुत परिवर्तन से रूढ़ि ग्रस्त होकर दिखाई दे रही है। आज भी एकता का संदेश महत्वपूर्ण है, क्योंकि न केवल मुसलमानों में शिया–सुन्नी का मसला अपितु हिन्दुओं में भी जातिगत भेदभाव विद्यमान है। ग्रामीण स्थलों में आज भी छुआ–छूत की विसंगतियाँ पूर्ण चरम सीमा पर दिखाई देती हैं। इन्होंने तत्कालीन पथ भ्रष्ट समाज को एक प्रशस्त उज्जवल मार्ग दिखाया था, आज भी हमें उसी उज्जवल मार्ग की अति आवश्यकता है।

रैदास का काव्य जनता के लिये रहा, भावों का प्रकाशन इसका मुख्य उद्देश्य रहा इसीलिये आज भी यह उक्ति प्रचलित है। यथा– मन चंगा तो कठौती में गंगा, प्रभु तुम चंदन हम पानी आदि।

संत रविदास ने अपने समय की पुरातनता और नवोन्मेश नवीनता को मिलाकर उसका एक सुगम और रचनात्मक स्वरूप उपस्थित किया। गुरूनानक के बाद सर्वाधिक देशाटन करने वाले संत कवि रविदास की ब्रज भाषा में तत्कालीन उत्तरभारत की सभी भाषाओं और बोलियों का प्रयोग मिलता है, जिससे उनकी भाषा न केवल सर्वग्राह्य हो सकी वरन् सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में बांधने में सक्षम हो सकी। उनके विचार भावनात्मक एकता का संदेश देते हैं और जनता में वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना उत्पन्न करते हैं, जो हमारी भारतीय संस्कृति की मूलभूत विशेषता है, धरोहर है, इसके बिना भारत का अस्तित्व नहीं है।

संत कवि रैदास का जीवन और महान संदेश उनके निर्वाण के लगभग 600 वर्ष बीत जाने पर आज भी समाज को उसी प्रकार नवीन शक्ति एवं प्रेरणा देने वाला है। उनकी वाणी आज के दिशाहीन मानव को उचित दिशा बनाने की पूरी पूरी सामर्थ्य रखती है। वे निर्भीक और स्पष्टवादी थे। उनकी निर्भय मानसिकता एवं पक्षपात रहित आचरण उनके व्यक्तित्व की निजी विशेषतायें थी। यही वे आदर्श थे जिन्हें वे जनमानस तक पहुँचाते रहे। मिथ्याचार, ब्राहडम्बर एवं मूर्तिपूजा के विरोध में उन्होंने जो आवाज उठाई थी, उसकी गूंज हमें आज भी सुनाई देती है। उनके इस कडुवे सत्य को हम आज भी नज़र अंदाज नहीं कर सकते। गांधी जी ने इन्हीं संतों के संदेशों को सत्य और अहिंसा के रूप में हम भारतीयों तक पहुँचाया।

निस्संदेह रैदास जी गृहस्थ आश्रम में रहते हुए भी उच्चकोटि के विरक्त संत थे। जूते सीते–सीते ही ज्ञान भक्ति का ऊँचा पद प्राप्त किया था।'[8] और हमें गीता का यह पाठ पढ़ा गये कर्मण्येवाधिकारस्तु, मा फलेशु कदाचन। 'यह वह प्रकाश स्तंभ है जो निराशा, वासना, प्रतिशोध और प्रति हिंसा के अंधकार में भटकते हुए मानव समाज को शताब्दियों से प्रकाश दे रहा है और भविष्य में भी मार्ग प्रदर्शित करता रहेगा।'[9]

निष्कर्ष – शिक्षित न होते हुए भी उनमें एक सफल कवि की प्रतिभा थी और जनता के समक्ष वे अपने जो भी विचार रखना चाहते थे उसमें पूर्णत: सफल रहे। संत रविदास की वाणी का प्रभाव ही कहा जा सकता है, कि उनके निर्वाण के सदियों वर्ष बाद आज भी देश में उनके अनुयायियों की कमी नहीं है। रैदास की प्रासंगिकता ओशो के इस कथन से अपने आप सिद्ध हो जाती है कि– संत कबीर, रैदास, बुद्ध और महावीर से भी ऊँचे हैं क्योंकि ये सब राजा के बेटे थे, ये सब भोग कर भोग से ऊब गये थे। रैदास और कबीर बिना भोगे ही भोग से ऊब गये थे। ओशो के द्वारा संत रविदास को याद करना, गांधी दर्शन, अम्बेडकर दर्शन ही नहीं हमारे भारतीय संविधान में भारत को धर्म निरपेक्ष राज्य का दर्जा देना इन संत कवियों का दिग्दर्शन है, प्रासंगिकता है। जब तक इस भारत भूमि में मानव रहेगा, मानवता रहेगी तब तक सदैव रविदास के विचारों की प्रासंगिकता रहेगी, आवश्यकता रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. डॉ. जयकिशन प्रसाद, हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, 1949, पृ. 167।
2. डॉ. लक्ष्मी नारायण चातक एवं राजकुमार पाण्डेय, साहित्यिक निबंध, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, पृ. 57।
3. रोहित शर्मा, संत रविदास, विश्व पुस्तक केन्द्र, नई दिल्ली, 2006, पृ. 7
4. ओम प्रकाश त्रिपाठी, संत साहित्य और लोक मंगल, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1993, पृ. 19
5. रोहित शर्मा, संत रविदास, विश्व पुस्तक केन्द्र, नई दिल्ली, 2006, पृ. 58
6. रोहित शर्मा, संत रविदास, विश्व पुस्तक केन्द्र, नई दिल्ली, 2006, पृ. 55
7. रुस्तम राय, हिन्दी आलोचना और भक्ति काव्य, राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001, पृ. 14
8. डॉ. उमेशपुरी ज्ञानेश्वर, भारत के संत और भक्त, रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार, 1995, पृ. 345
9. डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपर बैक्स, नोएडा, 1993, पृ. 141
10. नव भारत टाइम्स, 7 फरवरी 2012
11. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2012
12. NET

****

आदिवासी जीवन-समस्याएँ एवं समाधान हेतु प्रयास

डॉ. वन्दना अग्निहोत्री *

शोध सारांश – इक्कीसवीं सदी की भारतीय पीढ़ी को इस प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए भिन्न रवैया अपनाना पड़ेगा कि आखिर लोकतंत्र ने आदिवासियों के लिए अब तक क्या किया है। यह जरूरी इसलिए है कि लोकतंत्र के व्याख्यता हमेशा इस व्यवस्था को समता की स्थापना के लिए नैसर्गिक रूप से प्रतिबद्ध बताते रहे है और उनके इस दावे पर अभी तक गंभीर प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया जा सका है। आजादी के बाद उपलब्ध शैक्षिक अवसरो, आरक्षण और संसदीय राजनीति के कारण आदिवासी समाज में धीरे-धीरे एक छोटा सा वर्ग उन्नति कर रहा है। आधुनिकीकरण और शहरीकरण की प्रक्रिया से लाभान्वित होने वाले ये अभिजन अपने समुदाय के मित्र, चिंतक और मार्गदर्शक की भूमिका निभा रहे हैं।

प्रस्तावना – इक्कीसवीं सदी की भारतीय पीढ़ी को इस प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए भिन्न रवैया अपनाना पड़ेगा कि आखिर लोकतंत्र ने आदिवासियों के लिए अब तक क्या किया है। यह जरूरी इसलिए है कि लोकतंत्र के व्याख्यता हमेशा इस व्यवस्था को समता की स्थापना के लिए नैसर्गिक रूप से प्रतिबद्ध बताते रहे है और उनके इस दावे पर अभी तक गंभीर प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया जा सका है। 'लोकतंत्र और समता के अन्तर्सम्बन्धो के बारे में ज्यादा से ज्यादा विवाद इस बात पर है कि लोकतांत्रिक संस्थाएँ पूँजीवादी विकास द्वारा पैदा की गई अनिवार्य विषमताओ का मुकाबला करने में सक्षम होती है या नहीं। लोकतंत्र के समर्थको का उदारवादी खेमा इन संस्थाओं की ताकत में कुछ ज्यादा ही भरोसा करता है और लोकतंत्र को पूँजीवाद की छाया से मुक्त कराने की परियोजना में लगा रेडिकल खेमा संस्थाओं के महत्व को कम आंकता है।'[1] समस्या यह है कि लोकतंत्र की समतामूलकता के ये दानों ही विचार भारतीय परिस्थितियों में किये गए किसी प्रयोग के परिणाम नहीं है। अन्य समाजों में श्रमिक वर्ग शोषण का शिकार होने की स्थिति में भी लोकतंत्र के लिए सकारात्मक सामाजिक पूँजी की भूमिका निभाता है। उसे सामाजिक समता उपलब्ध कराने के लिए सामंतशाही और कुलीन तंत्र के रूतबे को तोड़ने की राजनीति करनी पड़ती है। 'न उदारतावादी दृष्टी से सामाजिक क्रान्ति दूर तक चलाई गई और न ही रेडिकल नजरिये से प्रश्न को उसकी समग्रता में हल करने का प्रयास किया गया।'[2] अगर राष्ट्रीय आंदोलन उदारतावाद से ओतप्रोत न होता तो आजाद भारत के संविधान में सार्विक मताधिकार और आरक्षण जैसे प्रावधानो को इस प्रकार जगह न मिलती 'पहला पक्ष संविधान के इन पहलुओं को या तो जैकोबिन इरादों का फालितार्थ मानता है या बेख्याली में की गई कृति का दर्जा देता है दूसरा पक्ष इन तर्को को सरलीकरण की कोशिश और भारतीय उदारतावाद के लंबे इतिहास की अनदेखी करने का परिणाम करार देता है।'[3] लोकतंत्र में भी आदिवासियों को यातना तिरस्कार और अपमान सहन करना पड़ता है।

आधुनिकता की पूरी गाथा ही विजयी जातियो, समुदायो और राष्ट्रीयताओं की महागाथा है। उसकी वैचारिक दुनियाँ एक खास डिजाइन के मुताबिक होने वाले ध्रुवीकरण के लिए ही बनी है और ये ध्रुवीकरण उपनिवेशवाद बनाम राष्ट्रीय मुक्ति, साम्राज्यवाद बनाम राष्ट्रवाद, पूँजीवाद बनाम समाजवाद, सार्वदेशिकता बनाम स्थानीयता, सेकुलरवाद बनाम साम्प्रदायिकता और आधुनिकता बनाम परंपरा के द्विभाजन के अनुसार होते रहते हैं। इन विराट संघर्षो में अपेक्षाकृत छोटी आवाज न केवल अनसुनी कर दी जाती है बल्कि उन्हें दबा भी दिया जाता है। आदिवासियों को लगता है कि आधुनिकता के दायरे में उनकी माँगो को हमेशा कल के लिए टाल दिया जाता है। यह व्यवहारिक अनुभव आदिवासियों को आधुनिकता का हमदर्द आलोचक बनने के लिए मजबूर कर सकता है। आधुनिकता पर किए जाने वाले दक्षिणपंथी हमले से खुद को अलग रखते हुए उनकी बौद्धिकता एक सर्वथा नयी विचार श्रेणी को जन्म दे सकती है। 'यह नया विचार कुछ लोगो को उत्तर आधुनिकतावाद जैसा लगे लेकिन अपने आमूलवादी रूझानो में कुछ नयी बात कहता ही नजर आयेगा।'[4]

आजादी के बाद उपलब्ध शैक्षिक अवसरो, आरक्षण और संसदीय राजनीति के कारण आदिवासी समाज में धीरे-धीरे एक छोटा सा वर्ग उन्नति कर रहा है। आधुनिकीकरण और शहरीकरण की प्रक्रिया से लाभान्वित होने वाले ये अभिजन अपने समुदाय के मित्र, चिंतक और मार्गदर्शक की भूमिका निभा रहे हैं।

आदिवासी मीमांसा में आदिवासियों के प्रति गैर जातियों के चितंन की थाह नहीं ली गई तो यह अधूरी रह जायेगी। यह आदिवासियों की समस्या का सबसे नाजुक पहलू है, क्योंकि अन्य जातियों का मानस बदले बिना आदिवासियों के अनुकूल सार्वभौमिकता की रचना नहीं हो सकती। कल की जमींदारी प्रथा और आज की लोकतांत्रिकता व्यवस्था आदिवासियों की समस्या के निरूपण और समाधान की दो अलग-अलग दिशा बनाती है। 'जरूरत इस बात की है कि दोनों रवैयो के बीच एक रागात्मक संवाद हो, दोनों परस्पर तादात्म्य स्थापित करें। आखिर जो समस्या सत्ता और वर्चस्व की अन्योन्यक्रिया द्वारा सुलझने से इंकार कर देती है उसे हल करने का एकमात्र तरीका आपसी संवाद ही रह जाता है।'[5]

1. सार्विक मताधिकार, आरक्षण और अदालतो पर कर्मकाण्ड आधारित श्रेणीक्रम को मद्देनजर रखते हुए न्यायिक व्याख्या करने की रोक से आदिवासियों को एक ऐसा धर्म जाति निरपेक्ष संसदीय और सरकारी क्षेत्र मिला जिसमें वे अपनी मुक्ति परियोजना चला सकते थे। इसी दायरे में उन्होंने अपनी पार्टियो का निर्माण किया। सत्ता के समीकरणो को प्रभावित कर सकने लायक मतदान करना सीखा और अपने समाज में धीरे-धीरे एक अभिजन तबके को जन्म दिया।
2. आदिवासियों को उनके अधिकार प्राप्त न हो सके इसके पीछे भी वे लोग है जिनके आर्थिक और सत्तामूलक अधिकार छिन गए हैं वहाँ उनकी आदत की ताकत आदिवासियों को अवमाननाकारी

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) महारानी जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

परिस्थितियों का सामना करने के लिए मजबुर कर देती है। कभी–कभी लगता है लोकतांत्रिक प्रक्रिया, आधुनिकता और विकास के केन्द्र के रूप में शहर और नागरिक के सर्वोपरि होने की धारणा शायद आदिवासी समस्या का सम्पूर्ण समाधान नहीं है।

3. आदिवासियों को ज्ञान के क्षेत्र में भी कई तरह की सांस्कृतिक दीवारो का सामना करना पड़ता है। इसमें कोई दीवार भाषा की है तो कोई दीवार कला की है। राजनीतिक समता हासिल करने की तरफ बढ़ते हुए आदिवासी समाज का बुद्धिजीवी ज्ञान मीमांसा की कक्षा में अपने को अन्यो से पीछे पाता है। उसकी चेतना खुद को अनुभवनिष्ठता और प्रतिक्रियामूलक सौंदर्यशास्त्र की गली में बेद पाती है।
4. लोकतंत्र में ढलीय होड़ के जरिये उपलब्ध हो सकने वाली राजनीतिक समता के रास्ते में आदिवासियों का आंतरिक विभेदीकरण एक बड़ी बाधा के रूप में उभरता है। आर्थिक विकास आदिवासी समाज में वर्गो की रचना करता है जो जातिगत विभेदो का स्थान नहीं लेते बल्कि जातिगत विभेदो के साथ मिलकर विभेदीकरण को और भी जटिल बना देते है।
5. आदिवासियों को नेतृत्व किस प्रकार मिलेगा ? मानव अधिकारो से जुडे एक संगठन ने अपनी पहलकदमी से एक नयी संभावना जगाई है। यह संगठन आदिवासियों का भूमंडलीकरण करके उसे नस्ली भेदभाव की तरह अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर पेश करना चाहता है इस प्रयास की महत्वाकाक्षाएँ साफ है। यह मानवाधिकार संगठन एक नये आदिवासी नेतृत्व का विकास करना चाहता है। जिससे आदिवासियों की समस्याओं का निदान खोजा जा सके।
6. आदिवासी विमर्श द्वारा विकास के अवसरो का उपभोग करें। सत्ता की अवधारणा को भिन्न तरह से समझे जिसमें लोकतंत्र को समझने की क्षमता हो। यह नया विमर्श नागरिकता के ऐसे विचार को प्रतिपादित कर सकता है जिसके तहत वह नागरिक अधिकारो के पुलिंदे की तरह न होकर नाना प्रकार के कौशलो और दक्षताओं के आगार के रूप में अपना नित नवीनीकरण कर सके।
7. अवसरो की समानता ही काफी नहीं है इसलिए आदिवासियों के लिए समाज में अवमाननाकारी परिस्थितियों के उन्मूलन के लिए समता के सिद्धान्त को अन्य सभी सिद्धान्तों के ऊपर तरजीह दी जाये। भौतिक स्थितियों की संरचना आमूल चूल बदल दी जाये ताकि उत्पादन प्रक्रिया से होड़ और सभी तरह की– नीच हटाकर सभी की सहभागिता की जा सके।
8. विचार की दृष्टि से ही नहीं, संगठन के लिहाज से भी आदिवासियों को संगठन बनाकर कार्य करना चाहिए। तभी वे सुप्त पडे सामाजिक परिपेक्ष्य का जीर्णोद्धार कर पायेगें। फिलहाल आदिवासियों को पहचान दिलाने का दौर चल रहा है। ऐसा शायद इसलिए है कि कमरे से निकलने के लिए कुछ कदम कमरे में ही रखना पड़ते है।
9. आर्थिक सामाजिक और सांस्कृतिक सामंजस्य के कारण आदिवासियों के जीवन में कई समस्याएँ है। संविधान द्वारा दिए गए संरक्षण और शासन द्वारा उनके विकास एवं कल्याण की विभिन्न योजनाएँ कार्यान्वित की जा रही है। यह आवश्यक है कि उनकी समस्याओं के समाधान के लिए विकास अधिकारी एवं कार्यकर्ता उनके साथ सहानुभूति रखे और वैज्ञानिक समाधान खोजने का प्रयत्न करें।

आदिवासियों के जीवन को नई दिशा देने के लिए चार मुख्य दिशा निर्देशों का संक्षिप्त विश्लेषण यहाँ आवश्यक है।

1. समाज सेवी संस्थाएँ
2. राजनीतिक प्रयास
3. धार्मिक आंदोलन
4. नेतृत्व शास्त्री दृष्टिकोण

10. देश की अनुसूचित जातियों को विधान का विशेष संरक्षण प्राप्त है। और उनके कल्याण के लिए योजनाएँ बनाने की शासकीय व्यवस्था भी हुई है। मूलत: आदिवासी क्षेत्र का अंशत: पृथक्करण और उनके लिए विशेष कल्याण योजनाओं की नीति न केवल उन्हे संरक्षण ही प्रदान करती है वरन् उनमें परिवर्तन के एक ध्येययुक्त कार्यक्रम का जो आदिवासियों को भारतीय समाज की प्रमुख धारा में समाहित करने के उद्देश्य से निर्मित किया गया है समारम्भ भी करती है।
11. योजनाओं के निर्माण और उन्हें कार्यान्वित करते समय हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि देश में न तो कोई एक आदिवासी समस्या है और न उसका एक निदान ही हो सकता है। इन योजनाओं की उपयोगिता बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि आदिवासी समूहों का उनकी आवश्यकता के अनुसार वर्गीकरण किया जाये और प्रत्येक वर्ग की आश्यकता के अनुकूल योजनाएँ बनायी जाये। मानव विज्ञानवेताओं ने आदिवासियों की समस्याओं का अध्ययन किया है और उनके जीवन को निकट से देखा है। हालांकि राजनीतिज्ञों और समाज सेवको ने समसामायिक मानव विज्ञान और उसके उद्देश्यों को भली – भाँति नहीं समझा है उनके मन में अनेक शंकाएँ है।
12. आदिवासी समूहों के सम्बन्ध में मानव–विज्ञान का यह आग्रह रहा है कि वे कालान्तर में भारतीय जीवन की प्रमुख धारा में समाहित हो सकें। उन्होंने आदिवासी जीवन के मूल्यों को परखा है और वे शक्ति से परिचित है। यदि वे आदिवासियों की विशेष संस्थाओं और जीवन प्रकारों के नाश को रोककर उनके जीवन को अन्यों जैसा नहीं बनाना चाहते तो इसका अर्थ केवल है कि आदिवासी अपनी कतिपय परम्पराओं को जीवित रखकर भी राष्ट्र के उपयोगी नागरिक और महत्वपूर्ण अंग बन सकते हैं।

निष्कर्ष – समस्याओं के समाधान के लिए मानव विज्ञानवेता कुछ दिशाओं में कार्य कर रहे हैं।

1. आदिवासी क्षेत्रों में कार्य करने वाले शासकीय अर्धशासकीय तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं को आदिवासी जीवन और संस्कृति से परिचित कराने और इन समूहों में किये जाने वाले कार्यो के लिए विशेष प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए।
2. विचारपूर्वक ऐसी विकास–योजनाओं का निर्माण हो जो आदिवासी समूहो की आवश्यकताओं का क्षैत्रीय और राष्ट्रीय आवश्यकताओं से समन्वय कर सके।
3. इन योजनाओं द्वारा जनित प्रकृतियों की गतिविधि और प्रभावों का अध्ययन और उनके हानिकारक तत्वों के निराकरण का प्रयतन किया जाये।

अत: आवश्यक है कि आदिवासियों के लिए बनाई गई योजनाओं की मूर्त दिया जाये तभी समस्याओं का समाधान हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डेमोक्रेसी एण्ड सोशल इनईक्वालिटी – संकलित फ्रेसाइन आर क्रेंकल– सुदीस कविराज लखनऊ – 1988
2. डेमौक्रेटिक विजन ऑव ए न्यू टिपब्लिक इंडिया – 1950 संकलत फ्रेसाइन आर।
3. आधुनिकता के आईने में लित– संपा. अभयकुमार दुबे।
4. संस्कृतिक और समाज – डॉ. श्यामसुंदर दुबे
5. समाजशास्त्र– एम.एल. गुप्ता , डी.डी. शर्मा

रीतिमुक्त काव्य में लोकोक्तियों एवं मुहावरों का प्रयोग

डॉ. मंजुला जोशी *

शोध सारांश – हिन्दी साहित्य का उत्तर मध्यकाल लगभग (1643ई. से 1843 ई.) जिसमें सामान्य रूप से श्रृंगार परक ग्रन्थों की रचना हुई है। नामकरण की दृष्टि से विद्धानों में पर्याप्त मतभेद रहा है। मिश्र बंधुओं ने इन्हें अंलकृत काल कहा, जबकि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसे रीतिकाल और पंडित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र इसे श्रृंगार काल की संज्ञा देते हैं।

रीतिकाल का विभाजन मुख्यत: तीन भागों में हुआ है। 1) रीतिबद्ध 2)रीतिमुक्त और 3) रीतिसिद्ध। रीतिमुक्त कवियों का संपूर्ण काव्य साहित्य लोक जीवन की ओर झुका है। इन कवियों की रचनाओं में लोक जीवन से जुड़ी लोकोक्तियां एवं कहावतों का भरपूर प्रयोग हुआ है। ये काव्य में अनायास ही आयी है। किन्तु इनसे रचना की प्रभावोत्पादकता बढ़ गई है।

लोक + उक्ति – लोकोक्ति लोक की उक्ति

हाव–भाव परक – आंगिक अभिव्यक्ति

युग या विद्या कोई भी अपने युग के कई गुण दोषों से युक्त होती है, रीतिमुक्त काव्य धारा भी इससे अछूती नहीं रही।

प्रस्तावना – 'रीतिकाल का वास्तविक आरम्भ विक्रम संवत् 1700 में मानना चाहिए। श्रृंगार प्रधान रीतिकाव्य का व्यापक प्रभाव जिसने भक्ति काव्य के प्रबल वेग को मंद किया, इसी समय से बढ़ना शुरू हुआ और 19वीं शताब्दी तक हिन्दी काव्य पर बना रहा। अत: दो सौ वर्षो का यह काल रीतिकाल के नाम से अभिहित होना चाहिए।' [1]

रीतिकाल का विभाजन मुख्यत: तीनों भागों में किया गया है – रीतिबद्ध, रीतिमुक्त, रीतिसिद्ध।

रीतिमुक्त कवितायों की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता यह रही है, उन्होंने प्राचीन काव्य परम्परा का त्याग किया एवं नवधारणाएँ स्थापित की।

रीतिकाल का समूचा साहित्य या तो आलंकारिक चमत्कारों के प्रभाव से शोभा सम्पन्न हुआ है या फिर नायिका – भेद अथवा भावभेद से। दोनों ही संदर्भ अपनी शास्त्रीय इयत्ता में सीमित बन गये थे।

नायिका–भेद का बोध कवि को परम्परा से अधिक, जीवन से कम होता था। जबकि प्रणयानुभूति जीवनानुभव से जुड़ी होती है अत: उसके लिये शास्त्रीय विवेचना साहित्य में स्थान रखता है, जीवन में नहीं।

इस धारा के कवियों ने अपने काव्य में भाषा का असाधारण प्रयोग किया है। रीतिबद्ध कवियों की भाषा जहाँ अलंकारों की सत्ता से जकड़ी होने के कारण अपने जीवन से कटी हुई है और एकरूपता के दोष से पीड़ित है। ये कवि भाषा की उस शक्ति से अपरिचित है जो जायसी जायसी सूर तुलसी आदि के काव्य में सहज सुलभ है। रीतिमुक्त कवियों ने इस दिशा में नया मार्ग अपनाया है। सूर तुलसी की भांति उन्होंने लक्ष्णाओं लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग से अपनी भाषा शक्ति बढ़ायी। धनानंद ठाकुर, आलम बोधा आदि का काव्य–शिल्प अलंकारों का मुहताज नहीं हैं। रीतिमुक्त कवियों का संपूण्र काव्य–साहित्य लोकजीवन की ओर झुका है। इन कवियों की रचनाएँ जहां अलंकारों के अतिरिक्त भार से मुक्त है, वहीं लोक जीवन से जुड़ी लोकोक्तियों एवं मुहावरों का प्रयोग अत्यधिक हुआ हैं।

लोकोक्ति का अभिप्राय – लोक + उक्ति – लोकोक्ति हैं।

लोकोक्ति का अर्थ एक ही नहीं लोक की उक्ति।'[2]

'लोक कहावतों को यदि सामाजिक न्याय की चलती फिरती अदालतें कहे तो भी अत्युक्ति नहीं। किसी बड़े से बड़े विवाद का कम से कम समय और शब्दों में अचूक निर्णय देने की इनमें अद्भुत क्षमता होती है। दलीले और उपदेश भी जहाँ हार जाते है, वहाँ कहावतें अपना रंग जमाती आई हैं। ये शिलाओं पर अंकित राजआसायें नहीं वरन् मानव हृदय से अद्भुत भावनाओं के ऐसे पक्षी हैं जो एक ओठ से दूसरे ओठ पर उड़ते हुए शताब्दियों के छोर मापते आये हैं। ये ज्ञान के ऐसे सिक्के है जो सब देशों और कालों में समान रूप से चलते आये हैं।[3]

रीतिमुक्त कवियों की लोकोक्तियों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता हैं।

1. प्रेम व्यंजना परक।
2. नीति परक।

प्रेम व्यंजना परक लोकोक्तियों में प्रणय व्यापार के विविध रूप प्रतिपादित हुए हैं। प्रेम की रीति, प्रेम की विषमता, निठुरता , प्रेमपंथ की विचित्रता , कवि की प्रतिबद्धता और निर्वाह आदि पक्षों की अभिव्यंजना इसमें हुई हैं।

प्रेम व्यंजनापरक लोकोक्तियाँ –

1. अनोखों है प्रेमपंथ भूले ते चलत रहे सुधि के थकित रखै।[4]
2. तुम कौन धौ पाटी पढ़े हो लला, मन लेहूँ पे देहूँ छटांक नहीं।[5]
3. प्रीत रीति विषय सुरोम रोम रमी हैं।[6]
4. प्यार निगौड़े की पीर भलौ। [7]
5. इश्क सहित मरिबौ भलौ। [8]
6. कठिन पीर कहिबे की नहीं सहिबे की बनि आई। [9]
7. विरही की पीर कोई विरही पहिचाने। [10]
8. विष खाई मरै के गिरै गिरि ते दगादार ते यारी कभी न करैं। [11]

* प्राध्यापक (हिन्दी) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

9. यह प्रेम पंथ कराल महा तलवार की धार पै धावनौ हैं।[12]
10. जन मिलै तो जहान मिलै नहि जान मिलै तो जहान कहां को।[13]
11. आज बर जोरी को न दोष होत होरी में। [14]
12. जाने संयोग में दीन्हों वियोग, वियोग में सो का संयोग न दे हैं। [15]
13. थिगरी न लागे ..... चित्त के चंदोवा फटे। [16]
14. मूसर चोट की भीति कहा जब मूंड दियों ओखरी में। [17]

नीतिपरक लोकोक्तियाँ – नीतिपरक कहावतों में भी प्रेम व्यंजना हुई है, परन्तु उनमें जागतिक जीवन के अनेक पक्ष भी उभर आए हैं। कवि ने जो विषमता यथार्थ जीवन में भोगी उसी को इन कहावतों की प्रासंगिकता द्वारा समर्थित किया हैं। बोधा की नीतिपरक लोकोक्तियों में उनके व्यवस्थित व्यक्तित्व का जागरूक रूप उभरता है। नीतिपरक लोकोक्तियों में कवि ने जिन पक्षों पर प्रकाश डाला है, उनमें लोक मर्यादा, जगत रीति, निरन्तर उपेक्षा विश्वप्रपंच, मैत्री, धूर्तता, गुणवत्ता आदि उल्लेखनीय हैं।

ठाकुर की लोक–नीतिपरक लोकोक्तियाँ पूर्ण अनुभूत्यात्मक विकास का प्रतिफल हैं। वे न तो सदाचार के आग्रह से प्रेरित है और न ही उपदेशात्मक हैं। वस्तुत: इन लोकोक्तियों द्वारा ठाकुर का समस्त व्यक्तित्व पकड़ा जा सकता है। उनकी रूचियाँ, मान्यताएँ, विश्वास जीवन दृष्टि, आदर्श इन सबके समग्र की वे उपज हैं। ठाकुर की लोकोक्तियों में लोकनीति, स्वार्थसिद्ध, परमार्थ, अवसरवादिता आदि की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है।

घनानंद, ठाकुर, बोधा इत्यादि की नीतिपरक लोकोक्तियाँ जीवनानुभव से पगी हैं। जीवन की कटुता सरलता, सहजता की अभिव्यक्ति इन लोकोक्तियों से हुई हैं।

1. अपने नहीं होत पराये पिया। [18]
2. अब रहै न रहै यहाँ समयों बहती नदी पांव पखार लै री।[19]
3. या जग में जीवों कहा जब आँगुरी लोग उठावन लागे।[20]
4. मानस को तन समयौ परे को बड़ो साहसी है।[21]
5. है है नहीं मुरगा जेहि गांव तिहि गांव का भोर न है है।[22]
6. कोयल होय न उजली सौ मन साबुन लाय।[23]
7. शील है न सत्य भई निरस जमानो हैं।[24]
8. बिन आपने पाये बिवाई गए कोऊ पीर पराई न जानत है।[25]
9. गरब गरूरी को रखैया एक राम हैं।[26]

मुहावरे –'मुहावरे भाषा की बहुमूल्य संपत्ति है।'[27]

मुहावरा शब्द के कई अर्थ है। यह एक अरबी शब्द है, जिसका मूल अर्थ है बात–चीत करना, किन्तु इस अर्थ में हम इसका प्रयोग नहीं करते। सामान्यतया मुहावरा उस वाक्यांश या खण्ड काव्य को कहते हैं, जिसका अर्थ उस भाषा में साधारण या सीधा सादा न होकर विलक्षण या वैचित्र्यपूर्ण हो जैसे– 'मन मारना'।

मुहावरा को काव्य सरोदर कहा जाता है। मुहावरे भाषा का श्रृंगार है और इनमें अनेक प्रकार के अलंकारों का सहज और अनायास प्रयोग होता है जैसे गुड़ गोबर, पराई आग में कूदना, पीठ दिखाना आदि।'[28]

रीतिमुक्त कवियों की रचनाओं में मुहावरों और कहावतों की अत्यंत भव्य छटा देखने को मिलती है। घनानंद की प्रयोगदृष्टि अत्यंत जागरूक थी। उन्होंने अपने मुहावरों को आंतरिक द्वंद घोर विषाद ओर मौन व्यथा के संवाहन का उपकरण बनाया है। ये दो भागों में विभक्त है।

1. व्यापार परक। 2. हावभाव परक

व्यापार परक मुहावरों में किसी न किसी प्रकार की क्रिया व्यापार ही प्रमुख है, जो अधिकतर आँख मुँह, दिल, नाक, हाथ आदि द्वारा सम्पन्न होता है।

हावभाव परक मुहावरों में स्थूल व्यापार की अपेक्षा सूक्ष्म व्यापारों का प्रतिपादन हुआ है, जिसमें विविध अनुभवों द्वारा भावाभिव्यंजना की गई है। दोनों प्रकार के मुहावरों में केवल व्यापार की स्थूलता और सूक्ष्मता का ही अंतर है, अन्यथा सभी द्वारा प्रणय की अन्तरदशाओं की ही गंभीर व्यंजनायें हुई हैं।

व्यापार परक मुहावरे :–

1. आगे न बिचारयो अब पीछें पछताये कहा। [29]
2. ओछी बातन कहा बड़ाई। [30]
3. आए सो हरश और विशादहु न गत को। [31]
4. प्रभु मोहन प्यारे टारे न टरत करम रेख। [32]
5. कालहि जित सक्यों न कोई। [33]
6. घटे मान दरबार में प्रकट न कीजै मित्र। [34]
7. प्रसूत पीर बन्ध्या क्या जाने । [35]
8. राजन के दरबार में चुगलन को इतबार। [36]
9. दुनिया सब मास की जी चलावत। [37]
10. भये लखि सावन के अंधरे नर को सु हरौ हरौ सुझे। [38]
11. मुरख नर न व्यापै यारी। [39]
12. जबान बड़े नर की मुख सो किसे फेरि फिरै ना। [40]
13. आंखे जलना – अब सोचन लोचन जात जरे। [41]
14. गुणगाना – तेरोई गुण गाऊ । [42]
15. डौंड़ी पिटना – है जग बाजति नेह की डोंड़ी। [43]
16. नजर छिपाना – हाय अनीति सुदीठ छिपैय। [44]
17. बांट जोहना – तब ते अंखिया मग मापति है। [45]

हावभावपरक मुहावरें –

1. गुड़ के भाव बिकना – बनिये घर बोधा बिके गुरू को।[46]
2. जीभ चलाना – दुनिया सब मास की जीभ चलावत। [47]
3. भौहे चढ़ाना – सदा भौहे चढ़ाय रहे ननदी। [48]
4. द्वारा खड़ना – द्वार में प्यारों खरों कब को। [49]
5. दिल लगना – परवाह हमारी न जाने कछु मन जाय लग्यों कहू कैसे करौ। [50]
6. उंगली उठाना – फिर जीबों कहा जब आंगुरी लोग उठावन लागें। [51]
7. कलई खुलना – धोरिहि बात में धोखा मिटो बठियाई भई कलई कढ़ि आई। [52]
8. दवा न लगना – लागत न दारू उपचार करि हारे बैद। [53]
9. पराये हाथ बिकना – कहा पाओगी हाथ पराये बिके लोग हंसाइबे में।[54]
10. नाम न लेना – जाननी जो इतनी परनीति को प्रीति की रीति को नाम न ले तौ। [55]

घनानंद, बोधा और ठाकुर के मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग की समग्रता पर विचार करते समय ये तथ्य प्रमुख रूप से सामने आते हैं।

11. आंखे ठंड़ी होना – दामिनी देखत नैन सिराने। [56]
12. आँखों से बोलना – बैन बड़े–बड़े नैनन के बल बोलति हैं। [57]
13. दिल में बसाना – सीस लाय छग छवाय हिय पे बसाय राखॅ। [58]

बोधा के मुहावरें उनके व्यक्तित्व की प्रखर किरणें हैं, जिनके द्धारा वह अपनी अनुभूत एवं आत्मपक्ष का निर्भीक प्रकाशन करते हैं। बोधा ने मुहावरो के अनायास प्रयोग द्धारा अपनी भाषा में अर्थवत्त भर दी है। इन मुहावरों में अभिव्यंजना शिल्प की अन्तरंग ओर बहिरंग दोनों प्रकार की ऊर्जा मिलती हैं।

ठाकुर ने मुहावरों के आशु सहज तथा स्वाभाविक प्रयोग द्धारा अपनी भाषा को समृद्ध बनाया उसे साधारण शब्दों के प्रयोग द्धारा नया अर्थ व गौरव प्रदान किया हैं। ठाकुर के मुहावरों में फारसी प्रभाव का संयमपूर्ण रूप मिलता हैं। ठाकुर की प्रयोग दृष्टि में संपूर्ण सतर्कता तो है परन्तु रीतिबद्ध कवियों जैसी प्रयत्नशीलता नहीं हैं।

रीतिमुक्त कवियों के काव्य में लोकोक्तियों और मुहावरों का बहुत ही सुंदर प्रयोग हुआ है। यह प्रयोग अनायास ही काव्य में आया है। इन लोकोक्तियों और मुहावरों की अभिव्यक्ति से कवियों की अपनी बात कहने की क्षमता और विशिष्टता का साक्षात्कार होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी साहत्यि का वृहत इतिहास – सं डॉ. नगेन्द्र पृष्ठ 170
2. निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास–रामनारायण उपाध्याय पृ. 128
3. निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास–रामनारायण उपाध्याय पृ. 127
4. सुजानहित धनानंद पृष्ठ 296
5. सुजानहित धनानंद पृष्ठ 267
6. सुजानहित धनानंद पृष्ठ 187
7. सुजानहित धनानंद पृष्ठ 384
8. माधवानल काम कंदला विरह वारीष–बीधा पृष्ठ 85
9. इश्कनामा – बोधा पृष्ठ 4/9
10. माधवानल काम कंदला पृष्ठ 52
11. इश्कनामा पृष्ठ 2/35
12. इश्कनामा – बोधा 1/3
13. इश्कनामा 2/2
14. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 98
15. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 62
16. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ135
17. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 170
18. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 139
19. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 155
20. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 149
21. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 128
22. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 167
23. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 17
24. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 144
25. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 176
26. ठाकुर ठसक–ठाकुर पृष्ठ 22
27. मुहावरा एवं लोकोक्ति कोष –हरदेव, डॉ. श्यामलाकान्त वर्मा, पृष्ठ 10.
28. मुहावरा एवं लोकोक्ति कोष –हरदेव, डॉ. श्यामलाकान्त वर्मा, पृष्ठ पृष्ठ 11–12
29. सुजानहित घनानंद पृष्ठ 195
30. पदावली घनानंद पृष्ठ 117
31. सुजानहित घनानंद पृष्ठ 394
32. पदावली घनानंद पृष्ठ 1039
33. म.का.क.विरह वारिश बोधा पृष्ठ 114
34. म.का.क.विरह वारिश बोधा पृष्ठ 45
35. इश्कनामा बोधा पृष्ठ 4/10
36. म.का.क.विरह वारिश बोधा पृष्ठ 40
37. इश्कनामा बोधा पृष्ठ 1/20
38. इश्कनामा बोधा पृष्ठ 2/25
39. इश्कनामा बोध पृष्ठ 92
40. म.का.क.विरह वारिश बोधा पृष्ठ 103
41. सुजानहित घनानंद पृष्ठ 36
42. सुजानहित घनानंद पृष्ठ 122
43. पदावली घनानंद पृष्ठ 609
44. सुजानहित घनानंद पृष्ठ 348
45. पदावली घनानंद पृष्ठ 526
46. इश्कनामा बोधा पृष्ठ 4/11
47. इश्कनामा बोधा पृष्ठ 1/20
48. इश्कनामा बोधा पृष्ठ 2/18
49. इश्कनामा बोधा पृष्ठ 5/5
50. इश्कनामा बोधा पृष्ठ 2/24
51. ठाकुर ठसक ठाकुर 149
52. ठाकुर ठसक ठाकुर 150
53. ठाकुर ठसक ठाकुर 162
54. ठाकुर ठसक ठाकुर 51
55. ठाकुर ठसक ठाकुर 56
56. दानघटा घनानंद पृष्ठ 2
57. सुजानहित घनानंद पृष्ठ 205
58. सुजानहित घनानंद पृष्ठ 36

****

'भ्रमरगीत' एक विरह विभूषित काव्य कथा

डॉ. शाजिया खान *

प्रस्तावना – भ्रमरगीत काव्य का उद्भम संस्कृत साहित्य के माध्यम से सर्वप्रथम श्रीमद्भागवत पुराण में हुआ। श्रीमद्भागवत में मथुरा से कृष्ण द्वारा भेजे गये उद्धव ब्रजधाम में पहुँचकर ज्ञानोपदेश द्वारा ब्रजवल्लभाओं की विरह व्यथा दूर करने का प्रयत्न करते हैं। उद्धव को देखकर स्वत: गोपियों के हृदय में कृष्ण एवं उद्धव की लोभी प्रवृत्ति का स्मरण हो आता है। गोपी–उद्धव संवाद के मध्य भागवतकार को एक कल्पना सूझ गई है। गोपियाँ भ्रमर को उद्धव तथा कृष्ण की लोलुपता एवं स्वार्थी प्रवृत्ति का प्रतीक मानकर सम्बोधित करते हुए उपालम्भ देने लग जाती हैं। यही भ्रमरगीत का विषय स्वरूप है और इस प्रकार गोपियों द्वारा 'भ्रमर' को लक्ष्य कर कृष्ण के प्रति उद्धव से कहे जाने वाले पद ही बाद में 'भ्रमरगीत' या 'भ्रमर–काव्य' कहलाये। भ्रमर को उपालम्भ का पात्र मानकर चलने वाली यह कथानक रूढ़ि से इतनी महत्वपूर्ण और व्यंग्य के लिए इतनी उपयुक्त थी कि इसी अभिप्राय को लेकर बाद में श्राव्य रूप खड़े होने लगे।

हिन्दी साहित्य के 'भ्रमरगीत' की इस काव्य परम्परा के अन्तर्गत कतिपय कवियों ने उद्धव–गोपी संवाद के मध्य भ्रमर का प्रवेश कराया है। इसी भ्रमर को कृष्ण का प्रतीक मानकर गोपियों द्वारा मन भरकर उपालम्भ दिलवाया गया हैं। हिन्दी साहित्य में भ्रमरगीत काव्य का यही विषय स्वरूप अपने भिन्न–भिन्न स्वरूपों में कवियों के काव्य का विषय रहा।

हिन्दी साहित्य में प्रवाहित भ्रमरगीत काव्यधारा को निम्नलिखित वर्गो में विभाजित किया जा सकता है –

1. पूर्ववर्ती भ्रमर गीतकार।
2. सूरदास की मौलिक भ्रमरगीत योजना।
3. सूर परवर्ती भ्रमर गीतकारों द्वारा परम्परा का निर्वाह।

1. पूर्ववर्ती भ्रमर गीतकार – भ्रमरगीत की इस योजना के प्रणयन का श्रेय भागवतकार को है। महापुराण के दशम स्कन्ध में यह प्रसंग बड़े ही अनूठे ढ़ंग से चित्रित है। उद्धव कृष्ण के परम मित्र थे। मित्र की ब्रज सम्बन्धी विरह वेदना को सुनकर उद्धव मित्र के निर्देशानुसार ज्ञानोपदेश द्वारा ब्रजवासियों को शान्ति एवं सुख प्रदान करने हेतु मथुरा से ब्रज के लिए चल पड़े थे। गोपियों को यह विदित हो जाने पर श्रीकृष्ण के परम मित्र उद्धव आये हैं, विशेष हर्ष हुआ, परन्तु कृष्ण की पूर्व स्वार्थ संलिप्त भिन्नता का स्मरण कर वे उद्धव के समीप पहुँचकर उनके समक्ष अनेकानेक उपालम्भों का घात करने लगी। इसी मध्य एक भौंरा उड़ता हुआ पहुँचा। गोपियाँ भ्रमर को कृष्ण या उनका दूत समझकर उसी पर अपनी खीज उतारने लगी। भागवतकार ने अन्त में उद्धव के ज्ञानोपदेश द्वारा गोपियों के प्रेमालाप को शांत एवं स्थिर कर दिया। भागवतकार की गोपियाँ सरल हृदया एवं स्पष्ट हैं।

2. कवि वर सूरदास की मौलिक भ्रमर गीत योजना – सूर के भ्रमरगीत सार का मुख्य उद्धेश्य निर्गुण का खण्डन और सगुण का प्रतिपादन करना है, ज्ञानमार्ग के कठिन मार्ग से बचाकर भक्ति–मार्ग की स्थापना करना है। सूर ने वास्तव में सगुण–भक्ति का संदेश मानव को प्राप्त कराया है। गउघाट पर वल्लभाचार्यजी से सूरदास की मुलाकात हुई थी और उस समय उन्होंने भगवद्लीला का वर्णन करने के लिए संकेत किया था। भगवान की कथा सूरदासजी को वल्लभाचार्यजी से प्राप्त हुई थी। उसी को आधार मानकर सूर ने 'भ्रमरगीत' की रचना की है।

सूरदासजी ने तीन 'भ्रमरगीत–सार' लिखे हैं –

1. प्रथम 'भ्रमरगीत' सार तो भगवत का अनुवाद है। इसमें वैराग्य और ज्ञान का विवेचन विस्तार से किया गया है, परन्तु सूर ने इसमें यह अंतर कर दिया है कि जहाँ उन्हें मौका मिला है, वहाँ उन्होंने ज्ञान के स्थान पर भक्ति की प्रधानता स्पष्ट की है। 'यह भ्रमरगीत' सार चौपाई–छन्द में लिखा है।
2. दूसरे और तीसरे दोनों ही 'भ्रमरगीत' सार पदों में लिखे गये हैं। प्रथम और दूसरे 'भ्रमरगीत' में भौंरे के आगमन का वर्णन कहीं भी नहीं है। केवल मधुकर नाम से उपालम्भ दिया गया है।
3. तीसरे 'भ्रमरगीत' सार में भौंरे का आगमन दिखाया है और उसी को संकेत मानकर गोपियाँ अपने व्यंग्य–बाण छोड़ती हैं। कई सौ पदों में इसका विवेचन किया गया है। यह ग्रन्थ अन्य भ्रमरगीतों से अधिक मनोरम और आकर्षक है। तीसरे भ्रमरगीत में वियोग का बड़ा ही सुन्दर विवेचन किया गया है – सूर की अक्षय कीर्ति का यह 'भ्रमरगीत' ही स्मारक है। कृष्ण के उपदेशों को लेकर उद्धव गोपियों को निर्गुण ब्रह्म का उपदेश देते हैं, जिसमें गोपियों के हृदय में दु:ख की गहरी अनुभूति होती है। वे अपने हृदय पर हाथ रखकर उद्धव का यह संदेश सुनती हैं–

ताहि भजहु किन सबै सयानी। खेजत जाहि महामुनि ज्ञानी।।
जाके रूप रेख कछुनाहीं। नयन मूँदि चितबहु चित माहीं।।
हृदय–कमल में ज्योति बिराजै। अनहद नाद निरन्तर बाजैं।।
इड़ा पिंगला सुखमन नारी। सून्य सहज मे बसैं मुरारी।।

'भ्रमरगीत' में सूर का वाग्वैदग्ध्य भी उच्चकोटि का है – गोपियाँ ऐसा सीधा, परन्तु तीखा व्यंग्य–बाण छोड़ती हैं, जिससे बेचारे उद्धव निरूत्तर हो जाते हैं। वे कहती हैं कि हमारे दस–बीस मन नहीं हैं। एक मन था, वह कृष्णजी ले गये।

ऊधौ मन नाहीं दस–बीस।
एक हुतौ जो गयो श्याम संग को आराधै ईस।।

सूर ने ज्ञान की अपेक्षा प्रेम को अधिक सुबोध बनाते हुए प्रेम की सरलता एवं सुगमता ही का गोपियों के द्वारा प्रतिपादन कराया है।

'कौन काज है वा निर्गुण सों चिर जीवहु कान्ह हमारे।'

वास्तव में भागवत एक पुराण है। सूर ने अपने सागर में लाकर इसे एक

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) 65, बनियावाड़ी, दीक्षित फोटो स्टीडियों के पास, धार (म.प्र.)भारत

उत्कृष्ट कोटि के काव्य का रूप प्रदान किया है। सूर ने भ्रमरगीत कथासूत्र को भागवत पुराण से ग्रहण अवश्य किया पर अपनी कलात्मक प्रतिभा द्वारा उसके काव्यसूत्र एवं शैली में ऐसा परिवर्तन किया कि वह नैतिक प्रयास प्रतीत होता है। परवर्ती भ्रमर गीतकार – सूर के बाद भ्रमर गीतकारों में आने वाले अष्टछाप के कवियों में नंददास तथा परमानन्ददास प्रमुख है।

सूर के सामाजिक भ्रमर गीतकारों में गोस्वामी तुलीसदासजी का नाम आता है। जिन्होंने फुटकल पदों में भ्रमरगीत संबंधी पदों की रचना की। गोस्वामी तुलसीदासजी ने 'गीतावली' के अन्तर्गत भ्रमरगीत प्रसंग को उठाया है। भ्रमरगीत के पदों में गोस्वामीजी ने एक प्रकार की मर्यादा की स्थापना कर भ्रमरगीत को नया मोड़ प्रदान किया।

श्रृंगारकाल में भ्रमरगीत की परम्परा – इस काल में कोई भी भ्रमरगीत संबंधी स्वतंत्र काव्य नहीं लिखा गया है। सभी भ्रमरगीत पद प्राय: प्रकीर्ण हैं। न तो उसमें भक्तिकाल की तरह उद्धव गोपीसंवाद ही दिखलाया है और न वैसी तर्क–वितर्क युक्त शैली एवं भावुकता ही है। सूर आदि कवियों की भाँति उद्धव गोपी संवाद के मध्य भ्रमर का प्रवेश भी नहीं कराया गया है। इस काल के कवियों में मतिराम, देव रस नायक, पदमाकर, सेनापति, भिखारीदास आदि प्रमुख हैं।

आधुनिक काल में भ्रमरगीत काव्य परम्परा –
इस काल के भ्रमरगीतकारों में विशेष उल्लेखनीय हैं–
अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिओध' –

पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिओध' के 'प्रियप्रवास' में कृष्ण, गोपियों, उद्धव तथा राधा को परम्परागत रूप से अलग नवीन सामाजिक परिवेश में प्रस्तुत किया गया है। इस महाकाव्य के कृष्ण केवल गोपी वल्लभ ही नहीं हैं, वरन् वे लोक–हितरत, जननायक भी है। 'प्रिय प्रवास' की गोपियाँ विरह–व्याकुल होने पर भी गंभीर , शान्त तथा संयत हैं। सामाजिक मर्यादा का वे पूर्ण–रूपेण ध्यान रखती हैं। 'प्रिय प्रवास' की गोपियाँ आदर्श भारतीय नारी की प्रतीक हैं, वे गोपी–कृष्ण का निम्न शब्दों में स्मरण करती हैं।

'तव तन पर जैसी पीत आभा लसी है।
प्रियतम कन्नि में है सोहत वस्त्र जैसा।।
गुन–गुन करना औ गूजना देख तेरा।
रसमय मुरली का नाम है याद आता।।'

पं. जगन्नाथ दासजी रत्नाकर – भ्रमरगीत परम्परा को पुनर्जीवित पं. जगन्नाथ दासजी 'रत्नाकर' के 'उद्धव शतक' में किया गया है। रत्नाकरजी की गोपिकायें तर्क–निपुण हैं और सफलता एवं दृढ़ता से सगुण ब्रह्म की स्थापना करती हैं। 'उद्धव शतक' में 118 कवित हैं। 'उद्धव शतक' की गोपियाँ सरल हृदय, वाक् पटु, हास्य–प्रिय तथा तर्क निपुर्ण हैं। कवि ने इस काव्य में ज्ञान पर प्रेम की विजय प्रदर्शित की है –

'मान्यौ हम कान्ह ब्रह्म एक ही कह्यौ जो तुम,
तौ हूँ हमें भावती न भावना अन्यारी की।
जैहे बनि बिगरि न वारिधता वारिधि की
बूँदता बिलै है बूँद बिबस बिचारी की।।'

मैथिलीशरण गुप्त – मैथिलीशरण गुप्त का 'द्वापर' भी एक प्रबन्धात्मक रचना है जिसमें भ्रमरगीत प्रसंग को उठाया गया है। इसमें गोपी संवादको बौद्धिक एवं युगानुरूप आकृति प्रदान करने की चेष्टा की गई है। कुब्जा को भी इसमें दया का पात्र माना गया है। द्वापर के उद्धव, ज्ञान के गर्व से प्रेरित नहीं, वरन् वह सहृदय, कोमल और संवेदनशील रूप में चित्रित किए गए हैं। उद्धव ने गोपियों की मानसिकता को आत्मसात किया है

'अहो प्रीति की मूर्ति जगत में, जीवन धन्य तुम्हारा।
कर न सका अनुसरण कठिनतम, कोई अन्य तुम्हारा।
चपल इन्द्रियों को भी तुमने, तन्मय बना दिया।
पावन हुआ पाप जिसमें पंथ जना दिया।'

द्वापर की गोपियाँ उद्धव को इस प्रकार उपालम्भ देती हैं –

'अरे विहग लौट आ तेरा नीड़ रहा इस वन में,
छोड़ उच्चपद की उड़ान वह, क्या थे शून्य गगन में ?'

डॉ. रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' ने भी 'उद्धव शतक' लिखा है, जिसमें भ्रमरगीत प्रसंग को ग्रहण किया गया है। 'उद्धव शतक' में गोपियाँ सरल, भोली एवं चतुर हैं।

पं द्वारिका प्रसाद मिश्र ने 'कृष्णायन' लाला हरदेव ने 'उद्धव–पच्चीसी' और जगन्नाथ सहाय ने 'कृष्णसागर' में भ्रमरगीत प्रसंग को उठाया है। अत: भँवरगीत परम्परा भागवतकाल से लेकर आज तक किसी न किसी रूप में प्रवाहित होती रही है।

पं. सत्यनारायण 'कविरत्न' का 'भ्रमरदूत' – आधुनिक काल में सर्वप्रथम भारतेन्द्र हरिशचन्द्र तथा बद्रीनारायण प्रेमधन ने फुटकर पदों में भ्रमरगीत प्रसंग लिखा पं. सत्यनारायण 'कविरत्न' ने भ्रमरगीत परम्परा में 'भ्रमरदूत' नाम से एक प्रौढ़ रचना प्रदान की। इस रचना में मौलिकता एवं नवीनता का समावेश हुआ है। इसमें भ्रमरगीत को दूत बनाकर माता यशोदा द्वारिकापुरी में बसे श्रीकृष्ण को अपना संदेश भेजती है। इसमें उद्धव है न गोपियाँ। केवल यशोदा ही इस काव्य में अपनी मनोव्यथा प्रकट करती हैं। इसमें भक्ति और ज्ञान को लेकर उपालम्भ नहीं दिया गया है, वरन् देश की दशा का चित्रण किया गया है जो भी उपालम्भ हैं वे सभी वात्सल्य विषयक ही हैं। यशोदा ने द्वारिका प्रवासी कृष्ण के पास भ्रमर द्वारा जो सन्देश भेजा, वह भारत की तत्कालीन दशा को प्रकट करता हुआ

देशभक्ति को व्यंजित करता है। यथा;
कौन भेजौं दूत, पूत सों विथा सुना वै।
बातन में बहराइ, जाइ ताको यहँ लावै।
त्यागी मधुपुरी सों गयो, छांडि सबन कौ साथ
सात समुन्दर पै भयो, दूरि द्वारिकानाथ।
जाइगो को वहाँ।

सत्यनारायण 'कविरत्न' के 'भ्रमरदूत' में उद्धव का ब्रज आगमन नहीं होता, परिणामत: उद्धव गोपी–संवाद के तर्क–विकर्त का समावेश इसमें नहीं हुआ है। 'भ्रमरदूत' में केवल दो ही पात्र हैं – यशोदा और भ्रमर। नन्द, गोप, गोपियाँ, राधा आदि में से किसी का समावेश इस काव्य में नहीं हुआ है। यहाँ उद्धव और गोपियों के बीच ज्ञान और भक्ति का तर्क–वितर्क उपलब्ध नहीं होता। वास्तव में 'कविरत्न का भ्रमरदूत' भारत की तत्कालीन करूण दशा का चित्र है, जिसमें भारत ब्रज है और पिछड़ी हुई भारतीय नारी यशोदा। यशोदा के भ्रमर के प्रति दिये गये उपालम्भों में स्त्री–शिक्षा, देश–प्रेम, भारतीय सांस्कृतिक गरिमा, ग्राम्य–जीवन की महत्ता और निष्कलुषता, जातीयता, परतन्त्रता, अकाल, आर्थिक शोषण आदि समस्याओं को बड़े कौशल के साथ सम्मिलित किया गया है। आलस्य, रूढ़िग्रस्तता और पारस्परिक वैमनस्य के रहते देश को स्वतंत्रता प्राप्त नहीं
हो सकती। 'कविरत्न' ने यशोदा से कहलवाया है–

वा बिनु गौ ग्वालनु को हित की बात सुझावै।
अरू स्वतन्त्रता, समता, सहभ्रातृता सिखावै।
जदपि सकल विधि ये सहत, दारून अत्याचार।
पै नहिं कछु मुख सौं कहत, कोरे बने गँवार।
कोऊ अगुआ नहीं।

भ्रमरगीत की दार्शनिक विचारधारा –

भ्रमरगीत के माध्यम से सूरदास ने हठयोग और शंकराचार्य द्वारा प्रवर्तित साधना के मार्ग का विरोध किया है तथा वल्लाभाचार्य द्वारा प्रवर्तित सगुणोपासना का मण्डन किया है। सूर ने भारतीय दर्शन के 'अनुभव' को ही भ्रमरगीत में प्रमुख स्थान दिया है।

निष्कर्ष – 'भ्रमरगीत' एक विरह विभूषित काव्यकथा है। यह भक्ति, श्रृंगार और करूण रसों – रम्य आगार, निर्गुण–सगुण तत्वों तथा ज्ञान भक्ति का भण्डार भी कहा जा सकता है। भक्त कवियों ने इसमें 'देश दुर्लभ' तत्व ढूँढ़ें हैं तो रीतिकालीन कवियों ने इसमें श्रृंगार का नवोन्मेष ढूँढ़ा है। सूरदास का भ्रमरगीत– वियोग श्रृंगार वर्णन में हिन्दी साहित्य की अमूल्य धरोहर है; इसमें विरह की तीव्र अनुभूति के साथ–साथ उपालम्भ और व्यंग्य के सम्मिश्रण ने कविता को नए उत्कर्ष पर पहुँचा दिया है।

भ्रमरगीत–पदावली में तो विरह सागर उमड़ सा उठा है तथा उसमें कल्पना एवं भावुकता का सहज सामंजस्य दृष्टिगोचर होता है। निर्गुण भक्ति का खण्डन और सगुणोपासना का मण्डन भ्रमरगीत का मुख्य प्रतिपाद्य है। इसी कथा के आधार पर सूरदासजी ने हिन्दी काव्य में सर्वप्रथम 'भ्रमरगीत' की रचना की।

सूर के बाद नन्ददास, गोस्वामी तुलसीदास, पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय यहरिऔध पं. जगन्नाथ 'रत्नाकर' आदि कवियों ने इसी प्रसंग पर काव्य रचना की। पं. सत्यनारायण 'कविरत्न' ने 'भ्रमरदूत' की रचना द्वारा भ्रमरगीत परम्परा में नूतनता का समावेश करके उसकी मार्मिकता को नये आयाम प्रदान किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. केशरीनंदन मिश्र (पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग) खरगोन एवं डॉ. कल्याण शर्मा।
2. हिन्दी साहित्य के.बी. जैन एवं अनिता दुबे।
3. एन.डी. स्टडी मैटीरियल हिन्दी।
4. आचार्य दुर्गाशंकर मिश्र।
5. डा. मंजुला सक्सेना।

****

संतोष खरे - व्यक्तित्व एवं व्यंग्य

डॉ. रमेश टण्डन *

शोध सारांश-पन्द्रह दिन की अल्पावस्था में अनाथ होने के बाद कभी मामा के घर, तो कभी मौसी के घर दर - दर की ठोकरें खाई, कभी मार तो कभी डांट खाई। रिश्तेदारों के यहाँ रहते हुए आपकी माँ उनके घर के किसी कोने में बैठकर रोया करती थी। पारिवारिक एवं आर्थिक अभावों में जिंदगी गुजर करते हुए आपने एक ऐसा मुकाम बनाया कि 30 साल बाद, बड़े संस्थानों के प्रबंधक जो पहले आपको घास तक नहीं डालते थे, आपसे समय लेकर आपके आफिस में बैठकर आपकी प्रतीक्षा करते दिखाई पड़ते हैं। आपने अपने व्यंग्य निबंधों में प्रमुखत: मानवीय दुर्बलताओं, स्वेच्छाचारिता एवं साहित्यिक कमजोरियों को रेखांकित किया है। सरकारी तंत्र के ढपोरषंख, चमचागिरी व समाज में व्याप्त आडम्बर आदि पर भी व्यंग्यार्थ प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तावना -आपका जन्म 05 जून 1944 को छतरपुर (मध्यप्रदेश) में हुआ। आप अपने माता - पिता की इकलौती संतान हैं। जब आप पन्द्रह दिन के थे, तभी आपके पिता का देहान्त हो गया। आपका बचपन, भरण-पोषण, दीक्षा मामा के घर हुआ। आपकी प्राथमिक शिक्षा मामा जी के पुत्र के पास झांसी (उत्तरप्रदेश) में, हाई स्कूल की शिक्षा मामा जी के घर पर हमीरपुर एवं बांदा में हुई। आपने ग्यारहवीं एवं बारहवीं की परीक्षा प्राणीशास्त्र विषय लेकर मौसी के पुत्र के यहाँ उरई जिला - जालोन (उत्तरप्रदेश) और झांसी में रहकर उत्तीर्ण की। आप अधिकांश पुस्तके मित्रों से उधार मांगकर पढ़े थे। आपके चाचा ने आपकी नियुक्ति एडहॉक, निम्न श्रेणी लिपिक के पद पर कलेक्ट्रेट सीधी में करवा दी। नौकरी के साथ - साथ आपने सीधी से बी. ए. और एल. एल. बी. किया। आप अंग्रेजी विषय लेकर एम. ए. किये।

जब आपने बी. ए. की परीक्षा दी, तो आपने विभागीय अनुमति नहीं ली थी। सीधी कलेक्टर के पास शिकायत गयी तो आपने जवाब में कहा कि मैं यह नौकरी केवल पढ़ाई करने के लिए कर रहा हूँ। बाद में आपको अनुमति दे दी गई। जब आप निम्न श्रेणी लिपिक (एडहॉक) थे, तो शहडोल में स्थानांतरण हेतु आवेदन दिया था। आपका स्थानांतरण तो हो गया, पर इस बीच आपकी पदोन्नति उच्च श्रेणी लिपिक (एडहॉक) के पद पर हुई। जब कार्यमुक्त होने में समस्या आई, तो आपने सीधी कलेक्टर से, पदावनत करके पुन: निम्न श्रेणी लिपिक बनाये जाने का अनुरोध किया। सीधी कलेक्टर ने तुरंत स्टेनो बुलवाकर आदेश जारी किया। आप अंग्रेजी में एम. ए. करने के लिए ही शहडोल जाना चाहते थे, जो सीधी में संभव नहीं था।

एम. ए. होने के बाद आपने नौकरी छोड़ दी और सतना में वकालत प्रारम्भ की। वकालत के प्रारम्भ के दस वर्ष बहुत ही कठिनाई में गुजरा। पक्षकार या वरिष्ठ अधिवक्ता की ओर से दिन भर में 5 या 10 रूपये मिलते और आप खुश हो जाते। परन्तु इतनी छोटी रकम में आपके परिवार का भरण- पोषण संभव नहीं था। अर्थाभाव की स्थिति में पत्नी की ओर आशा भरी निगाहों से निहारते, पत्नी भी हमेशा सहयोग के लिए तत्पर रहती थी। जैसे ही उसे आकाशवाणी में लोक - गायन का चेक प्राप्त होता, नगदी कर लेती। इस प्रकार अभाव में जिंदगी चलती रही।

जब आप मामा - मौसी के घर परिवार में रहकर पढ़ाई कर रहे थे, तब के दिन आपके कष्ट के अतिक्रमण के दिन थे। कभी - कभी डांट-डपट के साथ पिटाई तक की नौबत आ जाती थी। ऐसे क्षणों में आपकी माँ घर के किसी कोने में बैठकर आँसू बहाने के सिवाय दूसरा काम नहीं करती थी।

प्रारम्भ के दो - तीन वर्ष आपने ट्यूशन करके काम चलाये, उसके बाद स्थानीय प्राइवेट विधि महाविद्यालय में तीन सौ रूपये प्रति महीने पर शिक्षक के रूप में कार्य किया। फिर वहीं प्राचार्य बने और 1000 रूपये मासिक वेतन के हकदार हुए। एक दिन उस पद को भी छोड़ दिया।

30 साल बाद, बड़े संस्थानों के प्रबंधक जो पहले आपको घास तक नहीं डालते थे, आपसे समय लेकर आपके आफिस में बैठकर आपकी प्रतीक्षा करते दिखाई पड़ते हैं।

आप 1976-77 में प्रगतिशील लेखक संघ सतना के अध्यक्ष बने, 2001 से पुन: उसी पद पर हैं एवं पाठक मंच सतना के संयोजक हैं। पता - 7, राजेन्द्र नगर, सतना।

व्यंग्य - आपकी रचनाएँ इस प्रकार हैं -

1. धूप का चश्मा,
2. सरकारी दफ्तर में कबीर, 1986
3. चमचे का विलाप, 1986
4. गाँव और शहर की लड़कियाँ, 1992
5. चेहरा और दर्पण, 2000

आपके व्यंग्य निबंध का प्रमुख विषय मानव प्रवृत्ति रहा है। मनुष्य हमेशा जवान बना रहना चाहता है। विभिन्न प्रकार के मेक-अप, प्लास्टिक सर्जरी के माध्यम से और काफी खर्च करके इंसान अपनी उम्र को छिपाने का भरसक प्रयास करता है। मानव की इसी प्रवृत्ति को लेखक ने इन शब्दों में उजागर किया है-

'काश ! मनुष्य का चेहरा पशु - पक्षी की तरह समान बना रहता तो उसे कम से कम अपना बुढ़ापा न अखरता।' एवं 'विडम्बना यह है कि आदमी जिन बालों को कटवाने, साबुन, शैम्पू - तेल लगाने आदि पर भारी राशि का अपव्यय करता है वही बाल सफेद होकर आदमी की उम्र की चुगली करने लगते हैं।'(1) मनुष्य की प्रमुख दूसरी प्रवृत्ति यह रही है कि वह जैसा दिखता है, वैसा रहता नहीं है। 'मुँह में राम-राम बगल में छूरी' को चरितार्थ करते मानव की दोगली प्रवृत्ति पर आपने चोट की है। छल एवं प्रपंच से भरी दूनिया में आपका यह उद्धरण सटीक बैठता है-

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) महात्मा गांधी शासकीय महाविद्यालय, खरसिया, जिला - रायगढ़ (छ.ग.) भारत

'मैं तो इतना ही और कह सकता हूँ कि चेहरे के अंदर जो चेहरे छुपे रहते हैं यदि वही सामने दिखते तो दुनिया में छल और प्रप्रंच के अवसर बहुत कम हो जाते।'(2)

संवाद एवं कथोपकथन शैली के माध्यम से व्यंग्य निबंधों को आपने रोचक बनाया है। स्टेशन पर एक अफसर और साहित्य साधक के वार्तालाप का नमूना आपके निबंध में इस प्रकार दृष्टिगोचर होता है–

'सर ! ट्रेन तो आधा घंटा लेट है।'
'सर ! काफी चलेगी ?'
'नहीं।'
'सर ! आपने स्टेशन पर आकर साहित्य पर एहसान किया। आप पहले कलेक्टर हैं, जो साहित्य में दिलचस्पी ले रहे हैं।'
'नहीं, एहसान की कोई बात नहीं। वे (आने वाले) मेरे मित्र हैं, इसी से आया हूँ .... आप लोग साहित्यिक संगठन बनाइए, मैं मदद करूंगा।'
'सर, आप तो देवता हैं।'
'नहीं भाई।'(3)

साहित्य के क्षेत्र में घुसने या अपनी गहरी पैठ बनाने की प्रक्रिया पर चोट करने के लिए आपने मदारी – जमूरे संवाद शैली को अपनाया है। इस नाटकीय शैली के माध्यम से अपनी बात को पाठक तक आपने सफलतापूर्वक पहुँचाया है–

'जमूरे।'
'हाँ उस्ताद।'
'आ जाओ।'
'बता जमूरे, साहित्य में किस तरह घुसपैठ की जाती है।'
'झरोखे से, उस्ताद।'
'यह झरोखा क्या है, जमूरे।'

'हिन्दी साहित्य में रहस्यवाद, छायावाद, प्रयोगवाद, भाई – भतीजावाद से अधिक जिस वाद ने प्रभावित किया है, वह है झरोखावाद। इस बात पर अभी तक किसी समीक्षक–आलोचक का ध्यान नहीं गया।.....सिर्फ, उस्ताद का ध्यान गया है।'(4)

आपने मक्खन लगाना, पापड़ बेलना, छा जाना, कदम उठाना, भेजे में बात नहीं घूसना, कान में जूँ तक नहीं रेंगना, सन्यास ग्रहण करना आदि मुहावरों का अपने व्यंग्य निबंधों में स्थान दिया है।

निबंधों में व्यंग्य – निबंध लिखना कठिन काम है और व्यंग्य–निबंधों में आत्म – व्यंग्य निबंध लिखना और भी कठिन काम होता है। यह इसलिए कि व्यंग्य–निबंध लिखने से दूसरों से मार खाने का भय बना रहता है जो सहनीय है। पर आत्म व्यंग्य लिखने से स्वयं की कमजोरी व दुष्प्रवृत्ति के उजागर होने का खतरा बना रहता है, इससे बड़ी बदनामी हो सकती है एवं अपनों की नजर में गिरने का संशय बना रहता है। आपने यह दिलेरी दिखाई है जो निम्न पंक्तियों में स्पश्ट है –

'मुझे उत्तर न सूझता था और न सूझा। मैं बगलें झांकने लगा। उनके बगल में चूँकि उनकी धर्मपत्नी बैठी थी, इसलिए उन्हें मेरा बगलें झांकना भी खलने लगा। मैं अपराधी भाव से नाखून कुतरने लगा।'(5)

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, महावीर (संपादक) : व्यंग्य सप्तक – दो, पृ. 230 (चे–ह–रा –संतोष खरे)।
2. अग्रवाल, महावीर (संपादक) : व्यंग्य सप्तक – दो, पृ. 231 (चे–ह–रा –संतोष खरे)।
3. अग्रवाल, महावीर (संपादक) : व्यंग्य सप्तक – दो, पृ. 226–227 (मुख्य अतिथि, साहित्यकार और कलेक्टर –संतोष खरे)।
4. अग्रवाल, महावीर (संपादक) : व्यंग्य सप्तक – दो, पृ. 232 (साहित्य के झरोखे पर बैठा मदारी –संतोष खरे)।
5. चंदर, सुभाष (संपादक) : बीसवीं सदी की चर्चित व्यंग्य रचनाएँ, पृ. 311 (क्रांति का मसीहा – संतोष खरे)।

****

भारतीय नारी पुनर्जागरण और मैथिलीशरण गुप्त

डॉ. सरोज जैन *

प्रस्तावना – सृष्टि के आरंभ से ही नारी का महत्व स्वयं सिद्ध है, नारी के बिना पुरूष की कल्पना अधूरी है। पुरूष के साथ प्रकृति , ब्रह्म के साथ माया और विष्णु के साथ लक्ष्मी की अवधारणा की गई है। दुनिया के सहित्य में नारी युगानुकूल चिंतन के अनुसार हर काल में प्रासंगिक रही है। प्राचीन काल से अब तक न जाने कितने परिवर्तन आये न जाने कितनी सभ्यताएँ, संस्कृतियाँ पल्लवित पुष्पित हुई और विलीन होकर नये परिवेश में प्रकट हुईं परंतु नारी की प्रासंगिकता हर युग में तत्कालीन संस्कृति में बनी रही है। सीता, मीरा, राधा जैसी अनेक नारियाँ अखिल मानवता के लिए प्रेरणा स्रोत हैं किंतु कालांतर में समय और परिस्थितियाँ बदली। पुरुष प्रधान समाज ने नारी को सिर्फ भोग्या समझकर अपनी पुरानी अवधारणा का केवल अवमूल्यन ही नहीं किया बल्कि उसको पतनोन्मुख करने में उसकी अहं भूमिका रही। [1]

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त भारतीय पुनर्जागरण के प्रमुख कवि है। जिस प्रकार महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने बंगाल के नारी समाज को नव चेतना देकर प्रतिष्ठित किया है उसकी प्रकार राष्ट्र कवि मैथलीशरण गुप्त जी ने हिंदी भाषी भारत के अपने काव्य ग्रंथों के माध्यम से नारी जीवन की विषमताओं, समस्याओं और उनके प्रति होने वाले अन्याय से परिचित कराया है। गुप्त जी उर्मिला, यशोधरा, और विष्णु प्रिया समस्त भारतीय नारी–समाज का प्रतिनिधित्व करती है।

भारतीय समाज पुरुष प्रधान है। वही सरलता से निवृत्ति के दर्शन का आश्रय लेकर पुरूष वर्ग ने नारी की उपेक्षा की और संन्यास को श्रेष्ठ बताया। प्रवृत्ति के साथ ग्रहस्थ धर्म महत्वपूर्ण है और उसके साथ नारी का सम्मान भी। प्रो.जवाहरलाल कंचन के अनुसार 'गुप्त जी प्रवृत्ति परकगार्हस्थ महिमा के पोषक कवि हैं। नारियों के स्वत्व को जताने वाले, उनके जीवन से असंख्य भारतीय ललनाओं को उनकी मर्यादा, सामाजिक व परिवारिक स्वत्व दिलाने वाले।' [2] गुप्त जी का नारी विषय दृष्टिकोण बड़ा सम्मान जनक रहा है। उन के अनुसार – 'नारी की उपेक्षा कर हमने सभी सिद्धियां खो दी है। भारत भारती में कवि ने इसी भावना को व्यक्त किया है ' –

ऐसी उपेक्षा नारियों की
अथवा किया अपराध
उनके शीश पर हैं धर रहे
भागे न फिर हमसे भला
'यों दूर सारी सिद्धियाँ
पाती स्त्रियाँ आदर जहाँ
रहतीं वहीं सब सिद्धियाँ। [3]

हिन्दी साहित्य में नारी को पुरूषाश्रित रखा गया है। नारी को कामिनी कहना ही उसका सबसे बड़ा अपमान है। गुप्त जी ने भारत–भारती में इस ओर संकेत भी किया है। कि पुरुष समाज ने ही उन्हें अशिक्षित, अपाहिज एवं पंगु बनाकर रखा है। इसका समाधान भी उन्होंने उर्मिला, यशोधरा और विष्णुप्रिया में किया है और 'एक नहीं दो मात्रायें','नर से भारी नारी' कहकर नारी की गरिमा को प्रतिष्ठित किया है

उर्मिला साकेत महाकाव्य की प्रमुख नायिका है। रवीन्द्र नाथ टैगोर के विचारों से प्रेरित होकर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' नामक लेख से प्रभावित होकर गुप्त जी ने साकेत की रचना की और साकेत का नवम् सर्ग ही पूरा उर्मिला को समर्पित कर दिया। इसके पूर्व बाल्मीकि की रामायण या तुलसीदास द्वारा रामचरित मानस से उर्मिला की विरह वेदना की ओर किसी भी रचनाकार का ध्यान नहीं गया। उर्मिला के हदय की कसक, टीस, विरह वेदना का विशद् वर्णन गुप्त जी ने किया है। आचार्य नन्ददुलारे

वाजपेयी के अनुसार 'गुप्तजी' ने उर्मिला को 'साकेत'की मुख्य नायिका बनाया है। पूर्ववर्ती रामायणों में उर्मिला का चरित्र अत्यंत संक्षिप्त या नहीं के बराबर आया है। ऐसे नगण्य पात्र को किसी काव्य की मुख्य भूमिका में लाकर प्रतिष्ठित करना, नया और क्रांतिकारी प्रयत्न है। [4] यही नहीं गुप्त जी ने सीता जी को चित्रकूट की रमणीय प्रोंतिक भूमि में लाकर उसके हाथों में चरखा और तकली, खुरपी और कुदाल भी दी है जिससे वे स्वावलम्बिन न बन सके –

औरों के हाथों यहाँ नही पलती हूँ।
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ।
श्रमवारि बिन्दु फल स्वास्थ्य सूक्ति फलती हूँ।
अपने अंचल से व्यंजन आप झलती हूँ। [5]

नारी के प्रति इनका दृष्टिकोण बहुत आदरपूर्ण रहा है। इनके अनुसार नारी विलास का निर्जीव उपकरण मात्र न होकर पुरुष के कार्यो में समभाग लेने वाली अर्द्धांगिनी है, जिसके सहयोग के बिना सभी कार्य अधूरे हैं। [6]

'यशोधरा' का प्रकाशन 1932–33 में हुआ। यशोधरा स्वाभिमानिनी नारी है। महाराज शुद्धोधन ने यशोधरा से मगध में जाकर बुद्ध देव के दर्शन करने के लिए कहा। सखी भी यशोधरा को बुद्धदेव के दर्शन करने को कहती है पर यशोधरा नहीं जाती वह अपने स्वाभिमान का बलिदान नहीं करना चाहती वह अपने मन की दृढता को परीक्षा की घड़ी में भी विचलित नहीं होने देती। इस दुख में स्वाभिमान भी निहित है कि बुद्ध उसे छोड़ सकते है तो वह उन को रोकना नहीं चाहती, पीड़ा उसे चाहे जितनी भी हो। यशोधरा का यह स्वाभिमान अंत तक बना रहता है। बुद्ध कपिलवस्तु आते है। पूरी जनता उनके दर्शन को उमड़ पड़ती है पर जो उनके लिए सबसे अधिक व्याकुल है

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

वही उनके पास नहीं जाती। बुद्ध को छिपकर जाने की क्षतिपूर्ति स्वरूप यशोधरा के पास आना पड़ता है। तब बुद्ध भी अपना संन्यासत्व भूल गोपा के द्वार पर पहुँचकर कहते है – माननि मान तजों, लो रही तुम्हारी बान। उन्होंने स्वीकार किया कि 'आनंद संसार के लिए मै बुद्ध हूँ' किंतु गोपा के लिए अभी भी सिद्धार्थ ही हूँ। स्वाभामिनी यशोधरा बुद्ध को भिक्षा में अपने पुत्र का दान करती है –

तुम भिक्षुक बनकर आए थे, गोपा 'या देती स्वामी।
था अनुरूप एक राहुल ही रहे सदा यह अनुगामी।।

यशोधरा में गुप्त जी नारी की दयनीय स्थिति का संकेत किया है। –

अबला जीवन हाय, तुम्हारी यही कहानी।
आंचल में है दूध, और आँखों में पानी।।

लेकिन विष्णुप्रिया की स्थिति तो और भी दयनीय है। उर्मिला और यशोधरा दोनों ही पुत्रवती रही हैं। दोनों को आश्रय को प्राप्त है – एक को पति का और दूसरी को पुत्र का। किंतु विष्णुप्रिया को तो मातृत्व का सुख भी नहीं मिला। उसकी यह करूणाममी अकिंचनता उसे काव्येतर नारी बनाने में सफल हुई है। विष्णुप्रिया की रचना यशोधरा के पच्चीस वर्ष बाद हुई है। तब तक सामाजिक, राजनीतिक स्थितियाँ बदल चुकी थी। समानता का भाव मुखरित हो गया था। गुप्त जी भारतीय संसेंति के समन्वयवादी रूप से अनुप्राणित हैं और संकुचिता व संकीर्णताओं की दीवारो से बहुत दूर। उनके काबा और कर्बला में इस्लाम 'यशोधरा, कुणा और अनघ' में बौद्ध गुरुकुल में सिख और विश्व वेदना में ईसाई संस्कृति की स्पष्ट झलक मिलती है। साकेत में उर्मिला और लक्ष्मण आत्मत्याग के प्रतीक हैं तो यशोधरा में भारतीय नारी का त्यागमय उज्ज्वल आदर्श रूप प्रस्तुत हुआ है। विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार – 'गुप्तजी ने नारी–पात्रों की कल्पना नहीं की है। उन्होंने प्राचीन इति वृत्तों की नारी पात्रों का नवीनकरण किया है। प्राचीन नारी पात्रों की नई व्याख्या की है, उनमे नया भाव बोध भरा है। इनमें उर्मिला प्रमुख है।'[7]

गुप्त जी ने उसके विरहिणी जीवन को एक अविस्मरणीय पात्र बना दिया। उसके विरह ताप में कर्तव्य निष्ठा और मिलने की आतुरता दोनों विद्यमान है। उसे घोर विरह संताप में भी परदु:खकातर बनाकर रीतिकालीन नारियों से अलग कर नई भारतीय नारी का रूप दिया। उर्मिला सूरदास की गोपियों से भी अलग है। सूरदास की गोपियाँ अपने विरह की स्थिति में प्रेंति के हरे–भरे रहने को धिक्कारती है –

मधुवन तुम कत रहत हरे
विरह वियोग श्याम सुंदर के ठारे 'यों न जरे' ?

पर उर्मिला तो प्रेंति के हरे भरे बने रहने की कामना करती है

रह चिर दिन तू हरी–भरी
बढ़ सुख से बढ़ सृष्टि सुंदरी।
सुख प्रियतम का मिले मुझे
फल जन–जीवन–दान तुझे।

उर्मिला को अपने दुख के साथ प्रोषित पतिकाओं का भी ध्यान है। वह उन्हें 'सम दुखिनी' कहती है –

प्रोषित पत्रिकाएँ हो जितनी भी सखि उन्हें निमंत्रण दे आ।
सम दुखिनी मिले तो दुख बटे, जा प्रणय पुरस्सर ले आ।

गुप्त जी ने एक ओर ज्ञात पर नगण्य नारी पात्र उर्मिला के चरित्र के रूप में भारतीय वियोगिनी नारी की दशा का वर्णन के किया है। वही सीता के चरित्र को आधुनिक नारी के रूप में वर्णित किया है। परिस्थितियों की विषमता और ऊँचनीच जो सीता के जीवन में है वह विश्व साहित्य के शायद ही किसी नारी पात्र में हो। साकेत की सीता का चरित्र बहुत दूर तक आधुनिक नारी की स्थिति को सामने लाता है। सीता को राम की जीवन संगिनी बनने का अवसर मिला। वे घर की चार दीवारी तोड़कर खुले जीवन की चुनौतियों से जूझी थी। तभी तो वे आत्म विश्वास से भरकर कह देती है–

'औरों के हाथों यहाँ के नही पलती हूँ।'

अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ। यह भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान नारी मुक्ति के स्वर की अनुगूंज है।

'साकेत' के अलावा गुप्तजी का दूसरा प्रसिद्ध नायिका प्रधान काव्य 'यशोधरा' के पीछे भी वही भावना है। यशोधारा का नारी रूप अपेक्षोंत अधिक पूर्ण है क्योंकि वह केवल विरहिणी नहीं माँ भी है। बस दु:ख उसे इस बात का नहीं कि प्रिय उसे छोड़कर चले गए बल्कि ज्यादा दुख इस बात का कि वह बताकर नहीं गए। सिद्धार्थ ने उसे 'या अपने पथ की बाधा समझा–

सखि वे मुझसे कह कर जाते।
कह तो क्या मुझको वे अपनी पथ बाधा ही पाते ?
मुझको बहुत उन्होंने माना, फिर भी क्या पूरा पहचाना ?
मैंने मुख्य उसी को माना जो वे मन में लाते।
सखि में मुझसे कह कर जाते।

गंगाशरण सिंह के अनुसार – 'जो उपेक्षित महिलाएँ थीं उनके प्रति दद्दा ने सहज भाव से आकर्षित होकर लिखा। उसमें किसी तरह का बनावटीपन नहीं था। नारी के मन की करुणा और पीड़ा को समझने और व्यक्त करने की उनकी क्षमता अद्भुत थी। जयद्रथ वध एक तरह का पौरुष और करुणा का ग्रंथ है जिसमें अभिमन्यु के जाते समय उत्तरा कहती है।'[8]

कुछ राजपाट न चाहिए न पाऊँ क्यों न त्रास हीं।
उत्तरा के धन रहो तुम उत्तरा के पास ही।

गुप्त जी ने भारतीय समाज में युगों से दारूण पीड़ा सह रही नारी को उपेक्षा के गर्त से उबारा है। उन्होंने नारी की पीड़ा के साथ परिवार में उसके केन्द्रीय महत्व को भी पहचाना है। भारतीय स्वाधीनता आंदोलन की वैचारिक प्रवृत्तियो के अनुरूप उन्होंने नारी आदर्श का निर्माण भी किया। भारतीय नारी का य आदर्श रूप सामंती आदर्शो से भिन्न आधुनिक नारी भावना और आधुनिक सौंदर्य बोध के अनुरूप है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. उमा शुक्ल, सं. आधुनिक काव्य में नारी स्वरूप।
2. प्रो. जवाहर लाल कंचन दैनिक जागरण झांसी दिन 03.08.86 पृ0 4
3. मैथिलीशरण गुप्त, भारत–भारती।
4. आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी, आधुनिक साहित्य पृ.99
5. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत।
6. उमाकांत गोयल, हिन्दी साहित्य कोश भाग2 पृ.428
7. विश्वनाथ त्रिपाठी, जनसत्ता 03.08.86 पृ.04
8. गंगाशरण सिंह जनसत्ता 03.08.86 पृ.02

****

कविता का लोकतंत्र और जनकवि नागार्जुन

डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन *

शोध सारांश – नागार्जुन छायावादोत्तर काव्य के सर्वप्रमुख काव्यांदोलन प्रगतिवाद के और संपूर्ण हिन्दी कविता के महत्वपूर्ण जनकवि हैं। जनकवि की छवि उनकी राजनीतिक व्यंग्यधर्मिता और जनपक्षधरता के योग के कारण बनी है। प्रकृति, राजनीति, लोकसंसक्ति और मैदानी जीवन के बहुविध रंग उनकी कविताओं में उपलब्ध है। भाषा व्यंजना और शक्ति समर्थित संप्रेषण के अनिवार्यता से जुड़ी है। नागार्जुन की काव्य चेतना वास्तविकता जीवनबोध के संकल्प से जुड़कर विकसित हुई है। वास्तव में वह कविता के लोकतंत्र में जनता के सांसद हैं जिसने निडरता से जनता के सवाल को बार–बार कविता के लोकतंत्र में उठाया है और जनता ने भी उन्हें स्वीकार कर सर आँखों पर बिठाया है।

शब्द कुंजी – लोक, सरोकार, जनपदीयता, जनपक्षधरता, श्रमजीवी, वर्गसंघर्ष, वास्तविकता।

प्रस्तावना – नागार्जुन की संपूर्ण रचनाधर्मिता समतली संघर्ष की पगडंडियों पर चहलकदमी करती हुई निरंतर यात्री बनी रहती है। इनकी काव्य चेतना का स्त्रोत और थाती है जनपदीयता। लोक सरोकार इनके काव्य की शक्ति और पूंजी है जो जीवन के जितना पास है वह नागार्जुन की काव्य–चेतना के पास है। वह मुरैठा बाँधे ठिगना चना, सिंदूर तिलकित भाल वाली पत्नी–प्रिया, दंतुरित मुस्कान वाला शिशु, दुद्धी धान की मंजरियाँ, कटहल, मादा सूअर ये सभी आम जिंदगी के सहज चित्र हैं जिनसे नागार्जुन काव्य साधना गुजरती है। कविता 'बहुत दिनों के बाद' में गंध–रूप–रस–शब्द–स्पर्श के आदिम बोध को कितनी सहजता से बाबा कविता में उतार ले जाते हैं –

'अब की मैंने जी–भर देखी
पकी–सुनहरी फसलों की मुसकान,
अब की मैं जी–भर सुन पाया
धान कूटती किशोरियों की कोकिल कंठी तान
बहुत दिनों के बाद'–

ये जनपद और कृषि संस्कृति के सहज चित्र है जो विशेषकर आज के विषम समय में संवाद साझा करते हुए नजर आते हैं। जीने की जिद, सच कहने का माद्दा, कभी मलँग–सा फटकारते हुए, कभी किसान–सा पौधे को पानी देते हुए। कुल मिलाकर नागार्जुन की कविता विकसती है, उकसाती है, लताड़ती है, बतियाती है। इन सब की रचनात्मक परिणति का एक सुंदर दृश्य दृष्टव्य है –

रिक्शेवाली की पीठ पर फटी बनियाइन,
पसीने के अधिकांश गुण–धर्म को कर रही है–प्रमाणित.....
इस नरवाहन की प्राण शक्ति और कितना पकेगी?
और कितना? क्षार–अम्ल दाहक विगलनकारी।

ये अचूक नजर कविता में किसी भी ईमानदारी के दावे से ज्यादा ईमानदार है। नागार्जुन की काव्य चेतना में लोक की आत्मा में जन का संवाद है। जनता के सवाल उठाने में नागार्जुन किसी जनप्रतिनिधि से ज्यादा सतर्क और जिम्मेदार है। नागार्जुन मूलत: जनपक्षधरता के कवि हैं। इनकी कविताओं में जीवन के सवाल खूशबू की तरह नमूदार होते हैं। श्रमजीवी वर्ग के संघर्ष को अगर कोई अनुष्ठान बनाता है तो वह निश्चित रूप से बाबा हैं। नागार्जुन उस समाज के सच को अपनी काव्य–चेतना के माध्यम से संप्रेषणीय बनाते हैं। जनकवि का यह रूप जनप्रतिनिधि के संसदीय रूप से ज्यादा खरा और ईमानदार है। 'नागार्जुन स्वाधीन भारत के प्रतिनिधि जनकवि हैं। तरल आवेगोंवाला, अति भावुक, हृदयधर्मी जनकवि।'[1] इसकी स्वीकारोक्ति का यह बिंदास तेवर देखें –

'जनता मुझसे पूछ रही है, क्या बतलाऊँ
जनकवि हूँ मैं। साफ कहूँगा क्यों हकलाऊँ'

डॉ0 रामविलास शर्मा की यह टिप्पणी 'जहाँ मौत नहीं है, बुढ़ापा नहीं है, जनता के असंतोष और राज्यसभाई जीवन का संतुलन नहीं है वह कविता है नागार्जुन की। ढाई पसली के घुमन्तु जीव, दमे के मरीज, गृहस्थी का भार–फिर भी क्या ताकत है नागार्जुन की कविताओं में।'

हम नागार्जुन की काव्य चेतना में निरंतर धंसी लोक जीवन और जन प्रश्नों की तासीर को महसूस कर सकते हैं। मजदूरों, किसानों की भाषा में लिखने वाला बाबा की यह स्वीकारोक्ति कि –

'जी हाँ, लिख रहा हूँ
बहुत कुछ! बहोत बहोत'
मगर आप उसे पढ़ नहीं पाओगे
यहाँ बिल्कुल वैसे जैसे कि लोग बोलते हैं –

तो स्वाभाविक रूप से बाबा की काव्यशक्ति का पता चलता है। डॉ0 नामवर सिंह कहते हैं 'बात करने के हजार ढंग हैं। कभी तो वह सीधा–साधा वक्तव्य देते हैं–प्रतिबद्ध हूँ। आबद्ध हूँ। कभी खुद से बातचीत–नहीं कर ली पार। उसके बाद नाव को लेता, कभी दूसरे को संबोधन कालिदास सच–सच बतलाना।'

'जनकवि के रूप में नागार्जुन की सबसे बड़ी उपलब्धि है, कविता के कलात्मक सौंदर्य की बलि चढ़ाए बिना कविता को सर्वजन सुलभ बना दिया।'[2]

यह टिप्पणी बाबा और उनके शिल्पन के संदर्भ में एकदम सटीक है। गंवई प्रकृति और भदेसपन पर अम्लान लगाव बाबा की काव्य–चेतना को कोमल कर देता है। गाँव घर की याद प्रवासी की थाती है पत्नी, पुत्र का सहज

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) स्नातकोत्तर, राँची कॉलेज, मोहराबादी, राँची (झारखण्ड) भारत

चित्रण निश्चित रूप से गृहस्थ जीवन की स्वस्थ और अंकुठ प्रस्तुति की अप्रतिम और एकलौता उदाहरण बन जाता है। प्रकृति के सतरंगी तस्वीर को व्यक्त करते हुए, नागार्जुन जब बादल को घिरते देखा है जैसी कविताएँ लिखते हैं तब भी वास्तविकता की जमीन पर उनके पैर टिके रहते हैं। परिणाम यह होता है कि कालिदास के मेघ, नागार्जुन के बादल के सामने कपूर की तरह उड़ जाते हैं।

अकाल और उसके बाद की कविता पर तो रेवती रमण इतने मुग्ध हैं कि इसी एकमात्र कविता को वो पर्याप्त बताते हैं बाबा की दीर्घजीविता और कालजयस्विता के लिए।

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास से चमक उठी घर भर की आँखों कई दिनों के बाद कविता क्या मानो जीवन संग्राम के संघर्ष कर रहे मनुष्य की कथा की करूण पर यशस्वी रूप साकार हो उठा हो। नामवर सिंह ने ठीक ही लिखा है –

'नागार्जुन को काव्य–संसार का एक बहुत बड़ा भाग अनूठे प्रकृति–चित्रों से सजा है, जिनसे कवि की गहरी ऐंद्रियता और सूक्ष्म सौंदर्य–दृष्टि का एहसास होता है। वर्षा और बादलों पर इतनी अधिक कविताएँ निराला के बाद नागार्जुन ने ही लिखी है।'[3]

राजनीति पर कविताएँ लिखते समय वे नारों और कविताओं की बुनियादी फर्क को समझते है।। बाँकी व्यंग्य और निर्भीकता से उनकी राजनीतिक कविताएँ अपनी पठनीयता में मारक और प्रभाव में संभावनाधर्मी है

'बरसाकर बेबस बच्चों पर मिनट–मिनट में पांच तमाचे
इसी तरह दु:खरन मास्टर गढ़ता है आदम के साँचे'

शिक्षा व्यवस्था पर प्रहार साथ ही पैदा हो रही विसंगति का चित्र बाबा अद्भुत तरीके से साधते हैं।

निष्कर्ष – संपूर्णता में देखें तो नागार्जुन की काव्य चेतना भारतीय जनमानस के समस्त सुख–दुख, स्वप्न–जागरण, संघर्ष–यातना की सामूहिक तैयारी से निर्मित होती है। कबीर–निराला की परंपरा में आनेवाली नागार्जुन निश्चित रूप से संप्रेषणीयता का अकुंठ लोकस्वर तैयार करनेवाले आधुनिक काल की सर्वश्रेष्ठ कवि हैं।

सच कहें तो वास्तविकता का आग्रह और यथार्थ का परिपक्व बोध नागार्जुन की काव्य–चेतना में आस्था, सरोकारों से संबद्ध पक्षधरता, सूक्ष्म पर्यवेक्षण, व्यंग्य, राजनीतिक व्यावहारिकता में सभी विशिष्टताएँ नागाजुन की काव्य–चेतना को निश्चित रूप से प्रभावित, प्रेरित और परिभाषित करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कविता की जमीन और जमीन की कविता – संपादक आशीष त्रिपाठी, पृ0–168, राजकमल प्रकाशन, 2010
2. कविता की जमीन और जमीन की कविता – संपादक आशीष त्रिपाठी, पृ0–173, राजकमल प्रकाशन, 2010
3. नागार्जुन – प्रतिनिधि कविताएँ, भूमिका, राजकमल प्रकाशन, 1982
4. वही पृ0–07

****

लोकतंत्र और संस्कृति

डॉ. प्रेमलता तिवारी *

प्रस्तावना – 'लोकतंत्र लोगों के मेल का ऐसा तंत्र है जिसमें इतिहास और भविष्य भी हैं आज है तो कल भी हैं यह तंत्र संस्कृति के बिना पूर्ण हो ही नहीं सकता। स्वाधीनता न जाने कितने बलिदानो का स्वर्णमयी उपहार हैं,जो वर्तमान में जाति धर्म भाषा प्रांतियता संस्कृति की विचारधारा से परे एक देश एक आवाज के रूप में जानी जाती है। आधुनिकता की आँधी में बदलती अर्थव्यवस्था ने संस्कृति को नये रूप में स्वीकार करने के लिये मजबूर किया राजनैतिक परिवर्तन की लहर ने संस्कृति को मीडिया के पंखो पर बिठाकर आकाश की ऊँचाईयों तक पहुँचाया हैं यही तो नया लोकतंत्र हैं और विश्व की एक अनुपम महान संस्कृति उसकी पहचान हैं। अज्ञेय –

'स्वतंत्रता मानव का नहीं मानव आत्मा का कुसुम हैं।'

अर्थात लोकतांत्रिकता प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से संस्कृति की पहचान हैं। परिवर्तन संसार की धूरी हैं जैसे–जैसे समय बदलता हैं लोकतंत्र का हर पृष्ठ इतिहास बन जाता है सर्व शक्तिमान समय इस इतिहास का एक मात्र गवाह हैं अर्थात विचार,परंपरा,विश्वास और अपनापन,अत्मियता की सामयिकता लोकतंत्र की आत्मा हैं। असंगति और विसमता से परे लोकतांत्रिक संस्कृति ने स्वतंत्रता के बाद। 'क्या खोया क्या पाया' से परे परिवर्तन को अपनाकर नये रूप में युवा पीढ़ी के साथ चलने को तत्पर हैं। 1947 की मध्यरेखा के पूर्व और पश्चात में लोकतांत्रिक संस्कृति दो पीढ़ी में बंट चुकी है। सांस्कृतिक मानवधारा और जन जागरण की उदात्त चेतना प्रथम पीढ़ी के उल्लास का कारण थी तो दूसरी पीढ़ी ने स्वतंत्रता के बाद सांस्कृतिक बिखराव को न केवल देखा बल्कि उसके दूष्परिणाम भी झेले। संस्कृति के विभाजन के बिंदु पर खड़ी आज की पीढ़ी संस्कृति की युगानुरूप अभिव्यक्ति ने अपने आप को असहाय पा रही हैं। आजादी के बाद 'देश ने हमारे लिये कुछ नहीं किया' की भावना में पलती पीढ़ी कभी यह विचार नहीं करती की आखिर हमने देश को क्या दिया। सांस्कृतिक पर्यावरण में स्वतंत्रता के पूर्व शौर्य, वीरता, देशप्रेम, बलिदान, देशभक्ति से परिपूर्ण अमीरी गरीबी की पहचान से परे नवयुग के सृजन का आह्वान करने वाले भारतेन्दु,महात्मा गॉधी,सरोजनी नायडू तिलक,आजाद, बोस न जाने ऐसे कितने नायक थे जिन्होंने विशुद्ध सांस्कृतिक क्रान्ति को लोकतांत्रिक क्रान्ति के साथ–साथ आगे बढ़ाया समग्र क्रान्ति आन्दोलन में सांस्कृतिक संवेदनाओ की भूमिकाओ को भूलाया नहीं जा सकता। भारतीय संस्कृति की अदभूत मजबूत बुनियाद आज भी लोकतंत्र को थामे हैं पर अस्तित्वहीन विचारधारा कहीं न कहीं इस बुनियाद में सेंध लगा रही हैं। हमे नहीं भुलना चाहिये कि परंपरागत संस्कृति से अलग होकर लोकतंत्र जीवन्त नहीं रह सकता। भारतीय संस्कृति की सजीव अभिव्यक्ति गॉवो की पहचान हैं। धार्मिक विश्वास,अर्थव्यवस्था, सामाजिक व्यवहार,एवं सांस्कृतिक पहचान बनाये रखने वाले ग्राम जीवन के पहरेदारो के बिना देश की लोकतांत्रिक संस्कृति की रक्षा भी नहीं की जा सकेगी। भारत के वर्तमान में 235 लाख पंचायते संस्कृति को आर्थिक सामाजिक गतिविधियो से जोड़ने में सफल हुई हैं पर सामाजिक प्रशासन का महत्वपूर्ण लय सुनियोजित ढंग से सांस्कृतिक सुधार करते हुये सामाजिक परिवर्तन लाने का सपना अभी अधूरा हैं, बिखरा–बिखरा हैं क्योंकि आदि ही असमानता का जातिगत भेदभाव,महिला,उत्पीड़न जैविक आपदाओ ने लोकतंत्र को दहला दिया हैं। लोकतंत्र का व्यापक स्वरूप शासन तंत्र नहीं हैं बल्कि वह स्वयं एक संगठन हैं। सामाजिक आदर्श के रूप में लोकतंत्र वह समाज हैं जिसमें कोई विशेषाधिकार युक्त वर्ग नहीं होता और न जाति,धर्म,वर्ग,वंश,धर्म,लिंग आदि के आधार पर व्यक्ति के बीच भेदभाव किया जाता हैं। वास्तव में इस तरह का लोकतंत्रिय समाज ही संस्कृति का आधार होता हैं। आर्थिक लोकतंत्र के साथ साथ नैतिक आदर्श,सहिष्णुता,आस्था,आदर,गरिमा का सिद्धान्त ही लोकतंत्र का सार हैं,यही संस्कृति की पहचान हैं तो स्पष्ट हैं कि दोनों में अनन्योआश्रित संबंध हैं। वे एक दुसरे के पूरक हैं तथा उनकी अपनी अन्तरंगता ही उनके संबंधो का प्रतिक हैं पर आज का युवा नागरिक लोकतंत्र को मात्र राजनैतिक संदर्भ से ही देखता है जबकि वह धर्म,समाज और अर्थ के साथ साथ विशेषकर संस्कृति से जुड़ा हैं। परिस्थितियो का ही प्रभाव हैं कि लोकतंत्र धीरे–धीरे संस्कृति से कटता जा रहा हैं। परिवर्तन के साथ साथ सांस्कृतिक कारण भी उसे प्रभावित करता हैं परंतु संस्कृति के कटने का प्रमुख कारण बाजार की स्पर्धा हैं जो मानव को मानव का दुश्मन बनाती हैं जिसका प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष प्रभाव संस्कृति पर होता हैं। हम सब जानते हैं कि संस्कृति जनता को व्यक्ति और समाज दोनों रूप में प्रोत्साहन और प्ररणा देती हैं इसलिये 'मैं' को भुलकर लोकतंत्र को 'हम' के रूप में पहचानने की आवश्यकता हैं।

समाज का मूल्यतंत्र लोकतंत्र से जोड़ना होगा। आंतरिक संगठन,भावनात्मक एकता और सांस्कृतिक विचारधारा का प्रचार प्रसार ही लोकतंत्र की रक्षा के लिये अनिवार्य होगा जिसमें युवा पीढ़ी अनुभव करे की समाज की एकता ही स्वतंत्रता का आधार है। लोकतंत्र की पहचान है संस्कृति जिसकी रक्षा करना हमारा प्रथम कर्तव्य हैं। विविधताओ में एकता वाला देश सुसंगठित ही इसलिये हैं कि इसकी संस्कृति में जान हैं,इसकी प्रबल शक्ति हैं दो सम्पूर्ण विविध धर्म,आस्था,रूपरंग,खानपान और आचार विचार को एक माला में गुथती हैं सुनियोजित शिक्षा प्रणाली ही सर्वप्रथम आवश्यक हैं जो संस्कृति और लोकतंत्र को परस्पर एक रूप कर पायेगी। समाज के दायित्वो का बोध संस्कृति के समझने के बाद ही होता हैं। नैतिकता, सत्यता, नि:स्वार्थता, भलाई जैसे गुण ग्रहण करने के बाद ही मानव व्यवहार नियंत्रित होगा वरना हमारे समाचार पत्र खुन, बलात्कार, लुट, चौरी, भ्रष्टाचार जैसी खबरो से भरे होगे। हमें नहीं भुलना चाहिये की संस्कृति का कारा से भी अधिक प्रभावी होती हैं बशर्ते बचपन से उसकी पहचान हो जाये तभी वह लोकतंत्र को कल्याणकारी बनाने में सहयोग देगी। मीडिया,विज्ञापन,बाजार

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

स्पर्धा,व्यक्तिगत स्वतंत्रता के नाम पर संस्कृति के लिये दीपक का कार्य कर रहे हैं। राष्ट्रभक्ति में इच्छाशक्ति और ईमानदारी का होना आवश्यक हैं। इसलिये शक्ति का स्त्रोत अंदर से ही पैदा करना होगा परिवर्तन की उत्कृष्ट लालसा ही लोकतंत्र की विशेषताओ को पुन: स्थापित करेगी क्योंकि लोकतंत्र को परिष्कृत करना ही संस्कृति की रक्षा करना हैं। लोकतंत्रीय व्यवस्था जनता की सम्प्रभुता का परिणाम हैं मनुष्य के सभी पहलु इसका आधार हैं, इसकी व्यापक परिधि में संस्कृति के समस्त मुल्यो के आदर्श हैं। लोकतंत्र की सफलता के लिये राजनेताओ को पूर्णत: जिम्मेदार ठहराना ठीक नहीं होगा। क्योंकि समाज भी इसके लिये बराबर का जिम्मेदार हैं । प्रेम, शक्ति, दया, अहिंसा, धर्म, ईमान सहनशीलता जैसे नैतिक दायित्व लोकतंत्र को सफल बनाते हैं और इनका परिपालन संस्कृति ही कराती हैं। हमारे जीवन की सभी प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष आत्मीय व्यवस्थाये एक आदर्श नैतिक नियम कानून से बधी हैं जिसका पूर्ण सफल उपयोग महात्मा गॉधी ने जनता को एकजुट करने के लिये किया था। परंतू यह हमारा दुर्भाग्य हैं कि वर्तमान में ऐसा कोई आदर्श हमारे सामने नहीं हैं जो संस्कृति को लोकतंत्र का आधार मान गॉधीजी के सपनो को साकार करे। आतंकवाद,अन्याय, शोषण, उत्पीडन, भ्रष्टाचार, अलगाववाद वाली संस्कृति जेसी समस्याओ से आलंकित इस पीढ़ी ने अपने मन में गलत धारणाये बना ली हैं कि आधुनिकता के नाम पर होने वाले सांस्कृतिक परिवर्तन के दुष्परिणामों का लोकतंत्र से कोई संबंध नहीं हैं। यह अच्छी बात हैं कि पान की दुकान से गॉव की चौपाल से होकर दिल्ली की सड़को तक पालनहरा (कृषक) पहुॅच चुका हैं। नये विचार,नये प्रभाव,नये परिवर्तन, मोबाईल,वाट्सप,नेट की तरंगो पर बैठकर गॉव पहुॅच रही हैं। हर पंचवर्षीय चुनाव की लोकतांत्रिक क्रान्ति संस्कृति को भी प्रभावित करती हैं। यह सत्य हैं कि लोकतंत्र घर, समाज, गॉव, शहर और देश के दायरे में ही विकसित होता हैं। लोकतांत्रिक शक्ति देश के मजबूत विकास का आधार हैं और न्याय, स्नेह, एकता, द्वेष आस्था समानता जैसे लोकतंत्र के आधार न संस्कृति की ताकत हैं। लोकतांत्रिक संस्कृति की रक्षा के लिये समर्पित श्री केदारजी की 'स्वच्छता अभियान' की कविता को समझना हर युवा का दायित्व हैं। इतनी गर्द भर गई दुनिया में कि हमे खरीद लेना चाहिये एक झाडु आत्मा की गलीयो के लिये और चलाना चाहिये,दीर्घ एक स्वच्छता अभियान अपने सामने की नाली से उत्तरी ध्रुवान्त तक।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विकीपीडिया डॉट काम ।
2. रिसर्च लिंक 2012
3. वेब दुनिया डॉट काम
4. अहा जिन्दगी दिसम्बर 2013
5. प्रतियोगिता दर्पण वार्षिक 2012
6. जागरन डॉट काम ।

****

नारी मन की कथाकार - मालती जोशी

डॉ. संध्या टिकेकर *

शोध सारांश – मालती जी आधुनिक लेखिका हैं। उन्होंने नारी के प्रति नारी की, अज्ञानतावश दृढ़ होने वाली उस संकुचित वृत्ति को नकारा है , जो बिना स्थितियों को जाने बूझे आरोपों को जड़ती हैं। उनका मानना है कि सहनशीलता, ममता, उदारता की प्रतिमूर्ति नारी , केवल रसोई की चौखट और दहरी तक बांधे रखे जाने के लिए नहीं हैं , उसके भीतर की संवेदनशीलता, रचनात्मकता , कल्पनात्मकता और सौंदर्य दृष्टि के कारण वह कला और सृजन की अधिकारिणी है जिसे उचित सम्मान मिलना चाहिए। बदलते परिवेश में नारी को निर्णय की आजादी मिलना चाहिए तथा उसके प्रेम को बार बार परखा नहीं जाना चाहिए।

प्रस्तावना – मालती जोशी मनोजगत की लेखिका हैं। उन्होंने घर- परिवार से संबद्ध ' सीमित लेखन की रूढ़ अवधारणा का तोड़कर , मन संसार की असीमित संभावनाओं को उजागर किया है और पारिवारिक परिवेश के लेखन को व्यापकता की भूमि पर संस्थित किया है। मध्यम वर्गीय परिवेश को मालती जी ने मनोजगत में प्रवेश के लिए सशक्त औजार की तरह प्रयोग किया है। इसी पारिवेशिक औजार से वे अतीत की परिस्थितियों को ऑपरेट कर मन की गुत्थियों की तह तक पहुंचती हैं और ग्रंथियों के कारण ढूंढ़ निकालती हैं। 'पटाक्षेप', 'सहचरिणी', 'पाषाणयुग', 'समर्पण का सुख', 'विश्वासगाथा', 'मध्यांतर' 'पराजय', 'बोल री कठपुतली', आदि उपन्यास एवं कहानियों का सृजन करने वाली मालती जी की दृष्टि में मध्यम वर्ग का परिवेश जटिल और व्यापक है। बाहर की दुनिया से अपना व्यावहारिक संबंध कायम करने वाला व्यक्ति, अपने पारिवारिक परिवेश से सर्वाधिक प्रभावित होता है। परिवार ही वह केन्द्र है जो व्यक्ति के सोच-व्यवहार और उसके बाहरी जगत से संबंध को निर्धारित करता है।आत्मविश्वास या हीनता बोध, मानसिक संतोष या उलझन आदि यहीं से शुरू होती हैं और आगे जाकर इसी आधार पर मनुष्य के अंतर्मुखी, बहिर्मुखी, सामाजिक, सुप्रत्याशी, विषादी ,श्लैषमिक, पैत्तिक आदि व्यक्तित्वों का निर्धारण होता है। इससे उलट बाहरी जगत से विशेष संबंध रखने वाले व्यक्ति परिवार से विलग हो कर भी पारिवारिक परिवेश से स्वयं को अलग नहीं पाते हैं फलस्वरुप विविध प्रकार के तनाव निर्मित कर परिवार की समस्याओं को बढ़ाते हैं। तात्पर्य यह कि परिवार से अलग रह कर भी व्यक्ति न तो स्वयं परिवार से अप्रभावित रह सकता है और न ही परिवार उससे। इस अर्थ में घर परिवार का लेखन असीमित क्षेत्र का लेखन है।

मालती जी नारी मन की लेखिका हैं। नारी की वास्तविक स्थिति को देखने परखने के क्रम में उन्होंने, उसकी व्यथा को निकट से सुना है। विवाह के पूर्व और पश्चात के तनाव को झेलती नारी , प्रेम विवाह और अन्तर्जातीय विवाह करने वाली स्त्री, परित्यक्ता, अविवाहिता, विधवा, नि:संतान स्त्री, कामकाजी और शोषित अथवा दबंग व्यक्तित्व की नारी के मनोविज्ञान को उन्होंने कुशलता से व्यक्त किया है। नारी मन की थाह लेने के लिए उन्होंने एक ओर नारी सुलभ्र गुणों - अवगुणों की खुल कर अभिव्यक्ति की है वहीं परिवेश में प्रचलित रूढ़ियों प्रथाओं , अज्ञान , संकुचित मनोवृत्तियों , पुरूषी मानसिकता आदि की तह तक पहुंच कर निष्कर्ष निकाले हैं।'महकते रिश्ते' की रमा पति के विवाह पूर्व के रिश्तों को लेकर लंबे समय तक तनाव झेलती है और उससे तब तक मुक्त नहीं हो पाती है जब तक उसके पति यह नहीं कह देते कि 'मैं विगत को भूल गया हूं। पर तुम उसे बराबर याद रखे हो। एक अभिशाप की तरह वह प्रसंग तुमने ओढ़ लिया है।' भारतीय समाज में आज भी प्रेम विवाह को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता और उस विवाह के असफल होने पर जिल्लत और दुख स्त्री को ही झेलना पड़ता है। 'सहचरिणी' की नीलम को विवाह टूटने पर सुनने मिलता है कि- 'होने को तो बिना दहेज शादी करने वाले भी इस दुनिया में हैं। ऐसे मुफतिया दूल्हे कैसे निकलते हैं, तुमने देख तो लिया।' समाज में अविवाहिताओं का दर्द अकथनीय है। ऐसी स्त्रियां परिवार- समाज के अनेक तनावों को झेलती हैं।' आउट साइडर की अपने परिवार को समर्पित नीलम अनुभव करती है कि अभी नौकरी है, इसलिए कोई फर्क नहीं पड़ता, पर कल को जब रिटायर हो जाउंगी, तो तुम्हारी हैसियत, इस घर में एक फालतू सामान की -सी रह जाएगी।' नारी का दुख, सच जानने के साथ साथ मालती जी के पुरुष पात्रों ने जीवन के ऐसे महत्वपूर्ण निर्णय लिए हैं जो उदार दृष्टि के निर्णय हैं।' पटाक्षेपय मे पद्मा के पति अपनी भावज के बारे में कहते हैं कि - 'यह कलंक वलंक कहां की बातें ले बैठी हो , हिश इट इज ऑल हंबग — मैं छवि का पक्ष नहीं ले रहा हूं पद्मा , लेकिन उसे कटघरे में रखने से पहले एक बार सोचा', या तुम विश्वास के साथ कह सकती हो कि सुशील वहां एकदम संन्यासी बना हुआ है? इतने स्वच्छन्द समाज में इतने सारे प्रलोभनों के बीच उसका मन एक बार भी नहीं डोला होगा? वस्तुत: मालती जी ने वही कहा है जो मध्यमवर्गीय जीवन का सच है। वे देख सकी हैं कि अधिकांश स्त्रियां आज भी मानवीय स्वतंत्रता से वंचित हैं। आत्मसम्मान पाने के लिए उसे आज भी संघर्ष करना पड़ रहा है। अपनी योग्यता के बावजूद वह निचले दर्जे पर है।'राग विराग' की कनु अपने पति को अन्य स्त्री की ओर आकर्षित हुआ देख कर , अपनी बेटी श्वेता को ले कर चिंतित होती है और कहती है- 'सच कह रही हूं मनोज, तुम उसे विधिवत पत्नी बना कर घर ले आओ। मेरी ओर से कोई रुकावट नहीं होगी- एक बात और , जब भी लगे कि श्वेता तुम्हारी नई गृहस्थि में बाधा बन रही है, उसे नि:संकोच मेरे पास छोड़

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

जाना ।उसकी मां हूं मैं।। उसकी अवहेलना नहीं करुंगी । तब तक बस यही करना कि मेरे लिए जो जहर उसके मन में बोया है, उसे पनपने मत देना। समाज में आज भी स्त्री की कलाप्रियता, उसकी संवेदनशीलता, उसकी मधुर भावनाएं, पारिवेशिक कठोर चट्टान पर पटकी जा रही हैं और वह लहुलुहान मन से हर बार एक क्षीण आशा के साथ फिर उठ खड़ी होती रही है।

मालती जी के नारी चरित्र प्रकृति से कोमल और अपूर्व रचनात्मक शक्ति से लरबेज हैं। धैर्य और गजब की सहनशक्ति के साथ वे परिवार को प्रेम और कर्त्तव्य के दृढ़ बंधन में बांधे रखती हैं। पर आत्मसम्मान के बार बार आहत होने पर वे टूट जाती हैं। विद्रोही हो उठती हैं। विद्रोही होना उसका स्वभाव नहीं, विवशता है कि उसे अपने इस अमूल्य जीवन को अपने ढंग से जीने का अवसर नहीं दिया जाता कि उसे कठपुतली बना कर रखा जाता है।उस पर चरित्रहीन, कुलक्षणी, बांझ, अपशकुनी आदि आरोप लगाने से पूर्व उन स्थितियों का पता नहीं लगाया जाता, जिन्होंने उसे इसमें ला पटका है। परिवार के सारे दुख, अपमान सहन कर,आत्मीयता बांटने वाली स्त्री, आखिर समाज के लिए अपशकुनी या कुलक्षणी कैसे हो सकती है। मालती जी मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रेम और दाम्पत्य में गहरा संबंध देखती हैं। प्रेम विवाह अच्छा है बशर्ते उसका निर्वाह ईमानदारी से हो, अन्यथा विवाह पश्चात् साथ साथ सहे गए सुख दुख से उपजे प्रेम में ही वे अधिक स्थायित्व देखती हैं।

मालती जी आधुनिक लेखिका हैं। उन्होंने नारी के प्रति नारी की, अज्ञानतावश दृढ़ होने वाली उस संकुचित वृत्ति को नकारा है, जो बिना स्थितियों को जाने बूझे आरोपों को जड़ती हैं। उनका मानना है कि सहनशीलता, ममता, उदारता की प्रतिमूर्ति नारी, केवल रसोई की चौखट और दहरी तक बांधे रखे जाने के लिए नहीं हैं, उसके भीतर की संवेदनशीलता, रचनात्मकता, कल्पनात्मकता और सौंदर्य दृष्टि के कारण वह कला और सृजन की अधिकारिणी है जिसे उचित सम्मान मिलना चाहिए। बदलते परिवेश में नारी को निर्णय की आजादी मिलना चाहिए तथा उसके प्रेम को बार बार परखा नहीं जाना चाहिए। दुखद अतीत का स्मरण और पूर्वाग्रह से ग्रस्त हो कर पुरूषों पर रोष प्रकट करने की प्रवृत्ति को उन्होंने दाम्पत्य जीवन के लिए घातक माना है।कामकाजी महिलाओं के दोहरे भार को देखते हुए पुरुषों को उनकी मदद के लिए आगे आना चाहिए और उनकी मन: स्थिति को समझना चाहिए यह बात मालती जी ने अपने कथा साहित्य से व्यक्त की है। वस्तुत: उनका सारा लेखन नारी मन को समझने की दिशा में एक महत्वपूर्ण सशक्त माध्यम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बीसवीं सदी की हिन्दी कहानी का समाज-मनोवैज्ञानिक अध्ययन- डॉ0 महेश चंद्र दिवाकर ।
2. हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास - डॉ0 धनराज मानधने ।
3. सामाजिक उपन्यास और नारी मनोविज्ञान -डॉ0 शंकर प्रसाद ।
4. आधुनिक हिन्दी , कथा साहित्य और मनोविज्ञान -डॉ0 देवराज उपाध्याय ।

****

युगीन संदर्भों के कवि - ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी

डॉ. रंजना मिश्रा *

प्रस्तावना – 'कैसा मन्दिर, कैसी मस्जिद,
हम दोनों ही बेदीन हुए।
पूछो दुनियां की आँखों से,
दो-दो कौंड़ी के तीन हुए।।'

आधुनिक युगीन हिन्दी काव्यधारा के उन्नायक श्री ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी मध्यप्रदेश के एक ऐसे राष्ट्रीय चरित्र हैं जिन्होंने स्वाधीनता आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभाई है। उन्होंने विधानसभा और लोकसभा के सदस्य के रूप में भारतीय राजनीति में अपने प्रखर व्यक्तित्व की छाप छोड़ी। वे ऐसे साहित्यकार नहीं थे, जो जीवन पलायन कर कल्पना के प्रकाश महल में बैठकर केवल कागज पर जागरण के सन्देश प्रेषित करते रहे, बल्कि अपने जीवन में हथकड़ियों की झंकार से और अंग्रेज विरोधी नारों से उसे प्रमाणित और सिद्ध भी कर रहे थे। 'विन्ध्य केसरी' पत्रिका के सम्पादक श्री ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी का जन्म 14 मार्च 1908 में करेली (नरसिंहपुर) में हुआ था। प्रारम्भ में उन्होंने 'कमलेश' नाम से कवितायें लिखी। कविता और नाटक दोनों ही क्षेत्रों में उन्होंने समान रूप से लेखनी चलाई। उनके काव्य ने राष्ट्रीय जीवन धारा को सदैव प्रेरित किया। उनका सम्पूर्ण काव्य प्रमुखत: दो धाराओं में विभाजित दिखाई देता है - एक राष्ट्र प्रेम की काव्यधारा जो राष्ट्रीय संघर्ष के यथार्थ रूप को प्रस्तुत करती है और दूसरी प्रगतिवादी काव्यधारा, जो समाज के वर्ग संघर्ष और वैषम्य को चित्रित करती हैं। इसके अतिरिक्त हिन्दू-मुस्लिम एकता, नारी मुक्ति और उसकी अस्मिता, प्रकृति चित्रण आदि विषयों पर उत्कृष्ट साहित्य ज्योतिषी जी ने लिखा है। कलरव, पाँचजन्य, पाषाण के आँसू, पाषाणी, दर्दों के बादल आदि कवितायें तथा अजेय भारत, इन्कलाब की आवाज आदि नाटक राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत हैं। 'सेंध के दरवाजे पर', 'बन्दियों का प्यार', 'भाई-भाई का झगड़ा' तथा 'अस्वीकृति' आदि कविताओं में वर्ग वैषम्य को मिटाकर साम्यवाद की स्थापना का प्रयास कवि का प्रमुख उद्देश्य रहा है।

ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी अनेक वर्षों तक डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन करते रहे। उनका सम्पूर्ण साहित्य ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी के शब्दों में- 'वे भावनापूर्ण राष्ट्रीय रचनाओं के प्रसिद्ध कवि हैं। काव्य रचना और कारावास आपके जीवन के अभिन्न अंग रहे। उनकी छायावादी रचनाओं में ईश्वर रूपी प्रियतम के प्रति जिज्ञासा और उसके अन्वेषण की भावना है। 'मैं खोज-खोज तुमको बोली/क्यों खुद यह अपनापन खोंऊँ/जब तुम मुझसे अभिन्न प्रियतम/तब विरह कहाँ जो मैं रोऊँ।।'

उनके छायावादी काव्य में अस्पष्टता और दुरूहता नहीं है। ज्योतिषी जी के काव्य का मूल स्वर छायावाद नहीं है। सामाजिक उत्थान और स्वदेश प्रेम की प्रवृत्ति उनकी अधिकांश रचनाओं में मिलती है। 'सेंध के दरवाजे पर' कविता में हिन्दू-मुस्लिम समस्या, धर्म के पाखण्ड, शोषितों की दयनीय अवस्था और शोषक पूंजीवादी समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है। श्री शिवकुमार श्रीवास्तव के शब्दों में - 'कविता समाज के कमजोर वर्ग के उस व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्व की अभिव्यक्ति है, जो भूखे परिवार के भरण-पोषण की तत्कालीन आवश्यकता है।' मजबूर होकर चोरी करने के इरादे से व्यक्ति किसी हवेली में सेंध लगाता है और सेंध के द्वार पर उसे ईश्वर की याद आती है। मानव का संस्कार कितना प्रबल होता है और वह किस प्रकार अवचेतन के स्तर पर सक्रिय रहता है, यह कविता उस जटिल स्थिति की उद्भावना है। प्रगतिवादी काव्यक्षेत्र में सहजता और यथार्थ चित्रण की दृष्टि से यह कविता मील का पत्थर सिद्ध हुई। उदाहरण द्रष्टव्य है -

'यह व्योम विचुम्बी महल और, मैंने यह सेंध लगाई है,
यह स्वर्ण सुअवसर, पर मुझको, क्यों ईश्वर की सुधि आई है ?
ईश्वर जब था, तब था, लेकिन अब तो ईश्वर रूपया आना;
मैंने युग-युग भूखों मर कर, इस युग के प्रभु को पहचाना।
डर-डर कर ईश्वर से अब तक, तरसा मैं दाने-दाने को,
सच्ची धार्मिकता समझा मैं दर-दर की ठोकर खाने को।
ईश्वर अब आडम्बर है, भोले जग को फसलाने को,
मजहब दुनियाँ के पण्डे औ, मुल्लों का पेट चलाने को।

अर्थ की विषमता वर्ग संघर्ष को जन्म देती है, जिससे सामाजिक, राजनीतिक क्रान्ति होती है। श्रमिक वर्ग श्रम और शक्ति से उत्पादन करता है और दूसरा पूँजीपति वर्ग उन वस्तुओं पर अधिकार कर लेता है। इसी से वर्ग-संघर्ष प्रारम्भ होता है। ज्योतिषी जी के काव्य का एक पक्ष पूरी तरह मार्क्सवाद से प्रभावित है। मार्क्सवाद एक ऐसी सामाजिक-व्यवस्था की रचना करना चाहता है, जिसमें समान विचारधारा, समान आकांक्षा, समान श्रम, समान साधन, समान अधिकार और एक समान सुविधायें सभी मनुष्यों को प्राप्त हों। इस स्थिति की प्राप्ति के लिए सर्वहारा वर्ग क्रान्ति करता है। ज्योतिषी जी के प्रगतिवादी काव्य का प्रमुख लक्ष्य समाज में ऐसे भावों का संचार करना है, जिससे आर्थिक विषमता दूर हो और एक वर्गविहीन समाज की स्थापना हो सके। उनके काव्य में सम्पूर्ण राष्ट्र एवं विश्व के प्रति संवेदनशीलता और नई साम्यवादी व्यवस्था का आह्वान व्यक्त किया गया है।

ज्योतिषी जी की कविताएँ पूर्ण रूप से राष्ट्रीय कविताएँ हैं। उनमें हिन्दू-मुस्लिम एकता को दृढ़कर राष्ट्रीय एकता का महती सन्देश दिया गया है। ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी उन प्रमुख कवियों में से हैं, जिन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर कविताएँ लिखी। इस क्षेत्र में ज्योतिषी जी को हिन्दी का 'सेक्यूलर' कवि कहा जा सकता है। बन्दियों का प्यार कविता देश की गुलामी का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती है। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही 'बन्दी' हैं। वे धर्म के नाम पर लड़कर अपनी ही हानि करते हैं। दोनों साथ-साथ खेले, बड़े हुए

* हिन्दी, शासकीय कला वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

दोनों ही भारतमाता की सन्तान हैं, फिर क्यों लड़ते हैं। दास और बन्दियों का कोई मजहब नहीं होता। यदि दोनों मजहब के लिए लड़ना छोड़कर एक हो जायें, तो विंध्याचल को भी हिला देने की शक्ति उनमें आ सकती है और वे पत्थर में भी फूल खिलाने में समर्थ हो सकते हैं –

'चाहे दोनों तो खुद मिलकर,
विंध्या के छोर मिला देवें।
चाहें दोनों तो खुद खिलकर,
पत्थर में फूल खिला देवें।'

आज परस्पर लड़कर हिन्दू–मुसलमान दोनों बन्दी हो रहे हैं और अंग्रेज हमारी इस लड़ाई पर हँसकर हमें गुलाम बना रहे है –

'हम लडें और अपने घर का
दुनियाँ देखे झगड़ा आकर।
हम बाज आएँ उस लड़ने से,
दुनियाँ मालिक हो, हम चाकर।।'

ज्योतिषी जी ने अपनी कविता में सभी प्रकार के अन्यायों और अत्याचारों का विरोध किया है। आर्थिक गुलामी के प्रति उनका हृदय घृणा से भरा हुआ है। वे संसार के शोषण और अन्यायी विधान को पलटने की आतुरता प्रकट करते हुए दिखाई देते है –

'जो भी हो, हमको विधान ये,
आज पलटकर ले जाना है।
अपने खूँ से सींच,
नई संस्कृति के नव पल्लव लाना है।।'

ज्योतिषी जी की कविता जोश और हुँकार है। वे समाज का शोषण करने वाली व्यवस्था को खुले रूप में जोश के साथ ललकराते हैं –

'ये अवस्था है नहीं स्वीकार नहीं–मुझको है नहीं स्वीकार।
ठीक कर व्यवहार–अपना–आज वरना रक्त मेरा है खुले विद्रोह को तैयार।

चेत री ओ चेत। रक्त की बूँदें लुटा तारूण्य की अपना तुझे हमने बनाया। गोद में तुझको खिलाया। शीश पर तुझको चढ़ाया। आह किन किन कल्पना की साधना की कूचियों के रंग से तुझको सजाया।
ओ रँगीली
सुन हमारी पीढ़ियों के दर्द का चीत्कार। कर अनुजा का क्रूर शोषण चक्र के उद्धार। रक्त का ये खेल मुझको है नहीं स्वीकार।।'

प्रकृति का सजीव चित्रण ज्योतिषी जी के काव्य की एक अन्य विशेषता है। मध्यप्रदेश की वन–भूमि, विन्ध्याचल, सतपुड़ा, रेवा की भूमि से उन्हें असीम प्यार है। उन्होंने यहाँ की प्रकृति के रमणीय चित्र प्रस्तुत किये हैं परन्तु प्रकृति–सौन्दर्य से उतरकर मानव सौन्दर्य पर ही उनकी स्थायी दृष्टि जमती है। वे मनुष्यता की स्थापना करते देखे जाते हैं। उनका काव्य एक–एक प्रगतिशील शोषण विहीन समता मूलक मानव समाज की रचना का सन्देश देता है। उनकी काव्य–भाषा सामाजिकता के साथ मार्दवता, प्रसाद और ओज गुण लिए हुए है –

'उस नगर की उस हवेली में जहाँ पर रात दिन चलता अथक है।
आदमी के रक्त का व्यापार– लूट का व्यापार–उफ ईमान का व्यापार।
ओ सड़े सामन्तवादी कायदे कानून में जकड़े सड़े संसार।
जो अरी आवाम की हित–साधना का स्वाँग करती– हाय री बकवास करती।
खच्चरों के वायदों की लीद से आकाश भरती–ओ मेरी सरकार।
ओ मेरी पन्नी चढ़ी चमचम चमकती काठ की तलवार।
सेठ की सन्दूक के आगे झुकी बन्दूक मेरी – लौह टोपीदार।।'

स्वाधीनता आन्दोलन के उस कठिन दौर में इस कवि ने न केवल लेखनी से बल्कि अपना शारीरिक श्रम देकर, कारावास के कष्ट सहकर भी जनजागरण का बिगुल बजाया। मेरा अपना मत है कि ज्योतिषी जी राष्ट्रीय काव्यधारा में महत्त्वपूर्ण स्थान पाने के अधिकारी हैं, परन्तु साहित्य जगत में अभी तक उनके काव्य का पूरी तरह मूल्यांकन नहीं हो सका है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी।
2. सेंध के दरवाजे पर – श्री ज्वाला प्रसाद ज्योतिषी।
3. बन्दियों का प्यार – श्री ज्वाला प्रसाद ज्योतिषी।
4. डॉ. आशीष ज्योतिषी – सिविल लाइन सागर।
5. आधुनिक हिन्दी कविता का इतिहास – डॉ. लक्ष्मीनारायण चातक।

****

DSS Divya Shodh Samiksha (An International Refereed Research Journal) April to June 2015
ISSN 2394-3807, E-ISSN 2394-3513, Imapct Factor - 0.745 (2014)

Splintered Self : A comparative Study of Wife and Cry the Peacock

Dr. Kranti Vats * Dr. Mani Mohan Mehta Saurabh Mehta *****

Abstract - Bharati Mukherjee and Anita Desai identifies the ways in which women try to adopt themselves in a family situation and the hazards they experience in the society. Their sensitive reactions to situations arising within the family are the main attraction in their novels. The novel **Wife** shows Dimple moving away from reality and try to find a solution in an illusionary world. In Anita Desai's novel, **Cry the Peacock** the psychic tumult of a young and sensitive married girl Maya who is haunted by a childhood prophecy of a fatal disaster is portrayed artistically.
Keywords - Woman, Identity, Neurosis, Murder, Silence, Communication, Fantasies.

Introduction - Bharati Mukharjee is one of the most significant women novelists, born in 1940 in Calcutta. She married a Canadian fellow- student Clark Blaise in 1963. She lived in Canada from 1966 to 1980. She migrated to the U.S.A. in 1980 with her family and became a citizen of America in 1988. A close examination of the works of Mukherjee reveals a movement and well marked development from expatriation to immigrants. This development coincides with her migration from Canada to the U.S.A.

Bhatrati Mukherjee is a writer from the Third world, who left India by choice to settle first in Canada and then in the United States. She has now adopted America as her home. Mukherjee has asserted that though originally as Indian, she had lived in Canada and America for too long to be categorized as an Indian English writer. She therefore, views itself as being part of the American tradition rather than the Indian one:

> *I view myself as an American author*
> *In the tradition of other American*
> *Authors whose ancestors arrived at*
> *Ellis Island.*[1]

Mukherjee's writing career began in 1971, with **The Tiger's daughter** published by Fawcett Crest, New York. This novel was followed by her next novel **Wife** by the same publisher in 1975. Her popularity shot up when **The Middleman** and **Other Stories** bagged the 1988 national Book critics' award in America. '**Leave It To Me'** is another brilliant creation in the field of fiction by any women writer.

Anita Desai - Anita Desai was born on 24 June 1937. Her full name is Anita Mazumdar Desai. As a writer she has been short listed for the Booker Prize three times. She received a Sahitya Academy Award in 1978, for her novel **Fire on the Mountain**.

Anita Desai was born in Mussoorie. She grew up speaking German at home and Bengali, Urdu, Hindi and English outside the house. She began to write in English at the age of seven and published her first story at the age of nine. She received her B.A. in English Literature in 1957 from the Miranda House of the University of Delhi. The following year she married Ashvin Desai. They have four children including Booker Prize winning novelist Kiran Desai.

Desai published her first novel, **Cry the Peacock**, in 1963. She considers **Clear Light of the Day** (1980) her most autobiographical work as it is set during her coming of age. In 1984 she published **In Custody** which was shortlisted for the Booker Prize. Desai has taught at Mount Holyoke College, Baruch College and Smith College.

Anita Desai is one of those privileged writers whose work was chosen by Ismail Merchant. Her book **"In Custody"** was adapted by the production house and was the president of India Gold medal for Best picture. Over the years, Anita Desai has been honored for her work by many national and internationally prestigious rewards. The Winifred Moltby Memorial Prize, Sahitya Academy Award, Booker Prize for **Clear Light of the Day**, Guardian Children's Fiction Prize Alberto Morabia Prize 2000, Benson medal of royal Society of Literature in 2003 are some of the most well known awards that she has received.

Her Selected Works -

1. The Artist of disappearance (2011).
2. The Zigzag way (2004).
3. Journey of Ithaca (1995).
4. In Custody (1984).
5. The Village by the sea (1982).
6. Clear Light of the Day (1980).
7. Fire on the Mountain (1977).

* Asst. Prof. (English) Govt. M.V.M. College, Bhopal (M.P.) INDIA
** Asst. Prof. (English) Govt. S.G.S. College, Ganj Basoda (M.P.) INDIA
*** Research Scholar (English) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

8. Where Shall We Go this Summer?
9. Bye Bye Blackbird (1971) (1975).
10. Voices in the City (1965).
11. Cry, the Peacock (1963).

Splintered Self : An approach to wife - Modernism in literature calls for a cumulative exploration of the inner dimension of characters as modern age stresses the restless, questing spirit of man. With an increasing dominance of "mimeses over diegesis," dramatizing the inner world of characters instead of narrating the events with objective realism, the modern novel becomes an interesting literary exercise. Replacing coherence and causality in narrative structure, a note of indeterminacy pervades the modern novel generating "plurality of meaning". The authority voice is suppressed and so is the autonomy of individual self.

Bharati Mukherje's **Wife** falls into the category of the modern novels as it presents an intense inner world of neurotic and solipsistic individual using symbols as 'centering nodes'. Instead of trying to combine the freedom of the individual with tolerance for fellow-beings, Bharati Mukherjee Chooses to glorify the alienated individual.

Love and death are the most important things to Dimple as in the case of Maya of Anita Desai's **Cry, The peacock**. While it is the dance of peacocks that define the tragic predicament of Maya which chimes in with many other images of dance, it is America that allures Dimple into believing that it stands for love and death.

The Theme of Disintegration: a Comparative study of Anita Desai and Bharati Mukherjee's Wife - There is today a considerable body of fiction in English written by Indians. In the last two decades two women writers, Anita Desai and Bharati Mukherjee, have won world-wide recognition. There are other women writers like kamala Markandaya, Ruth Prawer Jhabvala, Nayantara Sahgal and Shashi Deshpande who have made great stricles but the kind of critical attention that has been given to Anita Desai and Bharati Mukherjee is unparalleled.

In Cry, the Peacock and **Wife** there is a marked similarity with regard to the central episode they present. Maya in Anita Desai's novel and Dimple in Bharati Mukherjeee's novel take the extreme step of killing their husbands. This final act is the culmination points of gradual disintegration of personality. While there are obvious points of similarity, there are also significant differences. What are the paths that the protagonists traverse before they reach the moment of catastrophe? Is there a tragic inevitability about the conclusion that both novelists reach?

In **Cry, the Peacock** which uses imagery as a mode of expression the very title hints at the tragic end-for the peacocks which Cry 'pia-pia' end by destroying themselves and their loves. The cries of the dancing peacocks assimilate in Maya's mind with her own anguish. She weeps for them as well as for herself, "knowing their words to be mine."[2] In **Wife** there are enough ominous signs. The visions of abortion, killing of the foetus, a violent act against herself and her husband, the savagery with one notice that violence is out of all proportion to the object being killed:

"I'll get you" she screamed. "There's no way out of this my friend."
She seemed confident now, a woman transformed.
And in an out-
Burst of hatred, her body shuddering, her wrist taut with fury, she smashed the top of a small gray head.[3]

Both the women go through mental trauma which allows them no peace. The sense of violence and aggression is heightened in **Wife** by the pervasive violence of American life. Dimple confesses that in America talking about murders was like talking about weather. Anita Desai similarly refers to the pervasive spirit of violence in the cities.

Anta Desai in **Cry, the Peacock** and Bharati Mukherjee in **Wife** thus present the theme of disintegration, with variation no doubt. The theme in both the novels has implication beyond the tragedy of the protagonists. Bharati Mukherjee's treatment suggests that Dimple's predicament transcends that of an individual enmeshed in the limbo of cultural shocks, Anita Desai's protagonist faces the predicament of the tragic isolation of the individual and consequent sense of the absurdity of human life.

Conclusion - Anita Desai's **Cry, the Peacock,** and Bharati Mukherjee's **Wife** fall into the category of "modern novel" as both the novels explore the intense inner space of neurotic and solipsistic individuals, using symbols as "centering nodes". Both the novels are open ended, suggesting the incompleteness and complexity of private experience. Instead of trying to combine the freedom of the individual with tolerance for fellow beings, both Anita Desai and Bharati Mukherjee chose to glorify the alienated individual.

To both Maya and Dimple, love and death are the most important things in life. Almost every image in **Cry, the peacock** has the juxtaposition of erotic starvation and fear of death, suffered by Maya. The symbol of Peacock the central symbol of the novel does suggest "Maya's love with living juxtaposed with the awareness that there is only death and waiting".[4] This thematic image in turn represents the theme of the novel, the conflict between life and death and Maya'

References :-

1. Bharati Mukherjee, "The immigrant sensibility", Span,June 1990,p.35
2. Anita Desai, Cry, the Peacock, (New Delhi: Orient Paperbacks, 1980).p. 97
3. Bharati Mukherjee, Wife (Penguin Books),1990,p.35
4. Sivaramakrishna, "From Alienation to Mythic Acceptance: The Ordeal of Consciousness in Anita Desai's Fiction," Kakatiya Journal of English Studies, Vol.III, No.1, 1978, p.4.

****

DSS Divya Shodh Samiksha (An International Refereed Research Journal) April to June 2015
ISSN 2394-3807, E-ISSN 2394-3513, Imapct Factor - 0.745 (2014)

Symbols, Images and Metaphors of Painting in Auden's poetry

Sehba Jafri *

Abstract - W. H. Auden next only to T.S. Eliot among modern English poets is the most inward and subjective poets among all English Poets. He has produced a large body of poetry during his long-span of active poetic production. His poems taken together constitute 'a poetic universe' unique in many ways. He has received a revolutionary influence of his predecessors as well as contemporary artists. By receiving the themes from History, Psychology, religion and art, he developed a unique technique of composition which may call 'Audenseque' in absence of a better name. Important aspects of Auden's poetry have been dealt with exhaustively time to time; poems which are highly unique and individual are appreciatedin many ways, different scholars have mentioned different corners of 'Audenseque' but no one has yet discussed about the metaphors, images and symbols collected from the paintings in the poems of Auden. 'Transfer of painting into poems of Auden' is the important aspect of Auden's poetry which is remaining hidden, unnoticed and, perhaps unnoted. He renewed the old message of archaic paintings and co-related them with the modern atmosphere of perplexity, confusion and anxiety.

The present paper is the small effort to emphasise on Auden's ability to collect the metaphors, symbols and images from the painting and to introduce the world his highly wonderful unique talent of hiring metaphors, images and symbols from the painting.

Keywords - Images, organizational identity, Symbols, geography, research aesthetics, Landscape, Archaic, metaphor, painting, methodology.

Introduction - Art has preceded the science, commerce, other arts and literature throughout history. From the perspective of thinking to the inventions of new techniques it is useful for the articulation of new ideas. This extension of arguments and ideas serve a lot on the methodological level. It proposes new ideas and techniques and enriches two different genres. The use of painting modes metaphorically for the poems which was a popular trained during the days of Aristotle, is the same techniques which recognizes how the philosophical presuppositions of one art shape the defini- tions and concepts for the new techniques of other art. This organizational phenomenon between painting and poems can be seen in the poems of Auden who collects his appropriate data from the world of painters. The essential metaphors, symbols & images for this organizational studies forces the readers to study deeply the philosophy of his composition and the whole methodological "baggage" that shapes his poems with rare symbols and images.

The term Metaphor, symbols & images are very confused with each other. To understand the exchange of metaphor, images and symbols between the painting and poetry, it is necessary for us to have a look on their definition and their relation to each other.

Metaphor is generally recognised as the stuff related to songs and poems. The literal meaning of the term 'Metaphor' is 'to transfer'. It is a figurative in which one word or group of words is applied to explain or emphasise the action of another word or group of words. It is a smart comparison in language in which two different objects are compared on the basis of one important common feature. The term *metaphor* itself is a comparison (metaphor) which is coming from a Greek word meaning to "transfer" or "carry across." Metaphors "carry" meaning from one word. The very common example of metaphor we can see in a common phrase in which we say life 'a journey' and use it as: "Life is a journey"

Imagery, on the other hand, is a literary text of colourful brilliant and bright words which helps the author to add depth and understanding to his or her work. This use of particular words that create visual representation of ideas in our minds appeals to human senses to clarify the reader's understanding of the work. A perfect and clear **imagery** engages all the senses of a sympathetic audience and uses metaphors to express ideas and concepts. We can see the beautiful example of Robert Frost's poem "Stopping by wood" in which he says, 'The woods are lovely, dark and deep…' the word 'dark' and ''deep' are imagery here. A literary Symbol is an active part of a figure of speech where a person, place, thing, object or situation has any other **meaning** which is different than its literal connotations. In the other words we can say that the symbols are the words, actions of a character or event that have a deeper **meaning** in the context of the whole story. Auden himself once defined a symbol as "object or event felt to be more important than reason can immediately explain."

The selection of metaphor from paintings is not a new thing in literature.It has a long history since the period of Aristotle. The vivid descriptions and scenes from paintings have served as a great root for the creation of poets. More directly they appealed the poets and writers through their illuminative and attractive liveliness. Many poets and writers have composed

* Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

their poems on what is depicted or shown by great paintings and enhanced the original art by adding life to the paintings through their brilliant descriptions. One may not always be able to make an accurate or a clear cut description based on paintings but the books, poems or written documents can retell the story of paintings in an authentic way.

Suggestion and Findings - We have a long chain of poetic and literary works which are the metaphors of painting in their use of image and symbols. "Ode on a Grecian Urn" by John Keats in which Keats says," What men or gods are these? What maidens loth? / What mad pursuit? What struggle to escape? / What pipes & timbrels? What wild ecstasy?" You will always want to know, but those eloquent pagans keep their secrets. The Urn used by Keats was probably an object among all museum items. *The Iliad* by Homer which describes the shield of Achilles, is the another example of art based literature in which a shield is described by the Homer. It is of god Hephaestus. *The Picture of Dorian Gray* by Oscar Wilde is the amazing example in this chain. The portrait starts by its own subject as: "The sense of his own beauty came on him like a revelation." *Villette* by Charlotte Bronte and "My Last Duchess" by Robert Browning are the some other examples in this field in which the use of symbolic words and images collected from the paintings extended the meaning of the words inexhaustibly in all directions and made the dictions emotive.

Auden's Imagery and symbols from archaic paintings - Auden shows a tendency to use such geographical images from painting with symbolic implications even in his earliest works (*Poems* 1928 and *Poems* 1930). The most of the symbolic images from painting are used in the framework of a journey, and hence the "journey from one place to another" is contrasted with, "leaning on chained-up gate/At the edge of wood", the former image embodying the spirit of action and the latter suggesting the state of sloth and inactivity. Similarly many other visual images centre round the contrasting psychic situations of modern life are changed from painting to poetry and inactivity & frustration is shown by the help of these images collected from paintings. many of his Poems are artistically the most effective lyrics that triumph in presenting such a situation through images of symbolic significance as 'Taller today, we remember similar evenings,/ Walking together in the windless orchard/ Where the brook runs over the gravel, far from the glacier. The images collected from "snowy paintings" can be clearly seen in this poem, especially when Auden highlights the lines snowy nights as, "Nights come bringing the snow, & the dead howl/ under the headlands in their windy dwelling/ because the Adversary put too easy questions/ on lonely roads. We notice that here the running brook is contrasted with the glacier & the snowfall of the night with the lighted farm s of the valley, the brook and the light embodying life, activity and hope, and glacier, night & snow symbolizing freezing, dark-ness and inactivity. A walk in the windless orchard reminds the adult protagonist of a similar struggle between hope & fear as he is experiencing in the present. Similarly, the fear of the adversary on the lonely roads is equated with the happiness gained from seeing the lighted farms. The poem ends on a note of consolation which indicates the final triumph of hope over death-wish.

"Musee des Beaux Arts" is another poem by WH Auden which is the wonderful recreation in words of a work of art. It describes Pieter Brueghel's painting *Landscape With the Fall of Icarus*, in which a man falls from the sky, but "the white legs disappearing into the green / Water" are made incidental to the scene. The ploughman goes on ploughing and the ship sails past. The poem beautifully describes the painting as :

In Breughel's Icarus, for instance: how everything turns away
Quite leisurely from the disaster; the ploughman may
Have heard the splash, the forsaken cry,
But for him it was not an important failure; the sun shone
As it had to on the white legs disappearing into the green
Water, & the expensive delicate ship that must have seen
Something amazing, a boy falling out of the sky,
Had somewhere to get to and sailed calmly on.

"Shield of Achilles" and "Age of Ice" are another paintings which are inspired from paintings. Auden felt that the modern age is the spiritual ice-age, and the spiritual deadness of the contemporary waste-land can be conveyed only through the use of archaic imagery and symbols, preferably from the ice-age of the past. he writes in one of his poems as, 'And all emotion to expression came/ Recovering the archaic imagery about what, writes **Cleanth Brooks**: "Auden's surest triumphs is a recovery of the imagery collected from archaic paintings – fells, scraps, overhung by kestrels, the becks with their pot-holes left by receding glaciers of the age of ice. His dominant contrast is the contrast between the sense and the modern age of ice: foundries with their fires cold, flooded coal mines, silted harbors-the debris of the new ice age." His desolate landscape, full of decayed machinery, up turned railway tracks, rusted engines, and dirty smoking chimneys, are all symbolic of the illness and disease in the human psyche, as well as of the decay and corruption of the contemporary industrial- urban society. This al may be seen in the paintings during this age.

Conclusion - Thus symbols, Metaphors and images collected from Paintings in the poems of Auden are wonderful wonder of wonders. They arouse powerful feeling status in the readers and enable the writer to convey complex spiritual and mystical truths. Auden also uses symbols, metaphors and images from different world but his use of metaphors, images and symbols from painting are a thing of beauty and joy forever. They convey the complexity and decay of modern urban life, and the spiritual and psychological malaise caused by it. Suggestive details and images are carefully selected so that the common and the familiar are elevated to the symbolic and metaphoric. In this way, he proves that a painting may represent a sculpture, and vice versa; a poem portray or a picture and a sculpture depicts the right circumstances for the mood and any art may describe any other art, especially if a *rhetorical element*, standing for the sentiments of the artist when he creates his work with a universal appeal.

References :-

1. John Fuller (1970). A Reader's Guide to W.H. Auden, Thames & Hudson Ltd; U. S. A.
2. Stephen Spender (2001) World within World, Modern Library Classics
3. Justin Raplogle , Auden's Poetry, Penguin Publishers, U.K.

Impact Of William Shakespeare On Hindi Cinema

Dr. Mukta Sharma * Shweta Maheshwari **

Abstract - Adaptation of literature into cinema is nothing new for the Indian film industry. The impact of literature on films is almost as old as filmmaking itself. From Shakespeare to Ruskin Bond, Indian cinema has been inspired and adapted from many literary works. In fact, the first silent feature film that India made was an adaptation from a mythological character Raja Harishchandra. Since then, film producers and directors have directly or indirectly influenced from various dramas and texts in order to make their films.

The present article is studies about the role of William Shakespeare in Bollywood and his texts adapted into films.
Key Words - Adaptation, Cinema, Drama, Film Industry, Literature.

Introduction - During his life time, Shakespeare's plays are performed on stages in private theaters, since 1899. Cinema has produced an almost infinite variety of Shakespeare adaptations. Film-makers from all over the world have found ingenious ways to bring Shakespeare's tragedies, comedies, romances and historical plays to the screen.

Shakespeare plays are illustration of the success and failures of human responses to order. These illustrations are very well captivated and displayed on silver screen. Shakespeare is rewritten, rein scribed, and translated to fit within the local traditions, values, and languages of various communities and cultures around the world.

Shakespeare is increasingly "rooted" in the local customs of a people. The official Shakespeare canon includes 16 comedies, 10 histories, 12 tragedies, 154 sonnets and five longer poems. Writers have been mining the Shakespearean canon for 420 years and show no signs of exhausting it. Movie makers have been at it for 111 years.

Some of the greatest screen performances come from dramas, as there is ample opportunity for actors to stretch into a role that most other genres cannot afford.

Although plays exist which have been mainly written for a reading audience, dramatic texts are generally meant to be transformed into another mode of presentation or medium: the theatre.

Over the last decade or so popular film in India has become imbricates with the contemporary in a way that it has never been before. It has entered the age of images that blur the familiar line between cultural and economic processes. India has witnessed a remarkable proliferation of new cinematic elements, a representational accumulation - though not often emergence of new forms - through this transition. However, one probably does not suspect that in search of form a generic practice within Bombay cinema, thriving on capturing the new mode of urban existence on the screen, would fall back upon William Shakespeare.

The list of adaptation of Shakespeare's play in Indian cinema is as follows **(see in last page)**

Here I will discuss some famous movies which are the finest adaptations of the English dramas written by Shakespeare.

Angoor - Angoor is a 1982 Bollywood Hindi comedy film starring Sanjeev Kumar and Deven Verma in dual roles, and directed by Gulzar. It is a remake of the 1963 Bengali comedy film Bhrantibilas that is based on Ishwar Chandra Vidyasagar's Bengali play by the same name which itself is based on Shakespeare's play The Comedy of Errors. Like the original source play, Angoor is highly comedic, with many differences.

Do Dooni Char - Do Dooni Char is a 1968 Bollywood musical directed by Debu Sen, which is a loose remake of the 1963 Bengali film, Bhrantibilas. Both films are loosely based on William Shakespeare's The Comedy of Errors. A man and his assistant go on a business trip, which results in a comedy of errors.

Karamyogi - For the first time in Malayalam cinema, an adaptation of Shakespeare's Hamlet hits the silver screens through the national award winning director V K Prakash's Karmayogi. The movie is an entertaining action drama, beams director Prakash, adding that it gives prominence to the traditional martial art form - Kalaripayattu.

Prakash has always struck a balance between both genres. He opines that Malayali audience should promote different and experimental cinema by going to the theatres.

Haider - Haider is a 2014 Indian crime drama film directed by Vishal Bhardwaj. Haider is the third installment of Bhardwaj's Shakespearean trilogy after Maqbool (2003) and Omkara (2006).

*** Professor and Head (English) Manikya Lal Verma Shramjeevi College, J.R.N. Rajasthan Vidyapeeth (Deemed) University, Udaipur (Raj.) INDIA**

**** Research Scholar (English) Manikya Lal Verma Shramjeevi College, J.R.N. Rajasthan Vidyapeeth (Deemed) University, Udaipur (Raj.) INDIA**

Vishal has done justice with the plot of original Hamlet while gives it a new colour of Indian background.

The film is a modern-day adaptation of William Shakespeare's tragedy Hamlet, set amidst the insurgency-hit Kashmir conflicts of 1995 and civilian disappearances. Haider, a poet, returns to Kashmir at the peak of the conflict to seek answers about his father's disappearance and ends up being tugged into the politics of the state.

Qayamat Se Qayamat Tak - Qayamat Se Qayamat Tak is a 1988 Indian romantic drama film written by Nasir Hussain and directed by his son Mansoor Khan. The film's plot hints to be inspired by Shakespeare's Romeo and Juliet. The film starred Aamir Khan, along with Juhi Chawla in their first major roles. Upon release, the movie is a major success and is declared blockbuster at the box office and shot its leading stars to fame overnight.

Ishaqzaade - Ishaqzaade presents itself as a modern-day India's Romeo and Juliet (the title even means "starcrossed lovers"). In both, young lovers from feuding political families are destined to have a tragic ending, but the simple setting of modern-day India allows the same story to be more than just simply retold.

The setting of Parma (Romeo) and Zoya's (Juliet) romance is entirely dependent on an Indian context. Only in India are college politics and government politics so strongly interconnected. This setting, as well as the traditions of patriarchy, is essential to understanding Parma's conflicted attraction to Zoya's defiance of him.

Goliyon Ki Raasleela : Ram-Leela - Goliyon Ki Raasleela: Ram-Leela is a 2013 Indian romance drama film co written, co edited, co produced, composed and directed by Sanjay Leela Bhansali. The film is an adaptation of Shakespeare's Romeo and Juliet, set in violent times. The eponymous lead roles are played by Ranveer Singh and Deepika Padukone.

Shakespeare has often inspired Bollywood, and Hindi films inspired by his plots have tried refreshing takes on his written work. Romeo and Juliet in particular choice of our filmmaker, given its story of two lovers from feuding clans. Bhansali might have been the zillionth filmmaker to have tried a new twist to the Bard's play, but most in the audience enjoyed decoding the desi interpretation of the Shakespearean play written in the 15th century, which still hasn't lost its relevance. Bhansali's colourful and violent love story, Goliyon Ki Rasleela: Ram-leela, the audience watched how the filmmaker managed to give a contemporary Indian twist to William Shakespeare's classic romantic tragedy, Romeo and Juliet.

Dil Bole Hadippa! - Dil Bole Hadippa! is a 2009 Bollywood film directed by Anurag Singh. Dil Bole Hadippa! is a pure Shakespearean comedy. It actually simplifies the original Shakespearean plot, and really just takes from it the basic elements: girl pretends to be a boy, meets another boy, and they eventually fall in love. Of course, Dil Bole Hadippa! does this through effervescent Punjabis with over-decorated trucks and excessive ethnic pride.

The similarities remain in the antics. In The Twelfth Night, Viola has a real life twin brother. In Dil Bole Hadippa!, Veera only pretends to have a twin brother (herself).

Kannaki - Kannaki is a Malayalam language film adapted from the drama Antony and Cleopatra. It was released in 2001. It is directed by Jayaraj. It is loosely based on Shakespeare story of Antony & Cleopatra.

Many consider Cleopatra one of the most complex female characters in Shakespeare's body of work. She is frequently vain and histrionic, almost provoking an audience to scorn; at the same time, Shakespeare's efforts invest both her and Antony with tragic grandeur. Kannaki is loosely based on Cleoplatra.

Maqbool - Maqbool, a 2004 Indian film directed by Vishal Bhardwaj and starring Pankaj Kapoor, Irfan Khan, Tabu and Masumeh Makhija is an adaptation of the play Macbeth by Shakespeare. The plot of the film faithfully follows that of Macbeth with regard to events, and characterization. The film did not perform remarkably at the box office, but won director Vishal Bhardwaj international acclaim.

Omkara - Omkara is a 2006 Indian crime drama film adapted from Shakespeare's Othello, co-written and directed by Vishal Bhardwaj. It starred Ajay Devgan, Saif Ali Khan, Vivek Oberoi and Kareena Kapoor in the lead roles, supported by Naseeruddin Shah, Konkona Sen Sharma and Bipasha Basu.

Conclusion - William Shakespeare's idea of family relationships, same-sex relationships, generational conflicts, the idea of the twin or the double, gender, women, ideas of masculinity, friendship, the outsider, the racial other, violence, conflict, emotions, the idea of empire, the idea of the nation, kingship, good governance, politics, law, order, disorder, disguise, appearance and reality, nature, landscape, geography, supernatural and, prophecy have an enduring wisdom which find strong foothold in global cinema. The world famous literary works of the Bard of Avon have for decades inspired the Bollywood films. Adapting Shakespeare's work to Indian ethos is the latest "in" thing in Indian cinema. By and large, Bollywood has become synonymous with Indian popular culture over the years, and it simultaneously represents and shapes the consciousness of the country. Bollywood can be said to be bluntly Shakespeare-esque in its temperament featuring song and dance, love triangles, comedy, melodrama, star-crossed lovers, angry parents, conniving villains, convenient coincidences and mistaken identities.

The complexity of the reception of Shakespeare in India from the nineteenth century onwards is in no small measure due to the fact that the spread of the English language in India, a fundamental prerequisite for the transmission of Shakespeare's plays in their original language, is by no means uniform throughout the Indian subcontinent.

References :-

1. Mercado, Gustavo. The Filmmaker's Eye: Learning (and Breaking) the Rules of Cinematic Composition. New York: Focal Press, 2010.

2. Alter, Stephen. Fantasies of a Bollywood Love Thief: Inside the World of Indian Moviemaking. New Delhi: Harper Collins, 2007.

3. Adapting Stories for Screen, http://www.search.informit.com.all/document summary.html.

Shakespeare's Play	Director	Year	Indian Film
The Taming of the Shrew	Mehboob Khan	1952	Aan
Hamlet	M.V.Raman	1957	Aasha
The Comedy of Errors	Debu Sen	1968	Do Dooni Char
The Comedy of Errors	Raj Kumar Bedi	1969	Gustakhi Maaf
Romeo and Juliet	Raj Kapoor	1973	Bobby
The Comedy of Errors	S.S. Gulzar	1982	Angoor
The Taming of the Shrew	Jayant Desai	1983	Betab
The Taming of the Shrew	Rajkumar Kohli	1983	Naukar Biwi Ka
The Taming of the Shrew	Manmohan Desai	1985	Mard
Romeo and Juliet	Mansoor Khan	1988	Qayamat Se Qayamat Tak
Romeo and Juliet	Sooraj R. Barjatya	1989	Maine Pyar Kiya
Macbeth	Mukul Anand	1990	Agneepath
Romeo and Juliet	Randhir Kapoor	1991	Heena
Romeo and Juliet	Vidhu Vinod Chopra	1994	1942 : A Love Story
Romeo and Juliet	Mani Rathnam	1995	Bombay
The Comedy of Errors	David Dhawan	1998	Bade Miya Chote Miyan
The Comedy of Errors	Sandesh kohli	1999	Anari No. 1
Romeo and Juliet	Mansoor Khan	2000	Josh
Much Ado About Nothing	Farhan Akhtar	2001	Dil Chahta Hai
Macbeth	Vishal Bhardwaj	2002	Maqbool
Much Ado About Nothing	Kunal Kohli	2004	Hum Tum
Othello	Vishal Bhardwaj	2006	Omkara
Hamlet	Vidhu Vinod Chopra	2007	Eklavya
Hamlet	Vishal Bhardwaj	2014	Haider

****

A Critical Review On Ravinder Singh s Selected Novels- 'I Too Had A Love Story'And 'Can Love Happen Twice?'And Its Youthful Literary Techniques

Apurva Upadhyay *

Abstract - Ravindra singh is acknowledged as one of the most emerging young authors of the nation. Coming from a small town in Orissa, his ascendancy in literature is truly commendable. He is blessed with an art for which every author craves, i.e. the ability to influence readers' state of mind with the emotions in his stories. He is author to numerous novels of romance tragedy genre. This research paper is based on two of his novels in which he has very effectively presented stages of love starting from the initial days of meeting and blithe, followed by tragic calamitous events in relation, and then coping with it by concrete faith.

Introduction - The first novel which ravindra singh wrote was an effort to pen down his emotions, after he faced a mental turmoil of losing his beloved. It titled "i too had a love story" and was amongst the bestsellers. Inspired by his own story. The book starts off with the tale of ravin and khushi, and their unconventional love that fails to reach its destination due to a tragic accident. The manner in which singh has depicted his different emotions in the book is simple, yet effective. While reading the novel, readers may relate to the joy of friendship, sorrows, and complications that one has to in the path of life.

In the beginning, the story describes the sweet and sour experiences of ravin with his friends and his reunion with three of his collage mates- Happy, Amardeep or Ramji and Manpreet. In this reunion, discussions on marriage plans, takes place between the three, after which ravin decides to get registered on a matrimonial website named shaadi.com for finding a suitable match for him. He soon comes across a profile of girl named khushi and approaches her for friendship, which she accepts. Months passed being friends, and then ultimately they realize that they have fallen in love with one another. The moment finally comes when they were to meet the first time. At the first site itself ravin gets mesmerized form the beauty of khushi. Time passed with frequent meets, strengthening the bond more and more between the love mates, and meanwhile ravin also meets khushi's family. Conversations about their marriage started advancing further. On this point the lines of the book can be referred which are as such "not everyone in this world has the fate to cherish the fullest form of love; some are born, just to experience the abbreviation of it."

If we come back to the theme of the story now, it suggests that it being a story with a tragic end, the author here describes the fact that unlike all fictional love stories, the real ones do not always have a happy ending, some stay incomplete and some push us towards the darkest ends of our lives. This point comes to reality when this sweet relation gets struck by a tragic incident where on the day when ravin and khushi were to get engaged, khushi met with an accident, which results in her demise. Thisdeadly incident leaves ravin broken with a deep grief for life which can be felt in the lines of his book "she died, i survived and because i survived, i die every day." He was finding it difficult to live with this fact that his beloved khushi was no more with him and all the time he was surrounded by the thoughts that how, at times life can be pleasant to some and can be so ruthless to other people. To cope with such a disturbed state of mind he decided to pen down his feelings which took the form of his first novel "i too had a love story". It would not be appropriate to say that this book only sympathizes with the writer for his deep grief and turmoil, but it also claims appreciation for the courage he has shown to bring his feelings to paper and for having the strength to fight back the obstacles he had come across in his life. This story exemplifies the fact that relations are not always pleasant, also if you love someone truly, the story will last long for generations.The second novel which singh wrote can be recognized as a sequel to his first novel, it titled "can love happen twice. The novel is about the time in ravin's life when he felt that the tree of love flourished for the second time in his heart. The story is based on Singh's effort to move his life forward after the tragic incidence of losing his love. The tale revolves around Ravinder's visit to Belgium for a company project. Moving to a different country helped singh in providing a much needed change to advance his life. The visit took new dimensions when on a day suddenly he meets a girl named simar in a gym. She was pursuing her MBA in Belgium, and basically belonged to Gurgaon. Soon they became friends, and on a sudden day she asked singh about his girlfriend. Singh handed over his book 'I too had a love

* Research Scholar (English) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

story' to her.

After lots of sharing and knowing one another, they realized that they had started to feel for each other and love was again in the air for the pair. After 10 months of togetherness singh returns back to India. As it is said that where there is true love distance does not matter much, and so the couple got connected through video chatting and through such other ways. On Simar returning back to the country they met each other's families and decided to marry after Simar completes her education. But soon ravindra realizes that Simar's thinking to settle after marriage is not on the same terms in that of his own and she wanted to settle in Belgium with him. Singh tries to make her understand that he cannot leave his parents.

Her unwillingness to accept Singh's terms resulted in their separation on 24th February, the same day when khushi died. Thus we can conclude that the story is written with an intention to make today's generation understand the real meaning of love and its complications.

Conclusion - ravin singh novels and writing style is centralized on the mentality of youth and their moments of merry as well as difficulties in their relations. Both the novels on which this research is conducted and paper is written, are emotionally very touching and it depicts how one can encounter peaks in life at a moment and has to face valleys the other. The book "i too had a love story" on one hand shows how ravindra felt the wonderful feeling of love for the first time in his life, but could not take it to its destiny. on the other hand the second of his novels "can love happen twice" starts from where he left his first novel, and the story revolves around the second incidence in his life, when he felt that he has fallen for a girl for second time in his life but he could not advance this relation too, now because of misunderstandings among them. These lines from the second novel truly depict the feel of this novel, "Things didn't work between the two of them, because they loved the same person. He loved her and she loved herself".

References :-

Novels-

1. Singh Ravinder- "I Too Had a Love Story" publishing year- 2008.Publisher- Srishti Publishers & Distributors.
2. Singh Ravinder- "Can Love Happen Twice?" publishing year- 2011.Publisher- Penguin Books India.

****

Concept Of Tradition Of T.S. Eliot

Dr. Supriya Paithankar *

Introduction - "Tradition is a matter of the wider significance. It cannot be inherited and if you want you must obtain it by great labour." - T.S. Eliot

T.S. Eliot Essay on tradition and individual talent is beyond doubt a great milestone in the history and development of literary criticism. By all standards, it is a historical and highly significant essay which has made considerable impact on the modern critical thought like words worth preferred to lyrical ballad,or Coleridge's chapter on the fancy imagination, Eliot's essay on tradition occupies a central place of course Eliot was not conscious of historical value of his essays at that time.This essay has come to re- present the best and most significant contribution of Eliot as a critic published in 1919 in the 'Times Literary Supple ment'.This essay has to be considered as an unofficial mani- festo of T.S. Eliot's critical creed.It contains all those critical principles which were developed by T.S. Eliot further.

The first part of Eliot's essay. Tradition and individual talent deals with Eliot's concept of tradition and the relation, which the living writer ought to have with tradition. Broadly speaking this essay elaborates the classical learning of T.S. Eliot as a poet and as a critic. Eliot had declared himself as an Anglican by faith, a royalist in politics , and classicist in literature. Eliot classism is born out of his puritan inheritances and was also a strong reaction to the morbid romanticism of the last decade of the 19th century.

According to T.S. Eliot the presence or absence of the sense of tradition, in a writer, bad one. Tradition is the store house of the name, should show awareness. But very much different from the common dictionary meaning. As he says in his a way of feeling and acting which characterizes a group throughout generation. Certainly it is not a mere blind imitation of the past writers and their style. Rather Eliot sees tradition as a valuable and indispensible frame of reference in the communication and expression of literature provides a link and a body of a common values between the living writers and his readers. It is the only thing of judging a worth of the living writer. Certainly tradition does not concerned in certain fixed and past values or models or styles where possible imitation of the poet models being tradition as it puts. It is not a blind and timed following of the ways of tradition and classical values differs sharply from the classicism of people and his contemporaries.Tradition is not sometimes which can be a part through heredity channel. He puts it in the most dear and emphatic language.

In essence, tradition involves a historical sense and the conscious of this living past on earth thoughts and feelings and values in his words and this historical sense involves "A perception, not only of the pastness of past but also of its present". The essence of tradition consists in the consciousness of living present of past. As a result of this historical sense a writer writes not only with his own generation in his blood, but also with a feeling that the whole of literature of Europe fro, homer has a simultaneous existence and compass as much as simultaneous order. This historical sense make a living writer fully conscious his role and duty his creative life.

Tradition stands for existing order which include all the masterpieces as well as the vast intellectual wealth of nation. The living writer has a two-fold relation to the tradition. He receives something from it and also gives something in return. Eliot states his position in the fall manner. "The works of past form an ideal order which is complete before the new work arises." With the arrival of a new work or a great individual talent, there is a modification of tradition, proportions and values of each work of art towards the rejected in their process of readjustment which has become necessary due to the arrival of the really new period. The old order (tradition) is within itself all that is necessary, as a basic of change and for experiment is possible or necessary. In fact Eliot takes away a very dynamic view of tradition which is continuously evolving, changing, and undergoing the process of readjustment.

According to T.S. Eliot the imbibe the nature of tradition and the different by it. The really new work or the really great individual talent is that which is conscious of its tradition, which is written not only with the present generating in the bones but the entire literary cultural life of the human race. As Eliot put it ,"it is not in the individual or personal factors that te poet is remarkable. But the most individual past mat be those in which the dead poets, his ancestors, assert their immortality most vigorously.

References :-

1. Sullivan, Sheila, ed. (1973). *Critics on T. S. Eliot: Readings in Literary Criticism*. London: Allen and Unwin.
2. Tate, Allen, ed. (1967). *T. S. Eliot: the Man and His Work*. London: Chatto & Windus.
3. Online Source:http://www.bartleby.com/200/sw4.html

* **Asst. Professor (English) Govt. Girls College, Ratlam (M.P.) INDIA**

वेदो में यज्ञ-आहुतियाँ एवं पर्यावरण संरक्षण

डॉ. वेदप्रकाश मिश्र *

शोध सारांश – ***'यज्ञो देवानां प्रत्येति सुम्नमादित्यासोय'***

यज्ञ शब्द 'यज' (यजन करना) धातु से निश्पन्न होता है। जिसका अर्थ है देवपूजा संगतिकरण एवं दान देना है। यज्ञ आहुति से वातावरण की षुद्धता एवं रोगों को जड़ से नष्ट करने हेतु मंत्रोचार के साथ अग्नि में आहुतियाँ दी जाती हैं। वेदों को सृष्टि का सबसे प्राचीन ग्रन्थ माना गया है। इस बात को आज सारा विश्व मान रहा है। वेदों में जीवनदायी तत्व्वों की विशेषताओं का सूक्ष्म एवं विस्तृत विवरण है। ऋग्वेद में अग्नि के रूप-रूपान्तरण एवं उसके गुणों की व्याख्या की गई है। यजुर्वेद में वायु के गुणों एवं कार्यो का विभिन्न रूपों में वर्णन मिलता है। सामवेद जल तत्व के मुख्य वेद है। अथर्ववेद में पृथ्वी तत्व का वर्णन प्राप्त होता है। आकाश तत्व का वर्णन चारों वेदों में हुआ है। वैदिक ऋषि वायु सहित समस्त प्राकृतिक-शक्तियों को देवता स्वरूप मानते थे। ऋग्वेद में वैदिक ऋषि ने कहा है-

'अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् होतारं रत्नधातमम्'

अर्थात् अग्नि को पुरोहित समझकर उसे हवि प्रदान करो यह ऋतुओं का निर्माता है। इसका मुख्य आशय है कि यज्ञ में प्रज्वलित अग्नि प्रदूषण शोधक, आरोग्यवर्धक एवं जीवन दायक हवि के माध्यम से पर्यावरण में अनुकूलता स्थापित होती है। प्राचीन भारतीय वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण शोधन एवं परिवर्तन कार्य यज्ञ आहुतियों के द्वारा करते थे। यह प्रक्रिया आज भी है। औद्योगिक क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थो के उपयोग होने से उत्पन्न प्रदूषणों का शोधन एवं उपयोगी पदार्थो में परिवर्तन करने की शक्ति यज्ञ आहुतियों में निहित है।

प्रस्तावना – 'वेदो में यज्ञ-आहुतियाँ'

विद् धातु से घञ् प्रत्यय लगाकर वेद शब्द बना है। विद् धातु का अर्थ है- वेद के विषय को जानना। वेद अपौरूषेय है। वेदों में यज्ञों का विधान निहित है जिसके सम्पन्न करने से समाज एवं राष्ट्र का हित होता है। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के प्रथम सूक्त के प्रथम मंत्र में यज्ञ को प्रतिपादित करने के लिए बताया गया है-

'अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् होतारं रत्नधातमम्'

यज्ञ वेदों का मुख्य विषय है ऐसा शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त होता है-

'यज्ञो वैश्रेष्ठतमं कर्म'

वेदों का मुख्य विशय होने के कारण ही यज्ञों में वेद मंत्रों का प्रयोग किया जाता है। वेद मंत्रों के बिना यज्ञ नहीं हो सकते। ब्रह्मपुराण एवं श्रीमदभागवत पुराण के अनुसार वेदों का प्रादुर्भाव यज्ञों के लिए ही हुआ है-

***ऋचोयजूँषि सामाष्ठि निर्मये यज्ञसिद्धयेय'*[1]**

पुरूष सूक्त में तो विराट यज्ञ पुरूष से ही सारी सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन है। ऋक्, यजु, साम आदि भी उसी यज्ञ से प्रकट हुए है-

'तस्माद्यज्ञात्सर्व हुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे।
***छन्दांसिजज्ञिरे तस्माद्य जुस्तस्माद्जायत् ।।*[2]**

अर्थात् उस सर्वहुत यज्ञ से ऋचाओं एवं साम आदि की उत्पत्ति हुई उसी से छन्द आदि तथा यजु: भी उत्पन्न हुए यह सर्वहुत यज्ञ जैसे-जैसे विकसित होता है वैसे-वैसे सृष्टि का विकास भी होता जाता है। पुरूष सूक्त के अनुसार जो हो चुका है, जो होने वाला है, वह सब विराट पुरूष का ही है। सृष्टि के पोषण संचालन के लिए उसी विराट सत्ता का यजन किया जाता है। वह विराट यज्ञ प्रकृति में चलता ही रहता है-

'यत्पुरूषेण हविशा देवा यज्ञमतन्न्वत्।
***बसन्तोऽस्यासीदाज्यंग्रीस्मइध्मः शरद्धविः।।*[3]**

अर्थात् जब देवताओं ने उस विराट चेतना से यजन किया तो उस यज्ञ में बसन्त ऋतु आज्ज के रूप में, ग्रीष्म ऋतु ईन्धन के रूप में तथा शरद ऋतु हवि के रूप में प्रयुक्त हुए। अथर्ववेद में कहा गया है कि यज्ञ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को बांधने वाला नाभि स्थल या संसार का उत्पत्ति स्थान कहा गया है-

***'अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः'*[4]**

वही समस्त प्रजा का पोषक एवं संरक्षक है। यज्ञ को ईश्वर और धर्म का साक्षात् प्रतीक कहा गया है। शतपथ ब्राह्मण में यज्ञ को दिव्य अनुशासन में किए गए श्रेष्ठ कर्म की संज्ञा भी दी गई है-

***'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म'*[5]**

प्रजापति को परमात्मा और यज्ञ को प्रजापति कहा गया है-

***'एश वै प्रत्यक्ष यज्ञो यत्प्रजापतिः'*[6]**

यज्ञों के द्वारा हम उन सभी पदार्थो की कामना करते है जो मानव जीवन के लिए आवश्यक है-

'आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पताम्।
***चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां श्रोतं यज्ञेन कल्पताम्'।।*[7]**
ब्रीह्यष्चमे यवाश्चमे भाषाश्चमे तिलाश्चमे....
***.....यज्ञेन कल्पन्ताम्।।*[8]**

आदान प्रदान की यह प्रक्रिया लोक व वेद दोनों में देखी जाती है कृषि में हम जब एक बीज का वपन करते है तो फल स्वरूप हजार गुना प्राप्त करते है। सूर्य समुद्र से वाष्प द्वारा जल ग्रहण करके हजार गुना वर्षा द्वारा पृथ्वी की तृप्ति कर धन-धान्यादि से परिपूर्ण करते है।

* एसोशिएट प्रोफेसर (संस्कृत) डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय करगीरोड कोटा, बिलासपुर (छ.ग) भारत

'देहि मे मध्यं प्रथमं तावत् ततो ददामि तुभ्यं पश्चात्''

इन्द्र कहते है- हे यजमान! तुम मुझे प्रथम हवि प्रदान करो तब मैं भी तुम्हारे लिए वर्षा को विहित करूंगा।

यज्ञ दो प्रकार के होते हैं।

1. श्रौत यज्ञ
2. स्मार्त यज्ञ

1. श्रौत यज्ञ –इन यज्ञों का प्रतिपादन वेदों की संहिताओं के मंत्रों में विहित है।

(क) दार्षपौर्णमासेष्टि यज्ञ– इस यज्ञ का विधान यजुर्वेद संहिता के प्रथम अध्याय से द्वितीय अध्याय तक दिया गया है। निम्नलिखित मंत्र द्वारा यजमान श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ के निमित्त वनस्पतियों का प्रार्थना पूर्वक संचय करता है-

'इशेत्वोर्ज्जेत्वा व्वायवस्थ देवो व: सविता प्रार्थयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणे.....।[9]

यज्ञ में देवताओं के निमित्त आहुति को प्राप्त होने के लिए प्रार्थना की गई है-

'मनसस्पत इमन्देव यज्ञ स्वाहा व्यातेधा:'।

हे चन्द्र! तुम हमारे इस यज्ञ को वायु में धारण करो।

इससे यह स्पष्ट होता है कि सूर्य द्वारा वाष्प ग्रहण की भाँति ही पदार्थ-संवाहक वायु हवन कुण्ड से उद्भूत अविश्यान धूत के द्वारा प्रकृति को प्रभावित करता है।

(ख) राजसूय व अश्वमेघ यज्ञ– यजुर्वेद संहिता के अध्याय 22 से 25 अध्याय तक अश्वमेघ यज्ञ का वर्णन है। यह यज्ञ शुक्लपक्ष की अष्टमी से प्रारंभ किया जाता है। इस यज्ञ में दीर्धायु की रक्षा की कामना की गई है-

'तेजोऽसिशुक्रममृतमायुशया आयुर्मेदेहि'।[10]

'सुगत्यं नो वाजी''।[11]

यहाँ अश्व से प्रार्थना की जाती है कि देवत्त्व को प्राप्त वेगवान अश्व हमें गायों, अश्वों वाला करे। सुन्दर पराक्रमी पुत्रों वाला बनावे। वह हमें सबके पोषण हेतु धन देवे, अखण्ड अश्व हमें निष्पाप बनावे, हविर्युक्त अश्व हमें राज्य प्रदान करे। अश्वमेघ यज्ञ सिर्फ राजाओं द्वारा ही किया जाता था।

(ग) वाजपेय यज्ञ – यजुर्वेद के नवें अध्याय की कण्डिका 34 तक वाजपेय यज्ञ के मंत्र कहे गये है। इस यज्ञ में घृत की आहुतियाँ दी जाती हैं।

(घ) सोम यज्ञ – इस यज्ञ को वृष्टि के देवता इन्द्र की उपासना एवं प्रसन्नता के लिए किया जाता था।

(ङ) पुत्रेष्टि यज्ञ – पुत्र प्राप्ति के निमित्त इस यज्ञ का वेदों में विधान किया है।

(च) गोमेध यज्ञ – यह यज्ञ पृथ्वी की उर्वरा शक्ति में वृद्धि नवीन भूमि की खोज आदि हेतु किया जाता है।

2. स्मार्त यज्ञ – वर्तमान समय में स्मार्त यज्ञों का प्रचलन अधिक है जिसमें पञ्चमहायज्ञ सर्वविदित है। जिनको करने के लिए विशेष महत्त्व दिया गया है। इसके करने से ग्रहस्थ जीवन में धन की अधिकता आचरण की शुद्धता एवं पवित्रता की प्राप्ति होती है।

अन्य यज्ञों में विष्णुयज्ञ, रूद्रयज्ञ, चण्डीयज्ञ, महालक्ष्मीयज्ञ, आदि को सर्वजन कल्याण हेतु संकल्प लेकर किया जाता है। जिसमें प्रमुख सोलह खम्भों पर मण्डप का निर्माण किया जाता है। मण्डप के अन्तर्गत कुण्डों का निर्माण अलग-अलग इच्छापूर्ति हेतु किया जाता है। मोक्षकामना हेतु चतुरस कुण्ड, लक्ष्मी प्राप्ति की कामना के लिए पद्म कुण्ड, पुत्र कामना के लिए योनिकुण्ड का निर्माण वेद शास्त्रों में विहित है। मण्डपाङ्गवास्तु के अन्तर्गत प्रधान देवता के साथ अन्य सभी आवाहित देवताओं के लिए अलग-अलग पीठों का निर्माण किया जाता है। सर्वतोभद्र, लिङ्गतोभद्र, पञ्चाङ्गपीठ, वास्तुपीठ, क्षेत्रपालपीठ, नवग्रहपीठ, चतुष्षाष्ठियोगिनीपीठ, आदि यज्ञ मण्डप में चार द्वार होतें हैं जिन पर पूर्वादिक्रम से ऋक्, यजु, साम, अथर्व की स्थापना की जाती है। समस्त यज्ञ चार वेदों पर आधारित है।

यज्ञ समय – कालचक्र में समय की प्रत्येक सन्धि को विशिष्ट स्थान प्राप्त है। प्राचीन ऋशियों के अनुसार समय की विषिश्ट सन्धियाँ संक्रमण से युक्त होती है, जिसके दुश्प्रभाव से सभी प्राणी पीड़ित होते है। इसे इङ्गित करता षतपथ ब्राह्मण का कथन है-

'भैषज्य यज्ञा वायते। ऋतु संधिशु व्याधिर्जायते तस्माद्तुसन्धिषु प्रयुज्यन्तेय'

अर्थात ऋतुओं के सन्धि काल में रोग उत्पन्न होते है और ये भैषज्ययज्ञ इसी कारण सन्धि काल में सम्पन्न किए जाते है।

समिधा – यज्ञ की अग्नि को प्रज्वलित रखनें के लिए जिस काष्ठ(लकड़ी) का प्रयोग किया जाता है उसे समिधा संज्ञा से अभिहित करते है। यज्ञ के लिए मुख्य रूप से सात(सप्त) समिधाओं का प्रयोग किया जाता है-

'अर्क: पलाश: खदिरष्चअपमार्गोऽथपिप्पळ:।
उदुम्बर: शमी दूर्वा, दर्भष्च समिध: क्रियात् ।।

अर्थात् मदार, पलाश, खैर, चिचिड़ा, पीपल, गूलर(ऊमर), शमी, दूर्वा, कुश।

'समिध: पिशाचजम्भनी:''।[12]

अर्थात् ये समिधाऐं विशेष वृक्षों की होने के कारण रोग के कीटाणुओं का नाश करती है। जैसे- देवदार, बेल, बरगद, आम, बादाम, चन्दन, शाल, एवं अन्य औषधीय पौधों की लकड़ियाँ सम्मिलित रहती है। सामान्य रूप से सप्त समिधाओं के आलावा भी अग्नि प्रज्वलित करने के लिए इन समिधाओं का भी उपयोग किया जाता है।

हवि – हवि कई पदार्थों एवं औषधीय वनस्पतियों का मिश्रण होती है। यज्ञ क्रिया में प्रयुक्त हवि सुगन्धदायक, कीटाणुनाशक, पोषक होती है। इसमें मुख्यत: गाय का घी, गुड़(शक्कर), शहद, सोम, कपूर, नारियलफल, गुग्गुल, दूब, नागरमोथा, ऑवला, मुलहठी, जौ, चावल, तिल, जटामासी, खस, बेलफल, कमल के बीज, अनार के बीज, कन्द, मूल, फल, मेवा इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। स्मार्तोल्लास ग्रन्थ में द्रव्य का नीरूपण इस प्रकार से है-

'तैलं दधि पय: सोमो यवागूरोदनं घृतम्।
तण्डुला फलमापश्च दश द्रव्याण्य कामत:।।

सर्वप्रथम वास्तुशास्त्र के अनुरूप उचित दिशा एवं स्थान में यज्ञ कुण्ड में समिधा व्यवस्थित करने के बाद अरणीमन्थन एवं वेदमन्त्रों के साथ अग्नि प्रज्वलित की जाती है। प्रज्वलित अग्नि को यज्ञ कुण्ड में स्थापित करने के बाद इन भेषज पदार्थों के मिश्रण की आहुतियाँ दी जाती है तो ये पदार्थ अतिसूक्ष्म तत्त्व भस्मीभूत होकर वातावरण में फैल जाते है और सूक्ष्म अंश को क्रियाशील करके वायुप्रदूषण को क्रियाहीन करके हमारे जीवन के रक्षक हो जाते है।

ऋग्वेद में स्पष्ट रूप से वर्णित है-

'यं देवासो अजनयन्ताग्निं यस्मिन्नजुहुवुर्भुवनानि विश्वा,
सो अर्चिषां प्रथिव द्यामूतेमाँसृजूयमानो अल्पन्महित्वा'।।[13]

अर्थात् जिस यज्ञ अग्नि को यज्ञ विज्ञान के ज्ञाता वैदिक ऋषि उत्पन्न करते है तथा उसमें विभिन्न प्रकार के भेषज पदार्थों की आहुतियाँ डालते है उसकी लपट, ताप, दीप्ति, पृथ्वी, वायुमण्डल, अन्तरिक्ष आदि सभी को शुद्ध करती है। यह वैदिक विज्ञान के अद्भुत रहस्य को जानने पर सुनिश्चित हो जाता है कि नित्य यज्ञ आहुतियों द्वारा वायु प्रदूषण अवश्य ही नष्ट होता है एवं विश्व को जीवन प्राप्त होगा।

पर्यावरण संरक्षण – हम जहाँ पर्यावरण को प्रदूषण भी कह सकते है। प्राचीन ग्रन्थों में उसी को शुद्ध-अशुद्ध, पवित्र-अपवित्र, स्पर्श-अस्पर्श, दूषित-अदूषित, दोष-अदोष, तथा पाप एवं पुण्य शब्दों से भी व्यक्त करते थे। मानव अपने विकास क्रम में बैलगाड़ी के युग से आज तीव्र वाहनों का प्रयोग कर रहा है। वनों को काटकर सड़को का निर्माण हो रहा है। कृषि योग्य भूमि बनाई जा रही है। शहरीकरण से उसका गन्दा पानी, कारखानों का गन्दा पानी नदियों में बहाया जा रहा है। चिमनियों का धुआँ, वाहनों का धुआँ निकल रहा है। बढ़ती जनसंख्या को भोजन जुटाने के लिए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग हो रहा है। पृथ्वी के जल का भारी मात्रा में दोहन हो रहा है। शरीर पर रासायनिक दवाओं का कुप्रभाव पड़ रहा है।

पर्यावरण शब्द की व्युत्पत्ति परि+आ+वृ+ल्युट से हुई जिसका अर्थ है वह वातावरण जो मनुष्य को चारों तरफ से व्याप्त कर उससे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा है। प्रकृति के उपादान- जल, वायु, मिट्टी, अग्नि, वनस्पतियाँ तथा विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तु यहाँ तक की स्वयं मनुष्य भी पर्यावरण का एक अंश है। जीवन और विकास को प्रभावित करने वाली परिस्थितियाँ जिनके लिए हमें आर्थिक आयोजन और पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य सामान्य बनाने होंगे और यह सामान्य उद्देश्य है निरन्तर गतिशील विकास किन्तु वर्तमान में प्राकृतिक साधनों का विवेक रहित ढंग से दोहन किया जा रहा है। बढ़ती हुई जनसंख्या और घटती हुई प्राकृतिक सम्पदा को ध्यान में रखकर यह दृष्टि अपनाना अनिवार्य है कि पर्यावरण का प्रदूषण रोकना होगा वनों की कटाई पर अंकुश लगाना होगा। प्राकृतिक सम्पदा का सीमित उपभोग करना होगा तथा उर्जा के अपव्यय को रोकने के साथ-साथ उसके लिए जल, सूर्य, वायु, आदि के द्वारा ऐसा वैकल्पिक स्रोत ढूढ़ना होगा जो कभी न समाप्त हो सके और जिससे पर्यावरण भी दूषित न हो सके।

पृथ्वी वायु की पर्त से ढ़की हई है। यह वायु अनेक प्रकार के गैसों से मिलकर बनी है। आज के वैज्ञानिक सिद्धान्त भी यही है कि ऑक्सीजन और हाइड्रोजन नामक दो शक्तियाँ है जिसमें से एक शुद्ध वायु और दूसरी प्रकाश एवं प्राणों के लिए आवश्यक वायु है। इन दोनों के योग से पानी बनता है। सम्भवत: ये दोनों शक्तियाँ मित्र और वरूण ही है क्योंकि इन शक्तियों के गुणों के अनुसार ही आधुनिक वैज्ञानिक ऑक्सीजन और हाइड्रोजन के परिभाषिक लक्षण कुछ मिलते-जुलते है। ऋग्वेद में मित्रावरूण करके उल्लेख देखा जाता है। दोनों विद्युत्संचार से जल के रूप में परिवर्तित हो जाते है इसी से वर्षा होती है। यह तथ्य सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में नाना प्रकार से वर्णित है।[14]

वर्तमान समय में हमारा भौतिक पर्यावरण ही प्रदूषित नहीं हुआ वरन् उपभोक्ता वादी संस्कृति के चलते सांस्कृतिक पर्यावरण भी काफी हद तक प्रदूषित हो चुका है। आज यदि हम सच्चे अर्थो में अपने भौतिक और सांस्कृतिक पर्यावरण को प्रदूषण से बचाना चाहते है तो हमें वेदों और यज्ञ आहुतियों की ओर ही लौटना पड़ेगा। हम आज पर्यावरण संरक्षण हेतु चिंतित है जबकि हजारों-हजार वर्ष पूर्व हमारे वैदिक ऋषि सभी पर्यावरणीय घटकों जैसे - आकाश, पूशा, वरूण, मारूत, वृक्ष आदि को देव मानकर उनकी उपासना करते आए है। और इसीलिए वैदिक काल का साहित्यिक, सामाजिक, वैज्ञानिक, आर्थिक, एवं सांस्कृतिक पर्यावरण इतना स्वच्छ था।

इस संक्षिप्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि- प्रकृति अनेक प्रकार से प्राणियों को सहयोग प्रदान करती है। अत: हमारे और प्रकृति अर्थात् पर्यावरण के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध है। आदि काल से ही मानव और प्रकृति अन्योन्याश्रित रहें है। आवश्यकता इस बात की है कि हम प्राचीन भारतीय मनीषियों के उदार दृष्टिकोण को अपनाते हुए वर्तमान के वैज्ञानिक साधन का उपभोग कर पर्यावरण के अक्षय भण्डार को प्रदूषित और असंतुलित होने से बचायें ताकि वसुन्धरा में जीव और जगत की प्रतिष्ठा सदा के लिए बनी रहें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ब्रह्मपुराण- 1-42, श्रीमद्भागवतपुराण 1-4-19
2. यजुर्वेद- 31/7
3. शुक्ल यजुर्वेद- 31/4
4. अथर्ववेद- 9/10/14
5. शतपथब्राह्मण-1/7/1-5
6. शतपथब्राह्मण-4/3/4-3२
7. शुक्ल यजुर्वेद- 18/29
8. शुक्ल यजुर्वेद- 18/12
9. शुक्ल यजुर्वेद- 1/1
10. शुक्ल यजुर्वेद- 22/1
11. शुक्ल यजुर्वेद- 25/45
12. अथर्ववेद- 5/29/14
13. ऋग्वेद- 10/88/09
14. ऋग्वेद- 5/24/05,, 5/62/03

****

संस्कृत भाषा की वैज्ञानिकता निरूक्त के परिप्रेक्ष्य में

डॉ. प्रज्ञा आचार्य *

प्रस्तावना – निरूक्त शब्द निर् + विच् + त (क्त) से निष्पन्न है। निर् उपसर्ग है तथा इसका अर्थ है : पूरी तरह से कहना। त प्रत्यय है इसके दो अर्थ है भाव और कारण। इस प्रकार इस शब्द का समुचित अर्थ होता है।
(क) पूरी तरह से कहना (ख) पूरी तरह से जिसके द्वारा कहा जाता है वह शास्त्र आचार्य दुर्ग ने निर्वचन शब्द का अर्थ निष्कृत्य = विग्रहा वचनम् = निर्वचनम बताया है। इसका तात्पर्य है शब्द में छिपे हुए अर्थ को विग्रह के द्वारा कहना। अर्थात स्पष्टीकरण को तथा स्पष्टता करने वाले शास्त्र को निरूक्त कहते है। शास्त्र ग्रन्थ रूप में होता है इसलिये ऐसे ग्रंथो की जाति ऐसे किसी ग्रंथ को भी निरूक्त कहा जाता है। निरूक्त वस्तुत: शब्दों की व्याख्या करने की एक पद्धति पर लिखे गये ग्रंथों के लिये रूढ़ हो गया है। अत: यह एक योग रूढ़ शब्द है। एवम् इससे शब्दों को स्पष्ट करने की एक विशिष्ट प्रक्रिया का तथा उस पर लिखे विशिष्ट ग्रंथ का बोध होता है।

समस्त विश्व के इतिहास में भारतवर्ष को ही यह गौरव प्राप्त है कि इसका साहित्य न केवल प्राचीनतम् है, अपितु स्तर की दृष्टि से आज के युग के उन्नत साहित्यों में भी सतराम् समुन्नत है। विश्वभर में वेदों से प्राचीन और कोई वांगमय की रक्षा को ठोस रूप देने के लिये उन्होंने वेदाध्ययन की उन विभिन्न दृष्टियों का वर्गीकरण किया तथा प्रत्येक वर्ग के अध्ययनों के फलितार्थ को लिखित रूप देकर मानव जाति का अकल्पित उपकार किया।

वेद के अध्ययन की उन दृष्टियों में एक दृष्टि का नाम निरूक्त है। वैदिक भाषा बहुत जटिल कठिन और गहन है। उस पर से जब हमारे पूर्वजों की पकड़ कुछ ढीली होने लगी। तब वह भाषा दुरूह होने लगी, शब्दों के अर्थ काल के व्यवधान के कारण जब शब्द धुंधले पड़ने लगे।[2] तब उन शब्दों को स्पष्ट करने के लिये निरूक्त पद्धति का आविष्कार हुआ और भाषा की समग्र प्रकृति के अध्ययन के लिये वेद की प्रत्येक शाखा के अध्येताओं ने व्याकरण पद्धति का आविष्कार किया। प्रथम पद्धति का विकास आज हमारे पास यास्काचार्य के निरूक्त ग्रन्थ के रूप में सुरक्षित विद्यमान है। निरूक्त पद्धति के विकास की प्रेरणा हमारे मनीषियों को वैदिक साहित्य से ही मिली। अकेली ऋग्वेद संहिता (शाकल शाखा) नाम और आख्यातों के इस प्रकार के प्रयोग हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि ऋषियों ने जान बूझकर शब्द का निर्वचन करने के लिये ही ये प्रयोग किये है, अन्य संहिता तथा ब्राह्मण ग्रंथ भी न केवल इस प्रकार के प्रयोगों से भरे पड़े है। अपितु निर्वचन की पद्धति के विकास के चरण न्यास के स्पष्ट दर्शन भी हमे इनमें हाते है। उदाहरण के लिये कुछ प्रयोग है। (क) ऋग्वेद संहिता – गीर्भिर्गृणन्त ऋटग्मियम् 1 (ख) हूयते हवि: 2. (ग) पिपर्ति पपुरिर्नरा [3] (घ) उषा उच्छद् [4]

छ: वेदांगों में निरूक्त भी एक है। इस वेदांग में शब्दों की निरूक्ति या व्युत्पत्ति की जाती है। निरूक्त शास्त्र के अनुसार प्रत्येक शब्द किसी न किसी धातु से सम्बद्ध होता है। इसीलिए यह वेदांग शब्दों को 'व्युत्पन्न' या धातुज मानता है। उदाहरण के लिये दुहिता शब्द। निरूक्त के अनुसार इस शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार प्रतिपादित की गई है –'दुहिता कस्मात दुर्हिता, दूरेहिता दोग्धेर्वा।' कन्या को दुहिता इस कारण कहते हैं, क्योंकि माता–पिता का हित इसी बात में है कि वह उनसे दूर रहें, या वह उनसे सदा धन को दोहती रहती है या उसका हित संपादित करना कठिन होता है। शब्द और अर्थ में जो सम्बनध है वह सहेतुक है अकारण नहीं। इसी सम्बन्ध को प्रतिपादित करना निरूक्त का कार्य है। निरूक्त शब्दों का रूढ़ि नहीं मानता, उसके अनुसार वैदिक शब्द यौगिक है। निरूक्त निघण्टु की व्याख्या के रूप में है। वेदों के कठिन शब्दों को निघण्टु में संग्रहित किया गया है। उसे वैदिक शब्दकोष कहा जा सता है। कतिपय विद्धानों के अनुसार निरूक्त के कर्ता यास्काचार्य ही निघण्टु के रूप में वेदों के दुरूह शब्दों का संग्रह भी किया था और फिर निरूक्त के रूप में उस पर भाष्य लिखा था। पर प्राचीन ग्रन्थों से निघण्टु का निरूक्त से पूर्ववर्ती होना प्रमाणित होता है। महाभारत के अनुसार निघण्टु की रचना सबसे पहले प्रजापति कश्यप द्वारा विरचित है या नहीं इस प्रश्न पर मतभेद हो सकता है पर यह मानना असंगत नहीं होगा कि अत्यंत प्राचीन काल में भारत में वेदों के विशिष्ट एवं दुरूह शब्दों का पृथक–पृथक वर्गों में कोष बनाने की प्रवृत्ति प्रारम्भ हो चुकी थी और इस प्रकार के कोषों को निघण्टु कहा जाता था। वर्तमान समय में जो निघण्टु ग्रंथ उपलब्ध है, उसमें तीन काण्ड है – नैघण्टुक काण्ड, नैगम काण्ड, और दैवत काण्ड। नैघण्टुक काण्ड में तीन अध्याय है और अन्य काण्डों में एक एक अध्याय है। निघण्टु की व्याख्या के प्रयोजन से जो निरूक्त लिखे गये, उनमें यास्काचार्य का निरूक्त सबसे प्रसिद्ध है और वही इस समय प्राप्य भी है। निरूक्त पर अनेक टीकाऐं भी बाद में लिखी गई, जिनमें दुर्गाचार्य की टीका सबसे महत्वपूर्ण है। उसमें निरूक्त में आये वेदमन्त्रों की व्याख्या बड़े स्पष्ट में की गई है। शब्द को स्पष्ट करने के दो तरीके हो सकते हैं– प्रथम उस शब्द की इस प्रकार व्याख्या करना, जिससे इस बात का पता चले कि उस शब्द में धातु क्या है, प्रत्यय क्या है उनका प्रत्येक का अर्थ क्या है एवं धातु और प्रत्यय के परस्पर योग से उनमें जो विकार आया है, उसका स्वरूप एवं नियम क्या है ? इस पद्धति को व्याख्या तथा कम प्रचलित रूप में योग भी कहते है। इस पद्धति पर शब्दों की व्याख्या करने वाले शास्त्र और ग्रंथ को भी व्याकरण ही कहा जाता है। पाणिनी की अष्टाध्यायी इसी प्रकार का ग्रंथ है।

* अध्यापिका, शासकीय माध्यमिक विद्यालय, बघाना – जिला इन्दौर (म.प्र.) भारत

द्वितीय शब्द के अर्थ को ही स्पष्ट करना। इस पद्धति में भी बहुधा-बहुधा शब्द के आधार को ही खोजा जाता है। किंतु इसमें धातु प्रत्यय उनके योग से होने वाले विकार की व्याख्या तो की जाती है पर वह उतनी विशिष्टता से व्याकरण में की जाती है। अत: हम इस पद्धति को शब्द की सामान्य व्याख्या करने वाली तथा पहली पद्धति को विशेष व्याख्या करने वाली कह सकते हैं। इस सामान्य पद्धति को ही निरूक्त या निर्वचन कहा जाता है। अधिक स्पष्टता के लिये प्रथम पद्धति को शब्द निर्वचन और दूसरी पद्धति को अर्थ निर्वचन कहा जाता है। निर्वचन और निरूक्त शब्दों में एक अन्तर और भी है: निर्वचन केवल सामान्य ढंग से व्याख्या करने की इस पद्धति को ही कहते हैं। जबकि निरूक्त इस पद्धति पर प्रचलित शास्त्र तथा लिखित ग्रंथ को भी कहते हैं। निर्वचन पद्धति को स्पष्ट करने की दृष्टि से निम्न श्लोक बहुत प्रसिद्ध है।

वर्णागमो वर्ण - विपर्ययश्च द्वौ चापरौ वर्ण - विकार नाशौ।
धातोस्तदर्थतिशयेन योगस्तदुच्यते पंचविधं निरूक्तम्।।

ब्राह्मण ग्रंथों में निरूक्त शब्द का प्रयोग शब्द शास्त्र की निर्वचन शाखा या निरूक्त शास्त्र के लिये नहीं हुआ है, अपितु देवताओं के स्वरूप का निरूपण अर्थ में हुआ है। जिस देवता या उससे सम्बद्ध वस्तु का स्वरूप स्वत: स्पष्ट हो या स्पष्ट रूप से निरूपित (प्रतिपादित) किया गया हो, उसे ब्राह्मणों में निरूक्त कहा गया है। अत: ब्राह्मणों में निरूक्त शब्द का प्रयोग देव विद्या के संदर्भ में ही आया है। यह नि:संकोच कहा जा सकता है। अन्य साक्ष्यों से भी इस निष्कर्ष की पुष्टि होती है।

(1) छान्दोग्योपनिषद्[5] में आए देव विद्या शब्द का अर्थ आचार्य शंकर ने निरूक्तम् किया है। इससे सिद्ध होता है कि शंकराचार्य के मत में निरूक्त शास्त्र का विषय देव विद्या था। यास्काचार्य के निरूक्त से भी इसी निष्कर्ष की पुष्टि होती है। उनके निरूक्त के चौदह अध्यायों में से मात्र छ: अध्यायों में अर्थात समूचे निरूक्त के आधे से भी कम भाग में, शब्दों का भाषा-शास्त्रीय निर्वचन किया गया है और शेष भाग में देवताओं का निरूपण किया गया है। निर्वचन वहां है अवश्य परन्तु प्रमुखता देव-विद्या की ही है। यही कारण है कि शेष भाग का नाम भी उन्होंने दैवतकाण्ड रखा है। इससे सिद्ध होता है कि यास्क के निरूक्त के दो प्रतिपाद्या है।

(क) शब्दों का भाषा - शास्त्रीय निर्वचन और (ख) वैदिक देवताओं का स्पष्टीकरण। इस निष्कर्ष की पुष्टि इस तथ्य से होती है कि जहां शब्दों के निर्वचनम् वाले भाग के लिए उन्होंने अपना उपाद् घातात्मक वक्तव्य दैवत-काण्ड के प्रारम्भ, अर्थात सातवें अध्याय के प्रारम्भ में दिया है। ब्राह्मणों में निर्वचन बहुतायत से मिलते हैं।

इससे स्पष्ट है कि इस साहित्य के प्रवक्ता आचार्य निरूक्त-शास्त्र के इस भाषा शास्त्रीय रूप से भली-भाँति परिचित है। अन्तर यही है कि वहाँ निरूक्त शब्द का प्रयोग इस अर्थ में नहीं मिलता।

पर इसके आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि उस समय शब्द शास्त्रपरक अर्थ में निरूक्त शब्द का प्रयोग नहीं होता था।

निष्कर्ष -निरूक्त शास्त्र का आरम्भ भाषा शास्त्रीय अध्ययन के द्वारा वैदिक देवताओं का स्वरूप स्पष्ट करने वाली विद्या के रूप में हुआ होगा। अर्थात् भाषा शास्त्र और देव विद्या ये दोनों ही निरूक्त शास्त्र के विषय रहे होगें।

व्याकरण के समान निरूक्त ग्रंथों की भी एक लम्बी परम्परा ही है, जिसके पर्याप्त प्रमाण आज अन्वेषकों को सम्भवत: प्राप्त हो चुके हैं तथा सम्प्रति उपलब्ध यास्कीय निरूक्त में उद्धृत अनेक नैरूक्त आचार्यों के मतों से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। इन निरूक्त ग्रंथों में प्रधानत: वैदिक तथा प्रसंगत लौकिक दोनों प्रकार के दुरूढ़ अथवा रूढ़िभूत शब्दों का निर्वचन किया गया था।

ये नैरूक्त आचार्य पहले निर्वाच्य शब्दों के संग्रह के रूप में अपनी दृष्टि से एक प्रकार के शब्दकोष (निघण्टु) का संग्रह ग्रंथ का प्रणयन करते थे। निरूक्त ग्रन्थों में शब्दों में निर्वचन के साथ उदाहरण के रूप में मन्त्रों को उद्धृत कर संक्षेप में उनकी व्याख्या की संभवत: की जाती रही है।

सायण ने निघण्टु को निरूक्त मानते हुये 'निरूक्त' शब्द की व्युत्पत्तियां दी है।

(1) 'अथविबोधे निरपेक्षतया पदजातं यत्रोक्तं तन्निरूक्तम्'।

(2)'एकैकस्य पदस्य सम्भावित अवयवार्था यत्र नि:शेषणोचयन्ते तन्निरूक्तम्' भाषा कठिन लगने पर उसे समझने में सुविधा के लिये निरूक्त और व्याकरण नामक दो वेदांगों का प्रचलन हुआ। व्याकरण शास्त्र के इतिहास से विदित होता है कि वैदिक-भाषा का सर्वप्रथम व्याकरण वैदिक शब्दों का संकलन करके उनके प्रतिदव्याख्यान के रूप में किया था एवं हित श्रूयते बृहस्पतिरिन्द्राय दिव्यं वर्ष-सहस्त्रं प्रतिपदोक्तानां शब्दानां शब्द पारायणं प्रावोच (महाभाष्य पस्पशा, गुरूकुल झज्जर संस्करण, पृ. 25). 6. ठीक यही प्रक्रिया निरूक्तशास्त्र आवश्यक शब्दों का संकलन करके आचार्य उन पर टिप्पणी के रूप में निर्वचन लिखते थे। इस प्रकार प्रत्येक नैरूक्त आचार्य अपना शब्दकोष संकलित करते थे, तथा फिर उसकी व्याख्या के रूप में निरूक्त लिखते थे। नैरूक्तों की परम्परा में शब्दों के इस प्रकार के संकलन को निघण्टु या बहुवचन में निघण्टव: कहा जाता था। आचार्य यास्क ने भी पहले अपना एक शब्दकोष को उन्होनें यद्यपि समाम्नाय नाम दिया। किंतु चूंकि उनके पहले के लोग ऐसे शब्दकोषों को निघण्टु नाम से पुकारते थे, अत: समय के प्रवाह ने उनके नये नाम को स्वीकार करने से इंकार कर दिया और उनके कोष ग्रंथ का नाम भी निघण्टु ही प्रचलित हो गया।

'सामाम्नाय: समाम्नात: स व्याख्यातएय:। तमिमं समाम्नायं निघण्टव इत्याचक्षतेय (निरूक्त 1/1)6

यास्क के इस समाम्नाय या निघण्टु में 1770 या 1771 शब्द तीन काण्डों और पांच अध्यायों में निबद्ध है इसका संकलन एक बहुत सुनियोजित परिकल्पना पर हुआ है। पहले तीन अध्यायों में एकार्थक सरल शब्द दिए गए है, फिर उसका एक प्रसिद्ध पर्याय शब्द देकर उनकी संख्या बतला दी गई है।

निरूक्त (1/20) में इन अध्यायों को नैघण्टुक काण्ड के अन्तर्गत माना है। चौथे अध्याय में अनेकार्थवाची विलष्ट शब्द तीन खण्डों में निबद्ध हैं। इस अध्याय को उन्होंने नैगम या ऐकपादिक कहा है।

(निरूक्त 4/1) पांचवे अध्याय में देवताओं से सम्बद्ध छह खण्डों में है। इस अध्याय को दैवत काण्ड नाम दिया है। (1/20)।

यास्कीय निरूक्त के व्याख्येय ग्रन्थ के रूप में जो निघण्टु आज मिलता है वह पांच अध्यायों में विभक्त है। उनमें से प्रथम तीन अध्याय को नैघण्टुक काण्ड कहा जाता है। इन अध्यायों में पर्यायभूत प्रतिपादिक शब्दों तथा क्रियापदों लृट्लकार अन्य पुरूष एकवचन में तथा क्रियापद में निर्दिष्ट है। इन तीन अध्याय के शब्दों का निर्वचन निरूक्त के द्वितीय और तृतीय अध्याय में किया गया है। प्रो. राजवाड़े का विचार है कि निघण्टु के इस प्रथम नैघण्टुक काण्ड में कुछ ऐसे शब्द भी मिलते है जो आज वैदिक साहित्य में अनुपलब्ध है।

प्रो. स्कोल्ड का विचार है कि निघण्टु नाम पहले किसी प्राचीन समय में केवल इन तीन अध्यायों के सामूहिक नाम नैघण्टुक काण्ड से भी होती है, जो

निघण्टु शब्द से ही बना हुआ है। परन्तु बाद में निघण्टु नाम का प्रयोग 'नैगम', 'दैवत' काण्डों के लिये भी होने लगा। इससे यह स्पष्ट है कि पहले तीन अध्याय में निघण्टु के प्राचीनतम अंश है। (द्र. यास्कीय निरूक्त, विष्णुपद भट्टाचार्य पृ. 24, 25) निघण्टु के चतुर्थ अध्याय को तीन खण्डों में विभक्त करके उसमें स्वतंत्र शब्दों का संग्रह किया गया है। इस अध्याय को नैगम या ऐकपदिक काण्ड कहा जाता है। यास्क ने निरूक्त के इस अध्याय के चौथे पांचवे तथा छठे अध्याय में की है। शब्दों का निर्वचन करने से पूर्व निरूक्त के प्रथम अध्याय में यास्क ने पदों के चार प्रकार नाम, आख्यात, उपसर्ग तथा निपात और उनके लक्षण तथा उदाहरण दिये, सभी शब्दों को धातुज मानने का सिद्धांत तथा मन्त्रों की अनर्थकता के सिद्धांत का विस्तार से प्रतिपादन किया। सातवें अध्याय में देवतावाचक शब्दों का निर्वचन आरम्भ करने से पहले भी यास्क ने 'दैवत' तथा देवता की परिभाषा दी, अनिर्दिष्ट देवता वाले मन्त्रों के दैवता ज्ञान का उपाय बताया, आध्यात्मिक दृष्टि से त्रिविधदेवतावाद तथा अधियज्ञिक दृष्टि से बहुदेवतावाद की चर्चा की तथा तीनों का बड़े संक्षेप से समन्वय करते हुये देवताओं के पुरूषविध अपुरूषविध, उभयविध अथवा कर्मात्मा होने की बात कहीं और नैरूक्तों के अधिदैविक पक्ष के अनुसार तीनों लोकों की दृष्टि से तीन प्रधान देवताओं अग्नि, रूद्र और आदित्य के सहचारियों का उल्लेख किया।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ऋग्वेद संहिता (1/9/9),
2. ऋग्वेद संहिता (1/34/10),
3. ऋग्वेद संहिता (1/46/4),
4. ऋग्वेद संहिता (1/48/8)
5. छान्दोग्योपनिषद् (7/1/2)
6. निरूक्त (1/1)

****

राजस्थान के प्रयोगधर्मी कलाकार डॉ. जगमोहन माथोड़िया का रचनात्मक संसार

डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला * प्रिया बापलावत **

प्रस्तावना – राजस्थान देश की वह कलादीर्घा है जहाँ की वसुंधरा ने प्राचीन काल से ही विभिन्न रंगों से साक्षात्कार किया है। 'यहाँ की माटी ने परम्परागत शैली में काम करने वाले सिद्धहस्त कलाकारों और आधुनिक तथा समकालीन प्रवृत्तियों में सृजन करने वाले प्रयोगधर्मी कलाकारों को जन्म दिया।'[1] राजस्थान की कला और संस्कृति का विराट परिदृश्य इस बात का साक्षी है। 'जिसकी विविधता के साथ-साथ उत्कृष्ट सांस्कृतिक परम्परा रही है। यहाँ की बालू टीलों पर उभरती मिट्टी सर्पाकृति रेखायें स्वच्छंद निर्मल आकाश उस पर विविध रंग के पक्षियों की अकुलाहट स्वर लहरियों और स्त्री पुरूषों के सतरंगी परिधान और उस पर भी प्राकृतिक विपदाओं से आक्रान्त बालू और रेत के टीलों के बीच जिन्दगी की अनेक कठिनाईयों से जूझते हुए भी इस मरू प्रदेश में कला, शिल्प, गीत, संगीत नृत्य आदि विविध सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विधाओं के लिए सदैव अनुकूल परिस्थितियों का संजोग व रूचि विद्यमान रही है।'[2]

यही कारण है कि यहाँ के कलात्मक वातावरण में आज भी कलाओं की प्रतिध्वनि गुंजायमान है और इसी कलात्मक वातावरण में जन्में अनेक कलाकारों ने अपनी सृजनात्मक शैली व कला से भारतीय कला परिदृश्य पर अपना नाम अंकित किया है। जहाँ एक और कलाकारों की कृतियों में परम्परागत राजस्थानी शैली के दर्शन होते हैं वही दूसरी ओर नवीन प्रयोगों की उजास कृतियों में स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होती है। 'यद्यपि राजस्थान की समसामयिक कला में सौन्दर्यबोध कलाभिव्यक्ति तथा रचनाधर्मिता के प्रति कलाकारों की रूचि काफी समृद्ध हुई है। वे अब किसी शैली मात्र का अनुसरण न करके अपनी निजी संवदेनाओं के साथ तकनीक और माध्यम के औचित्य को सही विस्तार देने का प्रयत्न करते महसूस होते हैं। यहाँ की कला में प्रमुख रूप से दो प्रवृत्तियाँ देखी जा सकती है। मूर्त्त (स्मृति और चाक्षुष संवेदना), अमूर्त्त (कल्पना की गहनता) रूप क्योंकि वस्तुगत के सौन्दर्यात्मक संकेत कलाकार की रूचि और आदर्शों के अनुसार ही रूप ग्रहण करते हैं।

एक कलाकार की दृष्टि संवेदना रूचिशील विषयों के संस्पर्श से कलाकार के स्मृति कोष को समृद्ध बनाते हैं और स्मृति यथार्थ रूपाकारों को ही अपने कोष में संग्रहीत होने की अनुमति देती है। जब ये अनुभूत विषय अभिव्यक्ति के लिए लालायित अपनी गतिशीलता धारण करते हैं तो कलाकार की तूलिका स्वत: इन्हें अपने अनुकूल माध्यम द्वारा रूपायित करने की क्रिया प्रारंभ कर देती है।'[3] डॉ. जगमोहन माथोड़िया का रचना संसार भी संवेदना, धर्म, प्राकृतिक सौन्दर्य अमूर्त्त रूपाकारों, प्रेम की स्मृतियों, की सघनता से आबद्ध है जिसमें इनकी कलात्मक सृजनशीलता का बहुत बड़ा योगदान है।

डॉ. जगमोहन माथोड़िया ने अपनी आविष्कारक सोच एवं दक्ष तूलिका द्वारा सृजन के नवीन मार्ग प्रशस्त किये हैं एक कलाकार के रूप में जगमोहन माथोड़िया 'ऐसे बिन्दु पर खड़े हैं जहाँ से कला का उत्स नजर आता है।'[4] जिन्होंने मात्र अपनी अभिव्यक्ति को ही नहीं अपितु राजस्थानी कला जगत को नवीन दिशा दी है तथा राजस्थान की कला को भूण्डलीय स्तर तक पहुँचाने का अथक् प्रयास आज भी निरन्तर जारी है। अत: आपकी कला के आदि से लेकर अन्त: तक के प्रत्येक पड़ाव को समझने के लिए उनके शैशव अवस्था पर दृष्टिपात करना होगा जहाँ से कलात्मक अभिव्यक्ति को प्रेरणा और प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। 'किसी भी कलाकार को बनने में उसके पारिवारिक संस्कार, परिवेश विशिष्ट व्यक्तियों से संपर्क तथा सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व कलात्मक परिस्थितियों का अमूल्य योगदान रहता है उसकी चिन्तनशीलता और निरंतर स्पंदित होने वाला भावुक हृदय उसे मसिजीवी बनाता है।'[5] और किसी न किसी रूप में उसका जीवन कला में व्यक्त हो जाता है कलाकार का जीवन जितना गुरूत्वपूर्ण और दर्शन जितना उदात्त होता है उसका सर्जन भी उतना ही भव्य होता है।'[6]

डॉ. जगमोहन माथोड़िया का व्यक्तित्व बहुआयामी है उनके व्यक्तित्व निर्माणिक तत्त्वों में उनके परिवार व कला गुरू स्व. मोहन शर्मा जी का अविस्मरणीय योगदान रहा है। जिसकी प्रतिक्रिया उनके संपूर्ण कला में प्रतिबिम्बित होती है। डॉ. जगमोहन माथोड़िया का व्यक्तित्व सरल, सहज व तरल इन तीन गुणों का त्रिवेणी संगम है तथा ऐसे व्यक्तित्व में ही किसी विशिष्ट प्रतिभा का निर्माण सम्भव है। वह सौन्दर्य और संवेदना का ऐसा रसायनिक घोल है जो उनकी कृतियों में पारदर्शी होकर सर्वत्र देखा जा सकता है। अत: आपका जन्म 6 मार्च 1959 को राजस्थान प्रदेश के बारां जिले में हुआ। डॉ. जगमोहन माथोड़िया का बचपन एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार में बीता तथा माता-पिता के पैतृक एवं वंशानुगत संस्कार कलाकार जगमोहन के 'व्यक्तित्व निर्माण में मूल विधायक तत्त्व के रूप में विरासत में मिले। यही कारण है कि वंशानुक्रम के अंतर्गत माता-पिता के जैविक गुणों के कारण प्रारम्भ में' माथोड़िया के व्यक्तित्व में कलाकार बनने के संस्कार कायम रहे। बाल्यकाल से ही आपके घर में कलात्मक वातावरण रहा जो आपको कलाकार बनने में सहायक रहा। आपके पिता का नाम स्व. कस्तूर चंद तथा माता का नाम स्वर्गीय श्रीमती जगन्नाथ बाई है आपके पिताजी ने एम.ए. चित्रकला विषय से किया किन्तु कार्यों में अत्यधिक व्यस्त होने के कारण आपके पिता ने कला के क्षेत्र में कोई विशेष कार्य नहीं किया, जो पेशे से ऑडिट इन्सपेक्टर थे। डॉ. जगमोहन माथोड़िया का कहना है कि उनकी कला यात्रा के प्रथम प्रेरणा स्त्रोत उनके पिता व माता ही थे। आपने बाल्यावस्था में पिता को घर की दीवारों पर शेखावटी शैली के चित्रों को बनाते हुए देखा करते थे व माता जगन्नाथ बाई को बार त्यौहार पर घर के आँगन की माण्डना व रंगोली से अलंकृत करते देखा करते थे। जो उनके बाल मन को बेहद उद्वेलित करते थे।

* सहायक प्राध्यापक (कला) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
** शोधार्थी (कला) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

बस यही से कलाकार जगमोहन माथोड़िया के मन में चित्रकार बनने का अंकुर फूट पड़ा।

इस प्रकार कलाकार जगमोहन का बचपन ऐसे लालित्यपयपूर्ण आँगन में बीता जहाँ कलाएँ आँगन में क्रीड़ाएँ किया करती थी तथा जो आपके मानस पटल पर अमिट छाप छोड़ती थी, जो कहीं ना कहीं उनकी सर्जन यात्रा का एवं सर्जन चेतना का प्रथम पड़ाव बिन्दु था, जो उनको आगे कलाकार बनने में उत्साहित करता था। इस प्रकार प्रतिभा तो उनके व्यक्तित्व में पहले से ही थी किन्तु उसका उचित मार्ग दर्शन आपके कलात्मक वातावरण एवं माता-पिता के वंशानुगत संस्कारों ने दिया। आपने चित्रकला विषय को कक्षा नौ से ऐच्छिक विषय के रूप में पढ़ा यह वह समय था जब कला से आपका प्रथम साक्षात्कार हुआ। यहाँ आपने कला के मूल तत्त्वों को गहराई से समझा और उन्हें अपने भीतर आत्मसात् किया तथा उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए आप बारां से कोटा आ गये तथा आपने यहाँ से बी.ए. उत्तीर्ण किया।

इस प्रकार आपने कोटा से स्नातक की पढ़ाई पूरी की। सन् 1981-1982 में आपने राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट्स में प्रवेश लिया यहाँ आपकी मुलाकात कला गुरू मोहन शर्मा जी से हुई, जिन्होंने आपको सही अर्थों में सृजन करना सिखाया तथा जिनकी कृतियों से प्रभावित होकर आपने अपनी कृतियाँ ज्यामितीय आकारों में शुरू करते हुए भवनों तथा भवनों के आकारों को अपने चित्रों का आधार विषय बनाया। यहाँ प्रवेश लेने के पश्चात् ही जगमोहन के कलाकार मन को सही मार्गदर्शन मिला।

अत: जगमोहन माथोड़िया 'व्यक्तित्व में जितनी गरिमा रखते हैं कृतित्व में भी उतना ही गुरूत्व लेकर उभरे हैं।' आपकी कृतियाँ जितनी लालित्यपूर्ण है बौद्धिक स्तर पर वे उतनी ही प्रखर है।

'आपका कृतित्व सृजनशील चेतना का वाहक है तथा आपकी कृतियों में यही सृजनशीलता विविध कोणों से उभरी है। म जितनी गहन संवेदना, एकाग्रता से आपने विषय को चित्रफलक पर उतारा है उतनी ही आपकी कृतियाँ वैयक्तिक संवेदना के रूप में दर्शक के समक्ष उजागर हुई है। आपकी कृतियों का चित्रांकन एक सूत्र में नहीं चलता कहने का तात्पर्य यह है कि वह किसी एक श्रृंखला के अनुसार नहीं चलते हैं अर्थात् आपकी कलात्मक दृष्टि सोच तूलिका किसी एक बँधन में बँध कर सर्जन नहीं करते हैं।

'इस प्रकार विषय की अपनी महत्ता होती है किसी भी विषय से जुड़ी अनेकानेक श्रृंखलाएँ कलाकार के आन्तरिक संसार की सीमातीत बैचेनी कलाकार की अपनी तूलिका के प्रयोग एवं रंगों व रेखाओं द्वारा अभिव्यक्त होती है, जो दर्शक को भिन्न-भिन्न प्रकार के पोत (टेक्सचर) एवं रंग छवियों आदि में अनोखे और अव्यक्त आनन्द का संचार कराने में सहायक होते हैं।' इस प्रकार आपकी कलाकृतियाँ नवीन दृष्टि एवं नवीन सोच का परिणाम है। आपने अब तक पाँच अलग-अलग चित्र श्रृंखलाओं का निर्माण किया है जिनमें प्रमुख रूप से राजस्थानी तीज-त्यौहारों पर आधारित धार्मिक श्रृंखला, मानवीय मुखाकृति, श्वान श्रृंखला, प्राकृतिक, चित्रण ज्यामितीय रूपाकार, पक्षी एवं अमूर्त रूपाकारों पर आधारित चित्रण मुख्य है। ये सभी चित्र श्रृंखलाएँ आपकी आदित्य दक्ष क्षमता एवं प्रयोगधर्मिता का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।

जगमोहन माथोड़िया प्रकृति के नित्य परिवर्तनशील नियम से अत्यधिक प्रभावित हैं जिसका अक्ष आपकी चित्र श्रृंखलाओं में स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होता है। आपका मानना है जिस तरह प्रकृति का स्वभाव निरंतर परिवर्तशील है उसका नित्य बदलता स्वरूप मुझे भी अपनी चित्र श्रृंखलाओं में परिवर्तन की प्रेरणा देता है।

सिटी, स्केप, लेक सिटी, लव with कप्पल, श्वान परिवार, प्रणय, लव, जन्माष्टमी, हनुमान, कृष्ण, लक्ष्मी, युगल, युगल-1, फॉरेस्ट, जैमेटिकल लैण्डस्केप, समाजवाद, आतंकवाद, युक्तामुखी आदि कुछ ऐसी कृतियाँ हैं जिसमें आपने अपनी नूतन दृष्टि को संयोजित कर सौन्दर्य की अविरल धारा को प्रतिबिम्बित किया है। 'इसके अतिरिक्त एक कलाकार समसामयिक त्रासदियों एवं गतिविधियों से उद्वेलित हुए बिना नहीं रह सकता और उसकी कला उसके प्रभाव से अछूती नहीं रह सकती।'[11] कलाकार जगमोहन के चित्र भी इस सत्य के अपवाद नहीं हो सके आपने जनसाधारण को मतदान करने, पर्यावरण संरक्षण, आतंकवाद, जे.सी.बोस हत्याकाण्ड, युक्तामुखी तथा जोधपुर त्रासदी जैसे संवेदनशील एवं जागरूक विषयों पर आधारित चित्रों का निर्माण किया है।

जगमोहन माथोड़िया निरन्तर अभ्यास करते रहते हैं जिसके कारण आपने अपने रचना कर्म को विविध माध्यमों के साथ जिया है। किस माध्यम से कितनी सम्भावना है पहले उसका गहन अध्ययन करते हैं। तत्पश्चात् चित्रों में उन सभी को सफलता पूर्वक क्रियान्वित किया है। आपने लगभग सभी माध्यमों जैसे तैल, एक्रेलिक, जल, पेस्टल, पेन पेन्सिल, इंक, ड्राई पेस्टल, सेरीग्राफी, लिथोग्राफ, एचिंग माध्यमों में सफलता पूर्वक कार्य किया है। सशक्त एवं संतुलित संयोजन आकर्षित रंग योजना कलाकार माथोड़िया के चित्रों की मुख्य विशेषता है। चित्रण का माध्यम कोई भी हो किन्तु उनके चित्रों का संयोजन दर्शकों तथा कलाप्रेमियों को अपने सम्मोहन में बाँध ही लेता है उनके प्रत्येक चित्र में एक नया संयोजन एक नई योजना होती है।

अंतराल के साथ उनके रूपाकारों जैसे रंगों, पोतो, तानों का जो सुव्यस्थित संयोजन होता है वह सहसा ही दर्शक को अपनी ओर आकर्षित कर ही लेता है। यही कारण है कि प्रत्येक कलाकार की अभिव्यक्ति का अपना एक माध्यम होता है ,जिसके परिणामस्वरूप वह कुछ कृति से पहचाना जाता है चाहे वो शैलीगत हो या रूपात्मक कला जगत में उसकी अपनी विशिष्ट पहचान बनती है। इस प्रकार कलाकर जगमोहन माथोड़िया के सम्पूर्ण कृतित्व का अवलोकन करने से एक लम्बा जीवन वृत्ताान्त हमारे सामने आता है कि माथोड़िया को चित्र सर्जन के लिये विषय ढूँढने नहीं पड़ते वह तो स्वयं ही उनके सामने आ जाते हैं। 'आप सर्वथा नई राहों के खोजी कलाकार हैं जिन्होंने बड़े मनोयोग से विभिन्न नूतन पद्धतियाँ विकसित की है। अत: इन पद्धतियों के विन्यास में अंकित कृतियों को देखकर हम सहज ही उनके गाम्भीर्य और भावप्रवणता से विभोर हो उठते हैं।'

'भावुक व परिपक्व मन ने आपके परिवेश के संवेद्य विषय को अपनी गहराईयों में उतारा है तथा उसे रूपाकार व रंग दिये हैं कला की विधिवत् शिक्षा तथा संस्कारों ने इनकी चित्राकृतियों में अद्भुत सौंदर्य उत्पन्न किया है इनका कैनवास दक्षता का कौशल लिए हुए हैं। चटक रंगों की पृष्ठभूमि में नीले, हरे, लाल, पीले रंगों से उभरी आकृतियाँ सम्मोहन का प्रभाव उत्पन्न करती है। मन में गुप्त स्तरों तथा चेतन अवचेतन मन की प्रतिक्रियाओं ने इनमें एक अद्भुत अवलोकन आनंद उत्पन्न कर चित्रकार के कलात्मक कौशल का परिचय दिया है।'[13]

एक कलाकार की कलात्मक उपलब्धियाँ व सम्मान उसके लिए ऊर्जा का स्त्रोत होते हैं जो उसे प्रगति के पथ पर अग्रसर होने के लिए बाध्य करते हैं एक कलाकार सामान्य से अलग होता है यह भी स्पष्ट होता है जब यह पता चले की उसकी रचनाशीलता से उपलब्धियों का क्षितिज कहाँ तक विस्तृत

हो पाया है। डॉ. जगमोहन माथोड़िया की लगन तथा कला के प्रति समर्पण भाव ने आपको राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय कला क्षितिज प्रदान किया है।

लिम्बा बुक और रिकॉर्ड 2003 फॉर द लॉर्जेस्ट नम्बर ऑफ डॉग पेंटिग्स एण्ड लॉर्जेस्ट नम्बर ऑफ डॉग्स इन दा पेंटिग्स 2004, अवार्ड बॉय द नेशनल ललित कला अकेदमी इन द 8th कला मेला एट जयपुर 2000, अ नेशनल अवार्ड ऑन 50 ईयर ऑफ आर्ट इनडिपेंडेड इडिया बॉय ऑल इंडिया फाईन आर्ट एण्ड कॉफ्ट सोसाइटी न्यू दिल्ली–1997, अ स्टेट अवार्ड ऑन 50 ईयर ऑफ इन इनडिपेंडेड इंडिया 1947–1997 बॉय ऑल इंडिया फाईन आर्ट एण्ड कॉफ्ट सोसायटी, स्टेट अवार्डस बॉय राजस्थान ललित कला अकेदमी जयपुर 1987 एण्ड 1995, मेरिट सेर्टिफिकेट अवॉर्ड एण्ड गोल्ड मेडल अवॉर्डेड बॉय द सुखाड़िया यूनिवर्सिटी उदयपुर 1985 एण्ड 1986, एण्ड अवार्ड ऑफ मेरिट बॉय द जवाहर लाल नेहरू मेमोरियल फाउंडेशन न्यू दिल्ली 1986, अवार्ड ऑफ बेस्ट स्टूडेन्ट इन राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट जयपुर 1984 आदि पुरस्कारों से आपका व्यक्तित्व सृजित है।

संक्षेप में डॉ. जगमोहन माथोड़िया की 'रचनाधर्मिता को देखकर यह कहना गलत ना होगा कि आप वह वट वृक्ष नहीं अक्षयवट के समान है, क्योंकि वट वृक्ष के नीचे अन्य वृक्ष गति नहीं पाते किन्तु अक्षयवट अपने सानिध्य में आनेवाले को दिशा दीक्षा दोनों प्रदान करता है।'[14] अत: कला के प्रति समर्पण भाव व गहन कला दक्षता ने आपको कला जगत में विशिष्ट पहचान दिलाई है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. भारती, मीनाक्षी – स्वतंत्रता की अर्द्धसदी और राजस्थान की कला : समकालीन कला, ललित कला अकादमी की पत्रिका, संपादक ज्योतिष जोशी, न. शिवसुब्रमणयन प्रकाशक, ललित कला अकादमी रवीन्द्र भवन नई दिल्ली, अक्टूबर 2001, अंक – 20, पृ.सं. 1
2. वही, पृ.सं. 32
3. गौतम आर.बी. – किरण सोनी गुप्ता का रचनात्मक संसार, स्वर सरिता, संपादक देवदत्त शर्मा, प्रकाशन, मुद्रित तथा वीणा प्रकाशन हल्दिया हाउस, जौहरी बाजार जयपुर, वर्ष 6, अंक 5, 1 नवम्बर, 2013 पृ.सं. 40,
4. जोशी, डॉ. ज्योतिष – नये अर्थ संधान के कृतिकार, समकालीन कला ललित कला अकादमी की पत्रिका, संपादक ज्योतिष जोशी, नं. शिवसुब्रमण्यन प्रकाशक, ललित कला अकादमी रवीन्द्र भवन नई दिल्ली अंक 25, नवम्बर 2004, फरवरी 2005, पृ.सं. 40,
5. बोरसे, डॉ. पूनम – नागार्जुन के काव्य में जीवन दर्शन, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण– 2012, पृ.सं. 15
6. सिंह, डॉ. राधिका – महादेवी वर्मा के काव्य में लालित्य योजना, नेशनल पब्लिशिग हाउस दरियागंज नई दिल्ली, प्रथम संस्करण– 1979, पृ.सं.13
7. सिंह, डॉ. रीना – डॉ. शोभनाथ व्यक्तित्व एवं कृतित्व, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण– 2004, पृ.सं.28
8. पैठणकर, डॉ. सतीश – राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में स्त्री विमर्श, चन्द्रलोक प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण– 2013 पृ.सं. 28
9. बोरसे, श्रीमती पूनम – नागार्जुन के काव्य में जीवन दर्शन, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण– 2012, पृ.सं. 148
10. जोशी, डॉ. शेखर चन्द्र – कला के सिद्धान्त एवं चित्रकला के रंग, अल्मोड़ा बुक डिपो, उत्तराखण्ड, संस्करण– 2011, पृ.सं. 78
11. शर्मा, हरशिव – सुरेश चन्द्र राजोरिया, राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर, संस्करण–1999, पृ.सं. 10
12. जोशी, डॉ. ज्योतिष – एन.एस. बेन्द्रे अनवरत साधना की संकल्प चेतना, (समकालीन कला, ललित कला अकादमी की पत्रिका, संपादक, ज्योतिष जोशी, न. शिवसुब्रमण्यन प्रकाशक, ललित कला अकादमी रवीन्द्र भवन नई दिल्ली) अंक–25, मार्च–जून 2008, पृ.सं. 26,
13. गौतम, आर.बी. – आन्तरिक संवेग का प्रतिफलन, कला दीर्घा, दृश्य कला की अंतरदेशीय पत्रिका, संपादक अवधेश मिश्र, प्रकाशन उत्कर्ष प्रतिष्ठान लखनऊ, अप्रैल 2013, अंक–26, पृ.सं. 29
14. डॉ. नीरू – नट रंगाभिनय की त्रिवेणी गोपाल मधुकर चतुर्वेदी, कला दीर्घा, दृश्य कला की अंतरदेशीय पत्रिका, संपादक अवधेश मिश्र, प्रकाशन उत्कर्ष प्रतिष्ठान लखनऊ अप्रैल 2010, वर्ष–10, अंक–20, पृ.सं. 89

चित्र फलक

चित्र संख्या – 1

चित्र संख्या – 2

चित्र संख्या – 3

संगीत एवं संगीतज्ञों का सामाजिक स्तर

गुन्जन शर्मा *

प्रस्तावना – प्रत्येक देश का संगीत वहाँ के समाज के मनोभावो एवं विचारो का संचित प्रतिबिम्ब होता है। जैसे–जैसे मानव के विचार एवं परम्परा बदलती हैं उसी तरह संगीत का स्वरूप भी बदलता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं मनोभावों एवं विचारों की परंपरा को परखते हुए संगीत की परंपरा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही संगीत का इतिहास कहलाता है। संगीत चाहे किसी भी प्रकार का हो वह अपने विकास के लिए साधन या सामग्री जनजीवन से ही जुटाता है।'स्विगवुड की महत्वपूर्ण समाजशास्त्रीय धारणा के अनुसार दुनिया में मनुष्य अकेला नहीं होता, उसके चारों ओर प्रकृति होती है, समाज होता है। उसकी आदिम प्रवृत्तियाँ तथा प्रजातिगत विशेषताऐं, भौतिक सामाजिक परिस्थितियाँ, घटनाओं से प्रभावित होती हैं। कभी पुष्ट होती हैं, तो कभी बदलती हैं।'[1]

मानव ने अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिए प्रकृति से जो संघर्ष किया, उस सक्रिय संघर्षो के दौरान में जीवन की आवश्यकताओं के बीच ही 'कला' का जन्म हुआ। कला के माध्यम का स्वरूप, मनुष्य के मानसिक और सामाजिक विकास से संबधित है। इन कलाओं को मानव समाज द्वारा ही सीखता है। संगीत कला भी विशिष्ट सामाजिक व भौगोलिक परिस्थितियों की उपज है। संगीत चाहे भारतीय हो या पाश्चात्य, आदिम काल से ही यह सामाजिक जनजीवन से जुड़ा है। संगीत मानवीय भावनाओं को व्यक्त करने का सबसे सबल साधन है। इसी कालक्रम में संगीत भी वैयक्तिक तथा सामाजिक जनजीवन में श्रेयस्कर सिद्ध हुआ है।

'सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक स्वतंत्रता के कारण मानव जीवन में अत्यंत ही महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप समाज में मानवीय भावनाओं का नवीनीकरण हुआ जिसके फलस्वरूप शास्त्रीय संगीत भी अछूता न रह सका।'[2] जैसे–जैसे समय परिवर्तित होता गया वैसे–वैसे संगीत एवं संगीतज्ञों की स्थिति में भी मूल–चूल परिवर्तन होता गया। इस सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में विचार व्यक्त करते हुए रवीन्द्रनाथ मुखर्जी और भरत अग्रवाल जी कहते हैं–'यदि हम सन् 1879 ई. की 1979 ई. से तुलना करें तो हमारे समाज के स्वरूप, संरचना, आदर्शों, मूल्यों, संस्थाओं और रीति–रिवाजों में कितना परिवर्तन हुआ, यह देखकर हमें स्वयं ही आश्चर्य होगा।'[3]

जब मनुष्य ने अपनी अभिव्यक्तियों को दूसरों के साथ व्यक्त करना आरंभ किया तो उसे साधन की आवश्यकता हुई। धीरे–धीरे इशारों द्वारा उसने अपने आपको व्यक्त करना शुरू किया जो आगे चलकर भाषा बन गयी, इस प्रकार अपने को व्यक्त करने की चेष्टा में अनेक कलाओं का निर्माण हुआ। मानव की अभिव्यक्ति में संगीत रचना अति प्राचीन है। पूर्व पाषाण काल में जब किसी शिकार को मारा जाता था तो वहाँ के जन टेढ़े–मेढ़े आलाप भर अपने आनंद की अभिव्यक्ति करते थे। भाषा का इस युग में सही विकास न हो पाने के कारण इनके गाने में कोई शब्द न था।

उत्तर पाषाण काल में सामाजिक भावना का उदय हो जाने के कारण सामूहिक संगीत का जन्म इस युग में हुआ। चाहे स्त्री हो या पुरूष अपना कार्य करते वक्त अपने स्वर का आलाप विभिन्न ढंग से करते थे। इस काल में किसी भी सामाजिक कार्य के संचालन में स्वर को विशेष महत्व दिया गया था। वैदिक काल में चारों प्रमुख वेदों की रचना हुई जिसमें ऋग्वेद की ऋचाओं को स्वरात्मक करके एक वेद का निर्माण किया जो सामवेद कहलाया जो संगीत का मूल स्त्रोत माना गया है।

वैदिक काल में संगीत का सर्वाधिक रूप में प्रयोग ईश्वरोपासना के लिए किया जाता था। ऋग्वेद काल का प्रत्येक गृह संगीत का सुन्दर केंद्र बना हुआ था। इस काल में चारों वर्गों का उदय हो चुका था। शास्त्र की रचना का काम वर्ग विभक्त समाज में सदैव उच्च वर्ग के हाथों में रहा। ऋचाओं का गायन, उच्च स्थान प्राप्त ब्राह्मणों ने किया। इस समय समाज में पुरूष गायक वादक के अलावा स्त्रियों का संगीत में स्वाभाविक रुचि एवं योग्यता के कारण पर्याप्त सहयोग था। प्राचीन समय में अनेक संगीत जीवी जातियां निर्मित हो चली थी। नर्तक, गायक, वादक, भांड, बाजीगर, चारण एवं गणिका आदि।

समाज के अन्य वर्गों की तरह एक वर्ग संगीतज्ञों का भी निर्मित हो रहा था। संगीतज्ञों को समाज में उच्च दृष्टि से देखा जाता था। लोक संगीत के कलाकारों को भी समाज में मान सम्मान प्राप्त था। पौराणिक काल में समाज के अंदर संगीत की स्थिति आदरणीय थी। यद्यपि इस समय समाज के अंदर उच्छश्रृंखलता बढ़ती जा रही थी, लेकिन फिर भी समाज के अंदर संगीतकारों का जीवन संतुलित रूप से था। समाज में संगीत के ज्ञाता आचार्य भी होते थे जो संगीत की शिक्षा देते थे। समाज में संगीत को शिक्षा के रूप में विशेष स्थान प्राप्त था। 'जिसके अंतर्गत कल्पना, सूझ, संतुलन, स्वाभाविकता, आत्मनिर्भरता, आत्मनियंत्रण, गति, व्यायाम तथा और भी अनेक गुण संगीत विषय में समाहित हैं।'[4]

साधारण जनों के साथ–साथ उच्च श्रेणी के लोग भी संगीत की शिक्षा प्राप्त करते थे। 'अर्जुन, उत्तराकच, देवयानी आदि ने संगीत में उच्चकोटि की शिक्षा प्राप्त की थी। बड़े–बड़े नगरों में नर्तनागार तथा संगीत शालाऐं भी थी जहाँ दिन में बालक–बालिकाओं को संगीत की शिक्षा दी जाती थी।'[5]

ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय संगीत के बड़े–बड़े कलाकार भी समाज में रहे होगें। 'शतपथ ब्राह्मण, तैत्तरीय प्रतिशाख्य तथा सूत्र वांग्मय आदि में ऐसे अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं जिनमें यजमान पत्नियों द्वारा अपने कण्ठ स्वर से संगत किए जाने, वीणावादन द्वारा उपवादन किए जाने,

* शोधार्थी, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

नानाविध वाद्यों को बजाए जाने, उपगायकों तथा दासवर्ग की नर-नारियों द्वारा गान व नृत्य किए जाने का उल्लेख है।'[6]

कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र में संगीत न केवल राजनैतिक वरन् सामाजिक व्यवस्था के उच्च आदर्शों हेतु भी महत्वपूर्ण माना गया था। संगीतकारों को राज्य एवं समाज का प्रश्रय प्राप्त होने पर भी, उन पर राज्य की ओर से कुछ नियंत्रण भी थे, यथा-वर्षा ऋतु में एक ही स्थान पर रहना, अधिक दान न स्वीकार करना आदि।

मध्यकालीन समाज से हमारा तात्पर्य 15 वीं सदी से 19 वीं शदी तक के समाज से है। इस समय वैष्णव एवं मुसलमान धर्म एक दूसरे के सम्पर्क में आये और सूफी मत को जन्म दिया। संगीत कला की दृष्टि से इस मुगल काल को संगीत के स्वर्णयुग के नाम से भी जानते हैं। भारतीय शास्त्रीय संगीत राजाओं के संरक्षण में पनप रहा था। कलाकारों, संगीतज्ञों, नर्तकों व कवियों को राजा, महाराजा तथा नवाबों के दरबार में आश्रय प्राप्त था। राजभवनों में संगीत शालाओं के उल्लेख मिलते हैं। राजा एवं संभ्रान्त कुलीन वर्ग सदा गंधर्व, नट, नर्तकों, गायकों एवं वादकों से घिरा रहता था। इन कलाकारों को वेतन पर नियुक्त किया जाता था। अलाउद्दीन खिलजी, हुमायूँ, शाहजहाँ, अकबर, मानसिंह तोमर आदि अनेक शासक हुए हैं जिनके द्वारा ललित कलाओं को उचित प्रश्रय एवं संरक्षण प्राप्त हुआ है।

कलाकारों को जागीर, जमीन, गाँव, हवेली आदि बख्शिश में दी जाती थी। पालकी, घोड़े, हाथी, नौकर, चाकर आदि इनकी सेवा में रखे जाते थे। श्रेष्ठ कलाकारों को उनकी कला के प्रोत्साहन तथा सम्मान स्वरूप, सिरोपाव, वस्त्र, स्वर्णाभूषण, नकद राशि, विभिन्न उपाधियाँ जैसे- संगीत चूड़ामणि, संगीत भास्कर, संगीत सरोज, आफताबे मूसीकी, संगीत रत्न सरीखी आदि दी जाती थी।

अकबर दरबार में तानसेन के जाते समय रीवाँ नरेश ने उनकी पालकी में काँधा लगाया था। इस तरह का सम्मान देना कोई मामूली बात नहीं थी तथा जब अकबर ने तानसेन के गायन पे मंत्रमुग्ध हो पुरूस्कार स्वरूप दो लाख रू. दिऐ। इसी क्रम में ग्वालियर नरेश द्वारा एक पूज्य संगीतज्ञ को आश्रय प्राप्त था। एक बार वर्षा समय में वे बेसन की पकौड़ियाँ बना रहे थे और साथ ही राग मल्हार को गाते हुए अलापने लगे, जब धुँआ रानी के महल में पहुँचने लगा तो ग्वालियर नरेश ने वहाँ जाकर अत्यंत विनीत भाव से आलाप बंद कर विश्राम करने को कहा। उस समय तो वे विश्राम करने चले गए परन्तु अगले ही दिन उन्होंने महल का परित्याग कर दिया फिर कई वर्षों के पश्चात् राजा के अत्यंत अनुग्रह करने पर वे वापस आये। इसी प्रकार शादी खाँ व मुराद खाँ दोनों दिल्ली दरबार के खास गवैये थे। ये पिता-पुत्र दोनों साथ ही गाते थे। दतिया महाराज श्री भवानी सिंह उनके गायन से अत्यंत प्रभावित हुए और उन्होंने उनके लिए सवा लाख रू. का चबूतरा बनवाया उस पर किमती दुशाला बिछवाई, हाथी एवं साज सहित घोड़े अनेक मूल्यवान पोषाक एवं बहुमूल्य आभूषण दिए, परन्तु महाराज ने उनसे कहा कि खाँ साहब! आप लोगों को दिल्ली दरबार में ऐसा सम्मान न प्राप्त हुआ होगा, यह बात इन कलाकारों को अत्यंत बुरी लगी और उन्होंने प्राप्त हुआ सारा पुरूस्कार ग़रीबों में बाँट दिया। जब राजा को इसकी जानकारी हुई तो महाराज ने उन्हें पुन: पुरूस्कार से पूर्ववत् सम्मानित किया और क्षमा भी माँगी।

मुगलों के राज्यकाल में विशेषकर अकबर से शाहजहाँ तक के काल (1556-1658 ई.) में संगीत अपने शिखर पर पहुँचा। अकबर की उदारता ने भारतीय कलाओं के लिए राजकीय आश्रय के द्वार मुक्त हस्त खोल दिए और देशी कलावंत मुगल दरबार से जुड़कर विभिन्न कलाओं के विकास में लग गए। 16 वीं शताब्दी के अनेक बड़े संगीतज्ञ या तो ग्वालियर के होते थे या वे मश्शद, तबरेज़ आदि ईरानी नगरों से आते थे। राजा मानसिंह तोमर के शासनकाल में नायक भिक्षु ने ग्वालियर की संगीत परम्परा की स्थापना में अपना ठोस योगदान प्रदान किया था। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र विक्रमाजीत ने भी उन्हें वही सम्मान प्रदान किया था। इनके पश्चात् वे कलिंजर के राजा कीरतसिंह और वहाँ से वे गुजरात गए जहाँ सुल्तान बहादुर ने बड़े प्रेम व सम्मान के साथ दरबार में रखा।

राजाओं के निद्रा के समय तथा जागने के समय तक के लिए संगीत का उपयोग होता था। अपनी सत्ता को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए राजा विभिन्न बातों की तरह संगीत आदि कलाओं की परस्पर प्रतियोगिताओं को भी महत्त्व देते थे। युद्ध अथवा शुभ कार्य हेतु जब राजा जाता था या जब युद्ध विजयी होकर आता था तो संगीतज्ञ भी गाते बजाते हुए उसकी सेना के साथ-साथ चलते थे। ऐसी स्थिति में संगीत की ध्वनि का न आना अशुभता की ओर संकेत करती थी। आपसी मैत्री के रूप में राजा अपने श्रेष्ठ गायकों एवं वादकों को अपने पड़ोसी राज्यों में भेंटस्वरूप भेज देते थे।

संगीतकारों का वर्तमान समाज में उच्च स्थान था। इस युग का संगीतज्ञ अपने को दूसरे ही सांस्कृतिक वातावरण में महसूस करता था जिसमें कला, ज्ञान और विद्या का स्थान अत्यंत उच्च था। इस समय घराना पद्धति का भी प्रचलन था। गुरू शिष्य को नि:शुल्क शिक्षण प्रदान कर पूर्ण रूप से विद्या में पारंगत कर देता था। संगीतज्ञों को राजाश्रय प्राप्त होने से किसी भी प्रकार की जीविका संबंधी समस्या नहीं थी तथा वह पूर्णत: परम्परागत संगीत की ही आराधना और सेवा किया करते थे।

सामन्तीय संरक्षण के सम्बन्ध में 'पं. विष्णु दिगंबर पलुष्कर जी ने स्वयं बताया है कि चाहे गुरू का अपमान हो, उस समय अन्नदाता की आज्ञा का पालन करना आवश्यक था। उनके शब्दों में-'न गाऊँ तो अन्नदाता का अपमान होगा, गाऊँ तो गुरू का अपमान तथा श्राप। इस संकट से बचने का एक ही उपाय था, वह था वहाँ से बाहर जाकर अपने पैरों पर खड़ा होना तथा कीर्ति प्राप्त करना।'[7] इसी मानसिक उथल-पुथल के कारण समाज में कलाकारों की स्थिति में परिवर्तन आया।

बीसवीं शताब्दी को भारतीय संगीत का संक्रमण काल माना जा सकता है। 19वीं सदी तक तो भारतीय संगीत राज दरबारों की सीमा में बन्द था पर आधुनिकीकरण के फलस्वरूप मानवीय भावनाओं में भी अंतर आने पर शास्त्रीय संगीत ने एक नई करवट ली। स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ देश में एक सुदृढ़ केंद्रिय सरकार का गठन हुआ जिसके अधीन सारे देश में राष्ट्रीय एकता की भावना बलवती हुई। धीरे-धीरे विद्धानों एवं कुछ महाराजाओं के सत्प्रयासों से संगीत संकुचित स्थिति से बाहर आया। लोकतंत्र की स्थापना से संचार माध्यमों द्वारा संगीत का प्रचार-प्रसार हुआ व इस क्षेत्र में जागृति आई।

आधुनिक समय में पत्र, पत्रिकाऐं, रेडियो, टी.वी. जैसे जन संचार के विभिन्न माध्यम सरकारी, गैरसरकारी संस्थाऐं, निजी व्यवसाय, संगीत समारोह, विचार गोष्ठियों, आदि से संगीत कलाकारों को जीविका के साधन मिलने लगे हैं। आज रिकॉर्डस, सी. डी., रेडियो, दूरदर्शन, कैसेट व संगीत मंच प्रदर्शन, सरकारी उपाधियाँ, सांस्कृतिक शिष्ट मंडलों के अंतर्गत विदेशों की यात्रा, विभिन्न छात्रवृत्तियां, आदि से समाज में संगीत श्रोता समुदाय वर्ग का विकास हुआ है। वास्तव में आधुनिक समाज में यही श्रोता समुदाय ही संगीत कलाकारों का सच्चा संरक्षक है। आज अधिकतर माता-पिता अपने बच्चों

को संगीत सिखाना चाहते हैं, एवं संगीत कलाकार बनाने की उत्कृष्ट इच्छा रखते हैं। वैज्ञानिक तकनीकी विशेषज्ञ, डॉक्टर, राजनीतिज्ञ का सपना देखने के साथ–साथ संगीतकार बनने का सपना भी लोगों की आँखों में रहने लगा है। विभिन्न आयोजित होने वाले सम्मेलनों, विभिन्न छात्रवृत्तियों के द्वारा संगीत विषय का गहनता से अध्ययन कर अपनी पहचान बनाता है।

निष्कर्ष स्वरूप यह स्पष्ट है कि वैदिक युग में भारतीय संगीत का प्रयोग भक्ति तथा ईश्वरोपासना के लिए किया जाता था। मध्यकाल में संगीत विलासिता एवं मनोरंजन के रूप में दिखाई देता है। इस काल में भारतीय संगीत में एक संघर्ष ऊपरी तौर पर दिखाई देता है तथा आधुनिक युग में कई प्रकार की चुनौतियां संगीत–संगीतकारों के समक्ष उपस्थित हुई हैं। विद्वानों एवं समाज के संगीतज्ञों के वैयक्तिक प्रयत्नों से हिंदुस्तानी संगीत अधुनिक शताब्दी में एक नूतन रूप में हमारे सम्मुख आज उपस्थित है। संगीत कला आधुनिक काल में अनुकूल राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक चेतना से परिपूर्ण वातावरण पाकर शिक्षा का अंग बन चुकी है।

अत: 'संगीत मानव जीवन का प्रमुख मूलाधार है। नाद, लय व गति जो कि चेतन जीवन के विशिष्ट लक्षण है, वे ही संगीत के अंगभूत अवयव हैं। संगीत के मूल तत्व ही मानव जीवन के संचालक तत्व हैं'[8] और संगीत की इस स्थिति को कायम रखना हर राष्ट्र प्रेमी तथा राष्ट्राभिमानी का प्रमुख कर्त्तव्य है, विशेषकर संगीतज्ञों तथा संगीत प्रेमियों का।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. शर्मा सत्यवती, (1995), संगीत का समाजशास्त्र: नई दिशाऐं, पृ0 सं0 38, पंचशील प्रकाशन जयपुर।
2. शर्मा अमिता, (2000), शास्त्रीय संगीत का विकास, पृ0 सं0 6, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली।
3. मुखर्जी रवींद्रनाथ, सामाजिक नियंत्रण एवं सामाजिक परिवर्तन, पृ0 सं0 12
4. कुमार ऋषितोष, (2010), संगीत शिक्षण के विविध आयाम, पृ0 सं0 34, कनिष्क पब्लिशर्स दिल्ली।
5. वही, पृ0 सं0 57
6. डॉ.सक्सेना मधुबाला, (1990), भारतीय संगीत शिक्षण प्रणाली एवं उसका वर्तमान स्तर, पृ0 सं0 44, हरियाणा साहित्य अकादमी चंडीगढ़।
7. गायनाचार्य पं0 विष्णु दिगंबर पलुष्कर, प्रो0 बी. आर. देवधर, पृ0 सं0 7
8. कुमार ऋषितोष, (2010), संगीत शिक्षण के विविध आयाम, पृ0 सं0 34, कनिष्क पब्लिशर्स दिल्ली।

****

AIDS Free Society - Need For Academic Aids Awareness Among Teacher Trainees

Dr. Surekha Jain *

Abstract - A total of 200 teachers trainees from B.Ed. and D.Ed. field of Ujjain (M.P.) region were surveyed to assess and compare their Awareness regarding AIDS/HIV. A self administered questionnaire containing mostly close- ended questions were used. Majority of the teachers were aware and various aspects of HIV/AIDS. Teacher trainees of B.Ed. female student's were found to have a better perception than D.Ed. teacher trainees. Ways and means of improving the effectiveness of AIDS education are also suggested.

Introduction - The AIDS (acquired immuno deficiency syndrome) has caused a worldwide epidemic which can be called as pandemic because it continues to spread throughout the world. The virus was first identified as the cause of AIDS in the late 1970 but the first case of AIDS was reported in USA (North America) in 1981

It is estimated that by the end of 20th century there were 40 million people effected with HIV all over the world and India has been leading with highest number of cases (10-20 million). The tragedy is that most new infections strike the younger population, below the age of 25 years. Since there is no effective cure or vaccine for the disease, awareness remains the only safeguard for its prevention. There is danger of AIDS for everybody and only thing that can save us is to be completely informed. Therefore, currently the major thrust is on information, education and communication (IEC) campaign to make people aware in order to prevent further spread of HIV Infection (Aids An Development.2004)

After home, school is considered to be an important social institution which shape the future of children and modify the behavior of student to bring up responsible and dynamic citizens. Since a lot of work is going on for creating. awareness among pupil teachers of educational institutions play a vital role in bringing up trained teachers. Today teacher trainees are the emerging teachers of tomorrow. Teachers help in creating AIDS awareness among the school children particularly among the adolescent students.

AIDS, Difficult to get, impossible to cure but easy to prevent"

Objectives -

The main objectives of the study are

1. To discover the AIDS awareness of male and female of B.Ed. students.
2. To discover the AIDS awareness of male and female of D.Ed. students.
3. To compare the AIDS awareness of B.Ed. & D.Ed. students.
4. To compare AIDS awareness of female students of B.Ed. & D.Ed.
5. To compare AIDS awareness of male students of B.Ed & D. Ed.
6. To find AIDS awareness of B.Ed. & D.Ed students.

Purpose Of The Test - AIDS AWARENESS TEST is essentially an attempt to develop awareness among tested. The purpose of the test it to-

1. Supply the examiner/ instructor with a set of items around which he can conduct his AIDS awareness programme.
2. Create seriousness of purpose in the testee - he would become more involved in getting information about the disease as he goes through the items of the test.

Hypothesis - (HO)

Ho1 - There is no significant difference between AIDS awareness of male and female of B.Ed. Student's

Ho2 - There is no significant difference between AIDS awareness of male and female of D.Ed. Student's

Ho3 - There is no significant difference between AIDS awareness of B.Ed. & D.Ed. trainess.

Ho4 - There is no significant difference between AIDS awareness of male and female students.

Sample - The study was conducted during 2006-07 among a randomly selected 200 teacher trainees of Ujjain dist. (MP). The areas of specialization was B.Ed. and D.Ed. male and female trainees

Tools - The tool used to collect data is - AIDS Awareness Test

Standardized By

Dr. kanwarjit Singh Phfi PES (I)

Dr. Paramjit Singh M.D. (Skin & STD) Copies of the questionnaire were distributed to the teachers. Anonymity was maintained to ensure that questions were answered seriously and teachers gave their free and frank opinions.

Analysis And Interpretation Of Data - There were question with 4 alternative options and the teacher trainee has to tick the correct answer according to his knowledge.

* **Asst. Prof., Maharaja College, Ujjain (M.P.) INDIA**

Table - 1 : Table showing AIDS Awareness & significant level of B.Ed. teacher trainees (See in next page)

Table shows that AIDS awareness of male B.Ed teacher trainees is slightly higher than female B.Ed. Teacher trainees. There is no significant difference between AIDS awareness of male and female (0.01 & 0.05). Therefore, our hypothesis is accepted.

Table - 2 : Table showing AIDS Awareness & significant level of D.Ed. teacher trainees (See in next page)

Table 2 shows that AIDS awareness of female D.Ed teacher trainees is slightly higher than male teacher trainees. There is no significant difference between AIDS awareness of male and female (0.01 &0.05). Therefore our hypothesis is accepted.

Table - 3 : Comparison of AIDS awareness of male & female of B.Ed. and D.Ed. teacher trainees (See in next page)

Table 3 shows that AIDS awareness of B.Ed teacher trainees is higher than D.Ed. teacher trainees. There is significant difference between AIDS awareness among B.Ed.& D.Ed. teacher trainees. Therefore our hypothesis is rejected.

Table - 4 : Comparison of AIDS awareness of male & female of B.Ed. and male & female of D.Ed. teacher trainees (See in next page)

Findings -

1. **Ho1 :** There is no significance difference between AIDS awareness of male and female of B.Ed. students. Hence our hypothesis is accepted.
2. **Ho2 :** There is no significance difference between AIDS awareness of male and female of D.Ed. students. Hence our hypothesis is accepted.
3. **Ho3 :** There is significance difference between AIDS awareness of B.Ed. & D.Ed. students. Hence our hypothesis is rejected.
4. **Ho6 :** There is no significance difference between AIDS awareness of male and female. Hence our hypothesis is accepted.

Conclusion - The present study shows that D.Ed. teacher trainees have low AIDS awareness than B.Ed. teacher trainees. But the result obtained through this test is comparatively very low in considering the whole pandemic AIDS disease. Thus more and more efforts should be made to train our teacher trainees so that they acquire awareness, knowledge and understanding about AIDS. Our Prime Minister Dr. Manmohan Singh has observed," In the absence of a vaccine, the social vaccine of education and awareness is the only preventive tool we have". To achieve this we need special programmes to educate the teacher for proper transmission of the message to the students.

Educational Implications - Any research to be successful and to be a part of knowledge should have future and educational implications so that it can be successfully and easily implemented into the present context and for future.

Since we know that AIDS have become a threat to mankind because there is no medicine or vaccine to cure this disease.

Even though schools and colleges are asked to create awareness about HIV/AIDS the message has not reached the students in an effective way. This may be due to the relatively less importance given for the programme, hesitation to convey the message, ineffective communication means, insufficient knowledge of the disease among the teachers, attitude of the teachers, or some other reasons. The success of any programme lies mostly on creating the awareness about the problem for which the particular programme is being implemented.

For this the teachers should be given proper orientation on HIV/AIDS to implement AIDS education programme. Educating people about the disease is the best strategy for combating that disease. A possible way to fight AIDS is to become more informed about it and incorporate preventive steps in our personal lives.

Over All Conclusion - Remember AIDS does not discriminate, caste, creed, race religion, state or country, educational or social status. Prevention of AIDS is our joint responsibility. Education and awareness is only weapon in our hand. Let us except the challenges to fight against AIDS. We must support and care for the people with HIV/AIDS with compassion and understanding. Together we can fight it and a world wide effort will stop it". Thus we should acquire knowledge and understanding among teacher trainees to develop AIDS free nation.

References :-

1. Chouhan, SS. (1996) Advanced educational psychology. New Delhi Vikas publishing house, Pvt. Ltd, (pg 107, 314, 392.)
2. Garrett, H.E. wood worth, RS. (1981) statistics in psychology and education. longman: green and company.
3. Hackett, T.P. & Weisman, AD. (1969) Denial as a factor in patients with heart disease and cancer. Annals of the New York Academy of Sciences, 164, 802-817.
4. Jermmott, J .B. Ditto P. & Croyle, RT. (1986) Judging health status Effects of perceived prevalence and personal relevance, Journal of Personality and social Psychology, 50, 899-905.
5. Klein, W & Kunda, Z (1933 Maintaining self-serving social comparisons Biased reconstruction of one's post behaviors, personality and Social Psychology Bulletin, 19, 73 2-739.
6. Kunda, Z. (1987) Motivated inference : Self-serving generation and evaluation of casual theories. Journal of Personality and Social Psychology, 33, 178-187.
7. Koul, Lokesh (2001). Methodology of educational Research. Vikas publishing house. Pvt.Ltd. New Delhi ; 81-84
8. Kothari, CR. (1988) Research methodology method and Techniques. wrilley Eastern. Ltd.
9. Lieberman \, A. & Chaiken, S. (1992) Defensive

processing of personally rellevant health messages. Personality and Social Psychology Bulletin, 18, 669-679.
10. Madnawat, A.V.S. Prasad, S.C. wonggaras'n, k, and Prakash (2004) HIV risks in Adolescents - psychological profiles : Magnitude and meagerness of Intervention. Behavioral scientist". volume 5 (2). Pg. 101-105. Agra (UP) India.
11. Mannangentty, s. Zayapragassarazan, 2. minnelkodi, B. (2007) perception about HIV/AIDS : A survey among high school and higher secondary school Teacher in punduchery'. Experiments in education vol. xxxv. (4) chitlapakkam, Chennai.
12. Rogers, R.W. (1983) Cognitive and physiological processes ion fear appeals and attitude change : a revises theory of protection motivation, in J. T. Cacioppo & R.E. Petty (eds) (Social Psychophysiology (pp. 153-176). New York : Guilford.
13. Saxena, mishra, mohanty. (1996). Research Methodology R. Lall - Book Depot- surya publication
l4. Weinstein, ND. (1988) The Precaution adoption process. Health Psychology. 1, 355-386.

Table - 1 : Table showing AIDS Awareness & significant level of B.Ed. teacher trainees

AIDS Awareness	Mean	S.D	t-test	Significant Level
Male	15.28	2.16		0.01-NS
Female	15.13	2.91	0.29	0.05-NS

Table - 2 : Table showing AIDS Awareness & significant level of D.Ed. teacher trainees

AIDS Awareness	Mean	S.D	t-test	Significant Level
Male	13.03	2.19		0.01-NS
Female	13.12	2.46	0.17	0.05-NS

Table - 3 : Comparison of AIDS awareness of male & female of B.Ed. and D.Ed. teacher trainees

M+F	Mean	S.D	t-test	Significant Level
B.Ed.	15.16	2.73		0.01-NS
D.Ed.	13.06	2.28	6.17	0.05-NS

Table - 4 : Comparison of AIDS awareness of male & female of B.Ed. and male & female of D.Ed. teacher trainees

AIDS Awareness	Mean	S.D	t -test Significant Level
Male (B.Ed.+D.Ed.)	13.69	2.4	1.08 0.01- NS
Female (B.Ed.+D.Ed.)	14.56	2.09	0.05- NS

****

Utility And Challenges Of Vocational Training Among Tribes

Tabassum Patel * Dr. J. C. Porwal **

Abstract - There is a need to make a review over the tribal situation. This review would indicate that the strategy for development would require an intensive approach to the tribal problems in terms of their geographic and demographic concentration, if the faster development of the community is to take place. While these achievements are a matter of some satisfaction as various development plans, policies and programs have brought forth a perceptible improvement in the socio economic status of the Tribes, a lot more needs to be done with concerted focus on the issues crucial to improve their status on par with the rest of the population.
Keywords - Tribes, Vocational Training, Standard of Living.

Introduction - Planning in India has bypassed some regions and sections of the population. The tribal people constitute a marginalized section. They formed 8.2 per cent of the country's total population according to 2001 census. The tribal development strategies in India aimed at improving the quality of life of tribal people by implementing minimum needs programs, infrastructure development in tribal regions, development of human resources through appropriate education and training and finally expansion of credit and marketing facilities through cooperatives. There are many schemes run by Indian Government for the development and welfare of tribes of India.

Generally speaking by the term "tribe" mean, a group of people that live at a particular place from time immemorial. Anthropologically the tribe is a system of social organization which includes several local groups- villages, districts on lineage and normally includes a common territory, a common language and a common culture, a common name, political system, simple economy, religion and belief, primitive law and own education system. Constitutionally a tribe is he who has been mentioned in the scheduled list of Indian constitution under Article 342(i) and 342(ii) .

"Tribals" are found in almost all the states of country. Currently there are between 258 and 540 scheduled tribe communities exists. The quality of life of tribal people during pre-independence period was more deplorable and their main occupation was hunting, gathering of wood and forest products and primitive shifting cultivation.

Due to destruction of forest and non availability of proper facilities, tribal were forced to lead a miserable life. After independence with the adaptation of Indian constitution in 1950 special attention was given for the upliftment of the tribal people under the ''article 48'',it was mandatory on the part of the state government to make all the efforts to improve economic, social, and educational standard of the tribal people.

According to A.B. B ardhan (Ex Lok Sabha Speaker), "Tribes means a course of socio-cultural entity at a definite historical stage of development. It is a single, endogamous community, with a cultural and psychological makeup going back into a distinct historical past."

According to D. N. Majumdar, "Tribes is a collection of families or common groups bearing common name, the member of which occupy the same territory, speak the same language and observe certain taboos, regarding marriage, profession, or occupation and have developed a well assured system or reciprocity and mutuality of obligations."

Vocational Training refers to low level education and training for skilled and semi-skilled workers, which does not match their level according to general education."

According to Business Dictionary," Training that emphasizes skills and knowledge required for a particular job function (such as typing or data entry) or a trade (such as carpentry or welding).

When Vocational Training is provided to tribes, it will increase their socio-economic status and standard of living.

Literature Review - D.D.Nag and R.P. Saxena. Nag (1958) undertook the scientific study of tribal economy in India, made an extensive field tour in the areas of Madhya Pradesh like, Mandla, Bilaspur, Durg, Balaghat and studied the Baiga economy in the context of general economic theories lying emphasis on the sources of economy of Baigas. Saxena followed a model of Nag and studied the tribals of Western Hills in Madhya Pradesh and presented the economy of five tribes. These two studies have some limitations like, exclusion of socio-cultural conditions of the tribes on their study areas.

***Asst. Professor, SYSITS, Ratlam (M.P.) INDIA**
**** Retired Principal, Govt. College, Mandleshwar (M.P.) INDIA**

L.P. Vidyarthi (1970) attempted to examine the impact of urbanization on tribal culture. He studied the impact of the emergence of a heavy engineering complex in a tribal belt of Chotanagpur, and by analyzing the pattern of socio-economic changes that occurred in this region owing to large scale industrialization.

P.R.G. Mathur(1977) points out that induction into political culture and integration into the mainstream of national life are part of one and the same process and without political socialization being achieved, tribals integration into the national social life is impossible. Political socialization must precede their integration into national life. Motivation and objective underlying the tribal welfare programmes and political socialization are common.

S.L. Doshi (1978) takes a case study of Bhils, on the process of unification and integration. He said that, a sort of integration is achieved by the tribals' with the wider society as a result of political unification. They are aware of the working of democracy, democratic institutions and identification with the level of values. This study has limitation like neglecting the economic aspects of tribals.

Geetha Menon (1987), reveals that the impact and the loss of common property resources is very severe on tribal women. She shows that the hardship of the tribal women have been increasing. Thus tribal women are the major victims of the deprival of the traditional rights of the tribals in common property resources.

V.S. Ramamani (1988), presents a descriptive analysis of the main features of tribal economy. She also postulates in this study the gap between the tribals and non-tribals, and the protective and promotional measures in order to reduce this gap.

Objective of the Study -To evaluate the shortcomings in the implementation of Vocational Training program.

To identify the factors which are responsible for Vocational Training program.

Research design - The methodology of this research consists of following stages: problem identification, research planning, literature collection, and research design, sampling design, variable identification, questionnaire design, questionnaire distribution, data collection and analysis.

Variables for Vocational Training - According to the previous literature we found the following variables can explain the challenges and utility of Vocational Training:

Employment Opportunities - It means getting opportunities to work or a situation in which all available labor resources are being used in the most economically efficient ways. It embodies the highest amount of skilled and unskilled labor that could be employed within an economy at any given time.

H01: Vocational Training helps to develop employment opportunities.

Standard of Living - It refers to the level of wealth, comfort, material goods and necessities available in a certain socio-economic class in a certain geographical area. It is how well or how poorly a person or group of people live in terms of having their needs and wants met.

H02: Vocational Training helps in increasing standard of living.

Self Efficacy - It is one's belief in one's ability to succeed in specific situation. One's sense of efficacy can play a major role in how one approaches goals, tasks and challenges. It is people's belief about their capabilities to produced designated level of performance that exercise influence over events that affects their lives.

H03: Vocational Training helps to increase self efficacy among tribes.

Poverty - It is state of one who lack of usual or socially acceptable amount of money and material possessions. Poverty is said to exist when people lack the means to satisfy their basic needs.

H04 - Vocational Training helps in reducing poverty.

Entrepreneur Skills - it is a process of starting a business. The entrepreneur develops a business model, acquires and fully responsible for its success or failure.

H05 - Vocational Training develop Entrepreneur skills among tribes.

Crime rate - An action or instance of negligence that is deemed injurious to the public welfare or morals or to the interests of the state and that is legally prohibited. It is any act that is contrary to legal code or laws.

H06 - Vocational Training helps in controlling crime rate.

Resiliency - it is the extent to which individuals are able to bounce back from negative experience and adapt to changing and stressful life in demands.

H07 - Vocational Training helps to increase resiliency among tribes.

Develop by Author

Data collection - In order to achieve the objective of the study, researchers used both secondary and primary data. The specific literature had been collected to analyze the present situation of Vocational Training among tribes. Target respondent were 360 Tribes from SC, ST and OBC of two blocks of Ratlam District Sailana and Bajna. . For the study, data was collected with the help of Likert 5 point scale consisting of statements based on objective of the study.

Data Analysis - The research data was first subjected to the basic analysis such as frequency distribution. This provided insight of the data and guided further data analysis. The entire variable were categorized and measured on 5point rating Likert scale. For testing the instrument reliability, a reliability index (Cronbach's Alpha) was used. The overall 35 items were grouped in 7 variables and compiled reliability calculated and obtained was 0.826 on the basis of 360 valid cases out of 385 cases. This figure suggests strong evidence of reliable in the constructs of measuring instruments for the concern variable for the study. Therefore, the questionnaire has high reliability.

Reliability Statistics

Cronbach's Alpha	N of items
0.826	35

Variables and their output on Vocational Training (Table see in the next page)

Results -

Employment Opportunities - As the result of data analysis shows that 63.9% people agree that Vocational Training increase employment opportunities among and 21.7% does not agree while 14.4% are not sure. Thus we conclude that the hypothesis **H01:** Vocational Training helps to develop employment opportunities is accepted.

Standard of Living - As the result of data analysis shows that 40% people agree that Vocational Training increase Standard of Living of tribes by providing them employment opportunities and 33.4% does not agree while 26.7% are not sure. Thus we conclude that the hypothesis **H02:** Vocational Training helps in increasing standard of living is accepted.

Self Efficacy - As the result of data analysis shows that 56% people agree that Vocational Training helps to develop self efficacy among tribes and 16.7% does not agree while 27.2% are not sure. Thus we conclude that the hypothesis **H03:** Vocational Training helps to increase self efficacy among tribes is accepted.

Reducing Poverty - As the result of data analysis shows that 63.4% people agree that Vocational Training helps in reducing poverty of tribes and 11.1% does not agree while 25.6% are not sure. Thus we conclude that the hypothesis **H04:** Vocational Training helps in reducing poverty is accepted.

Entrepreneur Skills - As the result of data analysis shows that 94.4% people agree that Vocational Training helps in developing entrepreneurship skills among tribes and 1.1% does not agree while 4.4% are not sure. Thus we conclude that the hypothesis **H05 -** Vocational Training develop Entrepreneur skills among tribes is accepted.

Crime Rate - As the result of data analysis shows that 95.03% people agree that Vocational Training helps in controlling the rate of crime among tribes by making them self depended through technical education and 1.1% does not agree while 13.9% are not sure. Thus we conclude that the hypothesis **H06:** Vocational Training helps in controlling crime rate is accepted.

Resiliency - As the result of data analysis shows that 60.5% people agree that Vocational Training helps to built resiliency among tribes and 21.7% does not agree while 17.8% are not sure. Thus we conclude that the hypothesis **H07:** Vocational Training helps to increase resiliency among tribes is accepted.

Discussion and Conclusion -

- The study reveal that the Vocational training is possible for all tribes. Its importance has been reflected by present research.
- Vocational training is not accepted because of unavailability of proper trainers and infrastructural facilities.
- Vocational training is not just waste wastage of time.
- Vocational Training helps in increasing standard of living.
- Vocational training is not accepted because proper information of the programs are not available to community.
- Vocational Training helps in reducing poverty.
- Vocational Training develop Entrepreneur skills among tribes.
- Vocational Training helps in controlling crime rate.

Limitation of study - Lack of resources and time as it was not possible to conduct survey at large level. During data collection many employees are unwilling to fill the questionnaire due to lack of time. They were having the feeling of wastage of time for them and findings are entirely based on perception of people so the nature variant may be biasing factor.

Scope for future studies - There is a lot of scope of Vocational Training. We have taken only two blocks for the study but there are many areas where there is a lot of need of Vocational Training. But there are many challenges and problem in implementing Vocational Training Programs and after improving it we can take the benefit of Vocational Training.

Suggestions and Recommendations:

- Tribal Department should bring operational efficiency and should diversify their schemes.
- Tribal Department should initiate online publicity like MP Online Portal, Whatsapp, Facebook, etc, to promote schemes.
- The schemes has to be made in digital format.
- Government should initiate door to door plans regarding different schemes for different classes of people so that the benefit of the schemes should be reached to mass fraternity.

- Government should try to restructure their organizational functioning so that more and more people become aware about the schemes.
- Staffing and working pattern have to be re-examined so that it increase the number of beneficiaries and makes them easily avail the schemes.

References :-

1. Dr. Prakash Chandra Mehta,, ***Tribal Development in 2nd centur,*** Durga Taldar Shiva Publishers, Udaipur, 2000
2. Dr. Prakash Chandra Mehta., ***Development of Indian Tribes***, Discovery Publishing House, Delhi, 2006
3. Dr. Prakash Chandra Mehta., ***Ethanographic Atlas of Indian Tribes***, ,Discovery Publishing House, Delhi, 2004
4. Dr. Prakash Chandra Mehta., ***Tribal Education in India***, Discovery Publishing House, Delhi, 2003
5. Dr. R.N.Trivedi, Dr. D.P. Shukla, ***Research Methodology***,College Book Depot, 2012
6. Dr. J.D.Mehta, Dr.U.Gupta ***Research Methods in Management***., Ramesh Book Depot 2012
7. Kumar Suresh Singh, ***Tribal Movements in India***,Published by Manohar Publication, 1982.
8. Kamaladevi, Chatopathaya, ***Tribalism in India***, Deep and Deep Publication, New Delhi, 1978
9. L.P. Vidyarthi., ***Tribal Development and its Administration***, Concept Publishing Company, New Delhi, 1981
10. Russell, R. V., ***The Tribes and Castes of the Central Provinces of India***, London, 1916.
11. Shyama Charan Dubey, ***Tribal Heritage of India***, by, Indian Institute of Advanced Study, Indian Council of Social Science Research, Anthropological Survey of India. Published by Vikas Publication House, 1977

Variables and their output on Vocational Training

Different Variables	SA	A	N	D	SD
Increase Employment Opportunities	18.9%	45%	14.4%	13.9%	7.8%
Built Resiliency	13.3%	47.2%	26.7%	31.7%	1.7%
Increase Standard of Living	9.4%	30.6%	26.7%	31.7%	1.7%
Reduce Poverty	16.1%	40%	27.2%	15%	1.7%
Develop Self Efficacy	26.7%	36.7%	25.6%	6.7%	4.4%
Controls Crime Rate	61.7%	33.3%	13.9%	1.1%	00%
Develop Entrepreneur Skills	57.2%	37.2%	4.4%	1.1%	00%
Proper information are not available	53.3%	34.4%	8.9%	2.8%	0.6%
Adequate trainers are not available	51.7%	32.2%	10.6%	5%	0.6%
People do not take interest in VT	47.5%	35.3%	11.7%	5.6%	00%
It is wastage of time	19.7%	58.6%	12.2%	8.9%	1.1%
Adequate stipend are not provided by the Govt.	15%	47.8%	28.9%	6.7%	1.7%
Proper equipment and infrastructure are not available.	31.1%	34.4%	32.2%	2.2%	00%

****

विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने में शिक्षक की भूमिका

माधुरी पालीवाल * इम्तियाज मन्सूरी **

प्रस्तावना – अध्यापक शिक्षण प्रक्रिया का सच्चा सूत्रधार है। शिक्षक के व्यक्तित्व का बालकों के ऊपर अमिट प्रभाव पड़ता है और वह उनके भावी जीवन की नींव रखता है।

शिक्षण–प्रक्रिया में अध्यापक का कर्तव्य है कि वह बालक को सक्रिय बनाकर उसकी शारीरिक,मानसिक शक्तियों, योग्यताओं, रूचियों एवं रूझान का अध्यापन करे और उसकी क्षमताओं के अनुकूल उसकी जन्मजात शक्तियों के स्वाभाविक विकास का हर सम्भव प्रयास करता हुआ शिक्षा प्रदान करे। बालक की शिक्षा अविधिक रूप से मॉ की गोद से ही आरम्भ हो जाती है। घर उसकी प्रारम्भिक पाठशाला कहा गया है किन्तु सामाजिक ढाचें में परिवर्तन के साथ–साथ शिक्षण कार्य समाज का अनिवार्य कर्त्तव्य हो गया है। और शिक्षा प्रदान करने का उत्तरदायित्व विशिष्ट व्यक्तियों को सौंप दिया गया जिन्हे शिक्षक कहा जाने लगा।

सविधिक शिक्षा प्रदान करने के लिये जिस विशेष स्थान का चुनाव किया गया उसे विद्यालय की संज्ञा दी गई। इस प्रकार शिक्षा को सामाजिक प्रक्रिया कहा गया जो कि सामाजिक वातावरण में सम्पन्न होती है। शिक्षा प्रक्रिया में सक्रिय भाग लेने वाले शिक्षक और विद्यार्थी होते है। विद्यालय में आने वाले विद्यार्थी भिन्न–भिन्न अवस्थाओं के होते है। इनकी अपनी निजी विशेषताये प्रवृत्तियॉ और रूचियॉ होती है। ये विद्यार्थी विद्यालय में विभिन्न प्रकार की समस्यायें लेकर आते है इन समस्याओं को सुलझाने के लिये शिक्षकों को विशेष प्रयत्न करना पड़ता है। ताकि उन्हें शिक्षण कार्य में कठिनाईयों का सामना न करना पड़े।

शिक्षक के सामने यह प्रश्न उपस्थित होता है कि वह किस प्रकार शिक्षा प्रदान करे, कब और क्या सिखाये तथा किन स्थितियों में उसके साथ किस प्रकार का व्यवहार करे ? शिक्षक को इन बातों का ज्ञान तभी हो सकता है जब बालक ओर उसके ऊपर प्रभाव डालने वाले तत्वों का भली–भॉति अध्ययन करे।

1. **एडम्स–** शिक्षक के लिये अध्यापन विषय से अधिक विद्यार्थी के विषय में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक बताया है।
2. **स्वामी विवेकानंद –** बिना शिक्षक के व्यक्तिगत जीवन में कोई भी शिक्षा नहीं दी जा सकती है।
3. **भगवानदास कहते है –** शिक्षा बीज और जड़ है, सभ्यता फूल और फल है। यदि कृषक विवेकपूर्ण है और अच्छे बीज बोता है, तो समुदाय उत्तम दाने प्राप्त करता है, और सम्पन्न होता है। यदि ऐसा नहीं है, यदि वह झाड़ झंकार बोता है तो जहरीले बेर मिलते है और बीमारी ओर मृत्यु फसल प्राप्त होती है, हमारे कृषक शिक्षक है।
4. **चाणक्य –** शिक्षक कोई साधारण व्यक्ति नहीं होता है प्रलय और निर्माण उसकी गोद में पलते है ।
5. **प्रो. हुमायूँ कबीर –** ने एज्यूकेशन इन न्यू इण्डिया में लिखा है कि किसी भी शिक्षा के पुन:रूत्थान में शिक्षक का केन्द्रवर्ती स्थान है और उसकी शैक्षिक दक्षता के विकास पर ही शिक्षा की पुनर्रचना की सफलता निर्भर करती है। अच्छे शिक्षको के अभाव में अच्छी प्रणाली भी असफल होगी, परन्तु अच्छे शिक्षको के रहने पर यदि किसी प्रणाली में त्रुटि हैं तो वह भी बहुत कुछ दूर हो जाएगी। हमारी शिक्षा प्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह है कि हम सबसे पहले भवन के बारे में सोचते है, फिर फर्नीचर के बारे में, उसके बाद पुस्तकालय ओर प्रयोग शाला के बारे में ओर अन्त में शिक्षक के बारे अर्थात सबसे पहली बात को सबसे अन्त में स्थान देते है। अत: यह स्पष्ट है कि शिक्षक के गुण सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था को प्रभावित करते है।

विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने के लिए शिक्षक में निम्न गुण होने चाहिए –

1. **व्यक्तित्व सम्बन्धी ज्ञान –** शिक्षण प्रक्रिया में दो व्यक्तित्वों के मध्य अंत: क्रिया होती है। परिणाम स्वरूप दोनों का विकास होता है। ये दोनों अध्यापक एवं शिक्षार्थी अथवा अधिगमी। सफल शैक्षिक प्रक्रिया के लिये आवश्यक है कि अध्यापक जहॉ बालक के व्यक्तित्व को जाने, वही वह स्वयं के व्यक्तित्व को भी जाने। अध्यापक अपेक्षित व्यक्तित्व के निर्माण हेतु स्वयं प्रयास कर सकता है तथा बालक के व्यक्तित्व की पहचान भी कर सकता है। शिक्षा का मुख्य विषय बालक ओर उसका व्यक्तित्व ही होता है। अत: अध्यापक को बालक के व्यक्तित्व में पाये जाने वाले गुणों की पहचान करना उनका मापन करना तथा जानना अत्याधिक आवश्यक है। तभी अध्यापक उसके अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था कर सकता है।
2. **शिक्षण विधियों का ज्ञान –** शिक्षण कार्य अध्यापक का प्रमुख दायित्व होता है अत: अपने दायित्वों का सफलता पूर्वक निर्वाह करने के लिये शिक्षण–विधियों में अध्यापक का पारंगत होना आवश्यक है। यदि अध्यापक को उपयुक्त शिक्षण विधियों का ज्ञान नहीं होता तो वह न तो बालक के सफल अधिगम परिणाम को सुनिश्चित कर सकता है ओर न ही वह असफलताओं एवं त्रुटियों से बच सकता है।
3. **सृजनात्मक प्रवृत्ति –** बालकों में सृर्जनात्मकता का विकास करने के लिए शिक्षक को स्वयं भी सृजनात्मक प्रवृत्ति का होना चाहिए। उसे चाहिए कि वह स्वयं भी साहित्य, विज्ञान, कला आदि के क्षेत्र में सृजन कार्य करे और छात्रों के समक्ष एक उदाहरण प्रस्तुत करे । इससे बालको को प्रेरणा एवं प्रोत्साहन प्राप्त होता है।

* सहायक प्राध्यापक, स्वामी विवेकानंद शिक्षा महाविद्यालय, सेंधवा, जिला बड़वानी (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, स्वामी विवेकानंद शिक्षा महाविद्यालय, सेंधवा, जिला बड़वानी (म.प्र.) भारत

4. **प्रभावशाली वक्ता –** अध्यापक को प्रभावशाली वक्ता होना चाहिए। उसे बोलते समय शब्दों के चयन उनके उच्चारण और प्रस्तुति आदि का पूरा ध्यान होना चाहिए अच्छा बोलना एक कुशलता होती है।

5. **पाठ्य सहगामी क्रियाओं में रूचि एवं उनका संचालन –** अध्यापक की रूचि पाठ्य सहगामी क्रियाओं में अवश्य होनी चाहिए। क्योंकि बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास जैसे शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, चारित्रिक, नैतिक, सामाजिक, संवेगात्मक आदि का विकास पाठ्य सहगामी द्वारा ही किया जा सकता है।

6. **शोधवृत्ति की भावना –** अध्यापक में शोधवृत्ति की भावना का होना बहुत आवश्यक है। एक अध्यापक को कक्षा कक्ष शिक्षण हेतु अपने व्यावसायिक कार्य कुशलता हेतु तात्कालिक रूप से समस्याओं का समाधान खोजना पड़ता है। साथ ही समाज को नया दृष्टिकोण देने के लिए अध्यापक में शोध वृत्ति का होना बहुत आवश्यक है।

7. **मूल्यांकन विधियों का ज्ञान –** अध्यापक को अपने विषय की मूल्यांकन की विधियों का ज्ञान होना चाहिए। पारम्परिक तथा नवीन दोनों प्रकार की मूल्यांकन विधियों की जानकारी उसे भली प्रकार से होनी चाहिए ताकि विद्यार्थियों का मूल्यांकन विभिन्न स्तरों पर भली प्रकार से किया जा सके।

8. **अधिगम सम्बन्धी ज्ञान –** एक अध्यापक को अधिगम संम्बधी ज्ञान होना आवश्यक है ताकि विद्यार्थी कैसे सीखते है इसके बारे में अध्यापक अध्यापन प्रक्रिया का निर्माण करता है ताकि अधिगम आसान एवं उपयोगी हो सके।

9. **शैक्षिक योग्यता –** एक योग्य अध्यापक को उन सभी विषयों का ज्ञान होना चाहिए जिनका वह शिक्षण कराता है।

10. **शिक्षक प्रशिक्षण योग्यता –**शिक्षा में मुख्य रूप से दो क्रियाएँ निहींत है। प्रथम शिक्षण एवं द्वितीय अधिगम मनोवैज्ञानिक अधिगम को केन्द्र बिन्दु मानते है। परन्तु वर्तमान में शिक्षा विदों ने शिक्षण को ही केन्द्र बिन्दु माना है। उनका तर्क है कि प्रभावी शिक्षण अधिगम को प्रभावी बनाता है। शिक्षण के द्वारा बालको में वांछित दक्षताओं का विकास किया जाता है। अत: अति आवश्यक है कि शिक्षक में भी दक्षता होनी चाहिए जिससे वह बालको को उचित दिशा में ले जा सकता है। अत: शिक्षक का प्रशिक्षण प्राप्त होना अनिवार्य है। विद्यार्थियों के हित में।

11. **कार्यानुभव सम्बन्धी योग्यता –** आज अधिकतर विद्यालयों में कार्यानुभव सम्बन्धी क्रियाएँ चलाई जा रही है और इस प्रकार की क्रियाओं की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। अध्यापक को भी इस प्रकार की क्रियाओं में कौशल का विकास करना आवश्यक हो गया है। यदि अध्यापक इस प्रकार की क्रियाओं में कौशल का विकास कर लेता है तो वह छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होता है

12. **अनुशासन प्रिय –** अध्यापक को अनुशासन प्रिय होना चाहिए। अध्यापक यदि स्वयं अनुशासित है और नियमों का पालन करता है। तो छात्र भी उसका अनुसरण करते है। कक्षा में और कक्षा के बाहर सभी जगह अनुशासन की आवश्यकता होती है जिन छात्रों में अनुशासन रहने की आदत पड़ जाती है उन्हे जीवन में सफलता प्राप्त करना सरल हो जाता है।

13. **भाषा पर नियन्त्रण –** भाषा अध्यापक का मुख्य उपकरण है। भाषा के माध्यम से ही वह अपने विचारों को छात्रों तक पहुँचाता है। यदि अध्यापक का भाषा पर नियन्त्रण नहीं है तो वह विद्यालय के प्रशासको, अपने साथी अध्यापकों और छात्रों की दृष्टि में सम्मान का भागी नहीं हो पाता है। भाषा की योग्यता पर ही शिक्षक की भावाभिव्यक्ति और विषय ज्ञान की संप्रेषणीयता निर्भर करती है।

14. **छात्रों में रूचि –** अध्यापक में छात्रों के साथ कार्य करने की रूचि होनी चाहिए। अध्यापक को साधारणतया छात्रों के साथ ही कार्य करना पड़ता है। यदि छात्रों के साथ उसकी कार्य करने की रूचि नहीं है तो विद्यालय के सभी कार्य उसे नीरस लगेगें और कुछ समय बाद वह इस प्रकार के कार्य को छोड़ देगा या वह केवल एक नाममात्र का अध्यापक रह जाएगा।

15. **सहयोग की भावना और निष्ठा –** कई बार ऐसा देखा गया है कि अच्छा पढ़ाने वाला अध्यापक भी और दृष्टियों से सफल अध्यापक नहीं हो पाता है। इसका कारण केवल सहयोग और निष्ठा की कमी होती है। अध्यापक को सफल होना है तो उसे प्रशासन साथी, अध्यापक, समाज और अभिभावक, विद्यार्थी आदि के साथ सहयोग करना चाहिए ओर कार्य को निष्ठा से करना चाहिए।

16. **अध्यापक का बाहरी व्यक्तित्व –** अध्यापक के बाहरी व्यक्तित्व से हमारा अभिप्राय उसके रंग से या नाक–नक्शे से या ऊँचाई या वजन से नहीं है बल्कि वेशभूषा, शिष्टाचार, शालीनता, व्यवहार, कुशलता कक्षा में उपयुक्त आचरण की विधि आदि गुणों से है।

17. **चरित्र तथा नैतिकता –** अध्यापक का सर्वप्रथम गुण उसका चरित्र है। छात्रों का चरित्र निर्माण शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। सचरित्र अध्यापक ही उसको पूरा कर सकता है, क्योंकि अध्यापक के कार्य विचार और व्यवहार ही छात्रों के सम्मुख आदर्श रूप में प्रस्तुत होते है और छात्र उन्हीं का अनुसरण करते है।छात्रों पर अध्यापक के जीवन और चरित्र की अधिक छाप पडती है। यह कहा जाता है कि सचरित्र अध्यापक में यदि कुछ अन्य कमजोरियॉ भी हो तो उन्हें ओझल किया जा सकता है। परन्तु दुच्चरित्र अध्यापक को कोई भी माफ करते को तैयार नहीं होता है।

विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने में शिक्षक की भूमिका निम्न है – शिक्षक को अपने अध्ययन–विषय के साथ ही अपने शिक्षार्थी के विषय में भी पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। शिक्षा की प्रक्रिया में बालक की तुलना एक पौधे से की गई है। शिक्षक इस बालक रूपी पौधे के विकास करने वाला माली है। जिस प्रकार पौधे के विकास के लिये उपयुक्त खाद, हवा, मिट्टी, रोशनी, पानी, अर्थात आवश्यक तत्वों की आवश्यकता होती है। उसी प्रकार शिक्षक को भी बालक के विकास के लिये उपयुक्त शैक्षिक वातावरण का निर्माण करना चाहिए तथा बालक के मानसिक स्तर और आवश्यकतानुसार उपयुक्त अध्ययन विधि का प्रयोग करना चाहिए। बालक ही शिक्षक की वस्तु है। इस वस्तु का (सम्यक) पूर्ण ज्ञान होने पर ही वह अपने कार्य में सफल हो सकता है। शिक्षक अपने विषय में भले ही अद्धितीय योग्यता रखता हो पर यदि उसे अपने छात्रों के स्वाभाविक गुणों का ज्ञान नहीं है तो वह कुशल अध्यापक बनने में असमर्थ हो सकता है। जिस प्रकार अध्यापक को अपनी आत्मशक्तियों का ज्ञान आवश्यक है, उसी प्रकार उसे अपने विद्यार्थियों का ज्ञान होना भी आवश्यक है।

मनोवैज्ञानिको के अनुसार अध्यापक का यह कार्य है कि वह विद्यार्थी की रूचियों, अरूचियों, पात्रता, योग्यता, ग्रहण शक्ति तथा उसकी आवष्यकताओं पर ध्यान दे। आज शिक्षा प्रक्रिया में छात्र केन्द्र बिन्दु पर है इसलिए अध्यापक का कर्तव्य है कि वह अपने छात्र के संम्बंध में पूरी जानकारी प्राप्त करे।

अध्यापन के पूर्व छात्रों की आयु तथा आवश्यकताओं को जानना बहुत आवश्यक है। छात्र की आर्थिक स्थिति का ज्ञान भी अध्यापक को होना चाहिये। जिस प्रकार कलियॉ धीरे-धीरे खिलती है उसी प्रकार छात्रों का विकास भी धीरे-धीरे होता हैं किशोरावस्था में बालक तथा बालिकाओं का शारीरिक और मानसिक विकास बुहत तेजी से होता है इस अवस्था में छात्रों में किसी भी प्रकार की हीन भावना पैदा हो जाती है अध्यापक छात्रों को हीन भावना का शिकार होने से बचा सकता है बच्चों की क्या कठिनाईयॉ है उनको समझकर उनका समाधान करना चाहिए।

1. एक साधारण शिक्षक छात्रों को कुछ बातें बता देता है एक अच्छा शिक्षक विद्यार्थियों के समक्ष अपने गुण प्रदर्शित करता है। परन्तु एक उत्तम शिक्षक छात्रों को प्रेरित करता है।
2. शिक्षक के हृदय में छात्रों के प्रति माता पिता की तरह सच्चा प्रेम होना चाहिए। अध्यापक का सच्चा प्रेम पाकर बच्चे आनन्दित हो जाते है।
3. अध्यापक का काम संस्कार डालना है उत्तम चरित्र वाले शिक्षक ही छात्रों पर अच्छे संस्कार डाल सकते है
4. विद्यार्थियों के हृदय में राष्ट्र, प्रेम, एकता पैदा करने के लिए भारत की विविधता में किस प्रकार एकता है इसका उल्लेख अध्यापक छात्रों के समक्ष हर समय करे और इस पर विशेष बल दे। कोई भी विषय सिखाते समय जाति, धर्म, सम्प्रदाय तथा भाषा के सन्दर्भ में एकता की भावना का पोषण अध्यापक को करना चाहिए।
5. राष्ट्रीय त्योहारों जैसे 15 अगस्त 26 जनवरी के महत्व को छात्रों के सामने रखे और उनके हृदय में ऐसे भाव भरे कि वे इन त्यौहारों को उत्साह से मनाऍ।
6. शिक्षकों का कर्तव्य है कि वे भारत की नदियों पहाडों, झीलो, समुद्र तथा भौगोलिक संरचना का ज्ञान छात्रों को कराऍ।
7. शिक्षक शिक्षण-प्रक्रिया का सूत्रधार है। उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध छात्रों से होता है और अपरिपक्व छात्रों पर सबसे अधिक प्रभाव शिक्षक ही डाल सकता है इसलिए शिक्षक का व्यक्तित्व आकर्षक तथा प्रभावशाली होना चाहिए। उसे हॅसमुख, प्रसन्नचित्त ताथा खिलाड़ी वृत्ति वाला होना चाहिए। उसे अपने विषय का गहरा ज्ञान होना चाहिए ताकि वह अपने विषय को प्रभावशाली भाषा में प्रस्तुत कर सके। अध्यापक को अध्यापन कुशलताओं का भी गहरा ज्ञान होना चाहिए। एक कुशल अध्यापक को निम्नलिखित बातों का ज्ञान आवश्यक है।
   (1) शिक्षक स्वयं को जाने।
   (2) जिन विद्यार्थियों से उसका सम्बंध है, उन विद्यार्थियों को समझे।
   (3) जिस संस्था में अध्यापक कार्य करता है उसके विकास के लिए प्रयत्न शील हो।
   (4) समुदाय के प्रति शिक्षक का क्या कर्तव्य है तथा उसके लिए वह क्या कर सकता है। इसके लिए सचेत रहे।
8. अध्यापक को अपनी शक्तियों का ज्ञान होना चाहिए। उसे सदैव अपने विविध गुणों के विकास के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। जब तब किसी अध्यापक को अपना तथा अपनी क्षमताओं का ज्ञान नहीं है तब तक वह विद्यार्थियों का विकास नहीं कर सकता ।
9. अध्यापक को अभिभावकों तथा समाज से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखने चाहिए। बच्चे के विकास के लिए शिक्षक और अभिावक दोनों जिम्मेदार है।
10. अध्यापक का यह कर्तव्य है कि वह अपनी व्यावसायिक कुशलता बढ़ाने का सदैव प्रयास करें। अध्यापक को सदैव विद्यार्थी बने रहना चाहिए अर्थात सदैव अध्ययनरत् रहना चाहिए।
11. शिक्षा क्षेत्र में प्रगति करने के लिए पाठ्यक्रम अध्यापन पद्धतियों के संबंध में नए शोध करना चाहिए और नई मान्यताओं की स्थापना करनी चाहिए। यदि शिक्षक स्वयं उद्योगशील और सृजनशील नहीं है तो वह विद्यार्थियों में इन गुणों को संक्रमित नहीं कर सकता है।
12. अध्यापको का कर्तव्य है कि वे विद्यालयों का ऐसा पाठ्यक्रम तैयार करे जिससे विद्यालय के सभी छात्रों में शील, सज्जनता, आत्मगौरव, तेजस्विता तथा रचनात्मक वृत्ति का विकास हो।
13. अध्यापक जिन छात्रों को पढ़ाता है उन्हें ऐसा पढाऐं कि उनके व्यवहार में परिवर्तन आए और वे परिश्रमी बने।
14. कक्षा में नित्य छात्रों की हाजिरी ले और उसका पूरा रिकार्ड रखे।
15. अध्यापन के समय सहायक सामग्री का उपयोग करे तथा विज्ञान शिक्षक कक्षा में प्रत्यक्ष प्रयोग करके दिखलाए।
16. अध्यापन का यह कर्तव्य है कि वह छात्रों में स्वयं निर्णय करने की क्षमता का विकास करे।
17. शिक्षक का यह कार्य है कि वह बालकों में नेतृत्व के गुणों का विकास करे।
18. विद्यालय में प्रत्येक धर्म तथा समाज के महापुरूषो की जयंतियॉ तथा पुण्यतिथियॉ मनाई जायॅ तथा अध्यापक तथा महापुरूषों के चरित्रों और महान कार्यो तथा उपदेशो पर प्रकाश डाले। इससे भी छात्रों में राष्ट्रीय स्तर पर सोचने की प्रवृत्ति पैदा होगी।
19. त्रिभाषा सूत्र का पालन किया जाय जिसमें मातृभाषा राष्ट्रभाषा तथा अंग्रेजी भाषा का समावेश किया जाय। अध्यापक छात्रों में मातृभाषा के प्रति प्रेम तथा गौरव का भाव भरे।
20. अध्यापक विद्यालय का परिसर तथा शैक्षणिक स्तर सुधारने का प्रयास करे। विद्यालय का वातावरण इतना आकर्षक तथा स्मरणीय बनाया जाय कि विद्यार्थी एक बार विद्यालय में आ जायॅ तो जाने का नाम न ले। विद्यार्थियों में अपने विद्यालय के प्रति आत्मीयता के भाव पैदा हो और वे विद्यालय के प्रति निष्ठावान बने तथा विद्यालय के विकास में अपना योग दे।
21. अध्यापक को अधिगम को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों जैसे परिपक्वता, अभिप्रेरणा, बुद्धि, लिंग सीखने की विधियॉ इत्यादि का ज्ञान होना चाहिए ताकि वह विद्यार्थी के अधिगम को उच्चतम स्तर तक ले जाने का प्रयास करे।
22. विद्यालय को प्रभावित करने वाले कारकों जैसे विद्यालय भवन, फर्नीचर, ग्रंथालय, खेलकूद के मैदान एवं सामग्री विद्यालय द्वारा पिकनिक ले जाना पाठयचर्चा आदि का ज्ञान अध्यापक को होना चाहिए, जिससे न केवल विद्यार्थी का समायोजन बेहतर होता है बल्कि उनके परीक्षा परिणामों में भी सुधार होता है।
23. अध्यापक छात्रों में ऐसी प्रवृत्ति का विकास करे जिससे बालक परम्परागत कार्या एवं विचारो से हटकर किसी नए सृजनशील मार्ग का अनुसरण करे।
24. बालको में सृजनात्मक वृत्ति का विकास करने के लिए शिक्षक का कर्तव्य है कि वह उनमें आत्म विश्वास, स्वतंत्र निर्णय शाक्ति एवं

नवीन चिन्तन के भाव विकसित करे।

25. विद्यालय में सुप्रशिक्षित विद्धान एवं बाल मनोविज्ञान के ज्ञाता शिक्षकों की ही नियुक्ति की जाय, जिससे वे बालकों की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा प्रदान करे एवं उनके व्यावहारिक दोषो को भी दूर कर सकने में समर्थ हो सके।
26. शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना होता है। विकास में वातावरण एवं आनुवंशिकता दोनों अपनी-अपनी भूमिका निभाते है। अध्यापक का यह उत्तरदायित्व है कि वह बालकों की आनुवंशिकता को ज्ञात कर उन्हें ऐसा वातावरण प्रदान करे जिससे उनका अधिकतम विकास हो सके।
27. अध्यापक को यदि मालूम होगा कि विद्यार्थी कैसे वातावरण में पढ़ना पसंद एवं नापसंद करते है तब वह ऐसा वातावरण बनाने का प्रयास करेगा जिसमें विद्यार्थी पूर्ण लगन के साथ अपना अध्ययन करे।
28. लड़कियों का रज:स्राव किशोरावस्था के दौरान ही होता है। उन दिनों वे मानसिक तनाव एवं शारीरिक थकान से ग्रसित रहती है। ऐसे में अध्यापिका द्वारा दिया गया गृह कार्य करके लाने में देरी हो जाती है। यदि अध्यापिका उन्हे बेंच पर खड़ा होने की सजा देती है अथवा डॉट फटकार करती है तो वह निश्चित ही उनका तनाव और बढ़ जाता है। अत: अध्यापक/अध्यापिकाओं को चाहिए कि वे उनसे ऐसा व्यवहार न करे।
29. किशोरावस्था में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों, खासकर यौन परिवर्तनों से बालक अनभिज्ञ रहते है, किंतु माता-पिता अथवा अध्यापको द्वारा उन्हें किसी प्रकार की कोई शिक्षा नहीं दी जाती, इस कारण कभी-कभी उन्हें अनेक परेशानियों का सामना करना होता है। अत: शैक्षिक प्रशासकों एवं नियोजकों का यह उत्तरदायित्व है कि यौन-शिक्षा को उनके पाठ्यक्रम का एक अनिवार्य अंग बनाया जावे जिससे वे सही ज्ञान प्राप्त कर उनके समस्याओं एवं भ्रांतियो से बच सके जिससे उनके मन में यौन के बारे में स्वस्थ अभिवृति विकसित हो सके।
30. विद्यार्थी अपनी सामर्थ्य से कही अधिक महत्वाकांक्षा रखते है। उन्हें अपनी सही सामर्थ्य को भी ज्ञान नहीं होता है। परिणाम स्वरूप वे अपने लक्ष्य तक पहुँचने में असमर्थ होते है। अत: प्रत्येक विद्यालय का यह उत्तरदायित्व है कि विद्यालय में प्रशिक्षित परामर्शदाता एवं मनोवैज्ञानिक की नियुक्ति करे ताकि वे विद्यार्थी को उनकी समार्थ्य के अनुसार लक्ष्य निर्धारित करने के योग्य बना सके।
31. स्वास्थ्य अच्छा न होने से संवेगात्मक अस्थिरता आती है अत: विद्यालय में विद्यार्थियों के स्वास्थय-परीक्षण एवं उपचार की पर्याप्त व्यवस्था की जानी चाहिए।
32. पारिवारिक सामंजस्य बच्चों की संवेगात्मक स्थिरता में सहायक होता है। माता-पिता को यह स्पष्ट रूप से बता देना चाहिए कि पारिवारिक समायोजन न होने के कारण बालक की उपलब्धि पर उसका क्या असर होता है। उन्हें यह भी बताया जाना चाहिए कि वे अपने बच्चे से उसकी सामर्थ्य के अनुसार ही अपेक्षा रखे, असफल होने पर उन्हें प्यार से समझाये न कि डॉट फटकार एवं मारपीट करे।

समीक्षा - बालक का मस्तिष्क कोरी पटिया नहीं है कि उस पर जो चाहा लिख दिया। बालक का विकास उसकी जन्मजात विशेषताओं प्रवृत्तियों और रूचियों के अनुसार होता है। अत: इन बातों का ज्ञान प्राप्त करके ही उसके सर्वांगीण विकास का प्रयत्न किया जा सकता है। इसके लिये शिक्षक को विद्यार्थी के मूल आधारों, प्रकृति, मानसिक स्तर, रूचियो, बौद्धिक योग्यताओ, व्यक्तित्व एवं उसका आवश्यकताओं आदि का विस्तृत ज्ञान होना चाहिए। शिक्षा का एक प्रमुख अंग शिक्षक होता है। सीखने की प्रक्रिया में सीखने की परिस्थिति का निर्माण करने, उसे नियंत्रित एवं नियोजित करने में शिक्षक विशेष रूप से सहायक होता है।

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में शिक्षार्थी तथा शिक्षक के बीच जो अन्त:क्रिया होती है उससे शिक्षण कार्य तथा अधिगम कार्य में सहायता मिलती है। बालक के अधिगम में शिक्षक ही महत्वपूर्ण कारक होता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अध्यापक शिक्षा, रामगोपाल सोनी, एच.पी.भार्गव बुक हाउस आगरा।
2. शिक्षा का अधिकार चुनौतियॉ एवं सम्भावनाये, डॉ.अर्चना पाठक डॉ.रेनू पाण्डेय, एच.पी.भार्गव बुक हाउस आगरा।
3. शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, डॉ मालती सारस्वती, आलोक प्रकाशन, लखनऊ इलाहाबाद।
4. प्रगत शिक्षा मनोविज्ञान, डॉ हंसराजपाल हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निर्देशालय दिल्ली, विश्व विद्यालय।

****

उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में औद्योगिक जगत् की भूमिका

सविता वर्मा *

शोध सारांश – आज के आधुनिक युग में औद्योगिकीकरण का विकास हुआ है। उच्च शिक्षा आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं,एवं उत्पादन की संपूर्ण प्रक्रिया में मानव की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। कर्मचारी से लेकर प्रंबधक तक का कार्य मानव ही करता है। मानव की उच्च शिक्षा ही संगठन के लक्ष्यो को प्राप्त करने में सहायक होती है।

शब्द कुंजी – उच्च शिक्षा, मानव पूंजी, औद्योगिक विकास।

प्रस्तावना – किसी भी देश के आर्थिक एंव सामाजिक विकास में उच्च शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। उच्च शिक्षा संस्थान निजी तथा सार्वजनिक दोनों प्रकार के हो सकते हैं। निजी संस्थान विद्यार्थियो की फीस तथा बाहरी स्त्रोतों से संचालित होते है तथा सार्वजनिक संस्थान सरकारी अनुदान, कोष तथा फीस से संचालित होते है।आज प्रत्येक संगठनों में उच्च शिक्षा की मांग बढ़ी है। ताकि शिक्षित उद्यमी एवं प्रंबधक विनियोग में सही निर्णय ले सके, प्रतियोगिता का सामना करते हुए संगठन के लक्ष्यो को प्राप्त कर सके। उच्च शिक्षा एक नम्र उदारीकरण की नीति में शामिल है जिसमें विभिन्न देशों के विद्यार्थी अन्य देशों के संस्थानों में जाकर प्रंबधन विधि को सीखते हैं। हाल ही में हमारे देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने लंदन के विद्यार्थियों को प्रंबधन विषय पर व्याख्यान दिया जो कि उच्च शिक्षा का ही एक हिस्सा है।

तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी विकास के साथ–साथ उच्च शिक्षा की मांग भी बढ़ी है। व्यवसाय के क्षेत्र में वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग, कार्य संगठन तथा उत्पादन प्रणाली के परिवर्तन के कारण व्यक्ति को अपने आप में भी परिवर्तन करने पड़े हैं। जिस प्रकार स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए प्रोटीन और विटामिन लाभदायक होते है उसी प्रकार संगठन की सफलता के लिए उच्च शिक्षा लाभदायक होती है।

शोध का उद्देश्य –

1. शोध का मुख्य उद्येश्य औद्योगिक जगत् में उच्च शिक्षा की गुणवत्ता के महत्व को बताना है।
2. प्रबंधकीय विकास को तकनीकी विकास के साथ जोड़ना है,जिससे औद्योगिक विकास हो सके।

शोध की विधि– शोध की विधि दो प्रकार के संमको पर आधारित होती है। प्राथमिक संमक एवं द्वितीयक संमक। इस शोध लेख में द्वितीयक संमको का प्रयोग किया गया है। जिसमें जर्नल, पत्र–पत्रिकाएं तथा इन्टरनेट वेबसाइट शामिल हैं।

शोध परिकल्पना– किसी भी शोध कार्य में पूर्णता एवं सिद्धि के लिये परिकल्पना के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। इस विषय पर निम्न परिकल्पना की गई है।

1. संगठनो में प्रंबधक एवं कर्मचारियों के प्रशिक्षण एवं विकास में उच्च शिक्षा की गुणवत्ता का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं।
2. उच्च शिक्षा के माध्यम से औद्योगिक संगठन में कार्यरत कर्मचारियों की कार्यकुशलता, मानसिक योग्यता तथा जीवन स्तर में सुधार हुआ है।

उच्च शिक्षा का औद्योगिक जगत् में योगदान–मानव संसाधन संगठन की पूंजी है, और इसी पर संगठन की सफलता एवं विफलता निर्भर करती है। अत: संगठन में योग्य एवं कुशल व्यक्तियों की भर्ती एवं चयन मानव संसाधन प्रंबधको का प्रमुख कार्य है। आज प्रत्येक संगठन को कुशाग्र बुद्धि , रणनीतिक, योग्य, कुशल, तकनीकी युक्त एवं मूल्यवान मानव संसाधन की आवश्यकता होती है। उच्च शिक्षा ने इस समस्या को दूर कर दिया है। आज मानव संबंधित विषयो पर उच्च ज्ञान प्राप्त कर इतना योग्य हो गया है कि वह देश में ही नहीं अपितु विदेश में भी औद्योगिक विकास में अपना सहयोग दे रहा है। संगठन में दिया जाने वाला प्रशिक्षण भी उच्च शिक्षा का ही एक हिस्सा है, जो कुशल एवं योग्य मानव पूंजी बनाने में सहायक होता है। जिसमें निम्न प्रकार की प्रशिक्षण विधिया अपनाकर कर्मचारियों को शिक्षित किया जाता है।

1. **इन्टर्शिप प्रशिक्षण–**इसके अन्तर्गत प्रशिक्षण विशिष्ट तकनीकी कार्यो, व्यावसायिक पेशों, इन्जीनियरिंग एवं चिकित्सा आदि के क्षेत्र में तकनीकी संस्थान व व्यावसायिक प्रतिष्ठान के द्वारा दिया जाता है। इसमें किसी विशिष्ट पेशे से संबंधित ज्ञान कॉलेज, व्यावसायिक शिक्षण संस्थानों के द्वारा दिया जाता है तथा व्यावहारिक ज्ञान के लिए औद्योगिक प्रतिष्ठानों का सहयोग लिया जाता हैं। इसमें सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक ज्ञान में संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया जाता हैं। इसमें प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को कार्य के प्रमाण–पत्र के साथ कभी कभी कुछ वेतन अर्थात् स्टाइपेन्ड दिया जाता है।
2. **प्रशिक्षुता प्रशिक्षण–** यह प्रशिक्षण अधिकांशत: ऐसे उद्योगो में दिया जाता है, जिसमें कुशलता प्राप्त करने में अधिक समय लगता है। इनका प्रयोग सामान्यत: बढ़ई, लुहार, सुनार, मशीनमैन, प्रिन्टर, निमार्ण कार्य में लगे कारीगरों, इलेक्ट्रिशयन, औजार बनाने वाले मैकेनिक आदि को प्रशिक्षित करने में किया जाता है। इसमें सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दोनों प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता है। भारत में इस प्रशिक्षण के लिए शिक्षार्थी अधिनियम, 1961 बना है, जिसमें प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले प्रशिक्षु को कुछ मजदूरी दी जाती है। अर्थात् प्रशिक्षण के साथ–साथ प्रशिक्षु से कुछ कार्य भी करवाया जाता है।
3. **विद्यालय प्रशिक्षण–** कई औद्योगिक संस्थानों में प्रशिक्षण विद्यालयों के माध्यम से प्रशिक्षण कार्यक्रमों को संचालित किया जाता है। इन विद्यालयों में प्रशिक्षु को कक्षा की भांति ही पढ़ाया जाता है, तथा कार्य अलग वातावरण में प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। ऐसा प्रशिक्षण निरीक्षकों, मशीन ऑपरेटरों,

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

लिपिकीय कार्यकर्ता तथा टंकण लिपिकों के लिए लाभदायक होता है। इस प्रकार के तकनीकी प्रशिक्षण केन्द्र मुख्यत: सरकार अथवा कल्याणकारी संस्थाओ द्वारा चलाए जाते है।

4. व्याख्यान – इस पद्धित के अन्तर्गत प्रशिक्षणकर्ता मौखिक व्याख्यान देकर प्रशिक्षु का ज्ञानवर्द्धक करता है। इस विधि में विशिष्ट एवं जानकार विशेषज्ञों द्वारा व्याख्यान कराया जाता है। व्याख्यान के पश्चात् उसी विषय पर वाद-विवाद किया जाता है ताकि बचे हुए संशय को दूर किया जा सके। यह विधि कॉलेजों व विश्वविद्यालयों में प्रशिक्षण में ज्यादा अपनायी जाती है। औद्योगिक प्रशिक्षण में इसका प्रयोग कम किया जाता है। इस विधि में कम समय एवं कम लागत में अधिक लोगों को सैद्धान्तिक प्रशिक्षण दिया जा सकता है।

5. सम्मेलन–इस विधि में कई विशेषज्ञों द्वारा सामूहिक तौर पर विचार-विर्मश व सूचनाओं का अथवा विचारों का आदान-प्रदान किया जाता है। सम्मेलन में किसी विषय की विशिष्टता पर विशेषज्ञों द्वारा अपने विचार प्रकट किए जाते है। इसमें प्रशिक्षण प्राप्त करने वाला व्यक्ति भी अपनी भावनाओं एवं विचारों को प्रकट कर सकता है। इस विधि में समान योग्यता एवं स्तर वाले व्यक्तियों को प्रशिक्षित किया जाता है। इस विधि में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्ति का मानसिक विकास होता है।

6. विशेष प्रशिक्षण पाठ्यक्रम – इसके विधि के अन्तर्गत संगठन अपने कर्मचारियों को विशेष प्रशिक्षण पाठ्यक्रम हासिल करने के लिए विभिन्न प्रंबधकीय व तकनीकी संस्थाओ में भेजती है। जिसमें प्रशासनिक सेवाओं, सेवी वर्गीय सेवाओं ,वित्तीय सेवाओं के लिए भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, भारतीय सेवी वर्गीय प्रंबध संस्थान, विदेशी व्यापार संस्थान, यूनिट ट्रस्ट कैपिटल मार्केट संस्थान, भारतीय वित्तीय संस्थान आदि है, जिनमें विशेष पाठ्यक्रमों के द्वारा प्रशिक्षण देकर कार्यकुशलता में वृद्धि करने का प्रयास किया जाता है।

उच्च शिक्षा की गुणवत्ता से औद्यागिक जगत् को लाभ –

1. उच्च शिक्षा से व्यक्ति कार्यकुशलता, आत्मविश्वास तथा उत्पादकता में वृद्धि होती है।
2. संगठन के उद्देश्यों व लक्ष्यों के साथ व्यक्तियों की पहचान बनाने में सहायक होती है।
3. वैश्विक चुनौतियों का सामना करने, तकनीकी परिवर्तन या अन्य परिवर्तनों के साथ मानव पूंजी को समायोजित करने में सहायक होती है।
4. संगठन के संयत्र, औजार, मशीनों, तथा कच्चे माल का अधिकतम एवं विवेकपूर्ण उपयोग संभव हो पाता है।
5. उच्च शिक्षा के माध्यम से संगठन में नेतृत्व क्षमता का विकास, ज्ञान व कौशल में वृद्धि तथा सकारात्मक दृष्टिकोण में वृद्धि होती है।

भारत में उच्च शिक्षा संस्थानों की स्थिति– स्वतंत्रन्ता प्राप्ति के पश्चात् की जनगणना के अनुसार भारत में उच्च शिक्षा संस्थानों की स्थिति या वृद्धि को नीचे दी गई तालिका से स्पष्ट रुप से समझा जा सकता है। सन् 1950-1951 में विश्वविद्यालय की संख्या मात्र 30 तथा कॉलेजो की संख्या 695 थी। जो वर्ष 1960-61 में बढ़कर 55 तथा कॉलेज की संख्या 1542 हो गई। क्रमश: इसी प्रकार सन् 1970-1971 में विश्वविद्यालय 103 तथा कॉलेज 3604, सन् 1980-1981 में विश्वविद्यालय 133 तथा कॉलेज 4722, सन् 1990-1991 में विश्वविद्यालय 190 तथा कॉलेज 7346, सन् 2000-2001 में विश्वविद्यालय 256 तथा कॉलेज 12806, सन् 2010-2011 में विश्वविद्यालय 564 तथा कॉलेज 33023 में उत्तरोतर वृद्धि हुई है। अत: स्पष्ट है कि भविष्य में भी उच्च शिक्षा की गुणवत्ता के महत्व को देखते हुए इन संस्थानों में वृद्धि होगी।

Growth of Higher Education institutions in India (Dec. 2011)

Year	No. of universities	No. of college
1950-51	**30**	**695**
1960-61	**55**	**1542**
1970-71	**103**	**3604**
1980-81	**133**	**4722**
1990-91	**190**	**7346**
2000-01	**256**	**12806**
2010-2011	**564**	**33023**

Source: University Grants Commission, New Delhi (2012)

निष्कर्ष – निष्कर्ष के रुप में कहा जा सकता है, कि औद्योगिक विकास में उच्च शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उच्च शिक्षा संगठन एवं व्यक्ति की प्रभावशीलता,कार्यकुशलता, उत्पादकता,गुणवत्ता,एवं ज्ञान प्राप्ति का प्रमुख माध्यम है। आज हमारे सभी स्तर के कर्मचारियों एवं प्रबंधको को नवीनतम ज्ञान, तकनीकी विकास की जानकारियों से मुक्त होना होगा। उच्च शिक्षा एक ऐसी सीढ़ी जिस पर चढ़कर हमारा देश विकासशील श्रेणी से विकसित श्रेणी की ओर अग्रसर होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Ali, N. A and Zairi, M. (2005) Service Quality in Higher education, Bradford University School of Management. Bradford
2. Harvey. L , Green D. (1993), Defining „Quality" assessment and evaluation in higher education,
3. Pandit ,k (2009) " Industrial relation and trade unions" Novelty & co. patana.
4. Pandit ,k (2010) "Human Resource Management" patana university, patana.
5. Journal.
6. Website of Internet.

****

राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान का शिक्षा के विकास में अहम् योगदान

उदयसिंह चौहान *

प्रस्तावना – शैक्षणिक व्यवस्था किसी भी क्षेत्र, समाज, देश के आर्थिक, सामाजिक एवं बौद्धिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आज सम्पूर्ण विश्व में कुशल श्रम का होना आवश्यक है। तकनीक प्रधानता के इस युग में केवल वही देश विकास कर पाया है जिसने अपने मानवीय श्रम का कुशलता से उपयोग किया है। श्रम की कुशलता ही सबसे महत्वपूर्ण आरम्भ माध्यमिक शिक्षा में निहित है। भारत जैसे बहुजनसंख्या वाले राष्ट्र में जहॉ बेरोजगारी व असमानता एक समस्या है, इस कारण राष्ट्र का अपेक्षित विकास नहीं हो पाया है वहीं इस समस्या का एक मात्र हल गुणवत्तापूर्ण शिक्षा ही है, जिसके माध्यम से हम कुशल श्रम उपलब्ध कराकर आर्थिक विकास में तेजी से आगे बढ़ेगें ही बेरोजगारी व पिछड़ेपन की समस्या का निदान भी कर पायेगें।

श्रम की कुशलता का सबसे प्रथम व आधारभूत माध्यम है माध्यमिक शिक्षा। आज देश की अधिकांश आबादी तक शिक्षा की पहुँच सहज, सुलभ व आसान नहीं है। एक और शहरी व सम्पन्न लोगों तक मँहगी शिक्षा उपलब्ध है, आज एक परिवार एक बच्चे की शिक्षा में 40,000 से 50,000 रू. वार्षिक व्यय करने के लिए बाध्य है व मजबूरी में अपने समस्त आवश्यक खर्चो में कटौती कर बच्चों को पढ़ा रहे हैं। वही दूसरी और ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी बच्चे बमुश्किल से 8वीं तक ही शिक्षा प्राप्त कर विद्यालय त्याग देते हैं, क्योंकि शहर तक जाने में वे आर्थिक रूप से समर्थ नहीं हैं। वहीं छात्राओं के लिए तो यहॉ और भी कठिन परिस्थिति हैं।

इन सब बातों का विचार कर शासन ने सर्वशिक्षा अभियान जो कक्षा 1 से 8 तक लागू है विस्तारित कर माध्यमिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए एवं सभी को समान, सहज एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने के लिए 1 जनवरी 2009 से राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान की शुरूआत की है। इसका उद्देश्य ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में 14–16 वर्ष की आयुवर्ग तक 75 प्रतिशत जनसंख्या तक माध्यमिक शिक्षा को पहुँचाना है तथा बारहवीं पंचवर्षीय योजना में 100 प्रतिशत जनसंख्या तक माध्यमिक शिक्षा को पहुँचाना है। इस हेतु प्रत्येक 5 कि.मी. के दायरे में हाईस्कूल व 8 कि.मी. के दायरे में हायर सेकेन्ड्री विद्यालय प्रारम्भ करना है।

RMSA द्वारा प्रस्तावित एवं प्रदत्त सुविधाएँ –

1. प्रत्येक विद्यालय में पर्यटल शैक्षणिक कक्ष व नये विद्यालय में भवन बनाना, इस हेतु जैसे ही विद्यालय की घोषणा होती है भवन की राशि उसी समय स्वीकृत हो जाती है।
2. छात्र–छात्राओं हेतु पृथक–पृथक गतिविधि कक्ष बनाना।
3. विद्यालय में विज्ञान लेब की स्थापना करना एवं उसके संचालन हेतु प्रतिवर्ष बजट आंबटित करना। अभी प्रति विद्यालय रू. 25,000 वार्षिक आंबटन दिया जाता है।
4. प्रत्येक विद्यालय में पुस्तकालय की स्थापना करना। इसके संचालन हेतु प्रतिवर्ष रू. 10,000 राशि प्रति विद्यालय प्रदान की जाती है।
5. बाहर से आने वाले छात्र एवं छात्राओं के लिए छात्रावास की व्यवस्था करना। वर्तमान में विकास खण्ड स्तर पर सभी वर्गो की बालिकाओं के लिए 100 सीट का छात्रावास संचालित है। जिसे 200 सीट हेतु इसी वर्ष प्रारम्भ किया गया है।
6. विद्यालय में स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता सुनिश्चित करना। इस हेतु प्रत्येक विद्यालय को रू. 50,000 की राशि एक मुश्त प्रदान की गई है।
7. प्रत्येक विद्यालय के लिए संख्या के मान से छात्र–छात्राओं के लिए टायलेट की सुविधा प्रदान करना। इस हेतु प्रत्येक विद्यालय को प्रति टायलेट दो लाख रूपये स्वीकृत किए गए है।
8. विद्यालय की सुरक्षा हेतु बाउन्ड्रीवाल का निर्माण करना।
9. विद्यालय में खेल का मैदान एवं खेल सामग्री उपलब्ध कराना।
10. सबसे महत्वपूर्ण कार्य विद्यालय में योग्य एवं प्रशिक्षित शिक्षकों की भर्ती करना है। जो शासन द्वारा जारी है।
11. छात्र–छात्राओं को कम्प्यूटर शिक्षा उपलब्ध कराना।
12. अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग, विकलांग, गरीब विद्यार्थियों को विभिन्न योजनाओं में वित्तीय सहायता सीधे उनके खातों में हस्तान्तरित कर प्रदान की जाती है।
13. छात्राओं को आत्म रक्षा हेतु प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है।

इससे शिक्षा पर शासन का नजरिया स्पष्ट है कि शिक्षा सर्वव्यापीकरण हो तथा 100 प्रतिशत जनसंख्या तक शिक्षा उपलब्ध हो। आगामी वर्षो में देश का भविष्य उज्जवल है। उम्मीद है कि हमारे देश के प्रधानमंत्री जी का 'कौशल विकास' का सपना सच होगा। हर हाथ कुशल होगा हर व्यक्ति पढ़ा–लिखा होगा एवं भारत पूरे विश्व का नेतृत्व करेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. विवेकानन्द झा – 'भारत में शिक्षा व्यवस्था'।
2. सरोज कुमार वर्मा – 'शिक्षा में संशोधन नहीं परिवर्तन चाहिए'।
3. म.प्र. गाईड – 'म.प्र. का शैक्षिक विकास स्तर'।
4. www.rmsa.com.

****

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत

Role of Time Management for Management Students

Pragya Tiwari * Namita Sethi ** Mansi Sethi ***

Introduction - This is a very important aspect in Management studies. Discuss various types of people, such as the procrastinator, the perfectionist and so on, as well as the varied approaches to time management. You can begin by discussing how time management is the focus of all actions intended to improve efficiency and how it mainly involves setting achievable goals.Include the skills involved, such as delegating, scheduling, planning, decision making & so on

Good time management is essential to success at university. Planning your time allows you to spread your work over a session, avoid a 'traffic jam' of work, and cope with study stress. Studying at university often involves meeting conflicting deadlines, and unless you plan ahead, you'll find it impossible to manage. To meet the demands of study you need to spread your workload over a session. Work out what needs to be done and when. Work out how to use your available time as efficiently as possible.

What Time Management Is?

Time management is a necessity for you, to do what have to be done. Basically it is: the act or process of planning and exercising conscious control over the amount of time spent on specific activities, especially to increase effectiveness, efficiency or productivity. Time management may be aided by a range of skills, tools, and techniques used to manage time when accomplishing specific tasks, projects and goals complying with a due date. Initially, time management referred to just business or work activities, but eventually the term broadened to include personal activities as well. A time management system is a designed combination of processes, tools, techniques, and methods. Time management is usually a necessity in any project development as it determines the project completion time and scope.

Moreover -

Time management is necessary because

(1) available time is limited,
(2) time cannot be stored: if unused it is lost forever,
(3) one's goals are usually multiple, sometimes conflict, and not all goals are of equal priority,
(4) Goals cannot be accomplished without the application of effort, which requires the use of time.

What is time management?

Let's strip away all this complexity and get back to basics for a moment. What is time management? The essence of time management is the following:

1. Decide what to do
2. Do it

Here are two definitions of time management

"Time management is the act or process of planning and exercising conscious control over the amount of time spent on specific activities, especially to increase effectiveness, efficiency or productivity."

"The price of anything is the amount of life you exchange for it" ~ Henry David Thoreau.

Fundamental time management skills in 3 easy steps

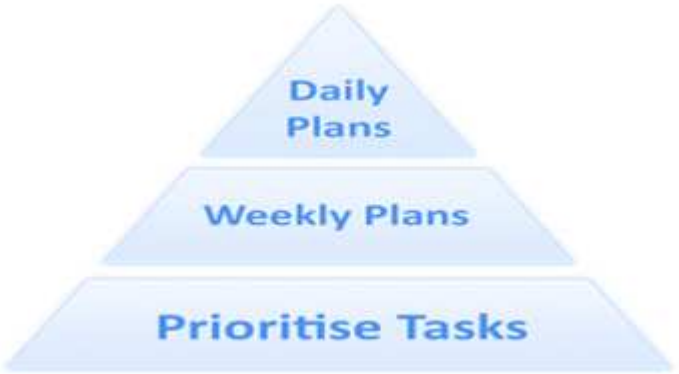

1. People new to time management generally start with some sort of app or a to-do list. There is no problem with it so long as that's not the only thing you know about time management. By talking to people, I have found out there's an excessive focus on flashy, new apps at the cost of other time management methods.
2. You can take the best to-do system and just stuff anything into it as it comes into your mind and think you have a good plan. What you will end up with is a huge mess. It is like putting everything randomly into your wardrobe and expecting to find things easily.
3. Daily plans and to-do systems are just the tip of the

* Research Scholar, A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA
** Research Scholar, A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA
*** Research Scholar, A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA

pyramid of time management, there are other important layers below. The following articles will give you an overview of important methods of time management. By following the articles in this sequence you will move the pyramid up from the foundation (priorities) to daily plans (to-do lists).

Time-Management Strategies

- Time-management is a vital skill, one that will be necessary in your chosen career as well as in university. People have different time clocks and what works for one student might not work for you.
- The following are some time-management strategies that you may want to incorporate into your time-management routine. Test them out to see what works and what doesn't work for you. It might be a good idea to start by monitoring and reflecting on how you currently use your time.

1. Priorities! You probably have a lot of things to do, so assess how important and how urgent the tasks are; then make sure high priority tasks get done first and are not put off on a regular basis. Avoid time wasters!
2. Be specific! Make the task as specific as possible - we tend to follow through then, especially if we write it down. For example, instead of telling yourself "I'll do some statistics this week," try "I'll do 3 descriptive statistics problems Tuesday at 7pm."
3. Small bite-size pieces! It's easy to feel overwhelmed, so try breaking tasks down into smaller sub-tasks. Once you've started it's easier to keep going.
4. Structure the environment! Find a place, preferably one you can use regularly and with limited distractions. Make sure you have all the essentials so you have no excuses.
5. Establish a routine! We are creatures of habit. If you always study at a certain time or day then it will be easier to get into concentration mode. Also, it is better to study briefly and regularly.

Time-Management Tips :

1) Block your work - Many persons think that they'll learn better if they scatter their work throughout the day, with frequent off-hours. Wrong. If you take your work back to back as much as possible, you'll have larger blocks of time to devote to concerted bouts of studying. Usually, if you have a gap of 50 minutes between job, it's much more likely to end up as Entertainment rather than work time. And if you can group your work on only two or three days, it will free whole days for work.

2) Make a plan - It's never too early to start figuring out how you'll do all the work in each of your five days. In fact, the very first day of classes is the right time. Enter all the assignments—including weekly assignments, quizzes, and exercises or short papers—into your electronic or print calendar. Then develop a plan for both your run-of-the-mill weekly studying and the monde research paper or killer final. *Rule of Thumb:* 1 hour of lecture time = 2 hours of study time. Plan accordingly.

3) Aim to make all days - Going to job is one of the most time-efficient things you can do. When you miss job, it takes much more time to learn the material you missed than it would have taken if you went to job in the first place. And you never learn it as well. Who could, getting notes from that guy who writes illegibly?

4) Determine whether you're an owl or a rooster - Schedule your studying for times when you can seriously engage with the work. This can be very different, depending on your biochronology. Some persons find 11 p.m. the perfect time to focus, others 7 a.m. Just because your roommate or partner at a particular time doesn't mean it will work for you.

Extra Pointer - Be sure to schedule time for sleep. Whether you study in the depths of night or at the crack of dawn, you'll need seven or eight hours of sleep. What good is it managing your waking time if you're so wasted that you can't concentrate on what you're doing?

5) Keep a log - Especially at the beginning of the job you should track how long it takes you to do the work in each of your day, prepare for new ideas. Knowing this can help you plan the time frame for future course of action. Also, writing it down will prevent you from overestimating how long you're really work (at least if you're recording honestly).

6) Do your work on time - Even though there's no superior & subordinate to stand over you, be sure you're doing the outside-of- work when it's assigned. Doing the working in advance of the project, doing for each day as it comes along, and memorizing what needs to be memorized on a week-by-week basis are all strategies that will increase your efficiency and cut down on overall work time.

7) Balance your courses - Every employee thinks his or her work is the most important activity in the company. Learn to triage your work—that is, to spend different amounts of time on each work, depending on how important or difficult that program is. Do not spend all your time on the program you find most enjoyable or easiest to do..

8) Plan to do each task once - It's very time-inefficient to do things twice. Some employee think they'll learn better by working their profession over (more neatly this time) Forget about it. All these are incredible time-wasters. And it's not likely that you'll be able to focus or understand better the second time. Advice? Do it once, and do it right.

9) Divide and conquer - Break up larger projects, such as research papers, field studies, and cumulative finals, into manageable chunks. And spread the stages over a reasonable number of days. Always add some extra time above what you think you need, because usually there's a major crunch or crisis toward the end. It's better to have a little extra time than to find yourself running around like a madman when your computer crashes at 4 o'clock the morning before a paper is due.

10) Don't take 10-day holidays - Some persons think it's their God-given right to take off a few days before Thanksgiving holidays and spring break—and a few days after. Instead,

consider it your religious duty to tote your work performance to Cancun and consult them while bonging your beer.

How you can do Effective Time Management?

In order to perform effective time management you need to use various strategies and techniques that would bring you closely to the achievement of your objectives. These may be:

1. Deep understanding of your capabilities and objectives,
2. Development of a coherent strategy for handling the time either on personal or professional level,
3. Planning of your future course of actions based on the understating of your self, and of your available resources,
4. Assumption of the responsibility and accountability for the delivery of the intended future outputs to you and to the others,
5. Understanding of the time an activity needs to be done and commitment on its completion,
6. Acknowledgement, design, planning, evaluation and (if needed) modification.

Conclusion - Time management is the act or process of planning and exercising conscious control over the amount of time spent on specific activities, especially to increase effectiveness, efficiency or productivity. Time management may be aided by a range of skills, tools, and techniques used to manage time when accomplishing specific tasks, projects and goals complying with a due date. Initially, time management referred to just business or work activities, but eventually the term broadened to include personal activities as well. A time management system is a designed combination of processes, tools, techniques, and methods. Time management is usually a necessity in any project development as it determines the project completion time and scope.

References :-

1. Adams, G.A. and Jex, S.M. (1997), "Confirmatory factor analysis of the time management behavior scale", Psychological Reports, Vol. 80, pp. 225-6
2. Trueman, M. and Hartley, J. (1996), Higher Education, Vol. 32, pp. 199-215.
3. Van Eerde, W. (2003), "Procrastination at work and time management training", Journal of Psychology, Vol. 137, pp. 421-34
4. Williams, R.L., Verble, J.S., Price, D.E. and Layne, B.H. (1995), Journal of Psychological Type, Vol. 34, pp. 36-42.
5. www.scribd.com/doc/10087184/Time-Management-Training-PPT
6. www.scribd.com/doc/37635036/Successful-Time-Management
7. www.wikipedia.org
8. www.businessballs.com

****

मीडिया, विज्ञापन एवं महिलायें

डॉ. शशि किरण नायक *

शोध सारांश – भारतीय मीडिया ने खासकर अखबार और दूरदर्शन ने स्त्री के प्रति आवश्यक जागरूकता और संवेदनशीलता दिखाई है लेकिन इससे आगे के सांस्कृतिक प्रश्नों की ओर से मीडिया काफी बेखबर है। वह स्त्री मुक्ति के सवालों से अधिक 'लाभ-हानि' के बाजारी सवालों में कैद है। जो खुद कैद में है, वह मुक्त क्या करेगा?

स्त्रियों को आगे कर प्रश्नों पर स्वयं ही विचार करना होगा और पहल करनी होगी। नए अनसुलझे अनेक प्रश्न जो स्त्रीजगत में आ रहे हैं, उन्हें उठाना, होगा। मीडिया की संरचना बदलनी होगी, भाषा बदलनी होगी तब कहीं जरूर स्त्री मुक्ति के दूसरे चरण में हम दाखिल हो सकेंगे।[1]

प्रस्तावना – स्त्री का जो रूप इन दिनों हमारा मीडिया दिखाता है वह 'उपभोग्य' और उपभोक्ता स्त्री का रूप है जो मूलत: एक 'सेल्सगर्ल' है जो उपभोक्ता बाजार में किसी बहुराष्ट्रीय निगम का मुनाफा कमाने निकल पड़ी है। यह अकेली है। बाल-बच्चे परिवार रहिता अकेली स्त्री आदर्श 'उपभोग्य' है, आदर्श उपभोक्ता। दिनरात मीडिया स्त्री की इस छवि को बनाता है। मर्दो से बराबरी में वह उन्हीं दुर्गुणों की शिकार दिखाई जाकर 'मुक्त' दिखती है जो दुर्गुण स्वयं उसी के शोषण के औजार थे। वह सिगरेट पीती हैं, शराब पार्टी करती है, जुआ खेलती है। वह अपनी इच्छाओं की स्वामिनी दिखती है लेकिन ये इच्छाएँ शुद्धत: उसकी नहीं हैं। अधिकतर उच्चमध्यवर्ग के बीच की स्त्रियों की ऐसी छवि को सुदृढ़ीकृत किया जाता है। यह वास्तविक स्त्री-छवि नहीं है। भारत की स्त्री, विभिन्न जातियों और धर्मो के शोषण चक्र में पिसती है, परिवार के पुराने ढांचे में चलती है। इसकी खबर तो मीडिया देता है। लेकिन विज्ञापनों सीरियलों, फिल्मों के भीतर स्त्री का निर्माण करते हुए वह यह तथ्य भूल जाता है कि भारत की शोषित दमित स्त्री की मुक्ति का लक्ष्य बाजार में साबुन बेचने वाली स्त्री नहीं हो सकती। वह भूल जाता है कि घर परिवार से निकलकर स्त्री को बाजार में बिठा देना उसके दोहरे-तिहरे शोषण के दरवाजे खोलना है। उसकी देह को 'सेक्स' में बदल देता है। लेकिन मीडिया बेखटके ऐसा करता है, कर रहा है।

इससे यह तो हुआ है कि स्त्री की मान्यता जबर्दस्त ढंग से बढ़ी है, स्त्री को दबंग रूप में थोड़ी प्रखरता भी मिली है और जो लाज-लज्जा उसके अबाध शोषण का कारण थी, जो 'असूर्यमपश्या' वाला भाव उसके दोहन की बुनियाद में था, वह टूटा है। लेकिन शोषण मुक्त नहीं हो सकी है और नए शोषण के क्षेत्र 'बाजार' में आ गई है। स्त्री-मुक्ति के इस नए सांस्कृतिक पहलू की ओर मीडिया को सोचना चाहिए।

अब हम इस आखिरी दशक के बहुत सारे विज्ञापनों में से सिर्फ एक विज्ञापन को देखें जो 'स्टारडस्ट' के अगस्त 1997 के अंक में छपा है और यह साबुन का विज्ञापन नहीं है बल्कि एक पत्रिका का विज्ञापन है जो अंग्रेजी मासिक है और स्त्रियों के लिए है। विज्ञापन के बाई ओर लिखा है: 'दूसरी पत्रिकाएँ एक स्त्री को ऐसे देखती हैं' इसके आगे एक चित्र है जिसमें एक नारी देह का कप-सा बना है। यह कप नग्न नारी देह का बना है। कप में एक स्ट्रा है जिसे एक हाथ पकड़े हैं। नग्न नारी देह का वह हिस्सा कप के सामने वाले हिस्से में उभारा गया है। आशय यह है कि कुछ पत्रिकाएँ स्त्री की देह को एक कप से ज्यादा कुछ नहीं मानती। इस इबारत के ठीक सामने लिखा है। 'सावी' एक स्त्री को कैसे देखती है?' यहाँ एक 'सावी' स्त्री खड़ी है। उसकी आँखें तीखी हैं, कहीं देख रही है। वह एक गाउन पहने है। उसके हाथ अपनी कमर पर हैं। सामने पास में लिखा है: तुम किसी की कामना की चीज नहीं हो। एक मर्द को संतुष्ट करने के दस गुर बताए जाने की तुम्हें जरूरत नहीं। तुम्हारी जिन्दगी सेक्स के इर्द-गिर्द नहीं घूमती। तुम बुद्धिमती हो। हाजिर जवाब हो, मजबूत हो, महत्वाकांक्षी हो, दयावान हो, निर्भीक हो, भावुक हो, समझदार हो, संवेदनशील हो और जिस तरह की तुम हो, उस रूप में एक ही पत्रिका तुम्हें सम्मान देती है। पत्रिका का नाम है – 'सावी।'

जब मीडिया इस कदर नहीं था, तब भी स्त्री-छवि का निर्माण मर्द जगत ही करता था। 'आम्रपाली' के निर्धारण में राजा और सभासदों की रुचियों का ही हाथ होता था। 'नगरवधुओं' के मानकों की स्थापना भी मर्द ही करते थे। संस्कृत साहित्य शास्त्र में विकसित 'गायिका भेद' नायिकाओं के लिए जो मानक तय करता है, वह भी स्त्री-छवि को 'फिक्स' किए जाने के उदाहरण हैं, यद्यपि हिन्दी साहित्य के विद्यार्थी को उसमें 'सौन्दर्य शास्त्र' और निर्गुण किस्म का नायिका भेद भर नजर आता है। यह काव्य शास्त्र भी स्त्री की छवि को नियंत्रित, निर्धारित और निर्मित करने का शास्त्र है। इन दिनों बदली जा रही स्त्री छवि पर इसका असर दिखलाई पड़ता है। इसका कारण भी यह है कि स्त्री-छवि जितने ढंग से और जितनी तेजी से इन दिनों बदली जा रही है, इतिहास में शायद ही कभी बदली गई हो।

यह नई स्त्री मीडिया के तमाम स्तरों पर दिन-रात बन रही है, बनाई जा रही है। दैनिक पत्रो, साप्ताहिको, मासिको, रेडियो, टीवी, वीडियो, सिनेमा के पर्दे पर होर्डिंगों में वह बरसों से बनती आई है और बन रही है। यह स्त्री पद्मिनी, शंखिनी, हस्तिनी, चित्रिणी नायिकाओं से एकघ्र अलग नई स्त्री है और अब यह हर घर में, हर मुहल्ले में बन रही है। वह अपने आपको खोजती हुई, पाती हुई स्त्री है। वह विज्ञापनों में विक्रेता स्त्री है, सीरियलो में अपने पति को 'आई हेट यू' कहती हुई स्वतंत्र स्त्री है, वह माफिया डॉन है, भाड़े पर लड़ने वाली है, बड़ी कम्पनी की मालकिन है और मर्दो को छकाने वाली है, दुर्घर्ष है,

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सरोजनी नायडू शासकीय कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

रोने वाली नहीं है। 'शांति' बन कर रोजाना वह खुलेआम अपनी माँ पर बलात्कार करने वालों पर मुकदमा चलाती है। उसकी इच्छाएँ हैं, उसका कैरियर है।

[2]मर्यादाओं के मकड़जाल में स्त्री के लिए 'निजी जिंदगी' का मतलब है व्यभिचार और अन्य सम्बन्धों से बाहर, हर सम्बन्ध अनैतिक, पाप और अक्षम्य अपराध। एकल विवाह या सम्बन्ध के सारे प्रतिबन्ध सिर्फ स्त्री के लिए हैं। पुरूष के लिए व्यभिचार की खुली वैधानिक छूट है। रखैल, रक्षिता, वेश्या, कॉलगर्ल सब उसी के आनन्द की संस्थाएँ हैं। पूँजी के शर्मनाक खेल में औरत को भोग-उपभोग की 'सुन्दर' वस्तु बनाया जा रहा है। एक ओर पोर्नोग्राफी के माध्यम से नपुंसक होते पुरूषों की कामवासना का 'आनन्द' बाजार बढ़ रहा है, दूसरी ओर नारी विरोधी अपराधों (यौन अपराध) की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। क्योंकि जैसे-जैसे अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के मौलिक अधिकारों की आड़ में अश्लीलता बढ़ेगी, वैसे-वैसे हिंसा भी। पर्दे पर बढ़ी यौन हिंसा का सीधा प्रभाव समाज में प्रतिध्वनित हो रहा है। पूँजी बाजार में क्यौन हिंसा' से ज्यादा बिकाऊ खबर, साहित्य या फिल्म क्या हो सकती है? एक तो पोर्नोग्राफी पितृसत्ता के लिए भारी मुनाफे का व्यापार है, दूसरे विश्वभर की स्त्रियों को मानसिक रूप से उत्पीड़ित-शोषित करके, अपनी सत्ता बनाए-बचाए रखने का पड्यन्त्र। ऐसा अश्लील साहित्य, विरोध और विद्रोह की भावना को कुण्ठित करके पूरी पीढ़ी को नपुंसक, बीमार और विकृत मानसिकता की ओर अग्रसर भी कर रहा है।

मीडिया का संसार बाजार की सोची-समझी नीतियों का नतीजा है। यहाँ हर चीज़ अध्ययन और विश्लेषण का परिणाम है। TAM के आँकड़ों ने यह प्रमाणित किया कि क्रिकेट मैच को देखने वालों में महिला दर्शकों की संख्या का ग्राफ विकास पर है। लगभग 30 प्रतिशत दर्शक संख्या महिलाओं की है। बस क्या था, सेअमैक्स ने मंदिरा बेदी को Extra innings में क्रिकेट स्टार के साथ मैदान में उतार दिया। क्रिकेट का ज्ञान उतना लाज़िमी नहीं था जितनी मंदिरा बेदी की उपस्थिति। ऐसी उपस्थिति जो भारत और भारतीय खिलाड़ियों के पक्ष में एक झूठे राष्ट्र गौरव को अपने सेक्सी लुक के साथ 'हाइफ दे सके। इस नई उपस्थिति ने एक ऐसा माहौल रचा कि दूरदर्शन ने 'फोर्थ अंपायर' कार्यक्रम में नए चेहरे रोशनी चोपड़ा (मॉडेल) को जगह दी। हाल में भारत-आस्ट्रेलिया सीरिज में वसीम अकरम, रवि शास्त्री और हर्ष भोगले के बीच विदेशी यौवनाओं को शामिल किया गया। स्टार क्रिकेटर ने अपने परिधानों में 'केजुएल वियर' को अपनाया ताकि वह विदेशी यौवनाओं से मेल खाकर एक नया फील पैदा कर सके। ऐसफील जो स्टेडियम और टी.वी. के दर्शकों को अपना सरीखा होने का बोध दे सके। आज मीडिया में जो कुछ भी दिखाई देता है वह चाहे कपड़े हों, इंटीरियर डेकोरेशन हो, जीवन शिल्प या बातचीत का मुहावरा-सभी कुछ बाज़ार की शर्तो पर है। अकारण नहीं है कि आज के 90 से 95 फीसदी सीरियल उच्च वर्गीय जीवन शिल्प के प्रतिबिम्ब हैं। 'हम लोग' 'बुनियाद', 'नुक्कड़' और 'नीम का पेड़' जैसे धारावाहिक आज सम्भव नहीं। क्योंकि जो ग्रामीण किरदार भाषा, और कथा हमारी पहचान है, वह बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की विज्ञापन योजना से मेल नहीं खाती। देखा जाए तो ऐसे कार्यक्रम चैनल की रंगयोजना और पैकेजिंग सौन्दर्य विधान को ध्वस्त कर सकते हैं। उत्तेजक और तीव्रगति के संगीत और रंगदृश्य विधान में मामूली देशी चेहरे अैर भूखे-नंगे लोगों की उपस्थिति मार्केटिंग के लक्ष्य को चोट पहुंचाते हैं अत: ऐसी सभी चीज़ों की विदाई का समय है जिनका सम्बन्ध मूल्य, सरोकार और आदर्श से है। इनका एक विभ्रम, एक छल ज़रूर है जो सारे चैनलों पर खड़ा किया जा रहा है और वह भी मार्केटिंग की असहायता से उपजा चालाक बोध है।

इधर इंडस्ट्री का बाजार केन्द्रीय है फैशन पर और स्त्री देह पर स्त्री देह के हर हिस्से-नाखून से ले के बालों तक-अनेक उत्पाद हैं। उनके उत्पाद हैं तो उनकी बिक्री के लिए उपभोक्ताओं की दरकार है। उपभोक्ता चाहितो बेचने के नए तरीके भी चाहिए। नई मॉडल मॉडलिंग के बहाने देह के हरेक कोण पर फोकस करना जरूरी है 'लोजअप टूथपेस्ट में युवाओं को भरमाता, आपस में एक दूसरे को नजदीक लाता, प्रेम करवाता 'लोजअप। फेयर एण्ड लवली-गोरेपन की क्रीम-इस्तेमाल करो और सहज जीवन साथी उपलब्ध। शेम्पू, साबुन, क्रीम, बॉडी स्प्रे, अन्डर गारमेन्ट्स, नेलपॉलिश से लेकर तमाम उत्पाद एक ही भाषा में आमन्त्रित करते हैं- 'आओ सुन्दर हो जाओ, दिखो।' यह जो अलग दिखने के साथ सर्वाधिक सुन्दर होने की सहज इच्छा का जो कमज़ोर और भावुक क्षण है बस उसी से सम्बोधित हैं सभी उत्पाद, सभी मॉडल, सभी मार्केटिंग के आला दिमाग है।

स्त्री सोच के बदलते आयाम अपनी देह के उपयोग को लेकर सीमित अर्थो में कदाचित सही लगें किंतु नारी मुक्ति आंदोलन के परिप्रेक्ष्य में वे अनुकूल नहीं होंगे। शिवकुमार मिश्र के अनुसार 'इन विज्ञापनों को देखकर लगता है सचमुच हिंदुस्तान नई सदी में पहुँच गया है। कदाचित ही कोई विज्ञापन हो जिसमें नारी और नारी देह का व्यावसायिक इस्तेमाल न होता हो। मॉडल चाहे वे युवक हों या युवतियाँ, किसी भी सीमा तक अपने व्यावसायिक इस्तेमाल के लिए तैयार हैं।' इस व्यावसायिक इस्तेमाल में यौनाचार, मांसलता, कामुकता, प्रेम, रोमांस, उत्तेजक मुद्राओं का घृणित व्यापार है और इसे समझने के लिए एक बड़ी तैयारी करनी होगी। मीडिया के पास शैतानी दिमाग और धन की ताकत है। लड़ना इतना आसान नहीं हैं।

कहना न होगा कि स्त्री के मानवीय सौन्दर्य की सहज अनदेखी हो रही है। उसे सिर्फ देह तक सीमित कर दिया गया है। स्त्री की देह का बाजार द्वारा यह उपनिवेशीकरण है। इस उपनिवेश में बाजार के साथ मीडिया का घोषित करार है। मीडिया स्त्री देह को सेक्स सिंबल के अलावा कुछ और नहीं मानता। 'पाप या 'जिस्म' जैसी फिल्मों का संसार हो अथवा एम.टी.वी.एस.बी.ओ, फैशन टी.वी. जैसे चैनलों का विश्वव्यापी संजाल। इन्टरनेट हो अथवा मोबाइल के ज़रिए स्त्रीदेह को कैद करती उत्तेजक छवियाँ। मीडिया से हर एक प्रक्षेपित किए जा रहे सन्देश का मूल है कि देह ही सर्वोपरि है। विज्ञापनों में भी यह बात साफ तौर पर देखी जा सकती है कि उनमें मानवीय सम्बन्धों का खुलेआम बाजारीकरण हो रहा है। अगर आप खास साबुन, क्रीम, शेंपू, टूथपेस्ट इस्तेमाल नहीं करते तो आपके सम्बन्ध विकसित, स्थापित होना कठिन है। मीडिया ने मानवीय सम्बन्धों को भी ब्रॉण्ड के उपयोग से सीधे-सीधे जोड़ दिया। चिन्ता की बात है कि स्त्री कहीं न कहीं इसे स्त्री मुक्ति के प्रश्न से जोड़ती है। एक हद तक यह सच भी हो सकता है किन्तु उसका बाज़ार का उपनिवेश बन जाने का जो सच है उस पर गौर करना जरूरी है। प्रकारान्तर से यह भी एक सवाल है कि स्त्री मीडिया का अस्त्र है या मीडिया स्त्री का। दोनों की जुगलबन्दी भी एक सच है। किन्तु यह सच है कि स्त्री की छवि बदल रही है। अब हमारे सामने एक नई स्त्री है। इस नई स्त्री को अपनी स्थिति का विश्लेषण स्वयं भी करना होगा। उसकी सचेतनता ही उसके भविष्य के रूप को तय करेगी। स्त्री को यह नहीं भूलना चाहिए की मीडिया पर वर्चस्व पुरूषों और उनकी घोषित-अघोषित सत्ता का है और इस सत्ता के सूत्र पितृसत्तात्मक व्यवस्था में हैं। अत: इस षड़यन्त्र को समझे बिना स्त्री की सही मुक्ति सम्भव नहीं है।

मीडिया और हिन्दी के राष्ट्रीय समाचार पत्रों में 'बदलती हुई स्त्री छवि' का उत्तर आधुनिक विश्लेषण करते हुए डॉ.सुधीश पचौरी का मानना है मीडिया, खासकर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, उससे जुड़े बाजार, बहुराष्ट्रीय निगमों

और इस सबके पीछे ईश्वर की तरह सर्वशक्तिमान नए पूँजीवाद ने स्त्री की गोपनीयता को उघाड़कर बेपर्दा कर दिया है। स्त्री उपमानों की कैद से निकल नाना रूपों में साक्षात हमारे समक्ष उपस्थित होने लगी है। वह हर वक्त है, हर जगह है। लगभग उतनी ही होने को है जितना कि पुरूष सर्वत्र उपलब्ध है। पुरूष जगत में इतनी 'स्त्री' और उसकी 'छवि' के आने से हड़कम्प है। स्त्री की नित नई छवि उसे चिढ़ाती है क्योंकि वह उसके उपमानों, उसके विचारों की कैद से न केवल बाहर निकली जा रही है, बल्कि उसे मुँह भी चिढ़ाती है, मुकाबला भी करती है। समकालीन जगत की समूची सांस्कृतिक बहसों की जड़ में कहीं न कहीं यही कैद से आजाद होती हुई 'स्त्री छवि' ही है।

यह स्त्री विमर्श या 'बदलती हुई स्त्री छवि' या बदली गई छवि, सिर्फ सुन्दर, शिक्षित और शहरी स्त्री की छवि ही है, जो मर्दो के मनोरंजन, सौन्दर्य और सेवा उद्योग को चलाने-फैलाने के लिए निर्मित, निर्धारित और नियन्त्रित की जाती रही है। 'नए पूँजीवाद ने स्त्री की गोपनीयता को उघाड़कर बेपर्दा कर दिया है'-छोटे पर्दे से लेकर बड़े पर्दे तक। क्या स्त्री को मर्दवादी 'विचारों की कैद से मुक्त करने के लिए, 'बेपर्दा' किया (गया) या करना जरूरी था? पितृसत्ता की पूँजी ने स्त्री को ही बेपर्दा क्यों किया क्यों कर दिया? और सवाल यह भी है कि सुन्दर स्त्री को सिर्फ बाजार में ही बेपर्दा क्यों किया? घर-परिवार में तो उसे आज भी, बुर्के या घूंघट वाली (सीता, सावित्री और 'तुलसी' या 'पार्वती') ही 'आदर्श स्त्री' नजर आती है। फिर भी कहते हो स्त्री की नई ग्लोबल छवि एक समूची सामाजिक-सांस्कृतिक प्रक्रिया का परिणाम है, 'षड्यन्त्र' नहीं। 'बावजूद इसके कि 'स्त्री छवि मूलत: मर्दो की दुनिया द्वारा लगातार गढ़ी गई और बरती गई छवि है और यह धँधा सदियों से जारी है और 'सौन्दर्य' या 'रूप के तमाम मानक मूलत: मर्दो के लिंगभेदी मानक हैं। डॉ.पचौरी स्वीकार करते हैं कि 'यदि स्त्रियों को ही अपने सौन्दर्य मानक चुनने का अधिकार हो तो स्त्री छवि सम्भवत: वैसी न होती, जैसी कि दिखती है। मगर यह मानने को राजी नहीं कि यह पूँजीवाद या पितृसत्ता (पितृसत्ता के पूँजीवाद का) 'षड़यन्त्र' है। इसे 'षड़यन्त्र' न कहें तो आखिर क्या कहें?

अगर 'स्त्री सौन्दर्य के पारखियों में निर्णायक भूमिका मर्द ही निभाते हैं, और 'प्रसाधन उद्योग के पीछे सक्रिय उसी मर्दवादी दृष्टि का बोलबाला है जो तय करती है कि स्त्री का चेहरा-मोहरा कैसा हो? तो यह कैस और क्यों सम्भव हो सका कि 'स्त्री की नई छवि संस्कृति की तमाम मर्दवादी अवधारणाओं को तोड़-फोड़ रही है। क्या पूँजीवाद पूर्णत: स्त्रीवादी हो गया है? मर्दवादी अवधारणाओं को तोड-मरोड़ कर, पूँजीवादी पितृसत्ता को कब तक बनाए-बचाए रखा जा सकता है, अगर हर जगह निर्णायक मर्द हैं, निर्णायक भूमिका मर्दो की है, तो स्त्री को 'मर्दवादी अवधारणाओं को तोड़ने-फोड़ने की अनुमति या सहमति किसने दे दी? क्यों? मनोरंजन, प्रसाधन, सेवा, छवि, मीडिया और सांस्कृतिक उद्योग की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था किसके नियन्त्रण में है? मर्दो के ही, ना! विज्ञापन, माडलिंग, फैशन, सिनेमा और टीवी से लेकर पोर्नोग्राफी व्यवसाय तक में ही तो स्त्री चाहिए। सिर्फ सुन्दर स्त्री। आजाद स्त्री। ऐसी सुन्दर और स्वतन्त्र स्त्री जो राष्ट्रीय-बहुराष्ट्रीय निगमों का माल, ब्राण्ड और उपभोक्ता सामग्री बेच सके और मालिकों के लिए ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमा कर दे सके, भले ही इस 'यज्ञ' में उसे चौराहे पर निर्वस्त्र होना पड़े। क्योंकि यही नग्न या अर्धनग्न स्त्री छवि, निरोध से लेकर अंतर्वस्त्र तक बेचती है। 'टफ' 'कोहिनूर' और 'कामसूत्र' के विज्ञापन ही देख लें। डॉ.पचौरी लिखते हैं 'स्त्री की नई छवि बनाने वालों ने स्त्री को 'अतिरिक्ति मूल्य' पैदा करने वाली बनायी है। उसकी नई छवि धन उपार्जित करती है। वह समूची अर्थव्यवस्था को गति देने वाली है। वह अब एक 'उद्योग' है। अर्थ क्षेत्र में सक्रिय होने के बाद स्त्री के अर्थ बदल जाते हैं, उसकी सत्ता बदल जाती है। यही हो रहा है।'' यह सही है कि घरेलू श्रम को कोई 'अतिरिक्त मूल्य' ही नहीं माना गया। लेकिन यह कहना कि 'स्त्री की नई छवि बनाने वालो ने स्त्री को 'अतिरिक्त मूल्य' पैदा करने वाली बनायी है भ्रामक है।

हम सब जानते हैं कि 'अतिरिक्त मूल्य' यानी 'सरप्लस वैल्यू' सिर्फ श्रम से पैदा होती है और यही 'अतिरिक्त मूल्य' पूँजी का निर्माण करता है। इसका मतलब स्त्री को 'अतिरिक्त मूल्य' पैदा करने वाली 'श्रमिक' बनाया गया है। मनोरंजन और सौन्दर्य उद्योग के स्वामियों के लिए। 'वह अब 'उद्योग' है'' मगर किसका? दरअसल वह स्वयं 'उद्योग' नहीं, बल्कि सिर्फ 'श्रमिक' है. श्रमिक। 'अर्थ क्षेत्र में सक्रिय' होने के बाद 'स्त्री के अर्थ' बदल जाते हैं-लेकिन क्या सिर्फ 'स्त्री के अर्थ' ही बदलते हैं? अर्थ के साथ स्थिति आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्यों नहीं बदल रही? इस 'बदलती हुई स्त्री छवि' से 'आधी दुनिया' को क्या लाभ मिल रहा है या मिल सकता है? शेष-अशेष स्त्रियों के लिए तो, इस नई स्त्री छवि की वजह से ही 'संकट' बढ़ते जा रहे हैं। यौन हिंसा और स्त्री उत्पीड़न के भयावह आँकड़ों के पीछे, स्त्री देह की इन नग्न-अर्धनग्न स्त्री छवियों की महत्वपूर्ण भूमिका होने से भी तो इन्कार नहीं किया जा सकता। विश्वभर में औरतों के विरूद्ध यौन हिंसा, लैंगिक भेदभाव और असमानता बढ़ाने में इस (पोर्नोग्राफिक) स्त्री छवि का, सबसे बड़ा योगदान रहा है और रहेगा। जो मीडिया 'नई स्त्री छवि' बना रहा है, वही उसे 'खतरनाक औरत सेक्सी औरत और 'खराब या गन्दी लड़कियाँ' भी कह रहा है। प्रिन्ट मीडिया से इलेक्ट्रानिक मीडिया तक, बार-बार सिद्ध कर रहा है।

दरअसल दुनिया भर का सौन्दर्य उद्योग, स्त्रियों को सुन्दर बनाने में लगा है और मनोरंजन उद्योग 'से'सी'। दूसरे शब्दों में 'बोल्ड एण्ड ब्यूटीफुल'। यही 'बोल्ड एण्ड ब्यूटीफुल' विश्व-ब्रह्माण्ड सुन्दरियाँ (सेलीब्रिटी) साबुन से लेकर, ब्रा-पैन्टी और परफ्यूम तक खरीद-बेच रही हैं। मर्द मॉडल भी कार, पेय पदार्थ, घड़ियाँ वगैरह के विज्ञापनों में नजर आते हैं। लेकिन अधिकांश उपभोक्ता सामग्रियों के विज्ञापनों में 'स्त्री देह की छवि' (नग्न, अर्धनग्न, कामुक और उत्तेजक) ही दिखाई पड़ती है। 'अश्लीलता' सम्बन्धी कानूनी प्रावधान उपेक्षित हैं। यह पूँजीवादी बाजार का 'षड़यन्त्र' नहीं, बल्कि अनिवार्य रूप से जरूरत या मजबूरी है! इस 'जोखिम भरे काम के लिए, सुन्दरियों की सहमति, और सहमति के लिए सम्मान धन, यश, ग्लैमर, पुरस्कार और प्रतिष्ठा भी देना ही पड़ेगा। कितना मोहक जाल है।

जाहिर है कि, सुन्दर स्त्री पूँजी की बाजारू चकाचौंध में अपने लिए बन रही, ऐसे आकर्षक और 'ग्लैमरस स्पेस' को पाने का यथासम्भव प्रयास कर रही है। वह अपनी देह की पूँजी को, पूँजी बाजार में निवेश कर दरअसल अपने होने का अर्थ भी तलाश-तराश रही होती है, बावजूद तमाम दबावों-तनावों के। उसके दिमाग में बहुत-साफ है कि वह ऐसा करते हुए अपनी देह नहीं सिर्फ देह की छवि को ही दाव पर लगा रही है। हालाँकि इस प्रक्रिया में उसबहुत से, जाने-अनजाने खतरों से भी 'खेलना' पड़ता है।

मीडिया द्वारा अपनाये गये महिला प्रश्नों के प्रति उपरोक्त सीमित संवेदनशीलता ने जहाँ मीडिया में महिला को अपेक्षाकृत अधिक दृश्यमान बनाया वही, महिला सम्बन्धी जगत के वास्तविक प्रश्नों को भी उठा दिया। इससे मीडिया में काम करने वाले मर्दो के सामने भी नए-नए प्रश्न उठे। अनेक पुरूष पत्रकारों ने आगे बढ़कर महिला प्रश्नों के प्रति अतिरिक्त जागरूकता दिखाई और महिला जगत में नई चेतना फैली, नए प्रश्न उठे। चाहे आदिवासी कमला का प्रश्न हो, चाहे शाहबानो का प्रश्न, चाहे रूप कुंवर के सती किए जाने का प्रश्न हो, मीडिया ने इन प्रश्नों को राष्ट्रीय प्रश्नों में बदल दिया और इस तरह समाज में महिला की दशा को लेकर सुदीर्घ राष्ट्रव्यापी बहसें छिड़ी और समाज में सक्रिय लिंग भेद के प्रति संवेदनशीलता बढ़ी। मायावती

उत्तरप्रदेश की मुख्यमंत्री बनती हैं और चौतरफा फैला मर्दो का समाज और प्राय: मर्दवादी मीडिया प्रत्यक्षत: सहनशीलता दिखाता है तो इसका एक कारण यह है कि महिलाओं की भूमिका के प्रति वह कुछ संवेदनशील होने की आदत डाल चुका है।

आज सिर्फ इतना ही सत्य है कि मीडिया महिला प्रश्नों पर कुछ संवेदनशील हुआ है। बस इससे आगे का सत्य यही है कि यह संवेदनशीलता मीडिया की भीतरी दुनिया को नहीं बदल पा रही हैं। मीडिया के भीतरी प्रकोष्ठों में अभी भी मर्दो का राज चलता है और वहाँ काम करने वाली औरतें प्रकटत: भले ही किसी तरह सह ली जाती है लेकिन उन्हें मर्दो के मर्दवादी अतिक्रमणों, हमलों, अप्रत्यक्ष अश्लीलताओं से लेकर प्रत्यक्ष दादागीरी तक सब कुछ सहने को मजबूर किया जाता रहा है। कोई एक-डेढ़ साल पहले दूरदर्शन की एक कार्यक्रमाधिकारी को अपने स्टेशन निदेशक की अश्लील और बेहूदी हरकतों का शिकार होना पड़ा था। जब उसने बाद में एक महिला संगठन को शिकायतपत्र और मामला जाँच में आया तो उस निदेशक के कारनामे खुले तथा उसे किंचित सजा मिली। फिर भी यह खबर दूरदर्शन पर नहीं, अखबारों में ही आई। इसी तरह अखबारों के दफ्तरों में काम करने वाली औरतों को अपने मर्द सहकर्मियों की हरकतों का मुकाबला करना पड़ता है, संघर्ष करना पड़ता है। चूँकि ऊँची पोस्टें सारे मर्दो के पास हैं इसलिए पदोन्नतियों में महिलाओं को झुकने के लिए मजबूर किया जाता है और न झुकने वालियों को पदोन्नति बहुत कम दी जाती है। स्थिति यह है कि हिन्दी में अभी तक एक महिला भी पूर्ण संपादक नहीं बन पाई है।

ऐसी अनंत घटनाएँ गिनाई जा सकती हैं जिनमें महिला पत्रकार या प्रेस कर्मी को परेशान किया गया, उससे अशोभनीय व्यवहार किया गया और उसके शिकायत करने पर उसे नौकरी से हाथ धोना पड़ा। यह तो सर्व विदित ही है कि दिल्ली के एक बड़े प्रकाशन समूह के मर्द पत्रकार इत्यादि होली पर एक गुप्त अश्लील पत्रिका निकालने के शौकीन रहे हैं। टीवी और रेडियो में महिलाओं को परेशान करने के किस्से मशहूर ही हैं। अनेक महिलाएँ इस तरह की हरकतों को सहने को मजबूर कर दी जाती हैं और अनेक महिलाएँ जब प्रतिरोध करती है तो उन्हें आगे नहीं बढ़ने दिया जाता।

मीडिया के दफ्तरों में मर्दो का लिंगभेदवादी जरिया सर्वत्र व्याप्त रहता है। महिलाओं के प्रति संवेदनशील अखबार तक अपने ढाँचों में व्याप्त मर्दवाद को रोक नहीं पाए हैं। इससे सिद्ध है कि महिला प्रश्नों के प्रति संवेदनशीलता अभी पूरी तरह और पर्याप्त नहीं आई है। मीडिया के प्रशासनिक ढाँचे भयंकर मर्दवादी ही है।

इसी मर्दवाद का नतीजा यह है कि मीडिया में काम करनेवाली महिलाओं की छवि समाज में एक खुली, आजाद और 'चाहे जिसके साथ सोने वाली' स्त्री की छवि बना दी गई है। दूरदर्शन के सीरियलों में दिखती स्त्री की छवि ऐसी ही है जो परिवार से बाहर अकेली कहीं खड़ी है। यह छवि सच्ची नहीं है। न यह स्त्री के प्रति संवेदनशीलता को जाहिर करती है। यह छवि मर्दो की मर्दवादी छवि का ही परिचय है जिसके लिए अकेली, आजाद औरत सबसे काम्य वस्तु है क्योंकि उससे वह अपना सुख लूट सकने का सपना पाल सकता है। यही नहीं, अखबारों में बलात्कार या छोड़-छाड़ की खबरों में निहित 'रसलीनता' भी बताती है कि मर्दो के लिए स्त्री की खबर अब एक उत्तेजक खबर की तरह है जिसे वह और भी उत्तेजक ढंग से प्रस्तुत करता है। अखबारों में बलात्कारों की खबर जिस अतिरिक्त कल्पनाशीलता से लिखी जाती है उससे स्पष्ट है कि लिखने वाले मर्द, रिपोर्टिंग में भी कई बार बलात्कार करते हैं। सामान्य स्त्रियों के सामान्य जीवन के सामान्य संघर्षो की खबरें स्त्री-सम्बन्धी सनसनीखेज खबरों से वरीयता नहीं पाती तो इसलिए कि अखबारों की दुनिया प्राय: मर्दवादी है जहाँ स्त्री हमेशा एक सनसनीखेज समाचार है।

बहुत से अखबारों तथा दूरदर्शनों में कुछ महिलाकर्मी भी काम करती हैं। एक रास्ता यह भी सोचा गया है कि इस तरह महिला कर्मियों के मीडिया में काम करने से शायद मीडिया का लिंगभेदवादी नजरिया कुछ संतुलित हो लेकिन ऐसा बहुत नजर नहीं आता। कुछ महिला पत्रकार, जो कुछ महत्वपूर्ण पद पर पहुँची है, वे अवश्य अपनी पत्रकारिता के जरिए स्त्रियों के प्रति आवश्यक संवेदनशीलता से लिखती हैं। मृणाल पाण्डे, उषाराय, नलिनी सिंह, मधुकिश्वर आदि ऐसी पत्रकार है जिन्होंने स्त्री प्रश्नों को जमके उठाया ही नहीं है, उन्हें लोकप्रिय भी बनाया है। लेकिन, इन प्रयत्नों से भी मीडिया की भीतरी संरचना पर कोई फर्क नहीं पड़ा है। मीडिया के प्रशासन में, नियुक्तियों में एवं कार्यक्रम में मर्दवादी दृष्टि रहती ही है, वहाँ स्त्री पत्रकारों को विविध ढंग से परेशान करने के रास्ते बने ही रहते हैं। मीडिया ने स्त्री को थोड़ी सी हमदर्दी दी है लेकिन अपनी संरचना बिल्कुल नहीं बदली हैं।

मीडिया में सीमित संवेदनशीलता बढ़ी है। लेकिन मीडिया ने स्त्री की जो छवि अन्य कारणों से प्रस्तुत की है, उसे भी विचार में लाया जाना चाहिए। अखबारों और दूरदर्शन आदि से खबरों में स्त्री का आना, स्त्रियों द्वारा अपने जगत की खबरें देना, निस्संदेह एक नई संवेदनशीलता का प्रमाण है। लेकिन मीडिया ने स्त्री की एक दूसरी छवि भी बनाई है। यह विज्ञापनों, टीवी सीरियलों, फिल्मों में दिखलाई पड़ती है। यह स्त्री के उपभोक्ता-वस्तु रूप में स्थापना है। यह नई किस्म की स्त्री है जो पश्चिम की आधुनिक उपभोक्तावादी समाज की स्त्री की छवि का विस्तार है जो परंपरागत शोषण, उत्पीड़न से तो मुक्त दिखती है लेकिन वह स्वयं एक बार फिर पुरूषवादी समाज के लिए निरे उपभोग की वस्तु बनकर रह जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महिला सृजन के विविध आयाम-सुश्री डॉ.तारा परमार प्रकाशक - भारतीय दलित साहित्य अकादमी म.प्र.- 2002
2. वैश्वीकरण एवं महिला सशक्तिकरण-विपिन कुमार-रीगल पब्लिकेशन-दिल्ली-2009
3. महिला सशक्तिकरण क्यों और कैसे? भगवती स्वामी, सविता किशोर आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स जयपुर-2008
4. जनसंचार एवं पत्रकारिता-प्रो.रमेश जैन-मंगलदीप पब्लिकेशंस जयपुर-2003
5. नारी-अन्तदर्पण व समाज-चंद्रमोहन अग्रवाल-इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स दिल्ली-2003
6. नारी-शोषण समस्यायें एवं समाधान-संपादक डॉ.राजकुमार अर्जुन पब्लिशिंग हाउस - नई दिल्ली-2003
7. मीडिया के सामाजिक सरोकार- निशांत सिंह-राधा पब्लिकेशंस, नई दिल्ली 2007
8. बदलती पत्रकारिता गिरते मूल्य-नमन प्रकाशन दिल्ली 2006
9. इण्डिया, मिनिस्ट्री ऑफ ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेंट ऑफ एज्युकेशन-महिला समाख्या: एज्युकेशन फॉर वीमेन्स ईक्वेलिटी- 1991

****

सूचना क्रान्ति और ग्रामीण महिलाऐं (दूरदर्शन के संदर्भ में)

डॉ. प्रेमलता तिवारी *

प्रस्तावना – ऐतिहासिक बदलाव की नई परंपरा में सांस्कृतिक धरोहर की बेमिसाल कड़ी है। सुचना क्रान्ति। जिस चहुँमुखी विकास को नये मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया हैं। हम सब को सोचने का एक अवसर मिला है कि क्या सुचना क्रान्ति महिलायो की विरासत में चली आ रही परिभाषाओ में कोई बदलाव का कारण तो नहीं हैं महिला घर की हो या बाहर की गाँव की हो या शहर की,काम काजी हो या ग्रहणी हर क्रान्ति की वह गवाह होती हैं। सुचना क्रान्ति की चुनोतियो का सामना तो उसे भी करना हैं। की घर और दुनिया के समन्वय की कोशिश में यह क्रान्तियो के लिये एक नया मार्गदर्शक बने। प्रसिद्ध ग्रह वैज्ञानिक पद्म श्री राजम्भाल देवदास के अनुसार –'संसार का कोई भी व्यवसाय इतना बहुआयामी नहीं हैं जितना की एक स्त्री का होता हैं। वह परिवार एवं समुदाय के लिये डॉक्टर, नर्स, मनोवैज्ञानिक, बैंकर, दर्जी, रसोइया, पौषण, विशेषज्ञ, भोजन प्रबंधिका, माली, बच्चों की परिचारिका, शिक्षाविद्, अर्थशास्त्री, सामाजिक कार्यकर्ता और पत्नि आदि एक साथ होती है।'

समाज के विकास की बात करना हो तो देश पर महिला एक मुद्दा बन जाती हैं। विकास की धारा में साथ ले जाने हेतु अब की प्रगति को सूचना क्रान्ति के पैमाने ने इस बात को साबित किया हैं कि प्रगति के सुस्त रफ्तार को महिला ही गति दे सकती हैं। सूचना क्रान्ति ने विकास के अवसर प्रदान किये है साथ ही चुनौतिया भी। लेकिन अतीत के उत्थान पतन को देख चुकी आज की सशक्त नारी ने धाक जमाते हुये मिडिया, रेडियो, नेट, सब पर बराबरी का हक बताया हैं। 31 दिसम्बर 2008 की इंडिया टुडे के सर्वे में बताया गया हैं कि हिन्दी पट्टी में तीव्र विकास कर रहे चुनिंदा 200 शहरो ने भारत की आंतरिक गतिविधियो में महती भागीदारी निभानी शुरू की है। इस का एक कारण मेरी नजर में सूचना क्रान्ति भी है। सूचना क्रान्ति के से भले ही हम सीधे न जुड़े लेकिन उसके प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष परिणामो से कोई बच नहीं सकता। समन्वय की संस्कृति हमें विरासत में मिली हैं। जो इस क्रान्ति के दौर में ऐसी घुल मिल गई है कि अलग कर उस पर विचार करना असम्भव हैं। आज का आचार व्यवहार जीवन दर्शन, रीतिरिवाज और सामाजिक आचरण क्रान्ति के सम्भावित परिवर्तनो की दौर से गुजर रहा हैं। भौगोलिक परिस्थितियो के कारण क्षेत्रीयता की सीमा अब कोई मायने नहीं रखती राष्ट्रीय संस्कृति की एकता ही अब अनिवार्य हैं। अतीत में अनेक उत्थान पतन देखने वाली हमारी संस्कृति तेजी से बदल रही हैं। जिसकी ख्याति दुनिया भर में फैल रही हैं। आज सूचना क्रान्ति के विविध साधनो में मोबाईल,टीवी और कम्प्यूटर प्रमुख हैं। 15 सितम्बर 1959 को आरंभ हुआ दूरदर्शन अब पास दर्शन बन गया हैं। 1962 में पूरे देश में 41 टेलीविजन सेट थे वही 2000 तक यह आकड़ा 100 करोड़ के ऊपर पहुँच गया हैं।

सूचना क्रान्ति –

1. रेडियो
2. कम्प्यूटर
3. इन्टरनेट
4. समाचार पत्र
5. प्रिंट मिडिया
6. रेडियो
7. टेलीफोन
8. मोबाईल
9. दूरदर्शन

इन समस्त प्रकारो में दूरदर्शन को सर्वाधिक प्रभावी माना जाता हैं क्योंकि शिक्षा अशिक्षा,शहरी ग्रामीण के बीच का अंतर इसके लिए कोई अर्थ नहीं रखता हैं। दूरदर्शन और सेटेलाईट के समस्त चैनलो पर नजर डालो तो ऐसा कोई चैनल ग्रामीण महिलाओ की प्रगति के लिए कार्य नहीं कर रहा हैं। इने–गिने कुछ कार्यक्रम दूरदर्शन के पास तो है किंतु वह उतने प्रभाव नहीं हैं,जितने होने चाहिए।

ग्रामीण महिलाओ के क्रार्यक्रम की सूची – वर्तमान टीवी कार्यक्रमो की सूची देखने पर एक बात तो स्पष्ट है कि ग्रामीण महिलाओं से संबंधित ऐसा कोई विशेष कार्यक्रम किसी भी चैनल पर लोकप्रिय नहीं हुआ है जिससे इन महिलाओ के सर्वागीण विकास में किसी भी प्रकार का सहयोग हो मात्र सरकारी योजना के प्रचार हेतु जो विज्ञापन जारी किये जाते हैं। एक प्रभाव ब्रांड यूनिवर्सिटी के रार्बट जेनानन के सर्वे ने यह माना हैं कि पुत्र चाह के प्रति रूझान में थोड़ा सा परिवर्तन आया हैं। दूरदर्शन के बढ़ते कदम ने ग्रामीण क्षेत्र का परिदृश्य बदल दिया हैं सरकारी दूरदर्शी योजनाओ का परिणाम हैं कि गॉव में जहा पहले कुटीर उद्योग हुआ करते थे अब लघु उद्योगो ने जगह ले ली हैं। दूरदर्शन के माध्यम से मिली तमाम योजनायो की सूविधा के कारण ही घूघट की आड़ में ग्रामीण महिला के हाथ में मोबाईल नजर आ रहा हैं। परंतु दूरदर्शन धारावाहिको के माध्यम से ऐसा कोई जादूई परिवर्तन तो नहीं हुआ है कि इनका चेहरा ही बदल जाये।

दूरदर्शन के क्रार्यक्रम का ग्रामीण महिलाओ पर प्रभाव – स्त्री के योगदान को जीवन के हर क्षेत्र में अदृश्य रखने की साजिश दूरदर्शन के मामलो में सतत जानकारी हैं। घरेलू स्तर पर ग्रामीण महिला खाना पकाना, खिलाना, प्रजनन एवं मजदूरी तक ही सीमित हैं। ऐसे में सेटेलाईट के धारावाही उसे चमत्कृत कर देते हैं। भारतीय संस्कृति की मजबूत जड़ो को काटने वाले ये धारावाहिक दलित मजदूरी किसान भारतीय नारी का दोहरा शोषण कर रही हैं। नारी के स्वाभीमान एवं अस्मिता पर हमला करने वाले धारावाहिक

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

विलासिता की और आकर्षित कर रहे हैं। क्षेत्रियतावाद ग्रामीण परिवेश के बढ़ते खतरो के बीच नारी भावनाओ के साथ खिलवाड़ करते ये धारावाहिक मेलजोल एवं संघर्ष द्वन्द्धात्मक रिश्ते के संतुलन को खण्डित ही करते हैं। निजी चैनलो की प्राथमिकता ने तो भारतीय मूल्य व्यवस्था को कही का नहीं रखा हैं। जैसे-जैसे टीवी के पैर गॉवो की और बढ़ते जा रहे हैं, वैसे -वैसे समाज एवं संस्कृति की आत्मा आहत हो रही हैं। किसी संतुलित सोच का विकास नहीं हो रहा हैं। षड़यत्र चमकती गाड़िया, रंग बिरंगी साड़िया भारी भरकम आभूषणो के बीच बदलने की भावना से रचे जाने वाले शकुनी मामा जैसे षड़यत्र भोली भाली ग्रमीण महिलाओ को विश्वास दिलाने मे सफल हो गये हैं कि उनके विचारो से परे ऐसी भी दुनिया हैं जहॉ उसी के जेसे कोई स्त्री लक्ष्यहीन जीवन को जी रही हैं। इस सम्बन्ध में प्रो.पारख ने कहा कि- 'जन संचार के सभी माध्यम पूँजीपति,भूस्वामी एवं शासक वर्ग के ही प्रत्यक्ष या परोक्ष नियंत्रण में हैं, ऐसे में इनसे व्यापक जनहित के अनुकूल कार्य करने की आशा नहीं की जा सकती।'

जन संचार के सभी सूचना क्रान्ति, मनोरंजन शिक्षा, सूचना एवं परिवर्तन के विश्वव्यापी बहुआयामी विकास का ही परिणाम हैं कि आज इस सेमिनार में हम सब उपस्थित होकर इसके दूरगामी प्रभाव का आकलन करने हेतू तत्पर हुये हैं। भारत के गॉवो में दूरदर्शन में दबे पैरो से हलचल मचाई है पर ग्रामीण महिलाओ का सशक्त रूप यहॉ दिखाई नहीं देता हैं। शहरो मे ऊँचे परिवारो में ब्रांडेड परिधानो से घिरी महिलाओ को देख सच हुये अपने सपने वाली स्थिति का साकार रूप नहीं माना जाना चाहिए। नव जागरण के दहलीज पर खड़ी गॉव की महिला को संघर्ष करना पड़ रहा हैं। विकास की विशाल संभावनाओ से परे गॉव की बुनयादी सुविधाओ की हालात लड़खड़ा रही हैं। अभी भी एक बड़ी सच्चाई यह है कि आम जनता का बहुत बड़ा भाग 80 प्रतिशत ग्रामीण महिलाये दूरदर्शन के प्रभावो से वंचित हैं। गॉव में पारंपरिक समाज उपभोक्तावादी समाज की और झांक रहा हैं। पर विकास के शैशव काल से गुजर रहे गॉव ऐसे नाजुक मोड़ पर खड़े हैं जहॉ दूरदर्शन के अनचाहे प्रभाव उन्हें गुमराह कर रहे हैं। लोक संस्कृति एवं लोक उत्सव में गहरी आस्था रखने वाली ग्रामीण नारी गरीबी एवं अशिक्षा से पीड़ित हैं। सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश को ध्यान में रख कोई सराहनीय प्रयास नजर नहीं आते बल्कि खुले बाजार की व्यवस्था के तहत शेम्पू, साबुन, मोबाईल, गॉव की स्वस्थ परंपराओ को क्षति पहुॅचा रहे हैं।

रियलिटी शो हमे भ्रमित करने वाले अनरियलिटी शो हैं। गाजर घास की तरह प्रतिदिन बढ़ते हुये धारावाहिक दिशा भ्रमित करते हैं। घुघंट में रहने वाली ग्रामीण नारी जीवन की मुलभूत संरचनाओ से परे आकाक्षाओं के झुले में बैठ सपनो के आकाश में विचरने की सोच में ढलने लगी हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियो ने स्वस्थ मनोरंजन को भूला दिया हैं। नग्ने देह दर्शक रिश्तो की मर्यादा को धूल चटाते धारावाहिक साहित्य को परे धकेलते उद्देश्यहीन कार्यक्रमो ने गॉवो में सामाजिक प्रदूषण फैलाना शुरू कर दिया हैं। होना तो था कि गॉव की स्वस्थ परंपराओ का निर्वाह किया जाने पर वहा के मृतप्राय: उद्योगो में नई तकनीकी के आधार पर जान फूँकी जाये अर्थात दृष्टी से ग्रामीण महिलाओ को समक्ष बनाया जाये लेकिन सेटेलाईट चैनलो की घुसपेठ से ग्रामीण बाजार में भी संस्कारो आधुनिक विचार क्रान्ति से हमला बोला है। आपसी संवाद की पृष्ठभूमि में विकसित होते लगभग 576000 गॉव सूचना क्रान्ति के कारण भ्रमित हैं। गरीबी यथावत हैं और सपने असंख्य है,त्यौहार परंपराये,खान-पान, रीति-रिवाज,धर्मव्रत जैसे अपठित कलात्मक साहित्य से परिपूर्ण ग्रामीण महिलाओ को निखारने में सूचना क्रान्ति एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता हैं। एक रिसर्च पेपर मे डॉ. प्रतिभा मिश्रा ने कहॉ हैं - 'आधुनिक युग में जनमानस ने दूरदर्शन एक ऐसा सशक्त माध्यम हैं,जो महिलाओ के सामाजिक,आर्थिक एवं सांस्कृति विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता हैं।'

सरलता एवं सहजता की धुरी महिलाओ से सीधे संप्रेषण की सहज आवश्यकता हैं। ग्रमीण महिलाओ को उन्हीं के परिवेश मे उन्हीं के समस्याओ को धारावाहिको में ढालकर सुलझाना हैं। बौद्धिक एवं शैक्षणिक स्तर में मतभेद घटाने में टीवी की सक्रिय भूमिका हैं। इस विश्वसनीय सूचना स्त्रोत पर गॉव की जनता विशेष कर महिलाये आँख मुंदकर विश्वास करती हैं। गॉव के विकास की गति को तेज करना हैं तो ग्रामीण महिलाओ के परिवेश को समझ कर ही आगे बढ़ना होगा।

सुझाव - दूरदर्शन एवं ग्रामीण नारी परस्पर पूरक बने तो अनिवार्य हैं कि कुछ ऐसे परिवर्तन की शुरूआत करते जिससे ग्रामीण महिलाओ का सर्वांगीण विकास हो सके। भारत की सुदीर्घ लंबी ऐतिहासिक परंपरा यूँ ही आसानी से परिवर्तित हो नहीं सकती परंतु मेल मिलाप एवं संघर्ष के उलझे हुये रिश्तो का प्रभाव गॉव में दिखाई दे रहा हैं टीआरपी के माध्यम से नारी शोषण पर फलने फुलने वाली चैनल व्यवस्था के बनाये रखने की अत्यंत सफल रणनीति का विरोध होना ही चाहिये। विवेकहीन आस्था की जड़े काटनी ही होगी। पूर्व राष्ट्रपति डॉ.शंकरदयाल शर्मा के कथन को ध्यान में रखें की - 'हमें यह बात याद रखनी हैं कि हमारे देश की पुनर्निर्माण व विकास के लिये नारी शक्ति की महत्ता समझता और उसे सुयोग्य स्थान देना आवश्यक हैं। कृषि पर आधारित हमारी अर्थव्यस्था में ग्रामीण महिलाओ का ना कोई सहयोग परक बल्कि एक स्वतंत्र महत्व हैं।'

इसलिये दूरदर्शन को इस और अधिक ध्यान देना चाहिये कि ग्रामीण नारी के जीवन की सामाजिक समस्याओ दूर कर मनोवैज्ञानिक रूप सुदृढ़ बनाया जावे।

हमारे देश की असली आबादी के शक्ति यूँ ही नष्ट नहीं होने देना हैं। सच्ची आधुनिकता बुद्धी की स्वतंत्रता हैं अतीत की गुलामी नहीं इसलिये पीछे की और देखते रहने की ग्रामीण नारी के व्यवहार में परिवर्तन लाना चाहिए। डॉ.लोहिया ने समाजवादी दर्शन में कहा 'औरत हिन्दुस्तान की औरत दुनिया के दुखी लोगो में सबसे ज्यादा दुखी भुखी मुरझाई व बीमार हैं।' ग्रामीण नारी की परिभाषित करने वाली उक्ति में कुछ-कुछ सच्चाई तो हैं। नारी के आत्मसम्मान को जगाकर शिक्षित व स्वतंत्र करने के लिये, 'पुरूष के प्रति नजरिया बदलने के लिये अतीत से चली आ रही विकृतियो को खत्म करने के लिये दूरदर्शन से बढ़कर कोई कार्यक्रम हो ही नहीं सकता। इसके लिये गॉवो में प्रसारित दूरदर्शन के कार्यक्रमों की जिम्मेदारी कम नहीं आकी जा सकती। इसमें ग्रामीण तालमेल,सहमति एवं विचार विमर्श की राह अपनानी होगी। ग्रामीण सभ्यता व संस्कृति के धनी भारत में कार्यक्रमो को निश्चित सॉचे के डालना होगा। ताकि ग्रामीण दक्षता व क्षमताओ का पूर्ण उपयोग हो। हमारी संस्कृति ग्रामीण परिवेश पर ही निर्भर रहे। इसलिये कुशाग्र बुद्धि से सावधानी के साथ धारावाहिको को नया रूप देना होगा। भारत की 10 में से 5 महिलाये निरक्षर हैं। और गॉवो में ही बसती हैं। पर वे सांस्कृति सोच और अनुभवो की धनी हैं। अगर रूढ़िवादिता और अंधविश्वास से उन्हें मुक्त कर दिया जाये तो महात्मा गॉधी का सपना सच होगा की भारत की आत्मा गॉवो में बसती हैं। पश्चिमी सभ्यता के रथ पर सवार विविध चैनलो को भारतीय

ग्रामीण परिवेश की जीवन पद्धति सभ्यता के घूसपैठ से रोकना होगा। उनकी वैभववादी विचारधारा का विरोध करना होगा। मानवता के उसने वाले रियलियटी शो को कानूनी रूप से बंद करना होगा। दूरदर्शन की विविध चैनल व्यवस्था थोपी से हुई व्यवस्था इसका विरोध कर सार्वजनिक एवं सार्वभौमिक शिक्षा का प्रसार ग्रामीण परिवेश के तहत किया जाना चाहिए। विज्ञान के विशाल क्षितिज में ग्रामीण सभ्यता एवं संस्कृति के तारे जड़ने ही होगें। ग्रामीण महिलाओ के जीवन चरित्र में उतना ही दखल देना चाहिये जितना की विकास के लिये अनिवार्य हैं। बौद्धिक दिवालिया की समा पार करते चैनलो पर विश्वास नहीं करना चाहिये। नये परिवेश में नारी की नई भूमिका को सामाजिक मान्यता दिलाने के लिये आवश्यक है कि दूरदर्शन अपनी सही भूमिका आदा करे क्योंकि बीबीसी, दूरदर्शन, सेवा के लिये पूर्व निदेशक जेरल्ड विडन ने कहा हैं कि 'घर और स्कूल के बाद मेरे विचार से संसार की किसी अन्य माध्यम की तुलना में मानव जाति पर सबसे गहरा प्रभाव दूरदर्शन ने ही डाला हैं। यदि दूरदर्शन व्यापक उच्च आदर्श से जूड़ा रहा तो यह मानव का अभिन्न अंग बन जायेगा और अगली पीढ़िया इसे पसंद करेगी।

1. ग्रामीण महिलाओ को लघु रोजगारोन्मुख उद्योगो की शिक्षा दी जा सकती हैं। उनके मानसिक विकास को ध्यान में रखकर ऐसे कार्यक्रम बनाये जा सकते हैं कि वे आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ हो।
2. दूरदर्शन का उद्देश्य एक ऐसी सृजनात्मक शक्ति को उत्पन्न करना हैं जिसके द्वारा स्वार्थ हिंसा और उपभोक्तावादी लालसा का अंत हो सके। तर्कशक्ति का विकास करे 'हमे सदियो के पसीने और ऑसूओ को एक पीढ़ी के रूप में बदलना होगा,हमें असमानताओ को कम करना होगा जो अन्यायपूर्ण हैं और हमें अपने को गौरवान्वित करना होगा।
3. मातृ 'सत्यार्थ प्रकाश' ग्रथ के आधार पर महर्षिदयानंद सरस्वती पूरे भारत में बदलाव की पृष्ठ भूमि तैयार कर गये तो भला गॉव–गॉव यह पहुँचा दूरदर्शन जो आधुनिक साहित्य का ही एक प्रकार हैं। क्या नहीं कर सकता। ग्रमीण परिवेश में बौद्धिकता,विलास और अध्यात्म में तालमेल को महत्व दिया जाना चाहिए। सच पुछो तो यह जादूई छड़ी हैं बस पथ प्रदर्शक का इंतजार हैं। बीबीसी के दूरदर्शन सेवा के पूर्व निदेशक जेरल्ड विडन ने कहॉ था कि – 'घर और स्कूल के बाद मेरे विचार से संचार के किसी अन्य माध्यम की तुलना में मानव जाति पर सबसे गहरा प्रभाव दूरदर्शन ने ही डाला हैं। यदि दूरदर्शन व्यापक और उच्च आदर्श से जुड़ा रहा तो यह मानव का अभिन्न अंग बन जायेगा और अगली पीढ़िया इसे पसंद करेगी।'

लोहियाजी का यह कथन कि – "A Socialist movement without the active participation of women is like a wedding without the bride" तो दोनो मे सुन्दर,सार्थक तालमेल अनिवार्य हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. इंडिया टूडे 31 दिसम्बर 2008
2. संस्कृति,जनसंचार और बाजार नंद भागज, सामाजिक प्रकाशन,नई दिल्ली 1100002
3. जनसंचार और सामाजिक संदर्भ डावरीमल्ल पारख ।
4. प्रसार शिक्षा गीता दुस्व, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा ।
5. आधुनिक शिक्षा तकनीक एवं उपकरण मधुसुदन त्रिपाठी ।
6. हमारी सांस्कृतिक धरोहर डॉ. शंकरदयाल शर्मा,प्रभात प्रकाशन,दिल्ली।
7. भारतीय संस्कृति– कुछ विचार डॉ. राधाकृश्णन,सरस्वती विहार,नई दिल्ली ।
8. डॉ. लोहिया का समाजवादी दर्शन ताराचंद दीक्षित, लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहबाद ।
9. विकीपिडिया ।
10. जागरण डॉट कॉम ।

****

कन्या भ्रूण हत्या : कारण और निदान

डॉ. प्रकाश कुमार जैन *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति विश्व की सभी संस्कृतियों में श्रेष्ठ है। हमारे देश में जहा युगों युगों से नारी को देवी के रूप में पूजा जाता है, उसी देश में कन्या भ्रूण हत्या जैसे जघन्य अपराध होना बड़ी विडम्बना है। मातृत्व में ही नारी की सम्पूर्णता है। मातृत्व स्त्री को ईश्वर द्वारा प्रदत्त एक अनमोल वरदान है लेकिन आज यह वरदान अभिशाप के रूप में बदलता जा रहा है।

आज बड़ी संख्या में कन्या भ्रूण के गर्भपात किए जा रहे हैं। ममता के आंगन का फूल खिलने से पहले ही मुरझा जाता है। गर्भस्थ शिशु यानी एक निहत्थे और कमजोर जीव को उसी के आश्रयदाता के द्वारा समाप्त किया जाना क्रूरता की चरम सीमा है।

प्रत्येक छोटे बड़े प्राणी को जीने का पूर्ण अधिकार है। किसी का जीवन नष्ट करने का अधिकार किसी को भी नहीं है। अपनी जीती–जागती सन्तान की हत्या करवाने की छूट विश्व के किसी भी धर्म ने प्रदान नहीं की है। अत: बालिका भ्रूण हत्या जैसे नृशंस, अमानवीय व हिंसक कार्य को जो सम्पूर्ण मानव जाति पर एक कलंक है, उसे न केवल स्वयं त्यागना, अपितु उसे पूर्ण रूप से रोकने के लिए भरसक प्रयत्न करना भी मनुष्य जाति का प्रथम कर्त्तव्य है।

अपने ही खून से बने, दाम्पत्य प्रेम के प्रतीक बालिका शिशु को गर्भपात द्वारा कटवा कर टुकड़े टुकड़े कराकर निर्मम हत्या करवाने वाले माता, पिता, सम्बन्धी एवं ऐसे जघन्य कार्य के लिए प्रेरित करने वाले मानवों को केवल अपराधी या पापी कहना बहुत न्यून है। धर्मशास्त्रों ने तो मानव वध को नरक गति का कारण कहा है। सर्वोच्च न्यायालय ने एक निर्णय सुनाते हुए वेदों का उदाहरण देते हुए कहा है कि किसी का जीवन लेना केवल अपराध ही नहीं अपितु पाप भी है। आज भी बेटी जन्म को हेय दृष्टि से देखने की विकृत मानसिकता में शनै: शनै: सुधार तो अवश्य हुआ है, किन्तु उनकी संख्या आज भी अंगुलियों पर गिनी जा सकती है। बेटियां जहां घर में पूर्ण प्रतिभा के बावजूद कम आंके जाने के कारण हीनता का शिकार हो जाती हैं और अपना चंहुमुखी विकास नहीं कर पाती।

आधुनिक महिलाएँ गर्भस्थ शिशु का लिंग परीक्षण कराने के बाद गर्भ में पल रहा शिशु कन्या का है, जानते ही गर्भपात कराने जैसा निन्दनीय कार्य कराने को तत्पर हो जाती है जो कि समाज एवं राष्ट्र के लिए अत्यधिक घातक है, क्योंकि कन्या भ्रूण हत्याएं दिन दूनी रात चौगुनी गति से बढ़ने लगी हैं और गर्भपात करना एक अच्छा खासा व्यवसाय ही बन गया है। गर्भपात कराने व अवांछित सन्तान से सस्ते में ही छुटकारा पाने के विज्ञापन तक देश के कोने–कोने में पाए जाने लगे है।

कन्या भ्रूण हत्या कारण –

- कन्याओं के लालन पालन को अनुत्पादक व्यय मानने की प्रवृत्ति।
- लड़कियों के प्रति समाज की दूषित मानसिकता।
- लड़के की चाह।
- लड़के व लड़कियों के प्रति समाज की भेदभावपूर्ण रवैया।
- लड़का वंश आगे बढ़ाता है – इस प्रकार के विचार।
- भारी भरकम दहेज प्रथा से बढ़ी कन्या भ्रूण हत्याएं।
- लड़की पराया धन।
- लड़के को जन्म न दे पाने पर माँ को हेय दृष्टि से देखा जाना।

कन्या भ्रूण हत्या निवारण –

- लड़के व लड़कियों के प्रति समाज में भेदभावपूर्ण रवैये में परिवर्तन लाना।
- दहेज प्रथा को समाप्त करना।
- समाज में जागरूकता लाना।
- जो नारी लड़के को जन्म नहीं दे पाती है उसे समाज हेय दृष्टि से देखता है जबकि वास्तविकता यह है कि जैवकीय दृष्टि से लड़के या लड़की के जन्म के लिए नारी नहीं अपितु पुरूष उत्तरदायी होता है।
- लड़की को पराया धन न मानकर उसे भी बुढ़ापे का सहारा माना जाए क्योंकि वास्तविकता यह है कि विवाह होने के बाद भी माता–पिता से जितनी सहानुभूति लड़की रखती है उतना लड़का नहीं रखता है।
- लड़के व लड़की के पालन पोषण में दोहरा मापदण्ड न हो। परिवार के सदस्य दोनों की ही परवरिश समान ढंग से करें।
- भ्रूण हत्या जघन्य अपराध हैं इस अपराध में शामिल प्रत्येक व्यक्ति को सार्वजनिक रूप से दण्डित किया जाये ताकि भविष्य में कोई भी ऐसा अपराध करने का दु:साहस न कर सके। जो चिकित्सक महज अर्थोपार्जन के लिए भ्रूण लिंग परीक्षण व भ्रूण हत्या का पेशा करते हैं उनके खिलाफ आन्दोलन करना चाहिए।
- लड़के व लड़की के लिंगानुपात में भारी अन्तर या जायेगा जिससे नैतिकता व सच्चरित्रता नहीं बचेगी।

नारी की क्षमता, साहस और शक्ति का दिव्य उदाहरण इतिहास के पन्नों में स्वर्णाक्षरों में लिखा है। नारी को आवश्यकता है आज जागरूक होने की अपने अधिकारों की सुरक्षा कर भावी कन्या रत्न को संरक्षण देने और उसे सुरक्षित जन्म देने के लिए हिम्मत जुटाना होगी। तभी तो कवि ने कहा है –

नारियां जब जगेंगी, देश तब जग जायेगा।
कष्ट भारत माता का, क्षण एक में मिट जायेगा।

कन्या भ्रूण हत्या केवल भारत की ही समस्या नहीं है, अपितु चीन, इंडोनेशिया, कोरिया, ब्राजील तथा अन्य ऐशियाई एवं अफ्रीकी देशों में इसका प्रचलन हैं समानता और स्वतंत्रता सरीखी अवधारणाओं की परचम लहरा रहा है। ऐसे में ईश्वर की ही एक कृति 'स्त्री' को इतना भी अधिकार नहीं की वह एक स्वस्थ जीवन जी सके। इस धरती पर जन्म ले सके।

आज आवश्यकता है नारी को यह दृढ़ संकल्प लेने की, कि वह कन्या भ्रूण हत्या नहीं होने देगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. महान नारियाँ – डॉ. वन्दना जैन पृष्ठ 37
2. गर्भपात – उचित या अनुचित फेसला आपका – श्री गोपीनाथ अग्रवाल।
3. दैनिक भास्कर – दिनांक 03–08–2006
4. दैनिक भास्कर – रविवारीय सितम्बर 2003

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

मध्यप्रदेश के शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों की कार्यक्षमता सम्वर्धन का अध्ययन

डॉ. आलोक कुमार यादव *

शोध सारांश – प्रत्येक संस्थान की सफलता वहाँ पर कार्यरत कर्मचारियों की कार्य संस्कृति पर निर्भर करती है। कार्य संस्कृति कर्मचारियों की कार्यदृष्टि, कार्य सम्पादन क्षमता, कार्य के प्रति रूचि एवं उनके व्यवहार से निर्धारित होती है। कार्य संस्कृति ही किसी संस्थान के योग्य संचालन को सुनिश्चित करती है तथा कर्मचारियों के बीच संवाद को सहज व उपयोगी बनाती है। किसी भी स्वस्थ संस्थान में सभी कर्मचारी यदि संस्थान के नियमों की अनुपालना करते हुए संस्थान के मार्गदर्शन में निष्ठापूर्वक कार्य करते हैं तो संस्थान का कार्य/उत्पाद बढ़ा पाने में सक्षम एवं सफल होते हैं।

प्राय: यह देखने में आता है कि सार्वजनिक व निजी क्षेत्र के संस्थानों में अलग-अलग कारणों से कार्य संस्कृति का ह्रास हो रहा है जिसके कारण कार्यस्थल पर भ्रष्टाचार व सामाजिक जीवन में तनाव बढ़ता है। यदि कार्यरत कर्मचारी संस्थान के उद्देश्यों व नियमों से प्रतिदिन आबंटित कार्य पूरा कर दे तो संस्थान के कार्य/उत्पादमें बिना किसी विशेष विनियोग के वृद्धि हो जायेगी।

प्रस्तावना – ''कार्यक्षमता संवर्द्धन'' शब्द पर वैचारिक एवं विश्लेषणात्मक अस्पष्टता है इसके बावजूद भी अधिकांश विचारक एक बात पर सहमत है कि कार्यक्षमता संवर्द्धन का आशय व्यक्तिगत कौशल और क्षमताओं को और अधिक सक्षम कराने से अधिक कुछ है। कार्यक्षमता का शाब्दिक अर्थ है, ''सीखने और ज्ञान को बनाये रखने की योग्यता।'' प्रशिक्षित व्यक्तियों को उपयुक्त वातावरण एवं प्रोत्साहन के उचित मिश्रण का वातावरण उपलब्ध कराना है ताकि वह अपने अर्जित ज्ञान का उपयोग कर सके। कार्यक्षमता संवर्द्धन शब्द की तुलना उपलब्धि से नहीं की जा सकती है। यद्यपि कार्यक्षमता एवं उपलब्धि परस्पर संबंधित है।

सामान्यत: कार्यक्षमता किसी विशिष्ट कार्य में किसी व्यक्ति की वैयक्तित योग्यता है जिसके द्वारा वह उस कार्य को ठीक ढंग से पूरा कर सकता है। एक व्यक्ति में कुछ ही कार्यों को निष्पादन करने की विशिष्ट योग्यता हो सकती है, प्रत्येक कार्य को निष्पादन करने की नहीं। अत: अलग-अलग व्यक्तियों में अलग-अलग कार्य को निष्पादन करने की योग्यता होती है। एक योग्य व्यक्ति किसी निश्चित कार्य को एक औसत व्यक्ति की कार्यक्षमता का मापन उसके द्वारा किये गये कार्य की किस्म और उसमें लिए गये समय के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार हम ऐसे व्यक्ति को अधिक कार्यक्षम कह सकते हैं जो एक ही समय और परिस्थितियों में अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा कम समय में अधिक और अच्छा कार्य कर सकता है।कार्यक्षमता संवर्द्धन एक प्रक्रिया है और इसे गुणात्मकता के आधार पर मापा जा सकता है और जिसके लिये एक मानक परिमाप आवश्यक है।

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि कार्यक्षमता एक सापेक्षिक शब्द है जो एक निश्चित व निर्धारित मापदण्ड पर किसी व्यक्ति के कार्यबल को इंगित करता है। प्राय: कार्यक्षमता का तात्पर्य उस शक्ति या संभावना से है जो उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त एवं परिवर्तित परिस्थितियों को स्वीकार या अंगीकार करे। संवर्द्धन वह तकनीक या उपाय है जिससे पूर्व प्राप्त ज्ञान या क्षमता में वृद्धि की जाये।

कार्यक्षमता संबर्द्धन में संस्थागत वातावरण प्रेरणात्मक माहौल/कार्य दबाव/कार्यक्षमता/जोश/जूनून और हौसले के साथ अनुभव की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। अत: कार्यक्षमता संवर्द्धन व्यक्तिगत कौशलों एवं योग्यताओं में वृद्धि एवं मजबूती के अतिरिक्त भी कुछ है।

कार्यक्षमता संवर्द्धन को प्रभावित करने वाले मनोवैज्ञानिक कारक – कार्यक्षमता मनो-शारीरिक स्थिति है जिसमें मस्तिष्क और शरीर दोनों ही प्रत्यक्षतया सम्मिलित होते हैं। कार्यक्षमता संवर्द्धन को प्रभावित करने वाले कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिक कारक निम्न है-

1. **कार्य-दशायें (Working Conditions)** :- कर्मचारियों की कार्यक्षमता पर कार्य दशाओं यथा पर्याप्त प्रकाश, उचित हवादान, जलवायु तथा शोर-गुल आदि का विशेष प्रभाव पड़ता है। इनके अभाव में कर्मचारियों का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है और उनकी कार्यक्षमता घट जाती है।
2. **कार्यकाल (Time of Work)** :- कार्यक्षमता का अन्य निर्धारक घटक, कार्यकाल एवं थकान है। अनेक प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया है कि प्रत्येक कर्मचारी का कार्यकाल एक दिन में 8 घण्टे से अधिक नहीं होना चाहिए। कर्मचारी से अधिक समय तक कार्य लेने पर उसकी कार्यक्षमता, शक्ति, जिज्ञासा, स्वास्थ्य और क्षमता आदि पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
3. **प्रयोग में लिए जाने वाले यन्त्र एवं उपकरण (Equipment and tools in use)** :- नवीनतम एवं अच्छे उपकरण कर्मचारियों को कार्य करने के लिए स्वत: ही प्रेरित करती है तथा कर्मचारी अपनी पूर्णदक्षता एवं अच्छी गति से अधिक मात्रा में कार्य करते हैं।
4. **स्वास्थ्य(Health)** :- कर्मचारियों में उच्च श्रेणी की कार्यक्षमता के लिए यह आवश्यक है कि उनका स्वास्थ्य अच्छा हो। यदि कर्मचारियों का स्वास्थ्य ठीक नहीं है तो वे कार्य करते हुए शीघ्र थक जायेंगे और उनके द्वारा किये गये कार्य की किस्म भी निम्न होगी। अत: अच्छे कार्य के लिए अच्छा स्वास्थ्य आवश्यक है।
5. **विश्राम (Rest)** :- अनेक मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गये प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया है कि कार्यक्षमता को बनाये रखने के लिये और सुधार के लिए कर्मचारियों को कार्य के मध्य विश्राम दिया जाना अत्यंत आवश्यक है।

*प्राचार्य, शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

कार्यक्षमता को बनाये रखने और इसमें वृद्धि करने के लिए कार्य के मध्य विश्राम आवश्यक है।

6. नीरसता (Monotony) :– नीरसता का कार्यक्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है क्योंकि इसमें व्यक्ति का मस्तिष्क और शरीर दोनों ही अपनी शक्ति या प्रभाव खो देते हैं। नीरसता किसी ऐसे कार्य की असन्तुष्टि है, जिसे व्यक्ति को विवश होकर करना पड़ता है। मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रयोगों के आधार पर नीरसता के स्वरूपों, कारणों, प्रभावों और दूर करने के उपायों आदि को प्रस्तुत करके कार्यक्षमता के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

7. भावनात्मक समायोजना (Emotional Adjustment) :– मनोवैज्ञानिकों द्वारा दुर्घटनाओं के कारणों का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि दुर्घटनाओं के कारणों में असावधानी, कार्य के प्रति अरूचि और मानसिक असन्तोष आदि ही प्रमुख है। दुर्घटनाओं के कारणों में दोषपूर्ण उपकरणों, दोषपूर्ण कार्य–दशायें एवं दोषपूर्ण कर्मचारी सम्मिलित किये जा सकते हैं। ये सभी कारण या घटक भावनात्मक कुसमायोजन से सम्बन्ध रखते हैं। अत: कार्यक्षमता का अन्य निर्धारक भावनात्मक समायोजन है। इसे बनाये रखने के लिए साधारणतया कार्य की दशायें अच्छी होनी चाहिए और कर्मचारियों के लिए वैयक्तिक मार्गनिदेशन की व्यवस्था होनी चाहिए ताकि कर्मचारियों को अपनी निजी समस्याओं के समाधान में सहायता मिल सके।

8. अभिप्रेरण (Motivation) :– कर्मचारियों को कार्य के प्रति अभिप्रेरित करने के लिए यह आवश्यक है कि उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति की जाये, उनके स्वास्थ्य को ठीक बनाये रखा जाये, उनके भविष्य को सुरक्षित किया जाय, उन्हे समय–समय पर पदोन्नत किया जाये और उन्हे पर्याप्त क्षतिपूरण प्रदान किया जाय।

9. संगीत (Music) :– कुछ प्रकार की ध्वनि कर्मचारी को कर्णप्रिय होती है। मनोवैज्ञानिक शोधों से यह पता चला है कि संगीत प्रवाह कर्मचारी की मानसिक स्थिति पर अनुकूल प्रभाव डालता है और उसकी कार्यक्षमता में वृद्धि करता है।

10. शोर पर नियन्त्रण (Noise Control) :– जब कर्मचारी कार्य पर लगे हों तो उनका ध्यान किसी प्रकार से विभाजित न हो तथा वे परेशान न हो। इसके लिए आवश्यक है कि शोरगुल पर नियन्त्रण किया जाय। शोर कर्मचारी की मनोदशा को प्रभावित करता है और कार्य से उसका ध्यान बंट जाता है।

11. व्यक्तिगत रूचि एवं व्यक्तिगत गुण (Personal Interest and Personality Traits) :– कार्यक्षमता पर कर्मचारियों की व्यक्तिगत रूचि एवं उसके व्यक्तित्व सम्बन्धी गुणों का भी काफी प्रभाव पड़ता है। रूचिपूर्ण कार्य से कर्मचारी की कार्यक्षमता को बनाये रखा जा सकता है और उसमें वृद्धि की जा सकती है। इसके विपरीत अरूचिपूर्ण कार्य से कर्मचारी की कार्यकुशलता में निश्चित रूप से कमी आती है। इसी प्रकारी कर्मचारी के अन्य व्यक्तित्व सम्बन्धी गुण भी कार्यक्षमता को प्रभावित करती है।

12. अन्य तत्व (Other Factors) :–एक कर्मचारी कल्याण उन्मुख प्रबंध कर्मचारियों को प्रेरित कर सकता है एवं उनमें सम्मान की भावना जाग्रत कर सकता है। स्वस्थ कर्मचारी सम्बन्ध उत्साह और आनन्द के वातावरण का निर्माण करते हैं और इससे श्रमिक की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

कार्यक्षमता का अभिप्राय: कार्य करने की क्षमता का होना है। ताकि कार्य अवधि में आने वाली समस्याओं का समाधान करते हुए उद्देश्य या लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। कार्यक्षमता एक सापेक्षिक शब्द है तथा संवर्द्धन व उपाय या तकनीक है जिससे पूर्व प्राप्त ज्ञान अथवा कार्यक्षमता में वृद्धि की जा सकती है। कार्यक्षमता संवर्द्धन पर मनोवैज्ञानिक एवं अन्य कारक परोक्ष या अपरोक्ष रूप से प्रभाव डालते हैं। कार्यरत अधिकारी एवं कर्मचारियों की मानसिक एवं शारीरिक थकान एवं नीरसता का भी कार्यक्षमता संवर्द्धन से सहसम्बन्ध होता है साथ ही कार्य संतुष्टि एवं कार्य निष्पादन के रूप में इसका प्रतिफल देखा जा सकता है। कार्य संतुष्टि में अधिकारी या कर्मचारी स्व:प्रेरित रूप से लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त करते हैं।

अनुसंधान पद्धति – प्राणिजगत में मानव की श्रेष्ठता एवं वर्चस्व का रहस्य बहुत कुछ उसकी शोधात्मक प्रकृति एवं शोधात्मक क्षमता में निहित है। शोध कार्य के चयन में किसी अनुभूति, अनुभव, स्वानुभूति एवं स्वाभाविक बौद्धिक जिज्ञासा प्रमुख स्त्रोत है। प्रस्तुत शोध कथन ''म.प्र. के पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों की कार्यक्षमता संवर्द्धन का अध्ययन'' एक अनुभविक शोध समस्या है जो एक समूह की रचना, व्यवहार या गुणों आदि पर आधारित है। म.प्र. के विभिन्न शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालय में कार्यरत विभिन्न स्तरों के कर्मचारियों की राय प्राप्त करना था। प्रत्यक्ष इनसे सभी संस्थाओं/कर्मचारियों से प्रत्यक्ष सम्पर्क करना संभव नहीं था। अत: इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये शोध अभिकल्प का निर्माण कर प्रश्नावलियों के माध्यम से इसे पूर्ण किया गया।

अपने मानवीय संसाधनों अर्थात् कर्मचारियों के कार्यक्षमता को बढ़ाने तथा सकारात्मक सोच द्वारा उत्कृष्ठता की ओर ले जाने के लिए अपने विभाग, अपने महाविद्यालय एवं वहाँ कार्यरत लोगों के मार्गदर्शन में अपने अनुभवों, से जो कुछ देखा–सीखा उसे अपनी भाषा में समेटने का एक छोटा सा प्रयास है यह ताकि कार्यक्षमता संवर्धन द्वारा संस्थागत लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकें।

प्राकल्पना – म.प्र. के पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों की कार्यक्षमता संवर्द्धन का अध्ययन निम्नांकित प्राकल्पना का निर्माण किया गयाहै।

1. कार्यस्थल पर बेहतर कार्य संस्कृति होने से कर्मचारियों द्वारा अपनी कार्यक्षमता का भरपूर प्रयोग किया जाता है।
2. दूषित कार्यसंस्कृति में कार्यरत कर्मचारियों की कार्यक्षमता बेहतर कार्य संस्कृति में कार्यरत कर्मचारियों की तुलना में कम हो जाती है।
3. कार्यक्षमता का सम्वर्द्धन एक सापेक्षिक क्रिया है जिसके लिये निरन्तर प्रयास करना पड़ता है। यह द्विमार्गी प्रक्रिया है। संस्था प्रमुख और कर्मचारियों में से किसी भी एक पक्ष के उदासीन होने से इसका प्रतिगामी प्रभाव पड़ता है।

अध्ययन का उद्देश्य:

1. म.प्र. के विभिन्न पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत नियमित अमले की विभिन्न सामाजिक, भावानात्मक व कार्यस्थल की समस्याओं की वास्तविकता ज्ञात की जाये एवं समस्याओं के निराकरण हेतु व्यवहारिक सुझाव दिये जा सके।
2. म.प्र. के पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों की कार्यक्षमता का कार्यदशाओं के सापेक्ष अध्ययन करना।
3. विभिन्न पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कर्मचारियों की कार्यक्षमता के सम्वर्द्धन हेतु अपनाई गई विभिन्न रणनीतियों का पता लगाना।
4. म.प्र. के पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में प्रशासन हेतु कर्मचारियों की उन गतिविधियों का पता लगाना जिससे कर्मचारियों की कार्यक्षमता पर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसका सरलीकृत समाधान खोजना।

मध्यप्रदेश के पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों की

कार्यक्षमता संवंधन संबंधी समस्याएं – प्रस्तुत अध्ययन में आवश्यकतानुसार प्रश्नावली को विभिन्न भागों में विभक्त किया गया है। इसके द्वारा म0प्र0 के शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत विभिन्न स्तरीय कर्मचारियों की कार्यक्षमता, संस्थागत संसाधनों, नेतृत्व क्षमता, निर्णयन प्रक्रिया कार्यदशाओं के साथ–साथ संतुष्टि स्तर को जानने का भी प्रयास किया गया है। साथ ही उन कार्यस्थितियों, मनोदशा को जानने का भी प्रयास है कि किन कारणों से कार्यक्षमता के संवर्द्धन पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

विभिन्न पॉलीटेक्निक महाविद्यालय में कार्यरत् अमले की कार्यक्षमताओं पर विभिन्न कारक सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनो ही रूपो मे परोक्ष या अपरोक्ष प्रभाव डाल रहे है। इसमे से प्रमुख इस प्रकार है:–

1. **भौतिक संसाधन** :– विभिन्न पॉलिटेक्निक महाविद्यालयों मे कार्यदशाऐ भिन्न –भिन्न है।अनेक पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों के पास स्वयं का भवन नही है तो कहीं कही दो या तीन कमरों मे संस्थाऐ संचालित हो रही है जैसे पवई, टीकमगढ सिरोंज इत्यादि। कही वृहत् भवन है लेकिन स्टॉफ और यंत्र उपकरण नही।

2. **असंतुलित पदस्थापना** :– प्रदेश के विभिन्न पॉलिटेक्निक संस्थाओं मे असंतुलित पदस्थापना देखने मे आती है राजभोगी शहरो एवं बडी संस्थाओ मे स्वीकृत पदो पर पूर्ण पर पदस्थापना है या अतिरिक्त व्यक्ति पदस्थ है वही छोटे कस्बों या संस्थाओं मे पद रिक्त है।

3. **शीर्ष स्तर पर तदर्थवाद** :–विगत् 8–10 दस वर्षो मे शीर्ष पदो पर नियुक्तियों मे तदर्थवाद चल रहा है।ऐसे मे नीतिगत मामलो एवं विकास संबंधी दीर्घकालीन निर्णयन टाल दिये जाने की प्रवृत्ति हो जाती है। कई मर्तबा प्रभारियों द्वारा दृढ निर्णय नही लिये जाते है, इन सबका असर कर्मचारियों एवं अधिकारियों की कार्यक्षमता पर नकारात्मक रूप से होता है।

4. **पदोन्नति के अवसर नहीं** :– प्रदेश के तकनीकी शिक्षा विभाग मे कर्मचारियों एवं विशेषकर अधिकारियों के पदोन्नति के अवसर है ही नही। ऐसी स्थिति मे पूर्ण कार्यक्षमता से लोगों से कार्य करने की आशा रखना व्यर्थ है।

5. **भेदभाव** :– तकनीकी शिक्षा विभाग होते हुए भी व्याख्याताओं एवं विभागाध्यक्षो को इसके अतंर्गत आने वाले पाठयक्रमों को एवं उनके तकनीकी एवं गैर तकनीकी के रूप मे अघोषित रूप से विभक्त किया गया है। वस्तुत: यह विभाजन इंजीनियरिंग ब्रांच एवं गैर इंजीनियरिंग ब्रांच मे विभक्त है। यहां पर इंजीनियरिंग ब्रांच का विभागाध्यक्ष पदोन्नति पाकर प्राचार्य बन सकता है। नॉन इजीनियंरिग ब्रांच मार्डन आफिस मेनेजमेंट कास्टयूम डिजाइन एवं ड्रेस मेकिंग, फार्मेसी, प्रिटिंग टेक्नोलॉजी आदि मे आज तक किसी भी विभागाध्यक्ष को पदोन्नति देकर प्राचार्य नही बनाया गया। कई मर्तबा उन्हें अपने से कनिष्ठ व्यक्ति के मातहत कार्य करना होता है क्योकि उसके कनिष्ठ व्यक्ति को इंजीनियरिंग ब्रांच का होने की वजह से विभागाध्यक्ष से प्राचार्य पद पर पदोन्नति मिल गई है। ऐसे मे पदोन्नति से वंचित अधिकारी से उसकी पूर्ण कार्यक्षमता के उपयोग की कल्पना करना दुश्कर कार्य है।

6. **असंबद्ध कार्य सौपा जाना** :–अधिकारियों एवं कर्मचारियों की समुचित पद स्थापना नही होने के कारण प्राय: अधिकांश पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों मे उन्हें असंबंध कार्य सौपें जाते है उदाहरण स्वरूप इंजीनियरिंग ब्रांच के व्याख्याता के पास नॉन इंजीनियरिंग ब्रांच का प्रभार या नॉन इंजीनियरिंग व्याख्याता के पास इंजीनियरिंग ब्रांच का प्रभार या निम्न श्रेणी लिपिक के पास स्टोर या लेखा का प्रभार, व्याख्याताओं के पास प्रशिक्षण एवं नियोजन अधिकारी का कार्य।

7. **ठोस स्थानातंरण नीति का अभाव**:– सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि किसी अधिकारी या कर्मचारी का अपने संपूर्ण सेवाकाल मे एक भी स्थानातंरण नहीं हुआ और किसी–किसी का हर तीसरे चौथे वर्ष। ये दोनो ही स्थितियां व्यक्ति की कार्यक्षमता पर विपरीत प्रभाव डालती है। चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारियों की स्थानांतरण की कोई भी नीति नहीं है। सर्वेक्षित संस्थाओं मे पाया गया कि अनुशासन के मामले मे यह एक समस्या है।

8. **निष्पक्ष कार्यमूल्यांकन की व्यवस्था नहीं** :–यद्यपि पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों मे कार्यरत् कर्मचारियों एवं अधिकारियों के कार्य का मूल्यांकन करने हेतु वार्षिक चरित्रावली के माध्यम से किये जाने की शासकीय व्यवस्था मौजूद है लेकिन कहीं ना कही कर्मचारियों को लगता है कि उनके कार्यो का निष्पक्ष मूल्यांकन नही किया जा रहा है। सर्वेक्षित लोगों मे से 32.56 प्रतिशत लोगो का ये कहना है कि उनके कार्य का निष्पक्ष मूल्यांकन पर कुछ कह नही सकते है। निष्पक्ष मूल्यांकन की वर्तमान पद्धति पर प्रश्नचिन्ह् उठाता है।

9. **विभिन्न बहाने** :– सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि कार्यालयो/संस्थाओं के कर्मचारियों या अधिकारियों के आम बहाने मे 46 प्रतिशत लोग कार्यालयीन कार्य से सतुष्ट नही है 34 प्रतिशत मानते है कि कार्य के हिसाब से वेतन कम है 24 प्रतिशत लोग मानते है कि कोई डेडलाइन या इन्सेटिव नही है जबकि 19 प्रतिशत लोग कहते है कि कामकाजी समय बेहद लम्बा है।

10. **मतभेद और गुटबाजी** :– एक ही संस्था मे लम्बे समय तक पद स्थापित रहने पर अधिकारियों एवं कर्मचारियों मे मतभेद एवं गुटबाजी बहुत ज्यादा होती है। इनके व्यक्तिगत स्वार्थ एवं वर्चस्व की लडाई मे संस्थाओ की प्रगति रूक जाती है।

11. **नीरसता** :–एक ही स्थान पर एक ही कार्य और एक सा माहौल नीरसता उत्पन्न करता है इस कारण से व्यक्ति की कार्यक्षमता दुष्प्रभावित होती है। इन पॉलीटेक्निक संस्थाओं मे नीरसता है क्योकि अधिकारी /कर्मचारी वर्षो से एक ही काम एक ही संस्था मे कर रहे है।

12. **कर्मचारी संघों का अनावश्यक दबाव** :– सर्वेक्षित पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में से कुछ संस्थाओं में निकृष्ट एवं कामचोरकर्मचारी कार्यक्षमता संवर्धन के बजाय कर्मचारी संघों की आड़ में कार्य से बचना चाहते हैं।

13. **राजनैतिक हस्तक्षेप** :– प्राय: अधिकांश पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में राजनीतिक हस्तक्षेप विद्यमान है।

14. **अनुशासन हीनता :–**कर्मचारी संगठनों एवं राजनीतिक प्रभाव के कारण कुछ कर्मचारी कर्तव्य एवं दायित्वों के प्रति उदासीन पाये जाते हैं जो अन्य कर्मचारियों के कार्य में बाधा उत्पन्न करते हैं

15. **पर्याप्त प्रशिक्षण का अभाव :–**सर्वेक्षित संस्थाओं में अधिकारियों एवं कर्मचारियों को उच्च पद के प्रभार एवं दायित्व सौंपे गये हैं, किन्तु उन्हें इस हेतु पर्याप्त प्रशिक्षण नहीं दिया गया है। अत: उनसे कार्य में गलतियाँ होने की संभावना प्रबल रहती है और वे इनसे बचने के लिए टालमटोल की प्रवृत्ति अपना लेते हैं।

16. **समन्वय का अभाव :–**सर्वेक्षित पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों के अधिकारियों एवं कर्मचारियों में समन्वय का अभाव पाया जाता है। समन्वय की कमी के कारण कार्य के दौरान उच्च अधिकारियों एवं कर्मचारियों के मध्य असहयोग की स्थिति बन जाती है एवं कार्य प्रभावित होते हैं। यह भी देखने में आता रहा है कि म. प्र. शासन कर्मचारियों के हितों में अनेक प्रावधान करती

है, लेकिन कुछ उच्च अधिकारी इसे क्रियान्वित करने में हीला-हवाली करते हैं, जिससे कर्मचारियों की कार्यक्षमता प्रभावित होती है।

कार्यक्षमता संवर्द्धन के उपाय – वर्तमान में म.प्र. के पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों को प्रतिदिन विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी परिवर्तनों के कारण इन संस्थाओं में भी अनेक परिवर्तन हुए हैं जिनके कारण सभी दैनिक कार्यवाहियों का संचालन, उचित व्यवस्था एवं सम्पेषण का संपूर्ण कार्य इस प्रकार किये जाते है ताकि कर्मचारियों की कार्यक्षमता में वृद्धि करने हेतु कल्याण की प्रमुख योजनाओं को क्रियान्वित किया जा सके जिससे कर्मचारियों के मनोबल एवं उत्पादकता में अत्यधिक वृद्धि हो सके।

पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों की कार्यकुशलता में वृद्धि के लिये संस्थाओं में अच्छे कर्मचारी सम्बन्धों का बनाया जाना आवश्यक होता है यद्यपि इसके लिए अनेक साधनों का उपयोग किया जा सकता है जैसे कर्मचारियों का उचित चुनाव, प्रशिक्षण, पारिश्रमिक, कार्यानुकूल वातावरण एवं कर्मचारी कल्याण आदि तथ्यों के आधार पर मानवीय योग्यता, स्वभाव, बुद्धि, विवेक, कौशल एवं कार्यक्षमता में वृद्धि हेतु व्यवहारिक उपायों की विवेचना की गई है।

कर्मचारियों की कार्यक्षमता बढ़ाने के निम्न प्रकार के व्यवहारिक उपायों को अपनायाजा सकता है –

1. शीर्ष स्वर से निम्न स्तर तक तदर्थवाद को समाप्त कर नियमित पदस्थापना की जानी चाहिए।
2. कर्मचारियों एवं अधिकारियों की स्थानातंरण की ठोस नीति का निर्धारण कर उसका कडाई से पालन किया जाना चाहिए।
3. राजभोगी शहरो के साथ साथ ग्रामीण क्षेत्रों मे पदस्थाना को अनिवार्य किया जाना चाहिए।
4. कर्मचारियों एवं अधिकारियों को नियमित तौर पर पदोन्नति के अवसर उपलब्ध करवाया जाना चाहिए।
5. अधिकारियों एवं कर्मचारियों के मध्य व्याप्त इंजीनियरिंग एवं नान इंजीनियंरिग के आधार पर चले आ रहे भेदभाव को यथाशीघ्र समाप्त किया जाना चाहिए।
6. प्रशिक्षण से कार्यक्षमता मे वृद्धि होती है इस बात को सर्वेक्षण मे 81.40 प्रतिशत लोगो ने माना कि अत: नियमित अंतराल से अधिकारियों एवं कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए। सर्वेक्षण से ये भी ज्ञात हुआ कि अधिकांश कर्मचारी पहलपन से इसलिये बचते है कि प्रशिक्षण का अभाव है।
7. बेहतर कार्य संतुष्टि प्रदान करता है इसलिये कर्मचारियों और अधिकारियों को बेहतर कार्य दशाएं उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
8. अधिकारियों एवं कर्मचारियों को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये बिना किसी भेदभाव के अनुमति प्रदान किया जाना चाहिए।
9. कार्य दबाव या थकान से निपटने के लिये कर्मचारियों के लिये संस्थागत स्तर पर योग प्राणायाम, क्लब हाउस आदि की व्यवस्था होनी चाहिए।
10. तथ्य है कि भारतीय लोग पारिवारिक पृष्ठभूमि मे बेहतर कार्य निष्पादित करते है अत: संस्थागत कार्यक्रमों जैसे वार्षिक स्नेह सम्मेलन, स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस, शिक्षण दिवस जैसे कार्यक्रम मे कर्मचारियों एवं अधिकारियों को सपरिवार आंमत्रित किया जाना चाहिए।
11. विभिन्न पॉलिटेक्निक संस्थाओं मे कार्यरत्अधिकारियों एवं कर्मचारियों को विभिन्न संस्थावार एवं ब्रांचवार रि-शफल किया जाना चाहिए।
12. संस्थाओं मे ओपन डोर पॉलिसी का पालन कर कर्मचारियों से इनपुट मांगा जाना चाहिए।
13. संस्था का शीर्ष अधिकारी विभिन्न प्रभारो को अधिकारियो/कर्मचारियों को सौंपकर जवाबदेयता निर्धारित करे।
14. कार्य प्रभार बदलते रहे ताकि कर्मचारी अधिकारी एक ही स्थान या प्रभार मे रहकर ''चलता है'' वाली मनोवृत्ति मे ना डूब जाये।
15. संस्थाओं मे ''किचन केबिनेट'' ना बनने दे, और सुनी सुनाई बातो पर विश्वास न करे।
16. अधिकारियों एवं कर्मचारियों को प्रेरित किया जाना चाहिए कि वे अपनी समस्याओं को आपस मे सुलझाये।
17. अधिकारियों एवं कर्मचारियों को आवश्यक जानकारी होनी चाहिए। इससे निर्णय आसानी से लिये जा सके कभी कभी अत्यधिक जानकारी उलझन और देरी का कारण बन जाती है।
18. कार्यक्षमता संबर्द्धन के लिये आवश्यक है कि अधिकारियों और कर्मचारियों को कार्य सूची मे कुछ नये, कुछ कठिन और कुछ चुनौतीपूर्ण कार्य जोड़ दिये जाने चाहिए।
19. अधिकारियों एवं कर्मचारियों की कार्यक्षमता संबर्द्धन के लिये साप्ताहिक एवंदीर्घकालीन व्यवस्था निर्धारित की जानी चाहिए।

निष्कर्ष – निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत अमले का समुचित प्रबंधन इस प्रकार से किया जाये कि शैक्षणिक गुणवत्ता के साथ-साथ परिष्कृत कौशल, ज्ञान तथा अर्हताओं का समुचित उपयोग किया जा सकें। म0प्र0 के शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों को समान व बेहतर कार्यदशाएं उपलब्ध कराकर उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि की जा सकती है। वर्तमान में शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालय माननीय संसाधनों की कमी से जूझ रहे है तथापि अनेक संस्थाओं में पर्याप्त मात्रा में स्टॉफ है किन्तु उनका समुचित उपयोग नहीं हो पा रहा है। चूंकि शासन द्वारा कर्मचारियों की उन्नति एवं प्रगति हेतु पर्याप्त प्रयास किये जा रहे है। लेकिन प्रतीत होता है कि जैसे वे कर्मचारियों के किसी विशेष संवर्ग को ही फायदा पहुँचाने के उद्देश्य से निर्मित किये गये हो ऐसे शेष कर्मचारियों की कार्यक्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। जिससे उत्कृष्ट तकनीकी शिक्षा प्रदाय के मूल उद्देश्य को प्राप्त करना दूर की कौड़ी प्रतीत हो रहा है।अत: कहा जा सकता है कि न्यूनतम प्रयास में अधिकतम पाने के लिए सकारात्मक रूप से कार्यक्षमता में संवर्द्धन किये जाने के प्रयास किये जाने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Organization& Management, R.D. Agarawal, T.M.H., New Delhi, 1995,
2. Business Environment, Gunanasekaran& Kaliyamurthy, Ane Books,
3. Organizational Behavior, Subba Rao, Himalaya Publication, Mumbai,
4. Management&Organizational Behavior, Subba Rao, Himalaya Publication, Mumbai,
5. व्यावसायिक वातावरण, जी. उपाध्याय, आर.एल. शर्मा, रमेश बुक डिपो, जयपुर 1995,
6. म. प्र. शासकीय कर्म. कल्याणकारी सुविधाएँ आर.टी.पांधरे, सुविधा लॉ हाउस, भोपाल,
7. गोपनीय रिपोर्ट के नियम एवं प्रक्रिया निर्णय विधि सहित, एन.एच.

सिद्धिकी, सुविधा लॉ हाउस, 1996,
8. म.प्र. सर्विसेस मेन्युअल , आर.एस. शर्मा, इंडिया पब्लिशिंग कम्पनी इन्दौर 1995.
9. म.प्र. कर्मचारियों के लिए मार्गदर्शन, बनगिया,सिद्धिकी, सुविधा लॉ हाउस भोपाल, 1995,
10. सफलता के सात आध्यात्मिक नियम, डॉ. दीपक चोपड़ा, फुल सर्किल, हिन्द पाकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2009
11. सुख, संतुष्टि और सफलता के सरल नियम, बत्रा, हिन्द पाकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2010
12. सफलता के 100 सूत्र, पार्किन्सन एवं रूस्तम जी, राजपाल एंड संस, दिल्ली 2010
13. पत्रिका ''योजना'', सूचना और प्रकाशन मंत्रालय, नई दिल्ली
14. पत्रिका ''कुरूक्षेत्र'', सूचना और प्रकाशन मंत्रालय, नई दिल्ली
15. wwww.mptechedu.org
16. www.aicte-india.org

****

शोध पत्र तैयार की विधि
Method of Preparing of Research Paper

1. शीर्षक – Title
2. शोध सारांश – Abstract
3. शब्द कुंजी – Key words
4. प्रस्तावना – Introduction
5. उद्देश्य – Object
6. शोध परिकल्पना – Research Hypothesis
7. शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – Research Methods & Area
8. शोध उपकरण – Research Tools
9. सांख्यिकी तकनीक – Statistics Technics
10. शोध व्याख्या – Description
11. निष्कर्ष – Conclusion
12. सुझाव – Suggestion
13. संदर्भ ग्रंथ सूची – References
    - a. अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक – Kotler, Philip : Marketing Management, 2007 P. 196
    - b. राष्ट्रीय पुस्तक – कुमार, वि. : जनांकिकीय 2006, पृष्ठ 42
    - c. अन्तर्राष्ट्रीय शोध जर्नल – नवीन शोध संसार, ISSN 2320-8767 जुलाई से सितम्बर 2014, पृष्ठ क्र. 81
    - d. राष्ट्रीय शोध जर्नल – नवीन शोध संसार, ISSN 2320-8767 जुलाई से सितम्बर 2013, पृष्ठ क्र. 222
    - e. अप्रकाशित शोध ग्रंथ – शर्मा लक्ष्मीनारायण : मन्दसौर जिले का जनांकिकीय अध्ययन1971 से 1991 अप्रकाशित पीएच.डी. शोध प्रबन्ध विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन 1995, पृष्ठ क्र.132
    - f. पत्रिकाऐं – रचना, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल फरवरी 2014 पृ. क्र.84
    - g. समाचार पत्र – दैनिक भास्कर, रतलाम संस्करण, 5 सित. 2014, पृ. क्र. 6
    - h. वेबसाईट – www.nssresearchjournal.com
    - i. अन्य – व्यक्तिगत सर्वे एवं विभागों से प्राप्त जानकारियां
14. शब्द सीमा – Word Limit - 2000
15. व्यक्तिगत जानकारी – नाम,
    पद,
    महाविद्यालय का नाम,
    निवास का पता,
    मोबाइल नं. व
    ईमेल एड्रेस आदि ।

Naveen Shodh Sansar
(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320 - 8767, E -ISSN 2394 - 3793
Impact Factor - 0.715

MEMBERSHIP CUM AUTHOR'S BIO-DATA FORM

(Photocopy of this form may be used)

Name (Author / Member) : Mr/Mrs/Ms/Prof/Dr : .....

Name of Co-Author(s) : .....

Designation : ..... Subject : .....

Name of College/University/Institution : .....

Home / Official Address : .....

.....

State : .....Pin : ..... Country : .....

Tel. No. (Res. /Office) : .....Mobile : .....

E-mail Address : .....

Sign......

1. MEMBERSHIP will be valid for individual, University/College Institute Library-One Year SUBSCRIPTION RATES For printing/publication of one research paper.
   * Institutions Rs. 1,250/- per annum (without publication of paper)
   * Membership for Author Rs. 750/- for 1 Year.
   * Membership for Co-Author Rs. 750/- for 1 Year.
   * Publication of paper each after membership Rs. 850/- (2000 Words)
2. For Remittances can pay printing amount through DD/Cheque in favor of **'NAVEEN SHODH SANSAR'** payable at Neemuch (M.P) and send it by Registered Post. Fill information regarding Demand Draft.

   D.D. No. : .....Amount ..... Name of Bank .....Date : .....

   OR

   You can cash deposit / Online fund transfer on **NAVEEN SHODH SANSAR** Current A/c.

Bank Detail :-
NAVEEN SHODH SANSAR
Current A/c. no.:- 32768184328
Bank Name :- State Bank Of India
Branch :- Neemuch (M.P)
IFSC code:- SBIN0030055

Editor - Ashish Sharma
Add:- "Shri Shyam Bhawan"
795, Vikas Nagar Extension 14/2, Neemuch
(M.P) - 458441 Mob:- 09617239102
Email ID :- nssresearchjournal@gmail.com
Website :- www.nssresearchjournal.com

Note- Copyright form & Author's Guide line are availble on our web-site
{All disputes are subject to exclusive jurisdiction of NEEMUCH Court Only (M.P.)}